ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

आफताब खान

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 97 of 2011. Decided on 25th April, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 414 सह-पठित भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 33—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 468 एवं 482—चुरायी गयी वन संपत्ति का छुपाया जाना–संज्ञान–उन्मोचन आवेदन की अस्वीकृति–जब तीन वर्षों की अवधि के भीतर अपराध का संज्ञान नहीं लिया जा सका था, याची ने उन्मोचन के लिए आवेदन दाखिल किया–भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 414 के अधीन अपराध के लिए महत्तम दंड तीन वर्ष है–तीन वर्षों की अवधि के बाद अपराध का संज्ञान लेने में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 468 (2) (c) के अधीन स्पष्ट वर्जना है–तीन वर्ष की अवधि बीतने के बाद याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया है और संज्ञान लिया गया है–आक्षेपित आदेश पूर्णतः अवैध और पूर्णतः अधिकारिताविहीन है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया और याची को मामले से उन्मोचित किया गया। (पैराएँ 4 से 8)

अधिवक्तागण.–M/s Amrita Banerjee, A.K. Sahani, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याची ने खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 114 वर्ष 2007 से उद्भूत होने वाले जी॰ आर॰ केस सं॰ 485 वर्ष 2007 में विद्वान ए॰ सी॰ जे॰ एम॰, खूँटी, श्री एम॰ के॰ श्रीवास्तव द्वारा पारित दिनांक 25.11.2010 के आदेश को चुनौती दिया है जिसके द्वारा याची द्वारा दाखिल उन्मोचन के लिए आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था।

3. यह प्रतीत होता है कि याची आफताब खान को भारतीय दंड संहिता की धारा 414 और भारतीय वन (बिहार संशोधन) अधिनियम की धारा 33 के अधीन खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 114 वर्ष 2007 में अभियुक्त बनाया गया था और दिनांक 6.9.2007 को उक्त मामला संस्थापित किया गया था। जब तीन वर्षों की अवधि के भीतर अपराध का संज्ञान नहीं लिया जा सका था, याची ने अवर न्यायालय में उन्मोचन के लिए आवेदन इस आधार पर दाखिल किया कि अपराध में संज्ञान अब दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 468 के अधीन वर्जित था क्योंकि अपराध के लिए विहित महत्तम दंड तीन वर्षों का कारावास था। किंतु, अवर न्यायालय द्वारा उक्त आवेदन यह कथन करते हुए अस्वीकार कर दिया गया था कि दिनांक 23.11.2010 को आरोप-पत्र दाखिल किया गया था और स्वयं दिनांक 23.11.2010 को याची सहित अभियुक्तगण के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया गया था और तद्नुसार, याची द्वारा दाखिल आवेदन पोषणीय नहीं था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश पूर्णतः अवैध है क्योंकि आक्षेपित आदेश से और स्वयं प्राथमिकी से भी प्रकट है कि मामला दिनांक 6.9.2007 को संस्थापित किया गया था, जबकि अवर न्यायालय में दिनांक 23.11.2010 को आरोप-पत्र दाखिल किया गया था और उसी तिथि संज्ञान भी लिया गया था जो तीन वर्षों की अवधि के परे है। याची

के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि तीन वर्ष की अवधि के अवसान के बाद मामले का संज्ञान लेना दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 468 के अधीन वर्जित है और इस प्रकार, विधि की दृष्टि में आक्षेपित आदेश संपोषित नहीं किया जा सकता है।

5. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता नहीं है क्योंकि अभियुक्तगण में से एक फरार था जिस कारण आरोप–पत्र दाखिल करने में विलंब हुआ। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि मामले के उस दृष्टिकोण में आक्षेपित आदेश दूषित नहीं होता है और इसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

6. दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 468 का पठन निम्नलिखित है :–

*^^468. **ifjlhek&dky dh lekfIr d i'pkr lKku dk otu-**&(1) bl lfgrk e vU;= tlk vU;Fkk micfUèkr g mld flok;] dkb U;k;ky; mièkkjk (2) e fofufn"V iox d fdlh vijkèk dk lKku ifjlhek&dky dh lekfIr d i'pkr ugh djxkA*

(2) ifjlhek&dky]&

(a) Ng ekl gkxk] ;fn vijkèk doy teku l n.Muh; g(

(b) ,d o"k gkxk] ;fn vijkèk ,d o"k l vufèkd dh vofèk d fy, dkjkokl l n.Muh; g(

*(c) rhu o"k gkxk] ;fn vijkèk ,d o"k l vfèkd fdUr rhu o"k l vufèkd dh vofèk d fy, dkjkokl l n.Muh; gA***

7. अपराधों, जिनके लिए याची के विरुद्ध मामला संस्थापित किया गया था, में से भारतीय दंड संहिता की धारा 414 के अधीन अपराध के लिए अधिकतम दंड का प्रावधान है जिसकी महत्तम अवधि तीन वर्षों का कारावास है। मामले के उस दृष्टिकोण में, तीन वर्षों की अवधि बीतने के बाद अपराध का संज्ञान लेने में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 468 (2) (c) के अधीन स्पष्ट वर्जना है। आक्षेपित आदेश स्पष्टतः दर्शाता है कि तीन वर्ष की अवधि बीतने के बाद याची के विरुद्ध मामले में आरोप–पत्र दाखिल किया गया है और संज्ञान लिया गया है। मामले के उस दृष्टिकोण में, आक्षेपित आदेश पूर्णतः अवैध और पूर्णतः अधिकारिताविहीन है और विधि की दृष्टि में इसे संपोषित नहीं किया जा सकता है।

8. पूर्वोक्ति चर्चा की दृष्टि में, खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 114 वर्ष 2007 से उद्भूत होने वाले जी॰ आर॰ केस सं॰ 485 वर्ष 2007 में श्री एम॰ के॰ श्रीवास्तव, विद्वान ए॰ सी॰ जे॰ एम॰, खूँटी द्वारा पारित दिनांक 25.11.2010 का आक्षेपित आदेश एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है और याची को मामले से उन्मोचित किया जाता है। तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

अपोलो हेल्थ एण्ड लाइफ स्टाइल लिमिटेड एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (Cr.) No. 82 of 2010. Decided on 20th April, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 403 एवं 418/34—भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—संपत्ति का गैरईमानदार दुर्विनियोग और छल–समन जारी–यदि केवल संविदा का भंग

हुआ है, यह अपराध गठित नहीं करेगा–परिवाद में किए गए अभिकथन को अपराध के आवश्यक अवयवों को प्रकट करना होगा–वचनबंध ज्ञापन (memorandum of understanding) के अस्तित्वयुक्त रहने के दौरान लाइसेंस प्रदान करने और लाइसेंस करार निष्पादित करने में याचीगण की विफलता ने याचीगण को प्रतिभूति जमा राशि वापस लौटाने का दायी बनाया–ऐसे मामले में जहाँ अपना वादा पूरा करने में अभियुक्त की ओर से विफलता के संबंध में अभिकथन किए गए हैं, आरंभिक वादा करने के समय सह-आपराधिक आशय की अनुपस्थिति में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन कोई अपराध नहीं बनता है–भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 403 के अधीन अपराध के लिए विचारण का सामना करने का निर्देश न्यायिक विवेक के गैर-इस्तेमाल को उपदर्शित करता है–दांडिक अभियोजन अभिखंडित–आवेदन अनुज्ञात।

(पैराएँ 11 से 18)

निर्णयज विधि.–(2009) 8 SCC 743; AIR 1968 SC 1028; (1974) 2 SCC 231; AIR 1968 SC 1028; (1974) 2 SCC 231; (1999) 3 SCC 259; (2002) 3 SCC 89; (2000) 3 SCC 269; (2009) 3 SCC 78; (2009) 3 SCC 375; (2010) 10 SCC 361; (2007) 14 SCC 776—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Indrajeet Sinha, For the Petitioners; J.C. to G.P.-III, For the State; Mr. Rajan Raj, For the Respondent No.2.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–यह रिट आवेदन दिनांक 10.7.2009 के आदेश, जिसके द्वारा याचीगण को समन किया गया है और भारतीय दंड संहिता की धाराओं 403 और 418/34 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए विचारण का सामना करने का निर्देश दिया गया है, सहित परिवाद केस सं॰ 298 वर्ष 2009 से उद्भूत होने वाले याचीगण के संपूर्ण दांडिक अभियोजन के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

2. परिवाद केस सं॰ 298 वर्ष 2009 के संस्थापन के पीछे संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि परिवादी-प्रत्यर्थी सं॰ 2 मेसर्स क्लासिक ऑटोमोबाइल्स, मेसर्स टाटा मोटर्स लि॰ (कार डिविजन) का स्वत्वधारी है जबकि अभियुक्त/याची सं॰ 1 मेसर्स अपोलो हेल्थ एण्ड लाइफस्टाइल लिमिटेड भारतीय कंपनी अधिनियम, 1956 के अधीन निगमित कंपनी है जिसका रजिस्टर्ड कार्यालय 19 बिशप गार्डेन्स, आर॰ ए॰ पुरम, चेन्नई-600028 में है। अभियुक्त/याची सं॰ 2 उक्त कंपनी का मुख्य कार्यपालक अधिकारी और अभियुक्त/याची सं॰ 3 महाप्रबंधक है।

अभिकथित किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने अभियुक्त/याचीगण के कपटपूर्ण उत्प्रेरण पर धनबाद में ''द अपोलो क्लिनिक'' के नाम के अधीन क्लिनिक स्थापित करने के लिए दिनांक 7 अगस्त, 2007 को बचनबंध ज्ञापन किया। प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने अभियुक्तगण के कपटपूर्ण उत्प्रेरण पर आई॰ सी॰ आई॰ सी॰ आई॰ बैंक लिमिटेड, धनबाद पर भुगतेय दिनांक 6 अगस्त, 2007 के डिमान्ड ड्राफ्ट सं॰ 384949 के तहत अभियुक्त/याची सं॰ 1 को सेवाकर सहित लाइसेंस फीस के रूप में 28,09,000/- रुपयों का भुगतान किया है।

खंड 6 के मुताबिक, बचनबंध ज्ञापन तीस (30) दिनों की अवधि के लिए वैध था। आगे अभिकथित किया गया है कि प्रवंचनीय आशय और आपराधिक मन:स्थिति के कारण तीस दिनों की उक्त अवधि के भीतर लाइसेंस प्रदान नहीं किया गया था और, इसलिए, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने दिनांक 1.12.2008 को राशि वापस लौटाने के लिए ई॰ मेल भेजा किंतु कोई उत्तर नहीं दिया गया था। तब परिवादी ने पुन: दिनांक 25.12.2008 को अपने द्वारा जमा की गयी राशि को वापस लौटाने का अनुरोध करते हुए ई॰ मेल भेजा। प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने याचीगण को कानूनी नोटिस भी भेजा था किंतु उन्होंने राशि वापस नहीं लौटाया और प्रत्यर्थी सं॰ 2 को दोषपूर्ण हानि और स्वयं को दोषपूर्ण लाभ कारित करते हुए इसे अपने पास अवैध रूप से रख लिया।

समस्त पत्राचारों के बाद, जब राशि वापस लौटायी नहीं गयी थी, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद के न्यायालय में परिवाद दाखिल किया और जाँच के बाद भारतीय दंड संहिता की धाराओं 403, 418/34 के अधीन अपराधों के लिए विचारण का सामना करने के लिए अभियुक्तगण को समन करते हुए दिनांक 10.7.2009 को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 204 के अधीन आदेश पारित किया गया था।

3. याचीगण ने परिवाद केस सं॰ 498 वर्ष 2009 में पारित दिनांक 10.7.2009 के आक्षेपित आदेश और उक्त परिवाद केस से उद्भूत होने वाले संपूर्ण दांडिक अभियोजन को इस आधार पर चुनौती दिया है कि आक्षेपित दांडिक कार्यवाही, यदि इसे जारी रहने की अनुमति दी जाती है, विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग है। अवर न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 403, 418/34 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए विचारण का सामना करने का याचीगण को निर्देश देने वाला आदेश गलत रूप से पारित किया है। वस्तुत:, परिवाद में याचीगण के विरुद्ध किए गए अभिकथन उन अपराधों को गठित नहीं करते हैं जिनके लिए याचीगण को समन किया गया है। याचीगण की ओर से कोई गैरईमानदार अथवा कपटपूर्ण उत्प्रेरण नहीं था और यह कहना सही नहीं है कि कपटपूर्ण रूप से उत्प्रेरित किए जाने पर प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने राशि जमा किया था। स्वयं प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने अपोलो क्लिनिक के नाम पर हेल्थ क्लिनिक चलाने के लिए लाइसेंस प्रदान करने के लिए याचीगण के पास गया था और उसका आशय याची सं॰ 1 की ख्याति का उपयोग करना था।

4. निबंधनों और शर्तों को अच्छी तरह जानते हुए पक्षों द्वारा बचनबंध ज्ञापन हस्ताक्षरित किया गया था और खंड 4 के अनुसार, भुगतान की गयी राशि नन-रिफंडेबल और नन-एडजस्टेबल थी और उस पर कोई ब्याज नहीं दिया जाएगा। केवल 'कपटपूर्ण और गैरईमानदार आशय' जैसे शब्दों को परिवाद में अंत:स्थापन अथवा इनका उपयोग छल का अपराध गठित नहीं करेगा।

5. दाखिल किए गए परिवाद में अपराध के अवयवों का प्रकथन नहीं किए जाने और सिविल विवाद उपदर्शित करते हुए पक्षों के बीच हुए पूर्व पत्राचार की दृष्टि में ऐसे प्रकथनों पर दांडिक अपराध करने के प्रश्न अथवा दांडिक अभियोजन की अनुमति नहीं दी जा सकती है। यदि मात्र संविदा का भंग हुआ है, यह अपराध गठित नहीं करेगा; परिवाद में किए गए अभिकथन को अपराध के आवश्यक अवयवों को प्रकट करना ही होगा और, इसलिए, यह देखना न्यायालय का कर्तव्य है कि क्या प्रथम दृष्टया अभिकथन सही है; दांडिक कार्यवाही को उत्साहित नहीं करना चाहिए जब इसे असद्भावपूर्ण अथवा अन्यथा न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग पाया जाता है। उक्त निवेदन के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने **ऑल कारगो मूवर्स (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य बनाम धनेश बदरमल जैन एवं एक अन्य, (2007)14 SCC 776,** पर विश्वास किया है।

6. आगे प्रतिवाद किया गया है कि परिवादी/प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने स्वयं को बचनबंध ज्ञापन के निबंधनों और शर्तों को परिपूर्ण करने के लिए सक्षम नहीं पाया था और दिनांक 1.12.2008 को उसमें यह कथन करते हुए ई॰ मेल किया:-

> *^^ge vkidk ;g crkr g, vQlkl g fd fufèk ldV vkj cdk }kjk vud çktDVk e fnypLih ugh yu d dkj.k ge bl dke dk vkx y tku dh voLFkk e ugh gA***

तत्पश्चात्, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने आगे के पत्राचारों जैसे कानूनी नोटिस और परिवाद में अपने प्रतिवाद को बदलना शुरू किया था।

7. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि समय के किसी बिंदु पर प्रत्यर्थी सं॰ 2 को प्रवंचित करने का आशय याचीगण का कभी नहीं था। उन्होंने धन देने के कपटपूर्ण आशय से प्रत्यर्थी सं॰ 2 को

उत्प्रेरित कभी नहीं किया था। दिनांक 7 अगस्त, 2007 को हस्ताक्षरित बचनबंध ज्ञापन केवल एक माह के लिए वैध था किंतु तब भी प्रत्यर्थी सं॰ 2 से नोटिस प्राप्त करने के बाद अभियुक्तगण ने अपना सद्भाव अभिव्यक्त किया था और अपने उत्तर में उन्होंने बचनबंध ज्ञापन की वैधता को दिनांक 18.2.2009 तक बढ़ा दिया था। यह स्पष्टत: उपदर्शित करता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 के साथ छल करने अथवा राशि के दुर्विनियोग करने का आशय याचीगण का नहीं था बल्कि राशि का समपहरण समझौता ज्ञापन के शर्त के भंग का परिणाम था जो प्रत्यर्थी सं॰ 2 को अच्छी तरह से ज्ञात था।

याचीगण ने **ऑल कारगो मूवर्स (इंडिया) प्राईवेट लिमिटेड एवं अन्य (ऊपर)** के मामले में निर्णय के पैराओं 16 और 17 में किए गए संप्रेक्षणों पर विश्वास किया जिनका पठन निम्नलिखित है:–

*"16. gekjk er g fd ifjokn ;kfpdk e fd, x, vfHkdFku] ;fn mUg T;k dk R;k fy;k tkrk g vkj mudh li.krk e lgh ekuk tkrk g] v ijkèk çdV ugh djr gA mDr ç;ktu l] U;k;ky; u doy LohÑr rF;k dk fopkj e y ldrk g cfYd okn e çR;Fkh&1 oknh d vfHkopuk ij fopkj djuk Hkh vuK; gA ukfVl e oreku vihykFkhx.k d fo#) dkb Hkh vfHkdFku ugh fd;k x;k FkkA çfrokn doy okgdk vkj mud , tUVk dh vkj l mi{kk vkj@vFkok lfonk Hkx dk FkkA lfonk dk Hkx ek= v ijkèk xfBr ugh djrk gA mDr ç;ktu l] ifjokn ;kfpdk e fd, x, vfHkdFkuk dk mld vko';d vo;ok dk çdV djuk gh gkxkA tc flfoy okn yfcr g vkj ifjokn ;kfpdk flfoy okn nkf[ky dju d ,d o"k ckn nkf[ky dh x;h g] ge ;g irk dju d ç;ktu l fd D;k mDr vfHkdFku çFke n"V;k lgh g] i{kk d chp g, i=kpkj vkj vU; LohÑr nLrkotk dk fopkj e y ldr gA ;g dguk ,d vyx ckr g fd U;k;ky; bl ekM ij vfHk;Dr d cpko ij fopkj ugh djxk fdr ;g dguk fcYdy vyx g fd bl U;k;ky; dh vrfufgr vfèkdkfjrk dk ç;kx dju d fy, LohÑr nLrkotk dk n[kuk vuuK; gA nkfMd dk;okgh dk mRlkfgr ugh djuk pkfg, tc bl vlnHkkoi.k vFkok vU;Fkk U;k;ky; dh çfØ;k dk n#i;kx ik;k tkrk gA mPprj U;k;ky;k dk bl 'kfDr dk ç;kx djr g, U;k; dk mí'; ijk dju dk ç;kl djuk pkfg,A***

17. th0 lkxj ljh cuke m0 ç0 jkT; e bl U;k;ky; u er fn;k (SCC P. 643, Para 8):—

*"8. lfgrk dh èkkjk 482 d vèkhu vfèkdkfjrk dk ç;kx vR;Ur lkoèkkuhiod djuk gkxkA viuh vfèkdkfjrk dk ç;kx dju e mPp U;k;ky; dk lrgh rkj ij ekey dk ijh{k.k ugh djuk pkfg,A ;g n[kuk gkxk fd D;k ekey] tk vko';dr% flfoy çÑfr dk g] dk nkfMd v ijkèk dk tkek iguk;k x;k gA nkfMd dk;okgh fofèk e miyCèk vU; mipkjk dk 'kkVdV ugh gA vknf'kdk tkjh dju d igy nkfMd U;k;ky; dk vR;Ur lrd jguk gkxkA vfHk;Dr d fy, ;g ,d xHkhj ekeyk gA bl U;k;ky; u dfri; fl)krk dk vfèkdfFkr fd;k g ftud vkèkkj ij mPp U;k;ky; dk lfgrk dh èkkjk 482 d vèkhu viuh vfèkdkfjrk dk ç;kx djuk gA fdlh U;k;ky; dh çfØ;k d n#i;kx dk jkdu d fy, vFkok vU;Fkk U;k; dk mí'; ljf{kr dju d fy, bl èkkjk d vèkhu vfèkdkfjrk dk ç;kx djuk gkxkA***

19. vfuy egktu cuke Hkkj m|kx fy0 e bl U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k (SCC P 231, Para 8):—

"8. ifjokn d lkj dk n[kuk gkxkA ifjokn e vfHk0;fDr ^Ny dk ç;kx ek= ifj.kkegh gA nMkfèkdkjh d le{k nkf[ky ifjokn e 'kCnk ^çopuk* vkj ^Ny* vkj ify l d le{k nkf[ky ifjokn e 'kCn ^Ny* d mYy[k d flok, ,e0 vk0 ;0 djr le; vfHk;Dr d èkkk[kk] Ny vFkok diVi.k vk'k; d ckj e çdFku ugh g ft l l ;g fu"df"kr fd;k tk ldrk g fd Hkxrku d fy, ifjoknh dk çofpr dju dk vk'k; vfHk;Dr dk Fkk-------***

20. ghjkyky gfjyky Hkxorh cuke lh0 ch0 vkb0 e bl U;k;ky; u er fn;kh (SCC P 280 Para 40):—

*"40. fu.k;k dh J[kyk }kjk ;g lfuf'pr fofèk g fd Ny dk vijkèk LFkkfir dju d fy, ifjoknh dk ;g n'kku dh vko';drk gkrh g fd oknk vFkok vH;konu djr le; vfHk;Dr dk diVi.k vFkok xj bekunkj vk'k; FkkA ckn e oknk ijk dju e mldh foQyrk l vkjHk e gh vFkkr tc oknk fd;k x;k Fkk] ,l lg&vkijkfèkd vk'k; mièkkfjr ugh fd;k tk ldrk gA vfHky[k l ;g n[kk x;k g fd NV çek.ki= vko';d 'krk dk vrfo"V djr Fkk ftudk vuikyu e'khu d vk;kr d ckn dju dh vko';drk FkhA pfd th0 lh0 ,l0 bldk vuikyu ugh dj ldk Fkk] vr%] blu NV çek.k i= dk ykHk fy, fcuk lgh çdkj l vko';d 'kYdk dk Hkxrku fd;kA th0 lh0 ,l0 dk vkpj.k Li"Vr% minf'kr djrk g fd NV d fy, vkonu nr le; th0 lh0 ,l0 dk vFkok inèkkfj;k d :i e vihykFkhx.k dk dkb diVi.k vFkok xjbekunkj vk'k; ugh FkkA pfd xjbekunkj vkj diVi.k vk'k; vuifLFkr Fkk] nM lfgrk dh èkkjk 420 d vèkhu vijkèk dju dk ç'u gh mnHkr ugh gkrk gA***

8. याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे **वी॰ वाई॰ जोश एवं एक अन्य बनाम गुजरात राज्य एवं एक अन्य, (2009)3 SCC 78; शेरोन माइकल एवं अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य एवं एक अन्य, (2009)3 SCC 375**; और **वी॰ पी॰ श्रीवास्तव बनाम इंडियन एक्सप्लोसिव लिमिटेड एवं अन्य, (2010)10 SCC 361,**मामलों पर विश्वास किया है।

9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 2 के लिए उपस्थित अधिवक्ता ने याचीगण द्वारा दिए गए तर्कों का जोरदार विरोध किया है। उन्होंने निवेदन किया है कि बचनबंध ज्ञापन में उल्लिखित निबंधन और शर्त स्वयं में अभियुक्तगण के कपटपूर्ण और गैरईमानदार आशय को उपदर्शित करने के लिए पर्याप्त है। उन्होंने एक माह के भीतर लाइसेंस जारी नहीं किया था यद्यपि परिवादी/प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा आवश्यक फीस का भुगतान किया जा चुका था। याचीगण को बचनबंध ज्ञापन की वैधता अवधि के दौरान लाइसेंस प्रदान करना था किंतु उन्होंने छल एवं दुर्विनियोग के दांडिक आशय के कारण ऐसा लाइसेंस प्रदान नहीं किया था। जब याचीगण ने अपने दायित्व का पालन नहीं किया, प्रत्यर्थी सं॰ 2 के पास अपने द्वारा जमा की गयी राशि को वापस लौटाने के लिए उनको कहने के सिवाए कोई विकल्प नहीं था। इससे इनकार नहीं किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा जमा की गयी राशि याचीगण द्वारा अपने पास रख ली गयी है और, इसलिए, भारतीय दंड संहिता की धारा 403 के अधीन अपराध बिल्कुल बनता है। इसके अतिरिक्त, संपत्ति का दुर्विनियोग इस जानकारी के साथ छल के आशय के साथ था कि परिवादी को दोषपूर्ण हानि पहुँच सकती है। निवेदन किया गया था कि दांडिक कार्यवाही का अभिखंडन सदैव नियम के वजाय अपवाद है और आरंभिक चरण पर अभिखंडन के लिए मामले को विरल से विरलतम मामले के रूप में मानना होगा

ताकि अभियोजन किया जा सके। परिवाद में किए गए अभिकथनों को उनकी सत्यता अथवा असत्यता में गए बिना सहज स्वरुप से विचार में लेना होगा। परिवाद में किए गए अभिकथन सही हैं या नहीं, इसका विनिश्चय विचारण में दिए गए साक्ष्य के आधार पर करना होगा। यदि परिवाद में किए गए अभिकथन याचीगण के विरुद्ध मामला बनाते हैं अथवा अभिकथित अपराध के अवयवों को प्रकट करते हैं, याचीगण के विरुद्ध अग्रसर होने के लिए पर्याप्त आधार हैं। मात्र इसलिए कि संविदा के भंग के लिए उपचार प्रावधानित किया गया है, यह हमें इस निष्कर्ष की ओर नहीं ले जाता है कि सिविल उपचार ही परिवादी को उपलब्ध एकमात्र उपचार है। दांडिक विधि और सिविल उपचार परस्पर अनन्य नहीं है बल्कि स्पष्टत: समविस्तीर्ण हैं और विविध स्थितियों में इनका अनुसरण किया जा सकता है। प्रत्यर्थी सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने **मेडिकल केमिकल्स एवं फार्मा (प्रा॰) लि॰ बनाम बायोलॉजिकल ई॰ लि॰ एवं अन्य, (2000)3 SCC 269** पर विश्वास किया है।

प्रत्यर्थी सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने **कर्नाटक राज्य बनाम एम॰ देवेन्द्रप्पा एवं एक अन्य, (2002)3 SCC 89,** में विश्वास करते हुए निवेदन किया है कि उच्च न्यायालय को राज्य में उच्चतम न्यायालय होने के नाते सामान्यत: ऐसे मामले में प्रथम दृष्टया निर्णय देने से परहेज करना चाहिए जहाँ संपूर्ण तथ्य अपूर्ण और धुंधले हैं, विशेषत: जब साक्ष्य संग्रहित नहीं किया गया है और न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है और अंतर्ग्रस्त विवाद्यक, चाहे वे ताथ्यिक हो या विधिक, उस विशालता के हैं जिन्हें पर्याप्त सामग्री के बिना उनके सही परिप्रेक्ष्य में देखा नहीं जा सकता है। यह पता करने के लिए कि क्या मामले का समापन दोषमुक्ति में होगा अथवा दोषसिद्धि में, विचारण के पहले मामले का विस्तृत विश्लेषण करना आवश्यक नहीं है।

राजेश बजाज बनाम राज्य, दिल्ली का एन॰ सी॰ टी॰ एवं अन्य, (1999)3 SCC 259, पर विश्वास करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यदि परिवाद में किए गए प्रकथन प्रथम दृष्टया मामले की ताथ्यिक नींव निर्मित करते हैं; यह आवश्यक नहीं है कि अभिकथित अपराध के समस्त अवयवों को शब्दत: परिवाद में उद्धृत करना चाहिए और न ही यह आवश्यक है कि परिवाद को अनेक शब्दों में कथन करना चाहिए कि अभियुक्त का आशय गैरईमानदार अथवा कपटपूर्ण था। यह हो सकता है कि परिवाद में कथित तथ्य वाणिज्यिक संव्यवहार अथवा धनीय संव्यवहार प्रकट करेंगे। किंतु यह अभिनिर्धारित करने के लिए यह शायद ही एक कारण है कि छल का अपराध ऐसे संव्यवहार से बच निकलेगा। वस्तुत:, धनीय अथवा वाणिज्यिक संव्यवहारों के क्रम में अनेक छल किए गए थे।

प्रत्यर्थी सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि दस्तावेज का अर्थ लगाते हुए, खंड के सही अर्थ पर इसके समस्त भागों और इसके समुचित सांदर्भिक परिदृश्य में दस्तावेज का अर्थ लगाते हुए पहुँचना होगा। इस संबंध में, उन्होंने **भारत संघ बनाम रमन आयरन फाउन्ड्री, (1974)2 SCC 231,** पर विश्वास किया है। ऐसे मामले हैं जहाँ भावी संविदा के प्रति निर्देश ऐसे निबंधनों में किया गया है ताकि यह दर्शाया जा सके कि पक्षगण बाध्य होने का आशय तब तक नहीं रखते थे जब तक औपचारिक संविदा हस्ताक्षरित नहीं की जाती है। प्रश्न पक्षों के आशय और प्रत्येक मामला विशेष की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। उन्होंने **कोल्लिपारा श्रीरामुलु बनाम टी॰ अस्वथ नारायणा, AIR 1968 SC 1028,** पर विश्वास किया है।

10. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि भले ही संविदा का भंग हुआ है अथवा करार के किसी खंड विशेष को परिपूर्ण नहीं किया गया है, आधिक्य राशि के समपहरण की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। स्वीकृत रूप से, वचनबंध ज्ञापन जिस पर पक्षों द्वारा हस्ताक्षर किया गया था अंतिम संविदा नहीं थी। दस्तावेज का अर्थ लगाते हुए, खंड के सही अर्थ पर इसके समस्त भागों और इसके समुचित

सांदर्भिक परिदृश्य में दस्तावेजों का अर्थ लगाते हुए पहुँचना होगा। **भारत संघ बनाम रमन आयरन फाउंड्री (1974)2 SCC 231,** में विश्वास किया गया है।

कालिपारा श्री रामुलु बनाम टी॰ अस्वथ नारायण, AIR 1968 SC 1028, के मामले पर विश्वास करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि ऐसे मामले हैं जहाँ भावी संविदा के प्रति निर्देश ऐसे निबंधनों में किया गया है ताकि यह दर्शाया जा सके कि पक्षगण बाध्य होने का आशय नहीं रखते थे जब तक औपचारिक संविदा हस्ताक्षरित नहीं की जाती है। प्रश्न पक्षों के आशय और प्रत्येक मामला विशेष की विशेष परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

11. वचनबंध ज्ञापन ने विधिक रूप से बाध्यकारी लाइसेंस करार करने के लिए तीस दिनों का कठोर समय सीमा प्रावधानित किया था जो उसके पक्षों के वाणिज्यिक संबंध को शासित करेगा। समझौता ज्ञापन के अस्तित्वयुक्त होने के दौरान लाइसेंस प्रदान करने और संबंधित लाइसेंस करार को निष्पादित करने में याचीगण की विफलता ने भारतीय निर्णयज विधियों में मान्यता प्राप्त मात्रात्मक गुणागुण प्रत्यास्थापन सिद्धांत और भारतीय संविदा अधिनियम के प्रावधानों पर 28,09,000/- रुपयों की जमा की गयी प्रतिभूति राशि को वापस करने के लिए याची को दायी बनाया।

12. प्रत्यर्थी सं॰ 2 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आगे **नरिन्दर कुमार मलिक बनाम सुरिन्दर कुमार मलिक, (2009)8 SCC 743,** मामले पर विश्वास किया और निवेदन किया कि याचीगण ने वचनबंध ज्ञापन के खंड 2 जिसके द्वारा वे प्रत्यर्थी सं॰ 2 को लाइसेंस प्रदान करने के लिए बाध्य थे, का भंग किया था। याचीगण द्वारा प्रावधानित टेकनिकल और ऑपरेशनल स्पेसिफिकेशन के मुताबिक क्लिनिक स्थापित करने की प्रत्यर्थी सं॰ 2 की बाध्यता केवल इस संबंध में विस्तृत प्रावधानों को अंतर्विष्ट करने वाले लाइसेंस करार के अधीन आरंभ होनी थी जिसे वचनबंध ज्ञापन के अधीन करना था जिसका अवसान तीस दिनों की संक्षिप्त अवधि के भीतर हो जाना था। इस प्रकार, जब याचीगण द्वारा वचनबंध ज्ञापन का आदर नहीं किया गया था, जिन्होंने इसके निबंधनों और शर्तों का व्यतिक्रम किया था, उक्त समझौता ज्ञापन को प्रभाव नहीं दिया जा सकता है। प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने सही प्रकार से यह मामला दर्ज किया है और यह पोषणीय है।

13. दोनों पक्षों द्वारा दिए गए तर्क यह प्रश्न सृजित करते हैं कि क्या परिवाद में किए गए प्रतिवाद प्रथम दृष्टया छल के अपराध के अवयवों को आकृष्ट करते हैं? इस प्रश्न का उत्तर देने के पहले भारतीय दंड संहिता की धारा 415 का उल्लेख करना वांछनीय है जो छल को निम्नलिखित रूप में परिभाषित करता है:–

*415. **Ny-**&tk dkb fdlh 0;fDr l çopuk dj ml 0;fDr dk] ftl bl çdkj çofpr fd;k x;k g] diViod ;k cbekuh l mRçfjr djrk g fd og dkb lifÙk fdlh 0;fDr dk ifjnÙk dj n] ;k ;g lEefr n n fd dkb 0;fDr fdlh lifÙk dk j[k ;k lk'k; ml 0;fDr dk] ftl bl çdkj çofpr fd;k x;k g] mRçfjr djrk g fd og ,lk dkb dk; dj] ;k dju dk yki dj] ftl og ;fn ml gj çdkj çofpr u fd;k x;k gkrk rk] u djrk ;k dju dk yki u djrk] vkj ftl dk; ;k yki l ml 0;fDr dk 'kkjhfjd] ekufld] [;kfr lcèkh ;k lkifÙkd udlku ;k vigkfu dkfjr gkrh g] ;k dkfjr gkuh lHkkO; g] og ^^Ny** djrk g] ;g dgk tkrk gA***

छल का अपराध बनता हुआ तब तक नहीं कहा जा सकता है जब तक निम्नलिखित अवयवों को संतुष्ट नहीं किया जाता है:–

(i) >Bk vFkok Hkked vH;konu djd vFkok vU; ÑR; vFkok yki }kjk 0;fDr dh çopuk(

(ii) fdlh 0;fDr dk fdlh lifÙk dk nu d fy, diViod vFkok xj bekunkj :i l mRçfjr djuk(;k ;g lgefr nuk fd dkb 0;fDr fdlh lifÙk dk viu ikl j[kxk vkj vrr% ml 0;fDr dk dN dju vFkok ugh dju tk og djrk vFkok ugh djrk d fy, vk'k;iod mRçfjr djukA

छल का अपराध गठित करने के लिए परिवादी को यह दर्शाना आवश्यक है कि वादा अथवा अभ्यावेदन करते समय अभियुक्त का कपटपूर्ण अथवा गैरईमानदार आशय था। ऐसे मामले में भी जहाँ अपना वादा पूरा करने के लिए अभियुक्त की ओर से विफलता के संबंध में अभिकथन किए गए हैं; आरंभिक वादा करते समय सह-आपराधिक आशय की अनुपस्थिति में दंड संहिता की धारा 420 के अधीन अपराध बनता नहीं कहा जा सकता है।

सामान्यत: दांडिक मामला के संस्थापन के पहले पक्षगण के बीच पत्राचार को निर्दिष्ट नहीं किया जाता है किंतु यह विचार करने के लिए कि क्या करार की शुरूआत में ही कपटपूर्ण और गैरईमानदार आशय उपस्थित था, मैं महसूस करता हूँ कि पक्षों के बीच किए गए ऐसे अविवादित पत्राचारों पर गौर किया जा सकता है यह देखने के लिए कि कपटपूर्ण और गैरइमानदार आशय उपस्थित था या नहीं?

14. मैं प्रत्यर्थी सं॰ 2 की ओर से दिए गए तर्कों से सहमत हूँ कि अभियुक्त द्वारा किए गए अपराध के अवयवों को परिवाद में शब्दत: कहने की आवश्यकता नहीं है किंतु साथ ही शब्दों 'कपटपूर्ण और गैरईमानदार आशय'' का प्रयोग छल का अपराध गठित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। प्रत्येक मामले को उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा ग्रहण किए गए दस्तावेजों पर देखना होगा।

यह भी स्पष्ट है कि विद्वान दंडाधिकारी ने कोई कारण दिए बिना याचीगण को भारतीय दंड संहिता की धारा 403 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए विचारण का सामना करने का निर्देश दिया है जो न्यायिक विवेक के गैर-इस्तेमाल को उपदर्शित करता है, परिवाद भारतीय दंड संहिता की धारा 403 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दाखिल नहीं किया गया है। भारतीय दंड संहिता की धारा 403 के अधीन दिए गए उदाहरणों में से कोई भी वर्तमान मामले को आच्छादित नहीं करता है। वचनबंध ज्ञापन के निबंधनों और शर्तों के अधीन सेवा शुल्क के साथ लाइसेंस फीस का भुगतान परिवादी द्वारा किया गया था जिसे याची कंपनी ने परिवादी की ओर से बाध्यता का पालन नहीं किए जाने के कारण समपहृत कर लिया गया है और उक्त राशि वचनबंध ज्ञापन के निबंधनों के मुताबिक वापस किए जाने अथवा समायोजित किए जाने लायक नहीं थी।

उक्त निबंधनों और शर्तों की दृष्टि में याची द्वारा चल संपत्ति के गैर ईमानदार दुर्विनियोग का प्रश्न उद्‌भूत नहीं होता है, राशि का वापस नहीं किया जाना समझौता ज्ञापन के निबंधनों और शर्तों का आनुषंगी हो सकता है। यदि कोई पक्ष व्यथित था, उक्त पक्ष को विरोधी पक्ष पर मुकदमा करने का पूरा अधिकार था और कि उसको उपचार सदैव उपलब्ध था।

15. अब स्वीकृत तथ्यों पर आते हुए, जैसा पक्षों के अभिवचन से प्रकट है, मैं पाता हूँ कि उनके बीच निष्पादित समझौता ज्ञापन से इनकार नहीं किया गया है। प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने परिवाद के पैरा 6 में प्रकथन किया है कि दिनांक 1.12.2008 को राशि को वापस लौटाने के लिए अभियुक्तगण को ई॰ मेल भेजा गया था और ई॰ मेल का प्रतिवाद, जैसा याची कंपनी द्वारा उनके नोटिस के उत्तर में उद्धृत किया गया है, से इनकार नहीं किया गया है। वचनबंध ज्ञापन दिनांक 7 अगस्त, 2007 को निष्पादित किया गया था

और वचनबंध ज्ञापन की वैधता केवल एक माह के लिए थी। प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने पहले-पहल दिनांक 1.12.2008 को अर्थात् एक वर्ष की अवधि के अवसान के बाद राशि वापस लौटाने के लिए कहा था और बाध्यता के अपने भाग का पालन नहीं करने का कारण स्वीकार किया था। तत्पश्चात् प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने दिनांक 9.1.2009 को राशि वापस लौटाने के लिए कहते हुए कानूनी नोटिस भेजा था जिसका याची कंपनी द्वारा सम्यक रूप से उत्तर दिया गया था और उस उत्तर के पैरा 10 के तहत वचनबंध ज्ञापन की वैधता अवधि पुनः दिनांक 18.2.2009 तक के लिए बढ़ा दी गयी थी। पक्षों के बीच किए गए पूर्व निर्दिष्ट पत्राचार स्पष्टतः उपदर्शित करते हैं कि परिवादी अपोलो क्लिनिक के नाम पर धनबाद में हेल्थ क्लिनिक चलाने के लिए लाइसेंस प्रदान किए जाने के लिए याची-कंपनी के पास गया था। इस प्रकार, याची कंपनी द्वारा किया गया उत्प्रेरण प्रतीत नहीं होता है। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 भी एक प्रतिष्ठित व्यवसायी है, जैसा उसके द्वारा स्वीकार किया गया है और इसलिए यह उम्मीद की जाती है कि वह किसी वाणिज्यिक करार के परिणामों को जानता होगा। मेरे कहने का अर्थ यह है कि वचनबंध ज्ञापन का निष्पादन सोच समझ कर किया गया था।

16. अगला बिंदु यह है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 वचनबंध ज्ञापन की वैधता के अवसान के तुरन्त बाद दांडिक मामला संस्थापित करने में तत्पर नहीं था जब लाइसेंस प्रदान नहीं किया गया था। यह उपधारित किया जाएगा कि समय के उस बिंदु पर प्रत्यर्थी सं॰ 2 निश्चय ही इस निष्कर्ष पर पहुँचा होगा कि उसके साथ छल किया गया है किंतु दांडिक मामला दाखिल नहीं किया गया था बल्कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने राशि वापस लौटाने के लिए पत्राचार शुरू किया जो उनके द्वारा हस्ताक्षरित समझौता ज्ञापन के निबंधनों और शर्तों के अनुसार वापस लौटाए और समायोजित किए जाने लायक नहीं थी। याची का निष्पक्ष आशय प्रकट है जब उसने 1½ वर्षों बाद भी और एक माह के लिए वचनबंध ज्ञापन की वैधता को बढ़ा दिया।

17. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में और उपर-निर्दिष्ट किए गए मामलों, जिन पर याचीगण ने विश्वास किया है, में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विचार करते हुए मैं महसूस करता हूँ कि परिवाद केस सं॰ 298 वर्ष 2009 से उद्भूत होने वाला याचीगण का अभियोजन और दिनांक 10.7.2009 का आदेश न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के तुल्य होगा और ऐसे अभियोजन को जारी रखने की अनुमति नहीं देना चाहिए। जहाँ तक समपहृत किए जाने के लिए अपेक्षित राशि अथवा संविदा अधिनियम की समुचित प्रयोज्यता के प्रश्न का संबंध है, ये सिविल कार्यवाही में प्रतितोष प्राप्त करने लायक मामले हैं जिसके लिए परिवादी को पूरी आजादी है।

18. पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, यह रिट आवेदन अनुज्ञात किया जाता है और परिवाद केस सं॰ 298 वर्ष 2009 से उद्भूत होने वाली संपूर्ण दांडिक अभियोजन और न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 10.7.2009 का आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

---

ekuuh; vkjï dï ejkfB;k ,o Mhï ,uï mikè;k;] U;k;efrx.k

गुड्डू मिश्रा (335 में)

सूरजभान सिंह उर्फ चूहा (381 में)

सुमन सिंह (391 में)

cuke

झारखंड राज्य (सभी में)

Criminal Appeal (DB) Nos. 335, 381 with 391 of 2005. Decided on 16th April, 2012.

सत्र विचारण सं॰ 385 वर्ष 1995 में प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 9.3.2005 और दिनांक 11.3.2005 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

(क) भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—हत्या–सामान्य आशय–आजीवन कारावास अधिनिर्णीत–अभियोजन साक्षियों का साक्ष्य विश्वासोत्पादक–चाक्षुक साक्ष्य के विवरण चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा पूर्णतः संपुष्ट किए गए–अ॰ सा॰ के साक्ष्य को केवल इसलिए त्यक्त नहीं किया सकता है क्योंकि वह मृतक का पुत्र है और हितबद्ध गवाह है–समस्त चारों अपीलार्थीगण मृतक की हत्या करने के आशय के साथ घटनास्थल पर गए थे–अभियुक्त की दोषसिद्धि सुरक्षित करवाने के लिए अपराध करने के निश्चित हेतु को स्थापित करना अभियोजन के लिए सदैव आवश्यक नहीं है–यह सदैव दिए गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से संबंधित होगा–हेतु की अनुपस्थिति आवश्यकतः अभियुक्त की दोषमुक्ति में परिणत नहीं होती है जब उसे अन्यथा तर्कपूर्ण और विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा दोषी पाया जाता है–अपील खारिज।

(पैराएँ 6, 9 से 17)

(ख) दांडिक विधि–साक्ष्य का अधिमूल्यन–यदि दोषसिद्धि केवल एक साक्ष्य पर आधारित है, इसका संवीक्षण अत्यन्त सावधानीपूर्वक करना होगा–जब तक ऐसे एकमात्र चश्मदीद गवाह का परिसाक्ष्य पूर्णतः सत्य नहीं माना जाता है, दोषसिद्धि पारित नहीं की जा सकती है–सूचक ने कथन किया है कि वह घटना के समय पान की दुकान में उपस्थित था और उसने प्रहार देखा था–अभिलेख पर साक्ष्य उपदर्शित करते हैं कि सूचक की पहचान अपीलार्थीगण को ज्ञात थी और यदि उसे वहाँ उपस्थित पाया गया था, दुष्टों द्वारा उस पर भी निशाना साधा गया होता–स्वतंत्र गवाह के परिसाक्ष्य को त्यक्त नहीं किया जा सकता है क्योंकि उसे पक्षद्रोही घोषित नहीं किया गया है। **(पैरा 9)**

निर्णयज विधि.–1964(1) Cr. L.J. 566; (2010) 1 SCC 108; 1964 (1) Cr. L.J. 564; 2010 (7) SCC 759; 2011(3) Crimes 10 SC; (2010) 7 Supreme Court Cases 759—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s T.R. Bajaj, H.K. Sikarwar (in 335), M/s A.K. Chaturvedi (in 381); Mr. Jitendra S. Singh (in 391), For the Appellant; M/s Amaresh Kumar, Krishna Shekhar (in all), For the State.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–इन दांडिक अपीलों को सत्र विचारण सं॰ 385 वर्ष 1995 (जुगसलाई पी॰ एस॰ केस सं॰ 70 वर्ष 1994, जी॰ आर॰ सं॰ 708 वर्ष 1994 के तत्सम) में प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 9.3.2005 और दिनांक 11.3.2005 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा अपीलार्थीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध का दोषी पाया गया है और कठोर आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है।

2. दिनांक 25.4.1994 को सायं 4 बजे गौशाला चौक, पी॰ एस॰ जुगसलाई में दर्ज संजू कुमार सिंह के फर्दबयान से सामने आने वाले तथ्य ये हैं कि सूचक का पिता गौशाला चौक, जुगसलाई अवस्थित अपने पान की दुकान में बैठा हुआ था। दोपहर लगभग 3.15 बजे अपीलार्थीगण सुमन सिंह, सूरजभान सिंह उर्फ चूहा, गुड्डु मिश्रा और मुन्ना यादव (विचारण के दौरान फरार) घटनास्थल पर आए। सूरजभान सिंह उर्फ चूहा, मुन्ना यादव और गुड्डु मिश्रा ने मृतक को उसकी पान के दुकान से खींच कर निकाला और सड़क पर पटक दिया। पूर्वोक्त दुष्टों ने सुमन सिंह को मृतक की हत्या करने के लिए उकसाया जिस पर सुमन सिंह ने अपनी कमर से छुरा निकाला और ललन सिंह (मृतक) की छाती पर उपहतियाँ कारित करते हुए 7-8 वार किया। मृतक और सूचक मदद के लिए चिल्लाए किंतु आस-पास के दुकानदारों ने अपनी दुकान बंद कर दी और भाग गए। ललन सिंह (मृतक) पर उपहतियाँ कारित करने के बाद अपीलार्थीगण गड़हा

बासा बस्ती की ओर चले गए। दुष्टों द्वारा घटनास्थल छोड़ने के बाद मुहल्ले के लोग और गवाह जमा हुए और घायल को निकट के जुगसलाई अस्पताल में ले गए और वहाँ से एम॰ जी॰ एम॰ मेडिकल कॉलेज एण्ड हॉस्पीटल ले गए जहाँ ललन सिंह को मृत घोषित किया गया था। पुलिस घटनास्थल पर आयी और सूचक संजू सिंह (अ॰ सा॰ 7) जो मृतक का पुत्र है का फर्दबयान दर्ज किया और अपीलार्थीगण के विरुद्ध धारा 302/34 के अधीन जुगसलाई पी॰ एस॰ केस सं॰ 70 वर्ष 1994 दर्ज किया।

3. अपीलार्थीगण को आरोप-पत्रित किया गया था और सुपुर्दगी के बाद भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/34 के अधीन आरोपों को विरचित किए जाने के बाद उन्हें विचारण पर रखा गया था।

4. अभियोजन ने कुल मिलाकर 11 गवाहों का परीक्षण किया है जिसमें से लल्लू सिंह यादव (अ॰ सा॰ 1) फर्द बयान का अनुप्रमाणक साक्षी है; मोहन भगत (अ॰ सा॰ 3) और जवाहर राम (अ॰ सा॰ 4) रक्तरंजित मिट्टी की जब्ती के गवाह हैं; नवल किशोर सिंह (अ॰ सा॰ 5), हरीश तिवारी (अ॰ सा॰ 9) और विशाल यादव (अ॰ सा॰ 11) पक्षद्रोही हो गए हैं और उन्होंने अभियोजन मामले का समर्थन नहीं किया है। अतः डॉ॰ अखिलेश कुमार चौधरी (अ॰ सा॰ 2), सज्जन कुमार गढ़वाल (अ॰ सा॰ 6), संजू कुमार यादव सूचक (अ॰ सा॰ 7), तारकेश्वर दूबे (अ॰ सा॰ 8) और सुंदर देव भगत (अ॰ सा॰ 10) के साक्ष्य पर चर्चा करने की आवश्यकता है।

5. अ॰ सा॰ 2 डॉ॰ अखिलेश कुमार चौधरी ने दिनांक 26.4.1994 को दोपहर लगभग 1 बजे मृतक ललन सिंह के मृत शरीर का शव परीक्षण किया और शवपूर्ण छुरे के निम्नलिखित जख्मों को पाया:–

(i) ck; fgLl ij] feM pLV d lkeu 1.5 cm x 0.025 cm x bVj dkLVy Lil(

(ii) fupyh Nkrh d nk; ikf'od igy d mij 1.3 cm x 0.25 cm.

(iii) mijh Nkrh d ck; fiNy fgLl d mij x .25 cm x Nkrh rd xgjkA

(iv) mijh Nkrh d ck; fiNy fgLl d mij 2 cm x 0.25 cm x Nkrh rd xgjkA

(v) mijh Nkrh d ck; fiNy fgLl d mij 2 cm x 0.15 cm x Nkrh rd xgjkA

(vi) Nkrh d ck; fiNy fgLl d mij 1.5 cm x 0.25 cm x Nkrh rd xgjkA

(vii) fupyh Nkrh d nk; fiNy fgLl d mij 1.5 cm x .25 cm x Nkrh rd xgjkA

(viii) pLV Ldkiyj ,fj;k d nk; fiNy fgLl d mij 2 cm x .25 cm x Nkrh rd xgjkA

(ix) mijh Nkrh d nk; fiNy fgLl d mij 2 cm x 1.5 cm x Nkrh rd xgjkA ikLVk dkyMy tD'ku d fudV pkFkh ilyh dVh gbA

6. संजू कुमार सिंह (अ॰ सा॰ 7) जो सूचक है ने अपने द्वारा दिए गए फर्दबयान का समर्थन किया है। उसने कथन किया है कि घटना की तिथि पर अर्थात् दिनांक 25.4.1994 को उसका पिता गौशाला चौक, जुगसलाई, जमशेदपुर अवस्थित पान की अपनी दुकान पर बैठा था। दोपहर लगभग 3.15 बजे अपीलार्थीगण सुमन सिंह, सूरजभान सिंह उर्फ चूहा, गुड्डू मिश्रा और मुन्ना यादव घटनास्थल पर आए। गुड्डु मिश्रा, मुन्ना यादव और सूरजभान सिंह उर्फ चूहा ने मृतक को उसकी दुकान से खींचकर निकाला और उसे जमीन पर पटक दिया। उन्होंने सुमन सिंह को मृतक की हत्या करने के लिए कहा जिसके बाद सुमन सिंह ने अपनी कमर से छूरा निकाला और उसकी छाती पर उपहति कारित करते हुए मृतक के शरीर पर बार-बार वार किया। स्थिति की गंभीरता को देखते हुए, निकट के दुकानदार अपनी दुकान बंद करके भाग गए। उसने विनिर्दिष्टतः कथन किया है कि सुमन सिंह ने मृतक के शरीर पर 7/8 चाकू का

वार किया। अपराध करने के बाद, समस्त अभियुक्त अपीलार्थीगण गोराबासा बस्ती की ओर चले गए। प्रहार के बाद मुहल्ले के लोग और चश्मदीद गवाह वहाँ जमा हुए और घायल को निकट के जुगसलाई अस्पताल में और वहाँ से एम॰ जी॰ एम॰ मेडिकल कॉलेज एण्ड हॉस्पीटल ले जाया गया जहाँ उसे मृत घोषित किया गया था। सायं लगभग 4 बजे पुलिस घटनास्थल पर आयी और इस गवाह (सूचक) का फर्दबयान दर्ज किया। उसने फर्दबयान पर अपना हस्ताक्षर सिद्ध किया है और आगे कथन किया कि लल्लू सिंह और विशाल सिंह ने अनुप्रमाणक साक्षी के रूप में फर्दबयान पर हस्ताक्षर किया था। मृतक की हत्या के पीछे का कारण यह बताया जाता है कि सुमन सिंह, अंगद सिंह और गुड्डु मिश्रा ने मृतक को पंचायती में लिप्त नहीं होने के लिए धमकाया था, अन्यथा उसे गंभीर परिणाम भुगतना पड़ेगा। धमकाने की यह घटना एक माह पहले मृतक के घर पर हुई थी। अपने प्रति परीक्षण में, इस गवाह ने कथन किया है कि वह रात्रि 8 बजे तक घटनास्थल पर रूका रहा। जब यह घटना हुई थी, वह आर॰ पी॰ पटेल विद्यालय में पाँचवी कक्षा में अध्ययन कर रहा था। विद्यालय सुबह की शिफ्ट में प्रातः 7 बजे से 11.30 बजे तक चल रहा था। विद्यालय की पढ़ाई के बाद, वह अपने पिता के साथ पान की दुकान पर बैठा करता था। घटना की तिथि पर, वह दुकान पर उपस्थित था। उसने आगे कथन किया है कि उसका पिता खाना खाने दिन में 12 बजे दुकान से चला गया था और दोपहर 2 बजे दुकान पर वापस आया था। उसने यह कथन भी किया है कि न्यायालय से नोटिस पाने के बाद वह साक्ष्य देने अपने चाचा के साथ अपने गाँव से आया था। बचाव पक्ष ने दुकान में उसकी उपस्थिति के संबंध में पहले की घटना, जब सुमन सिंह द्वारा धमकी दी गयी थी के बारे में और पान की दुकान से स्थानों की दूरी के बारे में विस्तारपूर्वक प्रति परीक्षण किया था जिसका उसने उत्तर दिया है।

7. सज्जन कुमार गढ़वाल (अ॰ सा॰ 6) और तारकेश्वर दूबे (अ॰ सा॰ 8) वे गवाह हैं जो हल्ला सुनकर घटना स्थल पर आए थे। जब वे पहुँचे, उन्होंने मृतक को उपहतियाँ पाए खून से लथपथ पड़ा देखा। वे मृतक को जुगसलाई पी॰ एच॰ सी॰ ले गए और वहाँ से एम॰ जी॰ एम॰ मेडिकल कॉलेज एण्ड हॉस्पीटल ले गए जहाँ घायल को मृत घोषित किया गया था। सुंदरदेव भगत (अ॰ सा॰ 10) अनुश्रुत गवाह है और उसने कथन किया है कि उसने शाम में ललन सिंह की हत्या के बारे में सुना था।

8. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने सत्र न्यायाधीश के निष्कर्षों को अनेक आधारों पर चुनौती दी है और निवेदन किया है कि संपूर्ण अभियोजन मामला अ॰ सा॰ 7 के एकल परिसाक्ष्य पर आधारित है जो और कोई नहीं बल्कि मृतक का पुत्र है। अ॰ सा॰ 7 के बयान के अनुसार, वह घटना के पहले से घटनास्थल पर उपस्थित था और रात्रि 8 बजे तक वहाँ उपस्थित रहा। वह अपने पिता के साथ नहीं गया था, तब वह किस प्रकार फर्दबयान दिए जाने के समय जान सकता था कि उसके पिता को मृत घोषित किया गया था? तर्क किया गया था कि अ॰ सा॰ 7 चश्मदीद गवाह नहीं है और उसने घटना नहीं देखा था। अ॰ सा॰ 7 का आचरण विश्वास उत्पन्न नहीं करता है, और उसका साक्ष्य विश्वसनीय नहीं माना जा सकता है।

9. निर्णयों की श्रृंखला में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि यदि दोषसिद्धि एकल साक्ष्य पर आधारित है, उसका संवीक्षण अत्यन्त सतर्कतापूर्वक एवं सावधानी से करना होगा। जब तक ऐसे एकमात्र चश्मदीद गवाह का परिसाक्ष्य पूर्णतः सत्यपूर्ण नहीं माना जाता है, दोषसिद्धि पारित नहीं की जा सकती है। सूचक ने कथन किया है कि वह घटना के समय पान की दुकान पर उपस्थित था और उसने प्रहार देखा था। अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य उपदर्शित करते हैं कि सूचक की पहचान अपीलार्थीगण को ज्ञात थी और यदि उसे वहाँ उपस्थित पाया गया होता, दुष्टों द्वारा उसे भी निशाना बनाया जाना चाहिए

था। इसके अतिरिक्त, इस गवाह ने कथन किया है कि वह घटना के बाद अपने घायल पिता के साथ अस्पताल नहीं गया था और घटनास्थल पर रात्रि 8 बजे तक उपस्थित बना रहा। ऐसी परिस्थितियों में ऐसे आचरण को मानव का स्वाभाविक आचरण नहीं माना जा सकता है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण गवाह अ॰ सा॰ 8 है जो मृतक को अस्पताल ले गया और रास्ते में पुलिस को सूचित किया जब मृतक को एम॰ जी॰ एम॰ मेडिकल कॉलेज अस्पताल ले जाया जा रहा था। इस गवाह ने अपने अभिसाक्ष्य में स्पष्टत: कथन किया है कि उसने सूचक को घटनास्थल पर उपस्थित नहीं देखा था जब उन्होंने उसको अस्पताल ले जाने के लिए मृतक को घटना स्थल से हटाया था। इस स्वतंत्र गवाह के परिसाक्ष्य को त्यक्त नहीं किया जा सकता है क्योंकि उसे पक्षद्रोही घोषित नहीं किया गया है।

10. अगला बिंदु जिसे विद्वान अधिवक्ता ने उठाया है, यह है कि अभियोजन हत्या के पीछे का हेतु सिद्ध करने में विफल रहा है। सूचक ने अभिलेख पर लाया है कि घटना के दिन के पहले सुमन सिंह, गुड्डु मिश्रा और अंगद सिंह ने मृतक को धमकाया था और उसे पंचायती न करने की चेतावनी दी थी किंतु इस तथ्य को साक्ष्य द्वारा संपुष्ट नहीं किया गया है।

अ॰ सा॰ 7 के साक्ष्य के अनुसार, घटना बाजार में दोपहर लगभग 3.15 बजे हुई किंतु किसी स्वतंत्र गवाह ने अभियोजन मामले का समर्थन नहीं किया है। घटना स्थल को सिद्ध करने के लिए अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण नहीं किया गया है। प्राथमिकी भेजने में विलंब हुआ था। अपीलार्थीगण गुड्डु मिश्रा और सूरजभान सिंह उर्फ चूहा की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं ने आगे निवेदन किया कि ये अपीलार्थीगण स्वीकृत तौर पर घटना के समय किसी भी हथियार से लैस नहीं थे और उन्होंने किसी तरीके से प्रहार में भाग नहीं लिया था। घटनास्थल बाजार का स्थान है जहाँ व्यक्तियों की उपस्थिति स्वाभाविक है। अभिलेख पर कोई साक्ष्य नहीं है कि पूर्व मतैक्य था और इन अपीलार्थीगण का मृतक की हत्या करने का सामान्य आशय था। अपीलार्थीगण ने **पंजाब राज्य बनाम हरबंश सिंह, (AIR 2003 SC 2268); बाबू सिंह बनाम पंजाब राज्य, (1964 (1) Cr. LJ. 566)** और **अरुण कुमार शर्मा बनाम बिहार राज्य, (2010 (1) SCC 108)** में दिए गए निर्णयों पर विश्वास किया है।

11. दूसरी ओर, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने अपीलार्थीगण की ओर से दिए गए तर्कों का जोरदार विरोध किया है और दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंडादेश का समर्थन किया है। उन्होंने आगे इंगित किया है कि सूचक जो घटना के समय लगभग 12 वर्षों का था, ने किसी से प्रभावित हुए बिना मासूमियत से घटना का सही चित्र प्रस्तुत किया है। उसे घटना के बाद और फर्दबयान दर्ज किए जाने के पहले किसी के साथ सलाह करने का अवसर नहीं था। कोई भी उस मानसिक आघात की कल्पना कर सकता है जिसे सूचक ने घटना देखने के बाद पाया जिसमें उसके पिता की मृत्यु हो गयी और उस उम्र के बालक से उम्मीद नहीं की जाती है कि वह पुलिस के समक्ष झूठा बयान देगा और निर्दोष व्यक्तियों को आलिप्त करने का प्रयास करेगा।

यह तर्क किया गया है कि दोषसिद्धि चश्मदीद गवाह के एकमात्र साक्ष्य पर आधारित की जा सकती है यदि यह पूर्णत: विश्वसनीय है। इन अपीलों में गुणागुण नहीं है और ये खारिज किए जाने के दायी हैं।

12. हमने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है। हम स्वीकार करते हैं कि अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि एकमात्र चश्मदीद गवाह के साक्ष्य पर आधारित है जो मृतक का पुत्र है। अपीलार्थीगण की ओर से दिए गए तर्कों को ध्यान में रखते हुए हमने अ॰ सा॰ 7 के साक्ष्य का

सावधानीपूर्वक संवीक्षण किया है और हम पाते हैं कि घटना के एक घंटे के भीतर दर्ज उसके फर्दबयान में सूचक द्वारा दिया गया बयान न्यायालय में उसके अभिसाक्ष्य में उसके द्वारा पूरी तरह संपुष्ट किया गया है यद्यपि इसे घटना के पाँच वर्ष बाद दर्ज किया गया था। हम पाते हैं कि यह गवाह घटना के समय पाँचवीं कक्षा में अध्ययन कर रहा था। उसने न्यायालय में अभिसाक्ष्य के समय अपनी आयु 16 वर्ष बतायी है, तद्द्वारा जिसका अर्थ है कि सूचक घटना के समय लगभग 11-12 वर्ष का रहा होगा। अ॰ सा॰ 7 का बयान, जिस तरीके से उसने न्यायालय में अभिसाक्ष्य दिया, उपदर्शित करता है कि उसने अपना बयान इस तरीके से दिया था मानो संपूर्ण घटना उसके दिमाग में चलचित्र की तरह कौंध रही थी और उसने इसका कोई विवरण नहीं भुलाया था। उसने कथन किया है कि उसके पिता को रोड पर पटक दिए जाने के बाद अपीलार्थी सुमन सिंह ने उस पर चाकू का 7-8 वार किया और यह तथ्य डॉ॰ ए॰ के॰ चौधरी (अ॰ सा॰ 2) के साक्ष्य से पूर्णत: संपुष्ट होता है जिन्होंने मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण किया था। डॉक्टर ने मृतक के शरीर पर छुरे का 8-9 जख्म पाया था। इस प्रकार, चाक्षुक साक्ष्य का विवरण चिकित्सीय साक्ष्य से पूर्णत: संपुष्ट किया गया प्रतीत होता है। विद्वान अधिवक्ता ने बिंदु उठाया है कि किसी स्वतंत्र गवाह ने घटना का समर्थन नहीं किया है यद्यपि यह बीच बाजार में दिनदहाड़े हुई थी। इस संदर्भ में, अ॰ सा॰ 7 का साक्ष्य पुन: प्रासंगिक बन जाता है जब वह कहता है कि घटना देखने के बाद निकट के दुकानदारों ने अपनी दुकानों को बंद कर दिया था और भाग गए थे। हम सभी जानते हैं कि कोई भी अपराधकर्ताओं के क्रोध को आमंत्रित करना नहीं चाहता है और सामान्यत: लोग इस प्रकार के मुकदमों से स्वयं को दूर रखना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त, गवाहों की गुणवत्ता महत्वपूर्ण है, न कि मात्र। हम इस तर्क को ग्रहण करने के इच्छुक नहीं हैं कि अ॰ सा॰ 7 का आचरण स्वाभाविक नहीं था, क्योंकि वह अपने पिता के साथ अस्पताल नहीं गया था। पुन:, हमें अ॰ सा॰ 7 की आयु पर विचार करना होगा जो घटना की तिथि पर लगभग 11-12 वर्ष का था। उस आयु के बालक के लिए अपने घायल पिता का इलाज करवाने में उसकी मदद करना संभव नहीं था और यह कारण हो सकता था कि उसे अपने घायल पिता के साथ जाने की अनुमति नहीं दी गयी थी जब उसे घटनास्थल पर एकत्रित गवाहों द्वारा अस्पताल ले जाया जा रहा था। हम इस तर्क को भी अधिमान देने के इच्छुक नहीं हैं कि किस प्रकार सूचक फर्दबयान देते समय अपने पिता की मृत्यु के बारे में जान सकता था यद्यपि वह अपने पिता के साथ अस्पताल तक नहीं गया था। सूचक ने एक अस्पताल से दूसरे अस्पताल तक उसके पिता को ले जाने के बारे में स्पष्टत: कथन किया है जिसकी सूचना उसे घटनास्थल पर दी गयी थी। ऐसे मामलों में, खबर जंगली आग की तरह फैलती है और, इसलिए, अ॰ सा॰ 7 के विवरण पर अविश्वास करने का कारण नहीं है जिसने कथन किया है कि उसके पिता को अस्पताल में मृत घोषित किया गया था। अ॰ सा॰ 8 का साक्ष्य संदेह मुक्त नहीं माना जा सकता था। जब वह कहता है कि उसने घटना स्थल पर सूचक को नहीं देखा था, वह इस कारण से हो सकता था कि वह घायल को अस्पताल ले जाने में व्यस्त था और वह निश्चय ही जल्दी में होगा। उक्त के अतिरिक्त, हमने पहले ही संप्रेक्षित किया है कि अ॰ सा॰ 7 का बयान घटना के एक घंटा के भीतर दर्ज किया गया था और वह समय के प्रासंगिक बिंदु पर लगभग 12 वर्ष का था और उसे समय के उस अंतराल के भीतर किसी द्वारा प्रभावित किए जाने का अवसर नहीं था। केवल यही नहीं; हमने यह भी संप्रेक्षित किया है कि घटना का विवरण, जिसे अ॰ सा॰ 7 ने दिया था, घटना के पाँच वर्षों बाद भी ऐसे तरीके से दिया जा रहा है मानों वह घटना को चलचित्र की तरह देख रहा हो। हमारा सुविचारित मत है कि अ॰ सा॰ 7 का साक्ष्य पूर्णत: विश्वसनीय है और यह गवाह पूर्णत: सत्यपूर्ण है।

13. अब तर्क के द्वितीय भाग पर आते हुए जिसमें भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की प्रयोज्यता पर प्रश्न किया गया है, सामान्य उद्देश्य के अस्तित्व को सदैव घटना के तथ्यों से निष्कर्षित करना होगा। अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य स्पष्टत: कहते हैं कि समस्त अपीलार्थीगण साथ-साथ घटनास्थल पर आए थे। अपीलार्थीगण गुड्डु मिश्रा, सूरजभान सिंह उर्फ चूहा और फरार अभियुक्त मुन्ना यादव ने मृतक को दुकान से खींचा और सड़क पर पटक दिया। उन्होंने अपीलार्थी सुमन सिंह को मृतक की हत्या करने का आदेश भी दिया। इन अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका यह अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त है कि पूर्व मतैक्य था और उनका मृतक की हत्या करने का सामान्य आशय था। यह कथन भी किया गया था कि घटना के बाद वे सब गोराबासा बस्ती की ओर चले गए थे। अत:, निष्कर्ष यही होगा कि समस्त चारों अपीलार्थीगण मृतक की हत्या करने के आशय से घटनास्थल पर गए थे (कृपया देखें : **1964 (1) Cr. LJ 564** और **2010 (7) SCC 759)**

14. अ॰ सा॰ 7 का साक्ष्य केवल इसलिए त्यक्त नहीं किया जा सकता है कि वह मृतक का पुत्र और हितबद्ध गवाह था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **भगलू लोध बनाम उ॰ प्र॰ राज्य, 2011 (3) Crimes 10 SC,** में पैराग्राफ 14 पर निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

*"14. fudV lcèkh d lk{; ij fo'okl fd;k tk ldrk g c'kr ;g fo'oluh; gkA fdlh fn, x, ekey e vfHk;Dr dh nk"kflf) dk fu"d"k vkèkkfjr dju d igy ,l lk{; dk lkoèkkuhiod loh{k.k vkj vfèkeY;u dju dh vko';drk gkrh gA fdr tgk l=U;k;ky; u lefpr :i l lk{; dk vfèkeY;u fd;k gk vkj foLrkjiod bldk fo'y"k.k fd;k gk vkj mPp U;k;ky; u Hkh blh fu"d"k ij igpu d fy, mDr lk{; dk lefpr :i l iuvfèkeY;u fd;k gk rk mPprj U;k;ky; d fy, bld foijhr nf"Vdk.k viukuk rc rd ef'dy g tc rd ,l xokgk ij vfo'okl dju dk dkj.k ugh gA bl çdkj] ek= bl vkèkkj ij lk{; ij vfo'okl ugh fd;k tk ldrk g fd xokg ,d&nlj d lkFk vFkok erd d lkFk lcfèkr gA (n[k ,e0 lh0 vyh ,o ,d vU; cuke djy jkT;] AIR 2010 SC 1639; ekbynhEey ljUnu ,o vU; cuke djy jkT;] AIR 2010 SC 3281; ';ke cuke eè; çn'k jkT;] (2009)16 SCC 531; fçFkh cuke gfj;k.kk jkT; (2010)8 SCC 536; ljUn iky ,o vU; cuke m0 ç0 jkT; ,o ,d vU;] (2010)9 SCC 399; vkj fgek'k mQ fpV cuke jkT; (fnYyh dk ,u0 lh0 Vh0)] (2011)2 SCC 36)A ;gk Åij vfèkdfFkr fofèk dh nf"V e fudV:i l lcfèkr xokgk d lk{; dk Lohdkj djr g, voj U;k;ky;k }kjk nt lk{; e nk"k ugh ik;k tk ldrk gA***

15. यदि चश्मदीद गवाह का साक्ष्य तर्कपूर्ण और विश्वसनीय है, भले ही हेतु सिद्ध नहीं किया गया हो, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है और दोषसिद्धि पारित किया जा सकता है।

धरणीधर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, (2010)7 Supreme Court Cases 759, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया था कि हेतु की प्रासंगिकता का महत्व दिए गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर मुख्यत: निर्भर करेगा। वर्तमान मामले में, चश्मदीद गवाह का विवरण विशेषज्ञों और अन्य साक्ष्य द्वारा समर्थित किया गया है। उनके बयान संपुष्ट होते हैं और वस्तुत: वे अभियोजन द्वारा रखे गए मामले के साथ पूरी तरह मेल खाते हैं और अभियोजन के विवरण पर संदेह करने का हमारे पास शायद ही कोई अवसर है। अभियुक्त की दोषसिद्धि सुरक्षित करने के लिए अपराध

करने के निश्चित हेतु को स्थापित करना अभियोजन के लिए सदैव आवश्यक नहीं है। यह सदैव दिए गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से संबंधित होगा। हेतु की अनुपस्थिति आवश्यकत: अभियुक्त की दोषमुक्ति में परिणत नहीं होती है जब तर्कपूर्ण और विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा उसे अन्यथा दोषी पाया गया है। किंतु, वैसे मामलों में जो पूरी तरह अथवा मुख्यत: परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है, हेतु की अधिक प्रासंगिकता अथवा महत्व हो सकता है जैसी अवस्था इस मामले में नहीं है।

16. यह प्रतीत होता है कि प्राथमिकी दर्ज करने में किसी छल साधन की संभावना को अपवर्जित करते हुए एक घंटा के भीतर सूचक का फर्दबयान तत्परतापूर्वक दर्ज किया गया था और इसलिए यह तर्क कि प्राथमिकी दो दिनों बाद न्यायालय भेजी गयी थी जो संदेह सृजित करती है, मान्य नहीं है।

17. उक्त चर्चा की दृष्टि में, हम सत्र विचारण सं॰ 385 वर्ष 1995 में विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश में हस्तक्षेप करने के इच्छुक नहीं हैं और इसे मान्य ठहराया जाता है। अपीलार्थीगण गुड्डु मिश्रा और सूरजभान सिंह उर्फ चूहा जमानत पर है। उनके जमानत बंधपत्र रद्द किए जाते हैं और उन्हें इस निर्णय की तिथि से एक माह के भीतर दंडादेश भुगतने के लिए आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया जाता है जिसमें विफल रहने पर न्यायालय उनकी उपस्थिति सुरक्षित करने के लिए प्रपीड़क कदम उठाने के लिए स्वतंत्र होगा।

इन अपीलों में गुणागुण नहीं है। तद्नुसार, अपीलों को खारिज किया जाता है।

आर॰ के॰ मेराठिया, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

सर्जिना बीबी उर्फ पारुल बीबी एवं एक अन्य

cuke

इस्माइल शेख

Cr. Revision No. 986 of 2010. Decided on 24th April, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण–याची पत्नी द्वारा दावा किया गया भरण-पोषण केवल इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि उसके पति द्वारा उसे तलाक दे दिया गया था–'पत्नी' उस औरत को सम्मिलित करता है जिसे तलाक दे दिया गया है अथवा जिसने अपने पति से तलाक प्राप्त किया है और पुनर्विवाह नहीं किया है–तलाकशुदा पत्नी दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन भरण-पोषण की पूर्णतः हकदार है–विधि के प्रावधान जिसके अधीन तलाकशुदा महिला भी अपने पति से भरण-पोषण की हकदार है, को नजर अंदाज करते हुए अवर न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय पारित किया गया–आक्षेपित निर्णय अपास्त–अवर न्यायालय को विधि के अनुरुप नया निर्णय पारित करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. B.K. Pandey, For the Petitioners; Mr. S.K. Verma, For the O.P..

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और विपक्षी पक्षकार, जो नोटिस पर उपस्थित हुआ है, की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण ने दांडिक विविध केस सं॰ 21 वर्ष 2009 में विद्वान प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 3 अगस्त, 2010 के निर्णय जिसके द्वारा याची-पत्नी द्वारा दावा किया गया

भरण–पोषण केवल इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया है कि उसके पति द्वारा उसे तलाक दे दिया गया था, को चुनौती देते हुए यह पुनरीक्षण आवेदन दाखिल किया है।

3. स्वयं आक्षेपित निर्णय से प्रतीत होता है कि पक्षों के बीच विवाह स्वीकार किया गया है और विपक्षी पक्षकार पति का मामला यह है कि उसने गाँव वालों की उपस्थिति में अपनी पत्नी को तलाक दे दिया था और तद्नुसार, याची तलाकशुदा महिला होने के नाते अपने पति से भरण–पोषण पाने की हकदार नहीं थी। अवर न्यायालय ने यह पाते हुए कि याची को तलाक दे दिया गया था, याची को भरण–पोषण प्रदान करने से इनकार कर दिया है। किंतु अवर न्यायालय ने वि॰ प॰ को याची सं॰ 2 जो पक्षों का पुत्र है को भरण–पोषण के रूप में 400/- रुपया प्रतिमाह का भुगतान करने का निर्देश दिया है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय बिल्कुल अवैध है क्योंकि याची द्वारा आवेदन दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन दाखिल किया गया था जो तलाकशुदा पत्नी को भी भरण–पोषण स्पष्टत: प्रावधानित करती है और तद्नुसार विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

5. दूसरी ओर, विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने याची–पत्नी को भरण–पोषण से इनकार करने के लिए निर्णय में लिए गए आधार को दोहराया है।

6. दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 स्पष्टत: विहित करती है कि 'पत्नी' उस महिला को भी सम्मिलित करता है जिसे पति द्वारा तलाक दे दिया गया है अथवा जिसने अपने पति से तलाक प्राप्त कर लिया है और पुनर्विवाह नहीं किया है। मामले के उस दृष्टिकोण में यह स्पष्ट है कि तलाकशुदा पत्नी दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन भरण–पोषण की पूर्णत: हकदार है।

7. इस मामले के तथ्यों में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि विधि के प्रावधान जिसके अधीन तलाकशुदा महिला भी अपने पति से भरण–पोषण पाने की हकदार है को अनदेखा करते हुए विद्वान अवर न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय पारित किया गया है और इस प्रकार, यह विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है। तद्नुसार, दांडिक विविध केस सं॰ 21 वर्ष 2009 में विद्वान प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 3 अगस्त, 2010 का आक्षेपित निर्णय एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और अवर न्यायालय को दोनों याचीगण के संबंध में विधि के अनुरूप नया निर्णय पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

8. इस प्रकार, पूर्वोक्त निर्देश के साथ यह पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

रिपु सूदन दूबे

cuke

भारत संघ, एस॰ पी॰, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से

Cr. M.P. No. 1136 of 2011. Decided on 27th April, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420, 468 एवं 471 सह–पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराएँ 13 (2) एवं 13 (1) (d)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल एवं कूटरचना–संज्ञान–आर॰ सी॰ डी॰ के अभियंताओं और ठेकेदारों द्वारा करोड़ों रुपयों का

गबन–कोई अभिकथन नहीं है कि याची ने कभी भी अभिकथित कूटरचित बीजकों को प्रमाणित किया–कूट रचना का अपराध आकृष्ट करने वाला तत्व नहीं है–कंपनी को संविदा अधिनिर्णीत करने में याची की भूमिका नहीं है–याची की ओर से कोई सह-अपराधिता नहीं पायी गयी–संज्ञान लेने वाले आदेश को अपास्त किया गया। (पैराएँ 16 से 20)

अधिवक्तागण.–M/s Bimal Kumar, Rajesh Lala, Anurag Kumar, For the Petitioner; Mr. M. Khan, For the C.B.I.

आदेश

यह आवेदन आर॰ सी॰ सं॰ 11(A) वर्ष 2009R में विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰, राँची द्वारा पारित दिनांक 2.2.2011 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 468, 471 सह-पठित धारा 120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(2) सह-पठित धारा 13(1) (d) के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया है।

2. इस मामले को दाखिल करने की ओर ले जाने वाले तथ्य ये हैं कि डब्लू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 803 वर्ष 2009 में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश पर पथ निर्माण के लिए बिटुमन के उपापन के मामले में पथ निर्माण विभाग के अभियन्ताओं, ठेकेदारों और अन्य व्यक्तियों द्वारा करोड़ों रुपयों के गबन और व्यापक अनियमितता से संबंधित मामले में आरंभिक जाँच की गयी थी जिसमें पाया गया था कि तत्कालीन कार्यपालक अभियंताओं, पथ डिविजन, पथ निर्माण विभाग, हजारीबाग श्याम सुंदर सिंह, बिरेन्द्र कुमार और सोन लाल ने वर्ष 2002-07 की अवधि के दौरान मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के साथ दांडिक षडयंत्र किया जिस पर उसको अधिनिर्णीत संकर्म के निष्पादन के लिए सरकारी कंपनी से बिटुमन का प्रापण दर्शाते हुए मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ द्वारा जाली बीजक प्रस्तुत किए जाने पर भुगतान किया गया था।

3. आगे पाया गया था कि ठेकेदारों को भारतीय तेल निगम, भारतीय पेट्रोलियम निगम लि॰, आदि जैसे उपक्रमों से बिटुमन उगाहने की आवश्यकता थी और ठेकेदारों को बिटुमन का उपयोग करने के पहले उगाहे गए बिटुमन की गुणवत्ता के संबंध में प्रमाण पत्र और बिटुमन प्राप्त के लिए बीजक प्रस्तुत करने की आवश्यकता थी किंतु ठेकेदारों ने सरकारी कंपनी से बिटुमन प्राप्त किए बिना बिटुमन प्राप्त करने के संबंध में झूठा बीजक प्रस्तुत किया और तद्द्वारा अभियंताओं के झूठे प्रमाणपत्र देने के आधार पर 17,69,517/- रुपयों का भुगतान लिया। ऐसे अभिकथन पर, दिनांक 16.9.2009 को आर॰ सी॰ सं॰ 11(A) वर्ष 2009R के रूप में मामला दर्ज किया गया था।

4. अन्वेषण के दौरान पाया गया था कि मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ को अधिनिर्णीत सात संकर्मों में से याची, तत्कालीन कार्यपालक अभियंता, पथ निर्माण विभाग, पथ डिविजन, हजारीबाग, अब सेवानिवृत्त, ने दो संकर्मों के संबंध में उसके साथ करार किया था, पहला गोला-मुरी पथ को चौड़ा और मजबूत करने के लिए और दूसरा चितरपुर-रजरप्पा पथ के संबंध में। करारों के मुताबिक, कार्यपालक अभियंता द्वारा किए गए तलब पर संकर्म के उपयोग में लाये जाने वाले बिटुमिन की उगाही और आपूर्ति ठेकेदार को करनी थी और इसलिए याची ने गोला-मुरी रोड के काम के निष्पादन से संबंधित करार के संबंध में 6235.99 एम॰ टी॰ बिटुमिन देने के लिए और चतरपुर-रजरप्पा रोड से संबंधित काम के निष्पादन

के लिए 355.807 एम॰ टी॰ बिटुमिन देने के लिए विभिन्न तेल निगमों को संबोधित ठेकेदार के पक्ष में दिनांक 16.4.2002 को प्राधिकार पत्र/तलब जारी किया था। इस पर ठेकेदार ने एच॰ पी॰ सी॰ एल॰, रामनगर, कोलकाता से बिटुमिन प्राप्त कर लेने का दावा करते हुए गोला-मुरी रोड से संबंधित 90,66,923/- रुपयों के मूल्य के 68 बीजकों और चितरपुर-रजरप्पा रोड के संबंध में 53,36,253/- रुपयों के मूल्य के 39 बीजकों को प्रस्तुत किया किंतु वे समस्त बीजक कूटरचित थे किंतु फिर भी अभियंताओं द्वारा दिए गए प्रमाण पत्र पर भुगतान (याची द्वारा नहीं) किए गए थे।

5. अन्वेषण के क्रम में, यह भी पाया गया था कि मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰, जिसको काम अधिनिर्णीत किया गया था, और दूसरे बोली लगाने वाले मेसर्स सिद्धार्थ कंस्ट्रक्शन ने एक दूसरे के साथ मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ जिसने अनुसूचित दर के 50% ऊपर दर उद्धृत किया था, को काम अधिनिर्णीत करवाने के गैरईमानदार और कपटपूर्ण आशय के साथ मौन करार किया था।

6. अग्रिम धन और प्रतिभूति धन जमा करने के बिंदु पर अन्वेषण के दौरान संग्रहित तथ्य दर्शाते हैं कि दोनों बोली लगानेवाले ने कार्टल बना लिया था जिसकी याची को जानकारी थी, फिर भी उसने मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के साथ करार किया जिसके द्वारा सरकार को हानि हुई। अन्य कामों के संबंध में भी अन्वेषण किया गया था किंतु वर्तमान में हमारा सरोकार उनसे नहीं है क्योंकि ये भिन्न व्यक्तियों से संबंधित हैं।

7. अन्वेषण पूरा कर लेने पर, उन तीन व्यक्तियों जिनके विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज की गयी थी को छोड़ते हुए 17 व्यक्तियों के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था। आरोप-पत्र दाखिल किए जाने पर अपराधों का संज्ञान लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

8. याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री विमल कुमार ने निवेदन किया कि मामला मूलत: इस अभिकथन पर दर्ज किया गया था कि ठेकेदार को काम अधिनिर्णीत किए जाने पर कार्यपालक अभियन्ताओं द्वारा भेजे जाने वाले तलब के अधीन सरकारी कंपनी से बिटुमिन खरीदना था जिस तलब को वस्तुत: याची द्वारा भेजा गया था किंतु ठेकेदार ने उन कंपनियों से बिटुमिन उगाहे बिना सरकारी कंपनी से बिटुमिन उगाहने का दावा करते हुए बीजकों को प्रस्तुत किया। उक्त बीजकों को अभियंताओं में से कुछ (याची नहीं) द्वारा प्रमाणित और हस्ताक्षरित किया गया था। उस आधार पर, ठेकेदार को भुगतान किया गया किंतु अभियोजन के अनुसार उन बीजकों को कूटरचित पाया गया था क्योंकि सरकारी कंपनी द्वारा बीजकों को जारी कभी नहीं किया गया था, फिर भी भुगतान किए गए थे और इसलिए दुर्विनियोग और कूटरचना का मामला दर्ज किया गया था किंतु याची को कभी भी बीजकों, जिन्हें अभिकथित रूप से कूटरचित किया गया था, को प्रमाणित करने की ओर कुछ करता हुआ अभिकथित नहीं किया गया है और न ही ऐसे कूटरचित बीजको पर याची को ठेकेदार को भुगतान करता हुआ अभिकथित किया गया है।

9. इस संबंध में, आगे निवेदन किया गया था कि उच्च स्तरीय कमिटि जिसका सदस्य याची कभी नहीं था द्वारा मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ को सफल बोली लगाने वाला पाने पर काम दिया गया था और तब पी॰ डब्ल्यू॰ डी॰ संहिता के अधीन अधिकथित प्रक्रिया के मुताबिक याची ने कार्यपालक अभियंता होने के नाते मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के साथ करार किया। इस पर, याची ने मरम्मती काम में उपयोग किए जाने वाले बिटुमिन की डिलीवरी के लिए विभिन्न तेल निगमों को संबोधित ठेकेदार के पक्ष में प्राधिकार/तलब जारी किया। तत्पश्चात, याची का स्थानांतरण हो गया और इस प्रकार, कूटरचित दस्तावेज के आधार पर बीजकों के प्रमाणपत्र अथवा ठेकेदार को राशि के भुगतान के साथ याची

का कोई लेना–देना नहीं है, फिर भी इस उपधारणा पर याची को अभियोजित किया जा रहा है कि याची ने मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के साथ करार किया था जो दूसरे बोली लगाने वाले मेसर्स सिद्धार्थ कंस्ट्रक्शन, हजारीबाग के साथ कार्टल निर्मित करके उच्चतर दरों पर संविदा पाने में सफल हुआ किंतु याची वह व्यक्ति कभी नहीं था जिसने मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ को संविदा अधिनिर्णीत किया था बल्कि उच्च स्तरीय कमिटि जिसका सदस्य याची कभी नहीं था ने उक्त कंपनी को संविदा अधिनिर्णीत किया और केवल संविदा अधिनिर्णीत किए जाने पर याची ने विभाग की प्रक्रिया के अधीन कंपनी के साथ करार किया और तद्द्वारा याची को संकर्म आदेश जारी करने के लिए कंपनी के साथ षडयंत्र करता हुआ कभी नहीं कहा जा सकता है और तद्द्वारा, जहाँ तक इस याची का संबंध है, छल अथवा कूटरचना का अथवा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन भी कोई अपराध नहीं बनता है।

10. आगे इंगित किया गया था कि प्राथमिकी में नामित अन्य कार्यपालक अभियंताओं का मामला भी समरुप था जिन्होंने मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के साथ करार निष्पादित किया था किंतु उनके विरुद्ध आरोप–पत्र संभवत: इस कारण से कभी नहीं दाखिल किया गया था कि प्राथमिकी में नामित उन कार्यपालक अभियंताओं की कार्रवाई में दांडिकता अपराध का तत्व नहीं है। किंतु समस्थित याची के मामले में सी॰ बी॰ आई॰ ने भिन्न मत निर्मित किया जो आधारहीन है और इस प्रकार, संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण दांडिक मामला दोषपूर्ण है।

11. इसके विरुद्ध, सी॰ बी॰ आई॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री खान ने निवेदन किया कि यद्यपि याची को प्राथमिकी में नामित नहीं किया गया है किंतु अन्वेषण के दौरान प्रकट हुआ कि मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ और किसी मेसर्स सिद्धार्थ कंस्ट्रक्शन, हजारीबाग ने एक दूसरे के साथ सांठगांठ की थी तथा एक कार्टल निर्मित किया था जिसके द्वारा मेसर्स सिद्धार्थ कंस्ट्रक्शन, हजारीबाग जिसने मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ द्वारा उद्धृत दर से अधिक दर उद्धृत किया था, ने मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ को संविदा पाने में मदद किया।

12. इस संबंध में निवेदन किया गया था कि यह स्थापित करने के लिए अनेक परिस्थितियाँ हैं कि दोनों ने कार्टल निर्मित किया था जो इस तथ्य से स्पष्ट होगा कि निविदा दस्तावेज खरीदने के लिए मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के उसी स्टाफ द्वारा उसी दिन उसी बैंक से 10,000/- रुपयों का ड्राफ्ट खरीदा गया था।

13. आगे, अग्रिम धन जमा करने के लिए 5,36,000/- रुपयों मूल्यों वाले दो एन॰ एस॰ सी॰ को खरीदा गया था किंतु धन मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के कर्मचारी पवन कुमार सिंह द्वारा निवेशित किया गया था और कि निवेशक का पता दोनों मामलों में एक ही था यद्यपि एक एन॰ एस॰ सी॰ पवन कुमार सिंह के नाम पर जारी की गयी थी जबकि दूसरी एन॰ एस॰ सी॰ मेसर्स सिद्धार्थ कंस्ट्रक्शन, हजारीबाग के कुमार अनुज के नाम में थी। किंतु, जब मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ को संविदा अधिनिर्णीत की गयी थी, मेसर्स सिद्धार्थ कंस्ट्रक्शन, हजारीबाग के कुमार अनुज के नाम में ली गयी एन॰ एस॰ सी॰ को मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के प्रतिभूति जमा के रूप में रखा गया था।

14. श्री खान द्वारा इंगित किया गया था कि याची को इन सारे तथ्यों की जानकारी थी और इस प्रकार उसे आसानी से कंस्ट्रक्शन कंपनी के साथ दुरभिसंधि करते हुए और मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ को संविदा अधिनिर्णीत किए जाने को सुकर बनाते हुए कहा जा सकता है जिसने बीजकों जिन्हें कूटरचित किया गया था के आधार पर भुगतान राज्य को भारी हानि पहुँचाया।

15. अत:, पूर्वोक्त परिस्थितियों के अधीन संज्ञान लेने वाले आदेश को अभिखंडित करना अपेक्षणीय नहीं है।

16. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर, यह प्रतीत होता है कि जनहित याचिका में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अधीन सी॰ बी॰ आई॰ ने मामला अपने हाथ में लेकर आरंभिक जाँच किया और जिसके क्रम में पता चला कि मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ ने सात कामों के निष्पादन के लिए पंचाट दिए जाने पर इसने काम तो निष्पादित किया किंतु काम के निष्पादन में इनका उपयोग करने के लिए सरकारी कंपनी से बिटुमिन के प्रापण से संबंधित झूठे बीजकों को प्रस्तुत किया और कूटरचित बीजकों, जिन्हें सरकारी तेल कंपनियों द्वारा कभी नहीं जारी किया गया था, के आधार पर अभियंताओं द्वारा उक्त बीजकों को प्रमाण पत्रित/प्रतिहस्ताक्षरित करने के बाद 17,61,59,817/- रुपयों का भुगतान लिया था। आरंभिक जाँच के क्रम में, तीनों अभियंताओं की सह-अपराधिता पायी गयी थी और इस प्रकार, उन तीन अभियंताओं, मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ और अज्ञातों के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया था।

17. अन्वेषण के दौरान, पाया गया था कि इस याची, जो समय के प्रासंगिक बिंदु पर कार्यपालक अभियंता के रूप में पदस्थापित था, ने दो कामों के संबंध में गोला-मुरी रोड को चौड़ा और मजबूत करने के लिए और चितरपुर-रजरप्पा रोड को चौड़ा एवं मजबूत करने के लिए मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के साथ करार विलेख निष्पादित किया था। करारों के निष्पादन पर, याची द्वारा कार्य आदेश जारी किया गया था। किंतु, यह पाया गया था कि मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ ने मेसर्स सिद्धार्थ कंस्ट्रक्शन, हजारीबाग के साथ सांठगांठ की थी ताकि मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के पक्ष में संविदा ली जा सके। इसके लिए मेसर्स सिद्धार्थ कंस्ट्रक्शन ने मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ की तुलना में उच्चतर दर को उद्धृत किया। सी॰ बी॰ आई॰ के मामले के अनुसार, परिस्थितियों जिनको उदीप्त किया गया है दर्शाती है कि दोनों कंपनियों ने कार्टल निर्मित किया था और तद्द्वारा मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ अपने पक्ष में संविदा पाने में सफल हुआ और कि याची को पूर्वोक्त समस्त परिस्थितियों की जानकारी थी, फिर भी उसने इसके साथ करार किया। इस कारण याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया है। किंतु सी॰ बी॰ आई॰ का मामला यह कभी नहीं था कि इस याची ने कभी अभिकथित कूटरचित बीजकों को प्रमाणित किया था अथवा याची ने कूटरचित बीजकों के आधार पर ठेकेदार को किए गए भुगतान की ओर कुछ भी किया था क्योंकि याची द्वारा जारी तलब के आधार पर बिटुमिन उगाह लिए जाने के समय तक याची को स्थानांतरित कर दिया गया था।

18. इस प्रकार, मूलत: इस अभियोग पर मामला दर्ज किया गया प्रतीत होता है कि मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ ने सरकारी कंपनी द्वारा जारी किए जाने का दावा करने वाले कूटरचित और मनगढ़ंत बीजकों के आधार पर विपुल राशि का भुगतान लिया और ऐसा भुगतान लोक अधिकारी की मौनानुकूलता के साथ किया गया था जिसने उन बीजकों को प्रमाणित/प्रतिहस्ताक्षरित किया था किन्तु याची को इस कारण से अभियोजित किया जा रहा है कि यह जानने के बावजूद कि दोनों बोली लगाने वालों मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ और मेसर्स सिद्धार्थ कंस्ट्रक्शन, हजारीबाग परोक्ष रूप से साथ थे, याची ने मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ के पक्ष में संविदा का अधिनिर्णय सुकर बनाया जिसकी बोली की राशि बहुत ही ज्यादा थी किंतु याची वह व्यक्ति कभी नहीं था जिसने मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ को संविदा अधिनिर्णीत किया था बल्कि मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ को संविदा उच्च स्तरीय कमिटि द्वारा अधिनिर्णीत की गयी थी जिसका सदस्य याची कभी नहीं था

और कि याची ने केवल दोनों बोली लगाने वालों के निविदा दस्तावेजों को कमिटि के समक्ष अग्रसरित किया था और इसलिए, काफी ज्यादा दर पर कंपनी को संविदा अधिनिर्णीत करने में याची की गलती नहीं है और इस प्रकार याची की ओर से कोई सह-अपराधिता प्रतीत नहीं होती है। इसके बावजूद आरोप-पत्र दाखिल किया गया है यद्यपि बिल्कुल समरुप परिस्थितियों में सी॰ बी॰ आई॰ ने प्राथमिकी में नामित तीन कार्यपालक अभियंताओं जिन्होंने आरोप पत्र में दर्शाये गए सामग्रियों के मुताबिक समरुप परिस्थितियों में, जैसी परिस्थितियाँ याची के मामले में सामने आती है, निविदा कागजातों को स्वीकार किया था, की ओर से कोई सह-अपराधिता कभी नहीं पाया। उस मामले में, सी॰ बी॰ आई॰ के अनुसार, मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ ने अन्य कंपनी के साथ कार्टल निर्मित किया किंतु उनके मामले में उनकी ओर से कोई सह-अपराधिता नहीं पायी गयी थी किंतु विचित्र रूप से याची की ओर से सह-अपराधिता पायी गयी थी और यदि याची के विरुद्ध सामने आने वाली परिस्थितियों को सत्य माना भी जाता है, छल अथवा कूट रचना का अपराध नहीं बनता है क्योंकि इन परिस्थितियों में याची को सरकार को हानि कारित करने के लिए किसी व्यक्ति को कपटपूर्वक अथवा गैरईमानदार रूप से उत्प्रेरित करता अथवा कुछ करता हुआ नहीं कहा जा सकता है। साथ ही, कूट रचना के अपराध को आकृष्ट करने वाला तत्व प्रतीत नहीं होता है। इन परिस्थितियों के अधीन, जैसा ऊपर कहा गया है भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराध आकृष्ट करने के लिए इस कारण मात्र से याची को कोई अवचार करता हुआ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि मेसर्स क्लासिक कोल कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ को संविदा अधिनिर्णीत करने में याची की कोई भूमिका नहीं है और न ही इसको भुगतान करने के लिए स्वीकृत रूप से याची द्वारा कुछ किया गया है।

19. तद्नुसार, अपराध का संज्ञान लेने वाले दिनांक 2.2.2011 के आदेश को एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है, जहाँ तक याची का संबंध है।

20. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

मनोज कुमार अग्रवाल उर्फ मनोज अग्रवाल एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (Cr.) No. 273 of 2009. Decided on 20th April, 2012.

(क) भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—अभिखंडन–प्रक्रियात्मक विधि जिसके अधीन दांडिक/सिविल विचारण किया जा रहा है को विफल करने के प्रयोजन से अनुच्छेद 226 का लाभ नहीं लिया जाना चाहिए–यह उम्मीद नहीं की जाती है कि दांडिक विचारण के प्रत्येक चरण पर विलंब कारित करने के आशय से दांडिक रिट अधिकारिता का अवलंब लिया जाएगा जब तक न्यायालय की प्रक्रिया का प्रकट दुरुपयोग नहीं है अथवा द्वेषपूर्ण अभियोजन नहीं किया जा रहा है। (पैराएँ 5 एवं 6)

(ख) दांडिक विधि–प्रयोज्यता–जहाँ विशेष विधि प्रयोज्य है, भारतीय दंड संहिता जैसी सामान्य विधि को प्रयोज्य नहीं बनाया जाएगा–पुलिस रिपोर्ट पर भारतीय दंड संहिता के प्रावधानों के अधीन दांडिक अभियोजन सही प्रकार से आरंभ किया गया था क्योंकि कूटरचना का अपराध बी॰ एम॰ एम॰ नियमावली, 1972 जैसी विशेष विधि द्वारा आच्छादित नहीं है। (पैराएँ 5 से 9)

निर्णयज विधि.–2009(2) East Cr. C. 535 (Jhr.); 2009(2) East Cr. 535 (Jhr.)—Distinguished.

अधिवक्तागण.–Mr. Ashok Kumar Sinha, For the Petitioners; Mr. R.K. Singh, For the State.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–वर्तमान दांडिक रिट आवेदन जोरापोखर पी॰ एस॰ केस सं॰ 136/1998 (जी॰ आर॰ केस सं॰ 2184/1998) से उद्भूत होने वाले याचीगण के विरुद्ध आरंभ किए गए संपूर्ण दांडिक अभियोजन और श्री वी॰ के॰ तिवारी, न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 23.9.2008 के आदेश और दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 304/2008 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 2.5.2009 के आदेश जिसके द्वारा श्री वी॰ के॰ तिवारी, न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 23.9.2008 का आदेश अभिपुष्ट किया गया था, के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

2. अभियोजन मामले के तथ्य ये हैं कि दिनांक 19.6.2008 को दोपहर लगभग 12.25-12.30 के बीच बालू से लदे दो डंपरों जिनकी रजिस्ट्रेशन सं॰ BR 17G-7934 और BHG-8585 थी, को सूचक द्वारा जब्त किया गया था। बालू के परिवहन के विरुद्ध चालकों द्वारा प्रस्तुत चालान लिखित रिपोर्ट में दिए गए कारणों से कूटरचित एवं मनगढ़ंत पाया गया था। चूँकि वाहन कूटरचित एवं मनगढ़ंत दस्तावेजों के आधार पर बालू ढो रहा था, सूचक जो जिला खनन अधिकारी, धनबाद था ने सूडामडीह पी॰ एस॰ धनबाद के पास लिखित रिपोर्ट दर्ज किया जिसके आधार पर ठेकेदार, जिसके नियंत्रण के अधीन पूर्वोक्त वाहन चल रहे थे, के विरुद्ध जोर पोखर पी॰ एस॰ केस सं॰ 136/1998 दर्ज किया गया था।

3. यह निवेदन किया गया है कि लिखित रिपोर्ट में किए गए परिवाद को यदि सत्य माना जाता है, बिहार (झारखंड) लघु खनिज रियायत नियमावली, 1972 के नियम 40 के अधीन दंडनीय अपराध प्रयोज्य होंगे। आगे इंगित किया गया है कि बिहार (झारखंड) लघु खनिज नियमावली, 1972 के प्रावधानों के अधीन किए गए अपराध के लिए न्यायालय पुलिस रिपोर्ट पर अग्रसर नहीं होगा। खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 की धारा 22 स्पष्टत: उपदर्शित करती है कि इस निमित्त केंद्र सरकार अथवा राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा लिखित में दिए गए परिवाद के सिवाय न्यायालय इस अधिनियम अथवा इसके अधीन बनाए गए नियमावली के अधीन दंडनीय किसी अपराध का संज्ञान नहीं लेगा।

जहाँ विशेष विधि प्रयोज्य है, भारतीय दंड संहिता जैसी सामान्य विधि को प्रयोज्य नहीं बनाया जाएगा। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 173 के अधीन रिपोर्ट प्राप्त करने के बाद विद्वान दंडाधिकारी ने संज्ञान लिया है और विचारण के लिए अग्रसर हुए हैं। याचीगण ने आरोप विरचित किए जाते समय इस बिंदु को उठाया था किंतु इस पर विचार नहीं किया गया था और दिनांक 23.9.2008 के आदेश के तहत प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी थी। जब याचीगण ने दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 304/2008 के तहत उक्त आदेश को चुनौती देते हुए विद्वान सत्र न्यायाधीश के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण दाखिल किया, दिनांक 2.5.2009 के आदेश के तहत पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिया गया था। ऐसे दांडिक अभियोजन के जारी रहने को समाप्त करने की आवश्यकता है क्योंकि यह न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के तुल्य है और, इसलिए, इस रिट आवेदन में की गयी प्रार्थना अनुज्ञात की जा सकती है और याची का संपूर्ण दांडिक अभियोजन और पश्चातवर्ती आदेशों को अभिखंडित किया जा सकता है।

विद्वान अधिवक्ता ने **मनीष खेमका बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, 2009 (2) East Cr.C. 535 (Jhr),** और **अजय कृष्ण तिवारी बनाम झारखंड राज्य, 2006 (3) East. Cr.C. 50 (Jhr)** मामलों पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि पुलिस को दी गयी सूचना के आधार पर और

न कि दंडाधिकारी के समक्ष परिवाद के आधार पर अभियुक्त का अभियोजन अवैध है और अभिखंडित किए जाने का दायी है।

4. प्रत्यर्थीगण–राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्कों का विरोध किया है और इंगित किया है कि प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए दांडिक विविध सं॰ 5159 वर्ष 1998 (R) के तहत दाखिल पूर्व रिट आवेदन और याचीगण का संपूर्ण दांडिक अभियोजन दिनांक 21.7.1998 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया था। याचीगण ने विचारण को विलंबित करने के आशय के साथ विभिन्न फोरम के समक्ष विधि के विभिन्न प्रावधानों के अधीन याचिकाओं को दाखिल करने की आदत डाल ली है और एक सीमा तक वे सफल भी हुए हैं क्योंकि मामला वर्ष 1998 में संस्थापित किया गया था किंतु ऐसी याचिकाओं को दाखिल किए जाने के कारण विचारण अभी तक समाप्त नहीं हुआ है। इस रिट याचिका में गुणागुण नहीं है और यह इसलिए, खारिज किए जाने की दायी है।

5. मैंने अपने समक्ष उपलब्ध सामग्रियों का परिशीलन किया है। किसी निष्कर्ष पर आने से पहले, मैं यह अभिव्यक्त करना वांछनीय समझता हूँ कि प्रक्रियात्मक विधि, जिसके अधीन दांडिक अभियोजन/सिविल अभियोजन किया जा रहा है, को विफल करने के प्रयोजन से भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 का लाभ नहीं लिया जा सकता है। गलत या सही, वर्तमान मामला वर्ष 1998 में संस्थापित किया गया था जिसके लिए याचीगण ने संपूर्ण दांडिक अभियोजन को अभिखंडित करने के लिए पटना उच्च न्यायालय, पटना, राँची पीठ, राँची के समक्ष दांडिक रिट अर्थात् दांडिक विविध सं॰ 5159 वर्ष 1998 (R) दाखिल किया किंतु इसे खारिज कर दिया गया था। दस वर्षों बाद, आरोप के बिंदु पर सुनवाई के चरण पर दांडिक अभियोजन की वैधता को चुनौती देते हुए पुनः आपत्ति उठायी गयी थी किंतु विद्वान न्यायालय ने पक्ष–विपक्ष और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद दिनांक 23.9.2008 को आरोप विरचित करने का निर्देश दिया। तत्पश्चात, दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 304 वर्ष 2008 में सत्र न्यायाधीश के समक्ष आक्षेपित आदेश को चुनौती दी गयी थी जिसे भी खारिज कर दिया गया था और अब पुनः भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस रिट आवेदन को दाखिल किया गया है।

6. यह कहना अनावश्यक है कि सत्र न्यायाधीश और उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्तियाँ समवर्ती हैं और याचीगण ने पहले ही दंडाधिकारी के आदेश, जिसके द्वारा अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप विरचित करने का निर्देश दिया गया था, को चुनौती देते हुए विद्वान सत्र न्यायाधीश के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण दाखिल करके समवर्ती अधिकारिता का लाभ ले लिया था।

यहाँ, उच्च न्यायालय में, याचीगण दिनांक 6.4.2012 का अंतरिम आदेश प्राप्त करके कुछ सीमा तक सफल हुए हैं जिसके द्वारा श्री वी॰ के॰ तिवारी, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, धनबाद के न्यायालय में लंबित जी॰ आर॰ केस सं॰ 2184 वर्ष 1998 की कार्यवाही को स्थगित कर दिया गया है। यह उम्मीद नहीं की जाती है कि दांडिक विचारण के प्रत्येक चरण पर विलंब कारित करने के आशय से दांडिक रिट अधिकारिता का अवलंब तब तक नहीं लिया जाएगा जब तक न्यायालय की प्रक्रिया का प्रकट दुरुपयोग नहीं होता है अथवा द्वेषपूर्ण अभियोजन नहीं किया जा रहा है।

7. अब वर्तमान मामले में उपलब्ध तथ्यों पर आते हुए। स्वीकृत रूप से, दांडिक अभियोजन बिहार लघु खनिज रियायत नियमावली, 1972 के प्रावधानों में से किसी के अधीन आरंभ नहीं किया गया था बल्कि उपर निर्दिष्ट वाहनों पर परिवहित बालू की जब्ती के बाद लिखित रिपोर्ट दर्ज किया गया था और परिवहन कूटरचित एवं मनगढ़ंत दस्तावेजों के आधार पर किया जा रहा था, जैसा प्राथमिकी में अभिकथित किया गया है। सामान्यतः लघु खनिज रियायत नियमावली खनन कार्यों और ऐसे खनन के परिणामस्वरुप व्यवसाय के प्रयोजन से प्रयोज्य है। अतः दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में यह विचार करने की आवश्यकता है कि क्या कूटरचित और मनगढ़ंत चालानों के आधार पर बालू का परिवहन बी॰ एम॰ एम॰

सी॰ नियमावली, 1972 के अधीन अनन्य रूप से दंडनीय अपराध गठित करेगा और विशेष विधि अभिभावी होगी अथवा ऐसी कूटरचना करने वाला व्यक्ति भारतीय दंड संहिता जैसी विधि के सामान्य प्रावधानों के अधीन दंडित किए जाने का दायी है।

लिखित रिपोर्ट में सूचक द्वारा उपदर्शित नहीं किया गया था कि चालकों द्वारा प्रस्तुत चालान प्रामाणिक थे किंतु इस प्रकार भेजे गए बालू के संबंध में अनियमितता और अवैधता सामने आयी थी बल्कि उपदर्शन यह था कि इस प्रकार प्रस्तुत चालान प्रकटत: कूटरचित और मनगढ़ंत थे। मामले के पूर्वोक्त पहलू पर विचार करते हुए, पुलिस रिपोर्ट पर भारतीय दंड संहिता के प्रावधानों के अधीन दांडिक अभियोजन सही प्रकार से आरंभ किया गया था क्योंकि कूटरचना का अपराध बी॰ एम॰ एम॰ नियमावली जैसी विशेष विधि के अधीन आच्छादित नहीं है। विश्वास किए गए निर्णय अन्य तथ्यों पर आधारित है जो वर्तमान मामले में उपलब्ध नहीं है और इसलिए यह याचीगण की सहायता नहीं करेगा।

8. चाहे जो भी हो, विद्वान दंडाधिकारी द्वारा आरोप विरचित करने का निर्देश दिया गया था, उक्त आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन सत्र न्यायाधीश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था, आरंभिक चरण पर प्राथमिकी अभिखंडित करने के लिए दाखिल रिट आवेदन खारिज कर दिया गया था और मामला वर्ष 1988 से लंबित है और याचीगण द्वारा अनेक युक्तियों को अपनाकर विचारण को रोक दिया गया है।

9. उक्त की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इस रिट आवेदन को अनुज्ञात करने का इच्छुक नहीं हूँ। परिणामस्वरुप, इसे खारिज किया जाता है और अवर न्यायालय को विधि के अनुरुप विचारण की कार्यवाही करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

सोवि नारायण सिंह (5128 में)

नकुलदेव सिंह उर्फ नकुल दास सिंह (7966 में)

cuke

बिहार राज्य (अब झारखंड) एवं एक अन्य (दोनों में)

Cr. Misc. Nos. 5128 with 7966 of 1999 (R). Decided on 16th April, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 465, 468, 471, 474, 419, 420 एवं 120B—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल एवं कूटरचना–आदेशिका जारी–मामला कोयला के अवैध संव्यवहार से संबंधित है–याचीगण को प्राथमिकी में नामित नहीं किया गया है–अभिग्रहित ट्रक के चालक के संस्वीकृति पूर्व बयान में याचीगण को नामित किया गया है–याचीगण के विरुद्ध अन्य अभिकथन नहीं है–मामला स्वयं वर्ष 1999 में संस्थापित किया गया था, किंतु अब तक याचीगण के विरुद्ध न तो आरोप-पत्र और न ही फाइनल फॉर्म दाखिल किया गया है–अभियोजन करने वाली एजेंसी याचीगण के विरुद्ध मामले का अनुसरण नहीं कर रही है–मामला लंबित रखने अथवा गुणागुण पर मामला विनिश्चित करने का कारण नहीं है क्योंकि याचीगण के विरुद्ध कोई सामग्री नहीं है–याचीगण के विरुद्ध कोई प्रपीड़क कदम तब तक नहीं उठाया जा सकता है जब तक उनके विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया जाता है।

(पैराएँ 4 से 8)

अधिवक्तागण.—M/s. Ananda Sen, A.K. Verma, For the Petitioners; Mr. Gauri Shanker Prasad, For the Opp. Parties.

न्यायालय द्वारा.—ये दोनों आवेदन एक ही मामले से उद्भूत होते हैं और इसलिए उन्हें साथ सुना और एक ही आदेश से निपटाया जा रहा है।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

3. यह प्रतीत होता है कि याचीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 465, 468, 471, 474, 419, 420, 120B के अधीन अपराध के लिए झरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 88 वर्ष 1999, जी॰ आर॰ सं॰ 1138 वर्ष 1999 में अभियुक्त बनाया गया है।

4. यद्यपि, मामला कोयले के अवैध संव्यवहार से संबंधित है किंतु यह भी प्रतीत होता है कि याचीगण को प्राथमिकी में नामित नहीं किया गया है, बल्कि याचीगण को अभिग्रहित ट्रक के चालक के इकबालिया बयान में नामित किया गया है जिसमें, उसने कथन किया है कि ये याचीगण परिवाहक के कार्यालय में बैठे हुए थे। याचीगण के विरुद्ध कोई अन्य अभिकथन नहीं है।

5. याचीगण ने वर्तमान दांडिक विविध सं॰ 5128 वर्ष 1999 (R) जिसे दिनांक 20.7.1999 के आदेश द्वारा ग्रहण किया गया था और दांडिक विविध सं॰ 7966 वर्ष 1999 (R) जिसे दिनांक 10.1.2000 के आदेश द्वारा ग्रहण किया गया था, में याचीगण के विरुद्ध मामले के संस्थापन को चुनौती दिया है और मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद के न्यायालय में लंबित झरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 88 वर्ष 1999, जी॰ आर॰ केस सं॰ 1138 वर्ष 1999 में याचीगण के विरुद्ध आगे की कार्यवाही इस न्यायालय द्वारा स्थगित कर दी गयी थी। अन्य अभियुक्तगण के प्रति अवर न्यायालय में कार्यवाही स्थगित नहीं की गयी थी।

6. आगे यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण के बाद पुलिस द्वारा याचीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया था और दिनांक 15.12.2011 के आदेश द्वारा संबंधित न्यायालय से रिपोर्ट मंगाया गया था कि क्या याचीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र अथवा फाइनल फॉर्म दाखिल किया गया था। अब तक रिपोर्ट प्राप्त किया जा चुका है जो पत्र सं॰ 15 वर्ष 2012 दिनांक 23.1.2012 के अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद के पत्र में अंतर्विष्ट है जिसमें उन्होंने कथन किया है कि इन याचीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र अथवा फाइनल फॉर्म अब तक दाखिल नहीं किया गया है।

7. इस तथ्य की दृष्टि में कि मामला वर्ष 1999 में ही संस्थापित किया गया था, किंतु अब तक याचीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र अथवा फाइनल फॉर्म दाखिल नहीं किया गया है, यह प्रतीत होता है कि अभियोजन एजेन्सी याचीगण के विरुद्ध मामला आगे ले जाने में दिलचस्पी नहीं रखता है। तद्नुसार, मैं मामला लंबित रखने का अथवा गुणागुण पर मामला विनिश्चित करने का कारण नहीं देखता हूँ, क्योंकि वर्तमान में याचीगण के विरुद्ध कोई सामग्री प्रतीत नहीं होती है और न ही यह प्रतीत होता है कि याचीगण को मामले में अभियुक्त बनाया गया है।

8. तद्नुसार, इन दोनों रिट आवेदनों को इस निर्देश के साथ निस्तारित किया जाता है कि याचीगण के विरूद्ध कोई प्रपीड़क कदम नहीं उठाये जायेंगे जबतक कि अवर न्यायालय में याचीगण के विरूद्ध आरोप पत्र दाखिल नहीं किया जाता है। याचीगण को समुचित आवेदन दाखिल करने की स्वतंत्रता दी जाती है यदि उनके विरुद्ध कोई आरोप पत्र दाखिल किया जाता है।

9. इस निर्देश के साथ, इन दोनों आवेदनों को निपटाया जाता है।

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

रोहिताश कृष्णम उर्फ रोहिताश कृष्णन

cuke

राज्य, प्रवर्तन निदेशक के माध्यम से

Cr. M.P. No. 206 of 2012. Decided on 23rd April, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 409, 420, 423, 424, 465 एवं 120B सह-पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराएँ 7, 10, 11 एवं 13—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 82 एवं 482—छल एवं कूटरचना–भूतपूर्व मुख्यमंत्री और अन्य मंत्रियों का दांडिक अभियोजन–गिरफ्तारी वारन्ट जारी–अपराध के आगम को याची की कंपनी में निवेशित किया गया–याची लगातार अपनी उपस्थिति से बचता रहा और अन्वेषण अधिकारी ने उसका विचारण करने के लिए याची के विरुद्ध प्रथम दृष्टया सामग्रियाँ पाया है–धन शोधन निवारण अधिनियम के अधीन अपराध का किया जाना दर्शाते हुए प्रवर्तन निदेशालय के समक्ष याची द्वारा दिए गए पते पर सामग्रियाँ है किंतु उसे पता पर उपस्थित कभी नहीं पाया गया था और यह विश्वास करने का कारण था कि याची फरार हो गया है–विशेष न्यायालय द्वारा सही प्रकार से गिरफ्तारी वारंट जारी किया गया–आवेदन खारिज। (पैराएँ 5, 7, 8, 9, 14 से 17)

अधिवक्तागण.–Mr. Pandey Neeraj Rai, For the Petitioner; Mr. A.K. Das, For the E.D.

आदेश

भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 420, 423, 424, 465 और 120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 7, 10, 11 और 13 के अधीन भी अपराध करने के बारे में उसमें अभिकथन करते हुए तत्कालीन मुख्यमंत्री, कुछ मंत्रियों और अन्य व्यक्तियों के भी विरुद्ध निगरानी न्यायाधीश, राँची के न्यायालय में परिवाद दर्ज किया गया था। उक्त परिवाद निगरानी विभाग को अग्रसारित किया गया था जिस पर पूर्वोक्त व्यक्तियों के विरुद्ध निगरानी मामला दर्ज किया गया था।

2. बाद में, निगरानी मामले में किए गए अभिकथन के आधार पर प्रवर्तन निदेशालय ने प्रवर्तन मामला सूचना रिपोर्ट (इ॰ सी॰ आई॰ आर॰) उनके विरुद्ध यह अभिकथन करते हुए दर्ज किया कि भारतीय दंड संहिता के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन भी दांडिक कृत्य में लिप्त होकर अभियुक्तगण ने दांडिक षडयंत्र रचकर भारत में और भारत के बाहर अकूत धन अर्जित किया है और इस प्रकार, यह मत निर्मित करने के लिए प्रथम दृष्टया सामग्री है कि तत्कालीन मुख्यमंत्री मधु कोड़ा और बिनोद कुमार सिन्हा सहित छह अन्य अभियुक्तगण द्वारा धनशोधन का अपराध किया गया है जो मनी लॉन्ड्रिंग निवारण अधिनियम, 2002 की धारा 4 के अधीन दंडनीय है।

3. अन्वेषण के क्रम में पता चला कि याची, जो मेसर्स क्वांटम पावर टेक नामक कंपनी का स्वामी है, का विनोद कुमार सिन्हा के साथ निकट संबंध है जिसे मेसर्स क्वांटम पावरटेक सहित विभिन्न कंपनियों में अपराध के आगम को निविशित करता बताया जाता है। उस स्थिति में, अन्वेषण कार्यवाही के दौरान

उससे पूछताछ करने के प्रयोजन से याची को समन जारी किया गया था जिसका उसने तुरन्त उत्तर दिया और दिनांक 17, 18 और 21 दिसंबर, 2009 को बयान दिया। याची को पुनः दिनांक 30.6.2010 को उपस्थित होने के लिए कहा गया था किंतु कुछ वैध कारणों से याची उस तिथि पर उपस्थित नहीं हो सका था और चूँकि याची उस तिथि पर उपस्थित नहीं हो सका था, प्रवर्तन निदेशालय ने उसे अभियुक्त बनाया और विशेष न्यायाधीश (पी० एम० एल० ए०) राँची द्वारा पारित दिनांक 21.8.2010 के आदेश के अधीन गिरफ्तारी वारंट जारी करवाया। उस आदेश को दांडिक विविध याचिका सं० 1209 वर्ष 2010 में चुनौती दी गयी थी जिसे दांडिक विविध याचिका सं० 1219 वर्ष 2010 के साथ सुना गया था।

4. उक्त आदेश जिसके अधीन गिरफ्तारी वारंट जारी किया गया था का विरोध करते हुए याची की ओर से निवेदन किया गया था कि याची को आरंभ में अन्वेषण कार्यवाही में गवाह के रूप में उद्धृत किया गया था किंतु चूँकि याची उस तिथि पर जिस पर उसे बुलाया गया था, उपस्थित नहीं हो सका था, याची को अभियुक्त की कोटि में रखा गया था और इस परिस्थिति के अधीन, वह अपनी निर्दोषिता के बारे में प्रवर्तन निदेशालय के समक्ष स्पष्टीकरण नहीं दे सका था।

5. प्रवर्तन निदेशालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण यह है कि याची लगातार अपनी उपस्थिति से बचता रहा और कि पूर्वोक्त अपराध के लिए उसका विचारण करने के लिए अन्वेषण अधिकारी ने याची के विरुद्ध प्रथम दृष्टया सामग्री पाया गया था।

6. पक्षों द्वारा अपनाए गए परस्पर दृष्टिकोण की दृष्टि में, निम्नलिखित संप्रेक्षण/निर्देश के साथ उन आवेदनों को निपटाया गया है।

"(i) ;kphx.k bl vkn'k dh frfFk l vkB lIrkgk d Hkhrj fo}ku voj U;k;ky; d le{k mifLFkr gksxA ;fn mUg vfHk;Drx.k d :i e m)r fd;k tkrk g vkj mud fo#) vkjki&i= nkf[ky fd;k tkrk gA

(ii) bl vofèk d nkjku] ;kphx.k mu frfFk;k ij ftu ij mUg mifLFkr gku d fy, cyk;k x;k g] çoru fun'kky; d dk;ky; e fjikV djx vkj çoru fun'kky; }kjk fd, tk jg vUo"k.k e ijk lg;kx nxA

(iii) vUo"k.k , tUlh d le{k mifLFkr gku d fy, ;kphx.k dk l{ke cuku d fy, ;kphx.k d fo#) tkjh fxj¶rkjh okjUV vkB lIrkg dh mDr vucfèkr vofèk d volku rd fu"ikfnr ugh fd;k tk,xkA

(iv) çoru fun'kky;@vUo"k.k , tlh d le{k ;kphx.k d mifLFkr gku ij mUg vUo"k.k vfèkdkjh }kjk viu iNrkN d le; ij vfèkoDrk] fofèk ijke'knkrk vFkok fudV lcèkh dh mifLFkfr bfllr dju dk vfèkdkj gkxkA

(v) ifri'u d Øe e vUo"k.k vfèkdkjh }kjk fdlh FkM fMxh VhVeV vFkok fdlh 'kkjhfjd ;k ekufld gkfu d çfr ;kphx.k dk vè;èkku ugh fd;k tk,xkA

*(vi) ;kphx.k dk lefpr Qkje d le{k vfxe tekur bfllr dju dh Lor=rk gkxhA***

7. उस आदेश के अनुसरण में, याची दिनांक 25.10.2010 को वस्तुतः प्रवर्तन निदेशालय के समक्ष उपस्थित हुआ और उसका बयान भी दर्ज किया गया था। दिनांक 26.10.2010 को याची को कतिपय दस्तावेज प्रस्तुत करने का नोटिस दिया गया था जिसे दिनांक 1.11.2010 को प्रस्तुत किया गया था जिस तिथि पर याची का बयान पुनः दर्ज किया गया था। तत्पश्चात, याची के मामले के अनुसार, याची को

उपस्थित होने अथवा किसी दस्तावेज को प्रस्तुत करने के लिए कभी नहीं कहा गया था। इसके बावजूद, अन्वेषण अधिकारी ने विशेष न्यायालय के समक्ष दिनांक 25.1.2012 को उसमें प्रार्थना करते हुए इस आधार पर आवेदन दाखिल किया गया था कि उनके विरुद्ध जारी गैर जमानती गिरफ्तारी वारंट जारी किए जाने के बावजूद वे न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हुए थे, अत: याची और चार अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 82 के अधीन उद्घोषणा जारी की जाए। ऐसे आवेदन पर न्यायालय ने दिनांक 25.1.2012 के अपने आदेश के तहत दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 82 के अधीन आदेशिका जारी किया।

8. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री नीरज पांडे निवेदन करते हैं कि याची इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश की आज्ञानुसार प्रवर्तन निदेशालय के समक्ष उपस्थित हुआ जब-जब उसे बुलाया गया था और बयान दिया और कतिपय दस्तावेजों को भी प्रस्तुत किया। किंतु, मेसर्स क्वांटम पावरटेक का बैलेंसशीट, जिसे प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था, को प्रस्तुत नहीं किया जा सका था क्योंकि यह इस तथ्य के कारण याची के पास उपलब्ध नहीं था कि इसे आयकर प्राधिकारीगण द्वारा जब्त कर लिया गया था, फिर भी यह विश्वास करने कि याची फरार हो गया है अथवा स्वयं को छुपा लिया है ताकि ऐसा वारंट निष्पादित नहीं किया जा सके, का कोई कारण हुए बिना विशेष न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 82 के अधीन आदेशिका जारी की गयी थी।

9. इस संबंध में निवेदन किया गया था कि वस्तुत: अन्वेषण अधिकारी ने यह पता लगाने का कोई प्रयास नहीं किया कि क्या याची दिल्ली के दिए गए पते से भिन्न किसी अन्य पते पर उपलब्ध था, यद्यपि समय के पहले बिंदु पर समन राँची के पता पर जारी किया गया था।

10. इन परिस्थितियों के अधीन, आदेश जिसके अधीन आदेशिका जारी की गयी थी अभिखंडित किए जाने योग्य है।

11. इसके विरुद्ध, प्रवर्तन निदेशालय के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री दास निवेदन करते हैं कि यह सत्य है कि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में याची दिनांक 25.10.2010 को वस्तुत: प्रवर्तन निदेशालय के समक्ष उपस्थित हुआ था और दो कंपनियों अर्थात् मेसर्स क्वांटम पावरटेक और मेसर्स न्यूटन कंसलटेंट सहित चार कंपनियों का बैलेंसशीट और अन्य दस्तावेजों को प्रस्तुत करने का वचन दिया और कि दिनांक 25.10.2010 को उसने दिल्ली का अपना आवासीय पता दिया था। दिनांक 1.11.2010 को याची ने अन्य कंपनियों का बैलेंसशीट दाखिल किया। किंतु पूर्वोक्त दो कंपनियों का बैलेंसशीट प्रस्तुत नहीं किया था जिसे प्रस्तुत करने का वचन उसने पहले दिया था। साथ ही, वह 80 लाख रुपयों, जिसे उसने कंपनी में निवेशित किया, की निधि का स्रोत बताने में विफल रहा।

12. आगे इंगित किया गया था कि दिनांक 22.11.2010 के बाद जब गिरफ्तारी वारंट पहले जारी किया गया था, जिसका प्रवर्तन इस न्यायालय द्वारा स्थगित कर लिया गया था प्रवर्तनीय बन गया, याची द्वारा दिए गए पता पर उसे पाने के लिए कदम उठाया गया था किंतु उस पता पर उसे कभी नहीं पाया गया था।

13. इन परिस्थितियों के अधीन, अन्वेषण अधिकारी द्वारा किए गए अनुरोध पर उद्घोषणा जारी की गयी थी और इसलिए, न्यायालय द्वारा अवैधता नहीं की गयी है।

14. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर यह वस्तुत: प्रतीत होता है कि जब याची के विरुद्ध गिरफ्तारी वारंट जारी किया गया था, इसे इस न्यायालय के समक्ष इस आधार पर चुनौती दी गयी थी कि अन्वेषण कार्यवाही में याची से गवाह के रूप

में परिप्रश्न किया गया था और इस प्रकार वह निदेशालय प्राधिकारी के समक्ष उसके विरुद्ध सामने आने वाले अपराध में फँसाने वाली सामग्रियों के विरुद्ध अपना स्पष्टीकरण नहीं दे सका था। किंतु, दूसरे पक्ष का दृष्टिकोण था कि प्रथम दृष्टया सामग्रियाँ संग्रहित किए जाने पर अन्वेषण अधिकारी ने गिरफ्तारी वारंट जारी करवाया जब याची ने अन्वेषण कार्यवाही में सहयोग नहीं किया। ऐसी स्थिति में, गिरफ्तारी वारन्ट का प्रवर्तन आठ सप्ताह के लिए स्थगित कर दिया गया था जिस दौरान याची को प्रवर्तन निदेशालय के समक्ष उपस्थित होने का, जब और जैसे उसे अन्वेषण के प्रयोजन से बुलाया जाता है, निर्देश दिया गया था।

15. आगे निर्देश था कि याची आठ सप्ताह के भीतर न्यायालय के समक्ष उपस्थित होगा यदि उसे मामले में दाखिल आरोप-पत्र में अभियुक्त के रूप में उद्धृत किया जाता है। साथ ही, याची को समुचित फोरम के समक्ष अग्रिम जमानत इप्सित करने की स्वतंत्रता दी गयी थी। उस निर्देश के अनुसरण में, याची प्रवर्तन निदेशालय के समक्ष वस्तुतः उपस्थित हुआ था और कतिपय दस्तावेजों को प्रस्तुत करने का वचन दिया था जिसमें से कुछ याची के अनुसार प्रस्तुत भी किए गए थे किंतु कुछ दस्तावेजों को प्रस्तुत नहीं किया जा सका था क्योंकि ये उपलब्ध नहीं थे किंतु अभियोजन के अनुसार इन्हें याची द्वारा दिए गए वचन के बावजूद प्रस्तुत नहीं किया गया था। इस बीच, आठ सप्ताह के अवसान के बाद, याची के विरुद्ध पहले जारी किया गया गिरफ्तारी वारंट दिनांक 22.11.2010 के बाद प्रवर्तनीय बन गया और इस प्रकार, अन्वेषण अधिकारी ने याची जिसके विरुद्ध अभियोजन के अनुसार मनी लॉन्ड्रिंग निवारण अधिनियम के अधीन अपराध किए जाने को दर्शाती सामग्रियाँ थी, द्वारा प्रवर्तन निदेशालय के समक्ष दिए गए पते पर याची का पता लगाने के लिए कदम उठाया गया था किंतु याची को उस पता पर उपस्थित कभी नहीं पाया गया था और तद्द्वारा यह विश्वास करने का कारण था कि याची फरार हो गया था।

16. इन परिस्थितियों के अधीन, विशेष न्यायालय आदेश, जिसके अधीन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 82 के अधीन आदेशिका याची के विरुद्ध जारी की गयी थी, पारित करने में अवैधता करता प्रतीत कभी नहीं होता है।

17. इस प्रकार, मैं आदेश में अवैधता नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

यदू हंसदा

cuke

झारखंड राज्य

Cr. (Jail) Appl. (DB) No. 1872 of 2004. Decided on 13th April, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या–दोषसिद्धि–आजीवन कारावास अधिनिर्णीत–अपीलार्थी ने झगड़ा के बाद अपनी माता की हत्या कर दी–चश्मदीद गवाह का साक्ष्य विश्वास उत्पन्न नहीं करता है–उसने केवल इतना कहा कि अपीलार्थी ने कुल्हाड़ी से मृतका के मस्तक पर प्रहार किया जिस कारण उसकी मृत्यु हो गयी–उसने डॉक्टर द्वारा पायी गयी अन्य उपहतियों के बारे में कुछ नहीं कहा था–वह संयोगी गवाह प्रतीत होती है–अ॰ सा॰ के ऐसे साक्ष्य के आधार पर अपीलार्थी की दोषसिद्धि को मान्य ठहराना सुरक्षित नहीं होगा–अभियोजन

अपीलार्थी के विरुद्ध अपना मामला समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे सिद्ध करने में सफल नहीं रहा है–संदेह का लाभ देते हुए अपीलार्थी को दोषमुक्त किया गया–अपील अनुज्ञात।

(पैराएँ 2 से 5)

अधिवक्तागण.–None, For the Appellant; Mr. Ravi Prakash, For the State.

आदेश

अपीलार्थी की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ।

अपीलार्थी की ओर से इस न्यायालय की सहायता करने के लिए इस अपील में विद्वान पैनल अधिवक्ता श्री आशीष वर्मा को न्यायमित्र के रूप में बहाल किया जाता है।

बाद में

यह अपील सत्र केस सं॰ 73 वर्ष 2003/118 वर्ष 2003 में अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए और उसको आजीवन कठोर कारावास भुगतने और 5000/- रुपयों का जुर्माना और उसके व्यतिक्रम में छह माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए सप्तम अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ सं॰ 4, गोड्डा द्वारा क्रमशः दिनांक 10.9.2004 और दिनांक 13.9.2004 को पारित दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है।

2. संक्षेप में, अभियोजन मामला यह है कि अ॰ सा॰ 3 सलखू हंसदा सूचक ने दिनांक 7.2.2003 को प्रातः लगभग 11.30 बजे अपना फर्दबयान दर्ज किया कि दिनांक 6.2.2003 को, जो बनधाना उत्सव का अंतिम दिन था, अपीलार्थी जो उसका भाई है और जो मदिरा सेवन के बाद अपनी माता से झगड़ा करता था और उसको धमकाता था, ने रात्रि लगभग 10-11 बजे अपनी पत्नी के साथ अपनी माता से झगड़ा किया और दोनों ने कुल्हाड़ी से उसकी हत्या कर दी।

3. अभियोजन ने 9 गवाहों का परीक्षण किया। अ॰ सा॰ 1, 4, 5, 6, 7 और 8 अनुश्रुत अथवा निविदत्त गवाह है। अ॰ सा॰ 9 डॉक्टर है जिन्होंने शव परीक्षण संचालित किया। अ॰ सा॰ 2 चुर्की हंसदा अभियोजन द्वारा एकमात्र चश्मदीद गवाह के रूप में प्रस्तुत किया गया गवाह है। किंतु अभिसाक्ष्य का परिशीलन करने पर यह स्वीकार करना संभव नहीं है कि वह चश्मदीद गवाह है। उसने अन्य बातों के साथ कथन किया कि जब मारपीट हुआ, वह जग गयी। उसने यह भी कहा कि मृतक ने घटना के दिन पर मदिरा सेवन किया था। उसने केवल इतना कहा कि अपीलार्थी ने कुल्हाड़ी से मृतका के मस्तक पर प्रहार किया जिस कारण उसकी मृत्यु हो गयी। उसने डॉक्टर द्वारा पायी गयी अन्य उपहतियों के बारे में कुछ नहीं कहा था। वह संयोगी गवाह प्रतीत होती है।

4. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, केवल अ॰ सा॰ 2 के ऐसे साक्ष्य के आधार पर अपीलार्थी की दोषसिद्धि मान्य ठहराना सुरक्षित नहीं होगा। हमारे मत में, अभियोजन अपीलार्थी के विरुद्ध समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे अपना मामला सिद्ध करने में सक्षम नहीं रहा है। तद्नुसार, हम उसे संदेह का लाभ देते हुए दोषमुक्त करने के इच्छुक हैं।

5. परिणामस्वरुप, यह अपील अनुज्ञात की जाती है। अपीलार्थी के विरुद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दंडादेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी, जो कारा अभिरक्षा में है, को तुरन्त निर्मुक्त करने का, यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है, निर्देश दिया जाता है।

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

बिहार फाउंडरी एवं कास्टिंग्स लिमिटेड

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (T) No. 3354 of 2003. Decided on 26th April, 2012

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

कराधान–खरीद कर–छूट–याची एक नीति के अधीन खरीद कर के भुगतान से छूट का दावा कर रहा है–किंतु, कंपनी ने याची से खरीद कर वसूल किया और इसे वाणिज्य कर विभाग के पास जमा किया–विवाद याची के आरंभिक दावा के संबंध में भी है–यदि कंपनी (टेल्को) ने इस उपधारणा कि यह याची का कर दायित्व है के अधीन याची से किसी राशि को गलत रूप से वसूला है, तब याची वाद दाखिल करके राशि वसूल सकता है–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. N. K. Pasari, For the Petitioner; M/s. S. Gadodia, A.K. Sinha, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. रिट याची का किसी प्राईवेट लिमिटेड कंपनी–टाटा इंजीनियरिंग एण्ड लोकोमोटिव कंपनी लि॰ (टेल्को) अब टाटा मोटर्स, के साथ व्यापारिक संव्यवहार था।

3. रिट याची का प्रतिवाद यह है कि वह एक नीति के अधीन खरीद कर के भुगतान से छूट का हकदार था। किन्तु, टेल्को ने खरीद कर वसूल किया और इसे तत्कालीन बिहार राज्य के वाणिज्य कर विभाग के पास जमा किया। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रतिवाद किया कि याची स्वयं वाणिज्य कर विभाग से राशि वापस पाने का हकदार था क्योंकि टेल्को ने वाणिज्य कर विभाग के पास रिट याची के खाता में 13,12,227/- रुपया जमा किया। किंतु वाणिज्य कर विभाग ने रिट याची को उक्त राशि वापस करने से इनकार कर दिया और निर्देश दिया कि याची इसे स्वयं टेल्को से वसूल कर सकता है। टेल्को ने बदले में 13,12,227/- रुपयों की कुल राशि को वापस करने से इनकार कर दिया और रिट याची के दावा को विवादित किया और इस रिट याचिका को दाखिल किए जाने के बाद 2,59,492/- रुपयों का चेक दिया जिसे याची द्वारा विरोध के अधीन स्वीकार किया गया था। याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, वाणिज्य कर विभाग ने दृष्टिकोण लिया कि यद्यपि राशि विभाग के पास जमा की गयी है, याची टेलको से उस राशि को पा सकता है।

4. उक्त कारणों की दृष्टि में यह स्पष्ट है कि विवाद रिट याची के आरंभिक दावा से भी संबंधित है, जैसा प्रत्यर्थी टेल्को द्वारा केवल 2,59,492/- रुपयों की सीमा तक और न कि 13,12,277/- रुपयों की सीमा तक याची के दावा को स्वीकार करके विवादित किया गया है।

5. टेल्को के विद्वान अधिवक्ता ने रिट याची के दृष्टिकोण को विवादित किया और निवेदन किया कि वस्तुतः याची किसी तरीके से टेल्को के विरुद्ध किसी दावा को पाने का हकदार नहीं था।

6. अतः, इन तथ्यों की दृष्टि में, यदि टेल्को ने इस उपधारणा कि यह रिट याची का कर दायित्व है के अधीन रिट याची से किसी राशि को गलत रूप से वसूल किया है, तब याची हकदार होने पर टेल्को से राशि वसूल सकता है, और उसे वाद दाखिल करके उपचार का लाभ लेना चाहिए था। उक्त कारणों की दृष्टि में, हम इस याचिका को ग्रहण करने का कोई कारण नहीं देखते हैं जिसे तद्नुसार खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

अनिल कुमार सिंह एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cri. Misc. No. 749 of 2011. Decided on 3rd May, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—याचीगण के विरुद्ध उन्हीं आरोपों पर विभागीय कार्यवाही की जा रही है जिस पर प्राथमिकी दर्ज की गयी थी–याचीगण को विभागीय कार्यवाही में विमुक्त किया गया है–संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अपास्त किए जाने का दायी है–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 7 से 10)

निर्णयज विधि.–(1996)9 SCC 1—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Sujit Narayan Prasad, For the Petitioners; Mr. D. K. Chakravorty, For the State.

न्यायालय द्वारा.–यह आवेदन तत्कालीन अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, खूँटी द्वारा पारित दिनांक 18.11.2008 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन याचीगण जो समय के प्रासंगिक बिंदु पर अरकी, खूँटी और मुरहू प्रखंडों में कनीय अभियन्ताओं के रूप में पदस्थापित थे के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 467, 468, 471, 420 और 120B के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया था, सहित खूँटी पुलिस थाना केस सं॰ 60 वर्ष 2000 (जी॰ आर॰ सं॰ 241 वर्ष 2000) की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

2. यह प्रतीत होता है कि उपायुक्त, राँची ने यह ज्ञात होने पर कि इन याचीगण सहित अभियन्ताओं, जिन्हें ग्रामीण अभियंत्रण संगठन, संकर्म डिविजन, राँची के अधीन पथ के निर्माण/मरम्मती का काम न्यस्त किया गया था, ने अनेक प्रकार की अनियमितताओं में स्वयं को आलिप्त किया था, कमिटि गठित किया जिसने इन याचीगण और अन्य द्वारा किए गए विभिन्न कामों का निरीक्षण किया और इस निष्कर्ष पर आया कि अभियन्ताओं ने काम पूरा करवाए बिना संपूर्ण राशि निकाल ली और तद्द्वारा उक्त राशि का दुर्विनियोग किया।

3. जहाँ तक इन याचीगण का संबंध है, जाँच के दौरान पाया गया था कि याची सं॰ 1 को पथों (i) राष्ट्रीय उच्च पथ सं॰ 33 जेराडीह से मुरपा (ii) खूँटी–तमार रोड उतिहातू और (iii) तमार–नौरीपथ के मरम्मती कार्य का पर्यवेक्षण कार्य न्यस्त किया गया था, किंतु विनिर्दिष्टताओं के मुताबिक काम पूरा किए बिना उसने 1,23,735/- रुपयों, 93,527/- रुपयों और 44,651/- रुपयों की राशि का दुर्विनियोग किया।

4. इसी प्रकार से याची सं॰ 2 के मामले में पाया गया था कि पथों, जिन्हें उसके पर्यवेक्षण के अधीन मरम्मत/निर्मित किया जाना था, की संतोषजनक रूप से मरम्मती नहीं की गयी थी और मिट्टी का काम उस सीमा तक किया गया नहीं पाया गया था जिस सीमा तक इसे किए जाने का दावा किया गया था और तद्द्वारा उसने भी अभिकथित रूप से राशि का दुर्विनियोग किया है।

5. इसी प्रकार से याची सं॰ 3, जिसे सात पथों का मरम्मती/निर्माण कार्य न्यस्त किया गया था, ने भी अभिकथित रूप से राशि का दुर्विनियोग किया है क्योंकि कुछ पथों को संतोषजनक रूप से मरम्मत किया गया कभी नहीं पाया गया था और कि कुछ मामलों में राशि इस बहाने निकाल ली गयी थी कि काम पूरा हो चुका है जबकि, वस्तुतः इसे कभी पूरा नहीं किया गया था।

6. उक्त जाँच रिपोर्ट के आधार पर, इन याचीगण सहित 13 व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 467, 468, 471, 420 और 120B के अधीन खूँटी पी॰ एस॰ केस सं॰ 60 वर्ष 2000 दर्ज किया गया था। मामले में अन्वेषण किया गया था। किंतु, अन्वेषण के दौरान, याचीगण में से किसी के विरुद्ध सह-अपराधिता नहीं पायी गयी थी और इसलिए, फाइनल फॉर्म दाखिल किया गया था जिसके द्वारा इन तीनों याचीगण को विमुक्त किया गया था किंतु न्यायालय ने केस डायरी में उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर दिनांक 18.11.2008 के अपने आदेश के तहत याचीगण के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान लिया जैसा ऊपर कहा गया है। वह आदेश चुनौती के अधीन है।

7. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एस॰ एन॰ प्रसाद निवेदन करते हैं कि मामले के संस्थापन के बाद इन याचीगण के विरुद्ध उन्हीं आरोपों पर विभागीय कार्यवाही की गयी थी जिन पर प्राथमिकी दर्ज की गयी थी किंतु विभाग याचीगण के विरुद्ध आरोपों को स्थापित करने में विफल रहा और तद्द्वारा समस्त याचीगण को विमुक्त करते हुए जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत किया गया था किंतु अनुशासनिक प्राधिकारी ने जाँच रिपोर्ट को संतोषजनक नहीं पाया और इसलिए, उसने नयी जाँच कराने का आदेश पारित किया। इस पर, एक अन्य जाँच अधिकारी ने विभागीय कार्यवाही संचालित किया किंतु उसने भी याचीगण में से किसी को किसी आरोप का दोषी नहीं पाया था, फिर भी अनुशासनिक प्राधिकारी ने याची सं॰ 1 और 3 के विरुद्ध दंड दिया किंतु अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष चुनौती दिए जाने पर उन आदेशों को अपास्त कर दिया गया था और याचीगण को विमुक्त कर दिया गया था और कि जहाँ तक याची सं॰ 2 का संबंध है, आरोपों से उसको विमुक्त करने वाली जाँच रिपोर्ट अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा स्वीकार की गयी थी। अतः, निवेदन किया गया था कि जब याचीगण को उन्हीं आरोपों पर विभागीय कार्यवाही में विमुक्त कर दिया गया है, तब **पी॰ एस॰ राज्या बनाम बिहार राज्य, (1996)9 SCC 1,** मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण अभियोजन मामले को अभिखंडित करना अपेक्षित है।

8. याचीगण की ओर से की गयी पूर्वोक्त प्रतिपादना कि याचीगण के विरुद्ध उन्हीं आरोपों जिनपर प्राथमिकी दर्ज की गयी है, पर विभागीय कार्यवाही की जा रही है, का राज्य की ओर से खंडन नहीं किया गया है।

9. अतः, कोई विवाद नहीं है कि याचीगण को उन्हीं आरोपों, जिस पर प्राथमिकी दाखिल की गयी है, पर विभागीय कार्यवाही किए जाने पर विमुक्त कर दिया गया है और तद्द्वारा संपूर्ण दांडिक कार्यवाही को अपास्त किया जाना ऊपर निर्दिष्ट मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में अपेक्षणीय है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:-

*^^nkfMd ekey e nk"k LFkkfir dju d fy, çek.k d Lrj dh vko';drk foHkkxh; dk;okgh e nk"k LFkkfir dju d fy, vko';d çek.k d Lrj dh ryuk e vfèkd mPprj gA oreku ekey e] foHkkxh; dk;okgh e vkjki vkj nkfMd dk;okgh e vkjki ,d vkj ,d gh gA ;fn vkjki] tk ln'k g] dk foHkkxh; dk;okgh e LFkkfir ugh fd;k tk ldk Fkk vkj eY;kdu }kjk çLrr fjikV e Lohdkj fd, x, vrjk dh nf"V e vk'p; gkrk g fd nkfMd dk;okgh e vihykFkh d fo#) vxlj gku d fy, D;k gA***

10. इन परिस्थितियों के अधीन दिनांक 18.11.2008 के आदेश जिसके अधीन याचीगण के विरुद्ध संज्ञान लिया गया है, सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अपास्त की जाती है। तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

मुमताज अंसारी (590 में)

निजाम अंसारी एवं एक अन्य (322 में)

cuke

झारखंड राज्य (दोनों में)

Criminal Appeal (D.B.) Nos. 590, 322 of 2004. Decided on 2nd May, 2012.

सत्र विचारण सं॰ 322 वर्ष 2001 में चतुर्थ अपर न्यायिक कमिश्नर-सह-विशेष न्यायाधीश सं॰ II, सी॰ बी॰ आई॰ (ए॰ एच॰ डी॰), राँची द्वारा पारित दिनांक 23.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 24.12.2003 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34 एवं 450 सह-पठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27—हत्या-आजीवन कारावास—पक्षों के बीच दुश्मनी और मुकदमा स्वीकार किया गया—इस प्रकार, झूठा आलिप्त करने के अवसर को नकारा नहीं जा सकता है—रात्रि में पुलिस के समक्ष सूचक पक्ष द्वारा दिया गया पहला विवरण पुलिस द्वारा दर्ज नहीं किया गया था—अभियोजन अपीलार्थीगण के विरुद्ध अपना मामला समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे सिद्ध नहीं कर सका था—अपीलार्थीगण के विरुद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश संदेह का लाभ देते हुए अपास्त—अपीलें अनुज्ञात। (पैराएँ 7 से 11)

अधिवक्तागण.—Mr. B. K. Mishra, (in 590); Mr. Lukesh Kumar, (in 322), For the Appellants; Mrs. Nikki Sinha, For the State.

न्यायालय द्वारा.—ये दोनों अपीलें सत्र विचारण सं॰ 322 वर्ष 2001 में भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 450 एवं 302/34 के अधीन अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध करते हुए और आगे अपीलार्थी मुमताज अंसारी को आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध करते हुए और उनको भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए कठोर आजीवन कारावास और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 450 के अधीन अपराध के लिए आठ वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए विद्वान चतुर्थ अपर न्यायिक कमिश्नर-सह-विशेष न्यायाधीश सं॰ II, सी॰ बी॰ आई॰ (ए॰ एच॰ डी॰), राँची द्वारा पारित दिनांक 23.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 24.12.2003 के दंडादेश से उद्भूत होती हैं। अपीलार्थी मुमताज अंसारी को आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपराध के लिए पाँच वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का भी दंडादेश दिया गया था। किंतु सभी दंडादेशों को साथ-साथ चलना था।

2. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि सूचक शम्सुद्दीन अंसारी (अ॰ सा॰ 1) ने दिनांक 3.6.1999 को प्रात: लगभग 7 बजे इस प्रभाव का फर्दबयान दर्ज किया कि पिछली रात लगभग 8 बजे अपीलार्थीगण ने उसके पुत्र इदरीस अंसारी (मृतक) जो घर में सो रहा था का नाम पुकारा जिस पर सूचक लैंप लेकर आंगन में आया और अपीलार्थीगण को देखा। इस बीच, मृतक की पत्नी भी लैंप लिए बाहर आयी। सूचक ने उसे बताया कि अपीलार्थीगण इदरीस को बुला रहे हैं। जब अपीलार्थीगण को ज्ञात हुआ कि इदरीस घर के अंदर है, वे घर में घुस गए और उसको घसीटा और तौलिया से उसका हाथ बांध दिया। जब सूचक ने अपीलार्थीगण से पूछा कि वे इदरीस के साथ ऐसा क्यों कर रहे हैं, उन्होंने उसको धमकाया। तत्पश्चात्, अपीलार्थी मुमताज अंसारी ने काफी करीब से इदरीस की पसली पर गोली चलायी जिसके परिणामस्वरुप इदरीस खून बहने की उपहतियों के साथ आंगन में गिर गया। तत्पश्चात्, अपीलार्थीगण भाग गए। सूचक ने हल्ला किया जिस पर पड़ोसी आए। उस समय तक इदरीस की मृत्यु हो चुकी थी। यह भी अभिकथित किया गया था कि सूचक पक्ष और अपीलार्थीगण हसीमुद्दीन अंसारी और नेजाम अंसारी के बीच कतिपय संपत्ति के ऊपर झगड़ा चल रहा था जिसके लिए उन्होंने सूचक पक्ष को कुछ दिन पहले धमकी भी दी थी।

3. अभियोजन ने ग्यारह गवाहों का परीक्षण किया। अ॰ सा॰ 1 सूचक और अ॰ सा॰ 4 मृतक की पुत्री को चश्मदीद गवाह के रूप में प्रक्षेपित किया गया है।

अ॰ सा॰ 2 और 5 अनुश्रुत गवाह हैं।

अ॰ सा॰ 3 और 9 को पक्षद्रोही घोषित किया गया है।

अ॰ सा॰ 6, 7 और 8 औपचारिक गवाह हैं।

अ॰ सा॰ 10 डॉक्टर है जिन्होंने मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण किया और पाया कि मृत्यु का कारण मृतक की पसलियों में गोली लगने से हुई उपहति थी। अ॰ सा॰ 1 मामले का अन्वेषण अधिकारी है।

4. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अनेक आधारों पर आक्षेपित निर्णय का विरोध किया है, जबकि राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया है।

5. निम्नलिखित कारणों से हम अपीलार्थीगण को संदेह का लाभ देने के इच्छुक हैं।

सूचक (अ॰ सा॰ 1) ने फर्दबयान में अपने द्वारा दिए गए विवरण का समर्थन किया किंतु उसने यह भी कहा कि उसका पुत्र जफर अंसारी (अ॰ सा॰ 5) घटना के लगभग डेढ घंटा बाद स्वयं रात में पुलिस थाना गया था किंतु उसने उसको यह नहीं बताया था कि किसने मृतक की हत्या की थी और किस प्रकार उसकी हत्या की गयी थी। उसने आगे कहा कि जफर रात में लगभग 1 बजे लौटा और उसको बताया कि उसने पुलिस को सूचित किया है किसी ने उसके भाई इदरीस की हत्या कर दी है।

अ॰ सा॰ 4 कनीजा खातून, मृतक की पुत्री ने अन्य बातों के साथ कहा कि उसके चाचा (अ॰ सा॰ 5) को पुलिस थाना जाने से पहले संपूर्ण घटना का पता चला।

अ॰ सा॰ 5 जफर अंसारी ने अन्य बातों के साथ कहा कि उसके पिता (अ॰ सा॰ 1) ने उसे घटना के बारे में सब कुछ बताया और वह रात्रि लगभग 11 बजे कुछ व्यक्तियों के साथ पुलिस थाना गया था और पुलिस को संपूर्ण घटना के बारे में सूचित किया था, किंतु पुलिस ने उसका फर्दबयान दर्ज नहीं किया। अ॰ सा॰ 5 ने विनिर्दिष्टत: कहा कि उसके पिता (अ॰ सा॰ 1) ने उसे संपूर्ण घटना के बारे में बताया था और उसने तद्नुसार संपूर्ण घटना के बारे में पुलिस को सूचित किया था। यह समझ में नहीं आता कि क्यों अ॰ सा॰ 1 ने कहा कि उसने जफर (अ॰ सा॰ 5) को उसके पुलिस थाना जाने से पहले प्रकट नहीं किया था कि किसने इदरीस की हत्या की थी और किस प्रकार उसकी हत्या की गयी थी।

अ॰ सा॰ 11 अन्वेषण अधिकारी ने अन्य बातों के साथ कहा कि पुलिस थाना में अफवाह पहुँचा कि एक हत्या हो गयी है और तब स्टेशन डायरी में ऐसी सूचना प्रविष्ट करने के बाद, वह घटनास्थल पर गया और सूचक का फर्दबयान दर्ज किया। यदि आई॰ ओ॰ के विवरण पर विश्वास किया जाता है, तब प्रतीत होगा कि सूचक पक्ष ने घटना के बारे में रात में ही पुलिस को नहीं बताया था यद्यपि अ॰ सा॰ 1, 4 और 5 ने विनिर्दिष्टत: कहा था कि घटना के बारे में रात में ही पुलिस को सूचित किया गया था।

यदि अ॰ सा॰ 4 और 5 का विश्वास किया जाता है, तब यह ज्ञात नहीं है कि क्यों रात में पुलिस के समक्ष अ॰ सा॰ 5 द्वारा दिया गया सूचक पक्ष का पहला विवरण पुलिस द्वारा दर्ज नहीं किया गया था।

पक्षों के बीच दुश्मनी और मुकदमा स्वीकृत अवस्था है। इस प्रकार, झूठा आलिप्त करने के अवसर को नकारा नहीं जा सकता है।

11. अभिलेखों का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने के बाद और पक्षों को विस्तारपूर्वक सुनने पर, हमारे मत में, अभियोजन अपीलार्थीगण के विरुद्ध समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे अपना मामला सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुआ है और वे संदेह का लाभ पाने योग्य है।

12. परिणामस्वरुप, इन दोनों अपीलों को अनुज्ञात किया जाता है। अपीलार्थीगण के विरुद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को अपास्त किया जाता है। अपीलार्थीगण–नेजाम अंसारी और हसीमुद्दीन अंसारी जमानत पर हैं। उन्हें उनके जमानत बंधपत्रों से उन्मोचित किया जाता है। अपीलार्थी मुमताज अंसारी कारा में है। उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; ç'kkr dekj] U;k;efr

मो॰ मुजीबुल अंसारी

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 36 of 2012. Decided on 1st March, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 467, 468, 471 एवं 420—कूटरचना एवं छल–दोषसिद्धि–अपीलीय न्यायालय ने धाराओं 467, 468, 471 एवं 429 के अधीन दोषसिद्धि का निर्णय अभिपुष्ट किया और धारा 467 के अधीन उसके विरुद्ध लगाए गए आरोप से याची को दोषमुक्त किया और धारा 471 के अधीन अपराध के लिए याची के दंडादेश को उपांतरित किया–अवर न्यायालय के निष्कर्ष तथ्यों पर आधारित हैं–आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कारण नहीं–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 1 एवं 2)

अधिवक्तागण.–Mr. R. C. Jha, For the Petitioner; Mr. S.S. Prasad, For the State.

आदेश

यह पुनरीक्षण दांडिक अपील सं॰ 1 वर्ष 2011 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 12.12.2011 के निर्णय के विरुद्ध निर्देशित है, जिसके द्वारा उन्होंने जी॰ आर॰ सं॰ 262 वर्ष 2005 में भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 467, 468, 471 और 420 के अधीन एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, बोकारो द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय को अभिपुष्ट किया और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 467 के अधीन उसके विरुद्ध लगाए गए आरोप से याची को दोषमुक्त किया और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 471 के अधीन अपराध से संबंधित याची के दंडादेश को उपांतरित किया।

2. आक्षेपित आदेश के परिशीलन से, मैं पाता हूँ कि विद्वान अवर न्यायालय साक्ष्य का अधिमूल्यन करके इस निष्कर्ष पर आया कि याची ने भा॰ दं॰ सं॰ की धाराएँ 468, 471 और 420 के अधीन अपराध किया था। इस प्रकार, मैं पाता हूँ कि अवर न्यायालय के निष्कर्ष तथ्यों पर आधारित हैं। पूर्वोक्त आदेश में अवैधता नहीं है। तद्नुसार, मैं इसमें हस्तक्षेप करने का कारण नहीं पाता हूँ, और इसलिए, इस पुनरीक्षण को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjs dh ejkfB;k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

राजू उर्फ रंजीपूर्ति एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal D.B. No. 61 of 2004. Decided on 31st January, 2012.

सत्र विचारण केस सं॰ 251 वर्ष 1995 में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश फास्ट ट्रैक कोर्ट 1, चाईबासा द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 8.12.2003 और 9.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34 एवं 201—हत्या–आजीवन कारावास एवं प्रत्येक को 3000/- रुपयों का जुर्माना अधिनिर्णीत–मृतक व्यक्तियों की वास्तविक हत्या का चश्मदीद गवाह नहीं–अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण नहीं किया गया–अन्वेषण के दौरान किसी स्वतंत्र गवाह का परीक्षण नहीं किया गया–केवल मृतक की बहन के साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि मान्य ठहराना सुरक्षित नहीं होगा–अभियोजन घटना के तरीके को सिद्ध करने में सक्षम नहीं रहा है–अभियोजन मामला समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे सिद्ध नहीं किया गया–दोषसिद्धि और दंडादेश अपास्त–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. R. C. Khatri, For the Appellants; Mr. D. K. Chakravorty, For the State.

न्यायालय द्वारा.–यह अपील सत्र विचारण केस सं॰ 251 वर्ष 1995 में अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 और 201 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए और उनको कठोर आजीवन कारावास भुगतने और 3000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने और इसके व्यतिक्रम में तीन माह का अतिरिक्त कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट–1, चाईबासा द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 8.12.2003 और 9.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है। उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 201 के अधीन अपराधों के लिए तीन वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश भी दिया गया है। किंतु, दोनों दंडादेश साथ–साथ चलना था।

2. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि सूचक सावित्री चंपिया (अ॰ सा॰ 2) ने दिनांक 15.11.1994 को सायं लगभग 6.30 बजे इस प्रभाव का फर्दबयान दिया कि वह अपनी बहन सुरु चंपिया (मृतका) और भाई किरण चंपिया (मृतक) के साथ रहती थी। दिनांक 13.11.1994 की शाम में, उसका भाई किरण चंपिया नित्यकर्म से निबटने घर के बाहर गया। घातक हथियारों से लैस अपीलार्थीगण सहित सात व्यक्तियों ने किरण चंपिया को घेर लिया और उसे घसीट कर तालाब की ओर ले गए। सूचक अपनी बहन सुरु चंपिया के साथ तालाब तक गयी। किरण चंपिया को रेंगो उर्फ लोडे चंपिया (अपीलार्थी सं॰ 2)

के घर में ले जाया गया था। किरण चंपिया मदद के लिए चिल्ला रहा था। सूचक और उसकी बहन भय के कारण घर वापस लौट गए। सूचक ने यह कहते हुए कि अभियुक्तगण उन दोनों की भी हत्या कर देंगे अपनी बहन को भाग जाने के लिए कहा किंतु सुरु चंपिया सहमत नहीं हुई। सूचक भाग गयी और अपने मित्र सावित्री के घर पहुँची और रात भर वहाँ रही। सबेरे वह टाटा गयी और दोपहर लगभग 12 बजे अपनी बहन के घर पहुँची और घटना के बारे में बताया। तत्पश्चात्, वह अपनी बहन सीमा और उसकी पुत्री रानी के साथ सूचक के घर वापस आयी और पाया कि सुरु वहाँ नहीं थी और दरवाजा एवं खिड़की टूटी हुई थी और घर को लूट लिया गया था। तब वे तीनों रात में किसी मराकी चंपिया के घर रही और सबेरे चाईबासा गयी और पुलिस को घटना के बारे में बताया। उसने आगे कहा कि उसकी माता उसके बड़े भाई के साथ टाटा में रहती थी। सूचक को पता चला कि उसकी माता सूचक के घर गयी थी। सूचक ने अभिकथित किया कि अभियुक्तगण ने उसके भाई किरण चंपिया, बहन सुरु और माता नमसी की हत्या करने के लिए उनका अपहरण कर लिया था।

3. भारतीय दंड संहिता की धारा 364/34 के अधीन नौ नामित अभियुक्तगण के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। अन्वेषण के दौरान दिनांक 16.11.1994 को सायं लगभग 4.30 बजे पहाड़ी में किरण चंपिया, सुरु चंपिया और नमसी चंपिया के मृत शरीरों को पाया गया था। अन्वेषण अधिकारी (आई॰ ओ॰) द्वारा मृत शरीरों को जब्त किया गया था। गवाहों की उपस्थिति में मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार की गयी थी। शव परीक्षण किया गया था। अपीलार्थीगण के विरुद्ध और सुरु बनरा, सोमा टाँटी और सनातन हेम्ब्रम के विरुद्ध भी आरोप पत्र दाखिल किया गया था। अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध अन्वेषण जारी रहा। आरोप-पत्र के आधार पर, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 364, 302, 201 एवं 379 के अधीन संज्ञान लिया गया था। भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 396, 201/34 के अधीन आरोप विरचित किए गए थे। सुनवाई पूरा होने के बाद, विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने भारतीय दंड संहिता की धारा 364 के अधीन आरोप विरचित किया। गवाहों का पुनर्परीक्षण किया गया था, जिसके दौरान तीन अभियुक्तगण अर्थात् सनातन हेम्ब्रम, सोमा टाँटी और सुरा बनरा फरार हो गए थे। दिनांक 25.6.2003 के आदेश के तहत उनका मामला पृथक कर दिया गया था।

4. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री आर॰ सी॰ खत्री ने निवेदन किया कि अभियोजन अपीलार्थीगण के विरुद्ध अपना मामला समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे सिद्ध करने में सफल नहीं हुआ है। केवल अ॰ सा॰ 2 को चश्मदीद गवाह के रूप में प्रक्षेपित किया गया है जिसने कहा कि उसने अपीलार्थीगण एवं अन्य को अपने भाई किरण चंपिया को ले जाते देखा। चूँकि उसने अपनी बहन सुरु और माता नमसी को नहीं पाया था, उसने संदेह किया कि अभियुक्तगण द्वारा उनकी हत्या भी कर दी गयी है। किंतु तीनों मृतकों की वास्तविक हत्या का चश्मदीद गवाह नहीं है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि अ॰ सा॰ 2 विश्वसनीय नहीं है। उन्होंने यह निवेदन भी किया कि अपीलार्थीगण अब तक लगभग 17 वर्षों से कारा में हैं।

5. दूसरी ओर, राज्य के अधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया।

6. अभियोजन ने पाँच गवाहों का परीक्षण किया है। अ॰ सा॰ 1 डॉक्टर है, जिन्होंने किरण चंपिया, सुरु और नमसी के मृत शरीरों का शव परीक्षण किया। उन्होंने शवपूर्व उपहतियों को पाया था। उन्होंने दिनांक 17.11.1994 को मृत शरीरों का परीक्षण किया। उनके अनुसार, परीक्षण के 96 घंटे के भीतर मृत्यु हुई थी। डॉक्टर के साक्ष्य से स्पष्ट है कि तीनों मृतक व्यक्तियों की मृत्यु मानव वध और निर्मम

थी किंतु दोषसिद्धि मुख्यत: अ॰ सा॰ 2 के साक्ष्य पर आधारित है। अपने प्रति परीक्षण में, उसने स्पष्टत: कहा कि अन्य व्यक्ति भी उसके घर के निकट रहते थे। उसने आगे कहा कि वह अपनी भाई की चीख सुनकर घर से बाहर आयी। उसका भाई जोर से चिल्लाया किंतु कोई पड़ोसी अपने घर से बाहर नहीं आया क्योंकि उन्होंने अभियुक्तगण का समर्थन किया था। उसने आगे कहा कि वह अपने मित्र का नाम नहीं जानती थी जिसके घर में वह रात भर रुकी थी। वह उसे पहले से नहीं जानती थी। उसने घटना के बारे में किसी पड़ोसी को नहीं बताया था। पड़ोसियों के साथ कोई दुश्मनी नहीं थी। इस मामले में आई॰ ओ॰ का परीक्षण नहीं किया गया है यद्यपि केस डायरी को प्रदर्शित किया गया है। पूछे जाने पर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता श्री डी॰ के॰ चक्रवर्ती ने स्वीकार किया कि अन्वेषण के दौरान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 161 के अधीन किसी पड़ोसी अथवा स्वतंत्र गवाह का परीक्षण नहीं किया गया है। अत:, केवल अ॰ सा॰ 2 के ऐसे साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि को मान्य ठहराना सुरक्षित नहीं होगा। अभियोजन घटना के तरीके को सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुआ है जैसा अभियोजन द्वारा प्रक्षेपित किया गया है।

7. अभिलेखों का सावधानीपूर्वक परीक्षण करने के बाद, हमारे मत में, अभियोजन अपीलार्थीगण के विरुद्ध अपना मामला समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुआ है।

8. परिणामस्वरुप, यह अपील अनुज्ञात की जाती है। सत्र विचारण केस सं॰ 251 वर्ष 1995 में अपीलार्थीगण के विरुद्ध अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट 1 चाईबासा द्वारा पारित क्रमश: दिनांक 8.12.2003 और 9.12.2003 का दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश अपास्त किया जाता है। अपीलार्थीगण को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है, यदि अन्य मामले में उनकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

माया राम एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1500 of 2008. Decided on 2nd May, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 341, 323, 504, 506 एवं 120B सह-पठित डायन प्रथा निवारण अधिनियम, 1999 की धाराएँ 3, 4 एवं 5—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—डायन प्रथा—संज्ञान—अभियुक्तगण ने जादू-टोना करने के लिए परिवादी पर अभिकथित रूप से प्रहार किया जो डायन प्रथा निवारण अधिनियम के प्रावधान के अधीन संज्ञान लेने के लिए पर्याप्त है—भले ही उस आधार पर अभिकथन अस्पष्ट है, पर संज्ञान लेने वाले आदेश अथवा प्राथमिकी को अभिखंडित नहीं किया जा सकता है—याचिका खारिज। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.—Mrs. A. R. Choudhary, For the Petitioners; A.P.P., For the State; Mr. A. K. Yadav, For the Opp. Party no. 2.

आदेश

आदेश जिसके अधीन याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 341, 323, 504, 506, 120B के अधीन और डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3, 4 और 5 के अधीन भी संज्ञान लिया गया है को चुनौती दी गयी है।

2. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवकता निवेदन करते हैं कि परिवादी और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा याचीगण के विरुद्ध अनेक मामले दर्ज किए गए हैं और अधिकतर मामलों में याचीगण को दोषमुक्त कर दिया गया है और कि परिवादी और उसके परिवार के सदस्यों को याचीगण, जो एक ही परिवार के सदस्य हैं, को झूठे मामले में आलिप्त करने की आदत है और कि जहाँ तक वर्तमान मामले का संबंध है, डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3, 4 और 5 के अधीन कोई अपराध नहीं बनता है भले ही परिवाद में किए गए अभिकथन को सत्य माना जाय क्योंकि धाराओं 3, 4 और 5 के अधीन अपराध आकृष्ट करने के लिए आवश्यक अवयवों की कमी है और इसलिए न्यायालय ने डायन प्रथा निवारण अधिनियम की धाराओं 3, 4 और 5 के अधीन संज्ञान लेने में अवैधता की है।

3. निवेदन के संदर्भ में परिवाद में किए गए अभिकथन पर गौर करने की आवश्यकता है जिसमें अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तगण कमरे से लाठी, डंडा, छुरा, पिस्तौल लेकर आए और उसे डायन कहते हुए उस पर प्रहार करने लगे और उसकी गर्दन से 3000/- रुपयों के मूल्य का सोने का चेन छीन लिया और जब परिवादी और गवाह बाहर आए, मुहल्ले के लोग हल्ला सुनकर जमा हुए और लोगों की उपस्थिति में अभियुक्तगण ने परिवादी को डायन कहते हुए उसके बालों को पकड़ लिया।

4. उक्त अभिकथन उपदर्शित करते हैं कि अभियुक्तगण ने उसको डायन मानकर परिवादी पर प्रहार किया जो मेरे दृष्टिकोण में डायन प्रथा अधिनियम के प्रावधान के अधीन संज्ञान लेने के लिए पर्याप्त है। दर्ज किया जाए कि भले ही अभिकथन अस्पष्ट है, पर उस आधार पर संज्ञान लेने वाला आदेश अथवा प्राथमिकी को अभिखंडित करना अपेक्षणीय कभी नहीं है।

5. तद्नुसार, मैं इस मामले में गुणागुण नहीं पाता हूँ, अतः, इसे खारिज किया जाता है।

6. किंतु, याची को समुचित चरण पर इस अभिवचन को अथवा किसी अन्य अभिवचन को करने की स्वतंत्रता होगी।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

विकास महतो उर्फ विकास चंद्र महतो एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 75 of 2012. Decided on 1st May, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 324, 307, 498A एवं 34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 227—क्रूरता एवं हत्या का प्रयास–उन्मोचन के लिए आवेदन की अस्वीकृति–विभिन्न तिथियों पर दो पृथक घटनाओं के लिए दो मामले संस्थापित किए गए–दो पृथक घटनाएँ हैं और पश्चातवर्ती प्राथमिकी में किए गए अभिकथन स्पष्टतः याचीगण के विरुद्ध अपराध बनाते हैं–दूसरी घटना, जिसमें याचीगण ने उन्मोचन के लिए प्रार्थना किया है, स्वयं पीड़ित महिला के बयान के आधार पर दर्ज किया गया है जिसमें कथन किया गया है कि घटना की तिथि पर उसके पति और ससुरालवालों ने उसे जलाया था–याचीगण को इस चरण पर उन्मोचित नहीं किया जा सकता है–आक्षेपित आदेश अभिपुष्ट। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Mukesh Kumar, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ को सुना गया।

2. याचीगण एस॰ टी॰ सं॰ 191 वर्ष 2010 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश–II, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 9.1.2012 के आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा याचीगण द्वारा उन्मोचन के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 227 के अधीन दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है।

3. यह प्रतीत होता है कि याचीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 324, 307, 498A, 34 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3 और 4 के अधीन अपराध के लिए चास (एम॰) पी॰ एस॰ केस सं॰ 72 वर्ष 2009, जी॰ आर॰ सं॰ 1073 वर्ष 2009 के तत्सम, में अभियुक्त बनाया गया है जिसे सूचक गीता देवी जो याची विकास महतो की पत्नी है, द्वारा संस्थापित किया गया था जिसमें उसके पति और ससुरालवालों द्वारा क्रूरता और यातना का अभिकथन किया गया था और यह अभिकथन भी किया गया था कि दिनांक 6.9.2009 को उसके पति द्वारा उसे जलाया गया था और अन्वेषण आरंभ किया गया था। अन्वेषण के बाद, पुलिस ने पूर्वोक्त धाराओं के अधीन याचीगण के विरुद्ध आरोप–पत्र दाखिल किया था और अंततः, विचारण के लिए मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था जहाँ उन्मोचन के लिए याचीगण द्वारा आवेदन दाखिल किया गया था। यह भी प्रतीत होता है कि पहले भी याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3 और 4 के अधीन मामला संस्थापित किया गया था, जिसे पीड़ित महिला के पिता द्वारा दर्ज प्राथमिकी के आधार पर दर्ज किया गया था जो विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी बोकारो के न्यायालय में लंबित था।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि एक ही अपराध के लिए दो पृथक मामलों को दाखिल किया गया है और याचीगण तद्नुसार दूसरे मामले में उन्मोचित किए जाने के हकदार हैं जिसे याची सं॰ 1 की पत्नी गीता देवी द्वारा दर्ज किया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पीड़िता गीता देवी की उपहति रिपोर्ट इन याचीगण के विरुद्ध उसके द्वारा लगाए गए अभिकथनों का समर्थन नहीं कर रही हैं। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने उन्मोचन के लिए प्रार्थना की है।

5. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि विभिन्न तिथियों पर दो पृथक घटनाओं के लिए दो मामले संस्थापित किए गए हैं। दूसरी घटना, जिसमें याचीगण ने उन्मोचन के लिए प्रार्थना किया है, स्वयं पीड़ित महिला के बयान के आधार पर यह कथन करते हुए दर्ज किया गया है कि घटना की तिथि पर उसके पति और ससुराल वालों ने उसे जलाया था। यह प्रतीत होता है कि 8% जलन उपहति पायी गयी थी, यद्यपि पीड़िता पर जलन उपहति का स्थल भिन्न है जिसे प्राथमिकी में अभिकथित किया गया है। फिर भी, सूचक पर जलन उपहति पायी गयी थी।

6. इस मामले के तथ्यों में, मैं पाता हूँ कि दो पृथक घटनाएँ हैं और पश्चातवर्ती प्राथमिकी में किए गए अभिकथन स्पष्टतः याचीगण के विरुद्ध अपराध बनाते हैं और इस चरण पर याचीगण को उन्मोचित नहीं किया जा सकता था।

7. तद्नुसार, मैं पुनरीक्षण अधिकारिता में विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इस पुनरीक्षण याचिका में गुणागुण नहीं है, जिसे तद्नुसार, खारिज किया जाता है।

ekuuh; ç'kkr dekj] U;k;efr

नाथो मोदी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 899 of 2010. Decided on 22nd February, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 391—भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A—अतिरिक्त साक्ष्य–आवेदन की खारिजी–याचीगण अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में नया बचाव अपनाने का प्रयास कर रहे हैं–वे अपीलीय चरण पर पहली बार ऐसा बचाव लेना चाहते हैं–अवर न्यायालय के निष्कर्षों में अवैधता नहीं–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajesh Kumar, For the Petitioner; Mr. Binod Kumar, For the State; Mr. Yogesh Modi, For the O.P. No. 2.

आदेश

यह आवेदन दांडिक अपील सं॰ 106 वर्ष 2008 में सत्र न्यायाधीश, गिरिडीह द्वारा पारित दिनांक 28.6.2010 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा उन्होंने अतिरिक्त साक्ष्य देने के लिए याचीगण का दिनांक 9.3.2010 का आवेदन खारिज कर दिया।

2. यह प्रतीत होता है कि याचीगण को परिवादी अर्थात् अल्पना देवी, जो स्वयं का याची सं॰ 1 और 2 अर्थात् नाथो मोदी एवं रेखा देवी के पुत्र किशन लाल मोदी की पत्नी होने का दावा करती है, पर अत्याचार करने के लिए भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन दोषसिद्ध किया गया है। दोषसिद्धि के बाद, याचीगण ने अवर न्यायालय में दांडिक अपील सं॰ 106 वर्ष 2008 दाखिल किया। अपील के लंबित रहने के दौरान, याचीगण ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 391 के अधीन अतिरिक्त साक्ष्य देने के लिए आवेदन दाखिल किया। उक्त आवेदन में, कथन किया गया है कि याचीगण को कतिपय दस्तावेजों के बारे में पता चला, जो दर्शाते हैं कि किशन लाल मोदी (परिवादी का पति) याची सं॰ 1 का पुत्र नहीं है। तद्नुसार, निवेदन किया गया है कि अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में पूर्वोक्त दस्तावेजों को देने की अनुमति याचीगण को दी जाए। आक्षेपित आदेश द्वारा उक्त आवेदन खारिज कर दिया गया।

3. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि चूँकि विचारण के समय याचीगण को पूर्वोक्त दस्तावेज ज्ञात नहीं था, अतः, विचारण के दौरान इसे प्रस्तुत नहीं किया गया था। तद्नुसार, निवेदन किया गया है कि याचीगण को अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में उक्त दस्तावेज को प्रस्तुत करने की अनुमति दी जा सकती है।

4. वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता श्री योगेश मोदी निवेदन करते हैं कि विचारण के दौरान याचीगण ने यह अभिवचन कभी नहीं किया था कि किशनलाल मोदी याची सं॰ 1 और 2 का पुत्र नहीं था। उक्त परिस्थिति के अधीन, अपीलीय चरण पर पहली बार वे नया बचाव करने के हकदार नहीं है।

5. निवेदन सुनने पर मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है। आक्षेपित आदेश के परिशीलन से, मैं पाता हूँ कि अवर न्यायालय ने याचीगण के आवेदन को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि विचारण के दौरान याची सं॰ 1 और 2 ने यह बचाव नहीं रखा था कि किशन लाल मोदी उनका पुत्र नहीं है और वे अपीलीय चरण पर पहली बार ऐसा बचाव रखना चाहते हैं।

6. पूछे जाने पर, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री राजेश कुमार ने पूर्वोक्त ताथ्यिक अवस्था को विवादित नहीं किया था। अत:, मैं अवर न्यायालय के निष्कर्षों में अवैधता नहीं पाता हूँ। अत:, मैं आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का इच्छुक नहीं हूँ।

7. तद्नुसार, इस पुनरीक्षण आवेदन को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

लोसेया पिंगुआ उर्फ टपू पिंगुआ

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 1492 of 2003. Decided on 17th January, 2012.

सत्र विचारण सं॰ 118 वर्ष 2001 में श्री सत्य नारायण प्रसाद, द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 7.10.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या–आजीवन कारावास–अपीलार्थी और मृतक के बीच विवाद नहीं था–अपीलार्थी ने अभिकथित रूप से मृतक के पेट पर जब वह सो रहा था तीर चलाया–एक तीर से हुई उपहति से मृतक की मृत्यु हो गयी–यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि अपीलार्थी का मृतक की हत्या करने का आशय था यद्यपि उसने मृतक के महत्वपूर्ण अंग पर तीर चलाया था जब वह सो रहा था–अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 के अधीन अपराध करने का दोषी अभिनिर्धारित किया गया–पहले ही भुगत ली गयी अवधि के लिए दंडादेश में उपांतरण के साथ अपील खारिज। (पैराएँ 7 से 10)

अधिवक्तागण.–M/s. R. P. Gupta, P. K. Nayak, For the Appellant; Mr. D. K. Chakraborty, For the State.

न्यायालय द्वारा.–यह अपील सत्र विचारण सं॰ 118 वर्ष 2001 में द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 7.10.2001 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश से उद्भूत होती है जिसके द्वारा अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और तद्नुसार उसे कठोर आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है और दो हजार रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में एक वर्ष का अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश भी दिया गया है।

2. संक्षेप में, अभियोजन मामला यह है कि सूचक बुधराम पिंगुआ (अ॰ सा॰ 3) जो गाँव का मुंडा भी है ने दिनांक 2.4.2000 को सायं 4.10 बजे इस प्रभाव का अपना फर्दबयान दिया कि अपीलार्थी द्वारा तीर चलाकर सुखलाल पिंगुआ की हत्या कर दी गयी थी जब वह सो रहा था।

3. सूचक (अ॰ सा॰ 3) के उक्त फर्दबयान के आधार पर मझगाँव पी॰ एस॰ केस सं॰ 12 वर्ष 2000 दर्ज किया गया था। अन्वेषण के बाद, अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिसने विचारण का सामना किया और पूर्वोक्तानुसार दोषसिद्ध किया गया था।

4. अभियोजन ने कुल मिलाकर सात गवाहों का परीक्षण किया। अ॰ सा॰ 1 अतुआ पिंगुआ, जो अनुश्रुत गवाह है, ने कथन किया है कि अपीलार्थी अपने हाथ में तीर-धनुष लिए था और वह मृतक के घर से बाहर आने के बाद अपने घर की ओर भाग गया। अ॰ सा॰ 2 राजेन्द्र पिंगुआ, अ॰ सा॰ 3 सूचक

और अ॰ सा॰ 6 कपालन पिंगुआ अनुश्रुत गवाह हैं। अ॰ सा॰ 4 रंदाई कुई, मृतक की पत्नी को चश्मदीद गवाह कहा गया है। अ॰ सा॰ 7 डॉ॰ ए॰ के॰ गुप्ता हैं जिन्होंने मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण किया।

5. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री पी॰ के॰ नायक ने आक्षेपित निर्णय का विरोध करते हुए निवेदन किया कि अधिकाधिक अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 (भाग I) के अधीन दोषसिद्ध किया जा सकता था।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया है।

7. साक्ष्य में आया है कि अपीलार्थी और मृतक के बीच विवाद नहीं था। अपीलार्थी को अचानक दिन में आने वाला और मृतक, जब वह सो रहा था, के पेट पर तीर चलाने वाला बताया गया है। अ॰ सा॰ 7 डॉक्टर ने पाया कि एक तीर की उपहति से मृतक की मृत्यु हो गयी थी। डॉक्टर ने मृतक के मृत शरीर पर कोई अन्य उपहति नहीं पाया था। उपहति का आकार 1" x 1/2" था जबकि तीर का आकार 6" x 2" था। डॉक्टर ने संप्रेक्षित किया कि तीर ने लीवर को पंचर कर दिया था।

8. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने पर हम पाते हैं कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि अपीलार्थी का आशय मृतक की हत्या करना था, यद्यपि उसने मृतक, जब वह सो रहा था, के महत्वपूर्ण अंग पर तीर चलाया था।

9. मामले के समस्त तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 (भाग I) के अधीन अपराध करने का दोषी अभिनिर्धारित किया जाता है।

10. पूर्वोक्त कारणों से, यह अपील खारिज की जाती है, किंतु सत्र विचारण सं॰ 118 वर्ष 2001 में अपीलार्थी के विरुद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश में उपांतरण के साथ। अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के बजाए धारा 304 (भाग I) के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है और उसे पहले ही भुगत ली गयी अवधि के लिए दंडादेशित किया जाता है, क्योंकि उसे लगभग ग्यारह वर्षों के लिए अभिरक्षा में बना हुआ बताया जाता है। उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; ç'kkr dekj] U;k;efr

लाला कृष्णा प्रसाद एवं अन्य

cuke

बिहार राज्य एवं एक अन्य

Cr. Misc. No. 314 of 2000 (R). Decided on 14th March, 2012.

परिवाद केस सं॰ 215 वर्ष 1999 (टी॰ आर॰ सं॰ 979 वर्ष 1999) में न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, बेरमो द्वारा पारित दिनांक 15.10.99 के आदेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 323, 504, 385, 500 एवं 161—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—उपहति, अपमान, उद्दापन और मानहानि–संज्ञान–याची ने बिजली की चोरी के लिए परिवादी के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज किया था–अन्य याचीगण भी छापामारी दल के

सदस्य हैं–याचीगण से प्रतिशोध लेने के लिए परिवादी द्वारा वर्तमान मामला दाखिल किया गया–संज्ञान का आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 5 एवं 6)

निर्णयज विधि.–(1992)1 Suppl. SCC 335—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Ramautar Sharma, For the Petitioners; Mr. A. K. Sahani, For the Opp. Party no. 2; A.P.P., For the State.

प्रशांत कुमार, न्यायमूर्ति.–यह आवेदन परिवाद केस सं॰ 215/99, टी॰ आर॰ सं॰ 979/99 के तत्सम, में न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, बेरमो द्वारा पारित दिनांक 15.10.99 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा उन्होंने भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 323/504/385/500 और 161 के अधीन याचीगण के विरुद्ध संज्ञान लिया था।

2. याचीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री रामौतार शर्मा निवेदन करते हैं कि परिवाद याचिका में किए गए अभिकथन से भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 323/504/385 और 504 के अधीन अपराध नहीं बनता है। वह आगे निवेदन करते हैं कि भारतीय दंड संहिता से धारा 161 पहले ही विलोपित कर दी गयी है। श्री शर्मा आगे निवेदन करते हैं कि वर्तमान परिवाद याचिका याचीगण से प्रतिशोध लेने के अंतरस्थ हेतु के साथ दाखिल की गयी है, क्योंकि उन्होंने बिजली की चोरी के लिए वि॰ प॰ सं॰ 2 के विरुद्ध मामला दर्ज किया था। तद्नुसार, निवेदन किया गया है कि आक्षेपित आदेश संपोषित नहीं किया जा सकता है।

3. वि॰ प॰ सं॰ 2 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ साहनी निवेदन करते हैं कि परिवाद याचिका में वर्णित तथ्य भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 504 के अधीन अपराध बनाते हैं। तद्नुसार, वह निवेदन करते हैं कि इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

4. निवेदनों को सुनने पर, मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है।

5. स्वीकृत रूप से, याची सं॰ 1 ने बिजली की चोरी के लिए वि॰ प॰ सं॰ 2 के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज किया था। प्राथमिकी (परिशिष्ट–2) के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि याची सं॰ 2, 3 और 4 छापामार दल के सदस्य हैं। यह उल्लेखनीय है कि पूर्वोक्त प्राथमिकी दिनांक 2.8.99 को दर्ज की गयी थी और स्वयं उसी दिन पर वि॰ प॰ सं॰ 2 को गिरफ्तार किया गया था। आगे प्रतीत होता है कि वर्तमान परिवाद याचिका दिनांक 23.9.99 को अर्थात् पूर्वोक्त मामले में वि॰ प॰ सं॰ 2 को जमानत पर निर्मुक्त किए जाने के बाद दाखिल की गयी थी। इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि वर्तमान मामला वि॰ प॰ सं॰ 2 द्वारा याचीगण से प्रतिशोध लेने के अंतरस्थ हेतु के साथ दाखिल किया गया है क्योंकि उन्होंने बिजली की चोरी के लिए वि॰ प॰ सं॰ 2 के विरुद्ध मामला दर्ज किया था। इस प्रकार, **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल, (1992)1 Supp. SCC 335,** मामले में सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा अधिकथित विधि की दृष्टि में संज्ञान के आक्षेपित आदेश को संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. तद्नुसार, मैं इस आवेदन को अनुज्ञात करता हूँ और न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, बेरमो, तेनुघाट के न्यायालय में लंबित परिवाद केस सं॰ 215/99 (टी॰ आर॰ सं॰ 979/99) में पारित दिनांक 15.10.99 के आक्षेपित आदेश को अभिखंडित करता हूँ।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

सुधा देवी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 839 of 2011. Decided on 14th March, 2012.

झारखंड पंचायत निर्वाचन नियमावली, 2001—नियम 13—मुखिया के पद पर प्रत्यर्थी के चुनाव को चुनौती देने वाली चुनाव याचिका की सिरे से खारिजी, चुनाव याचिका पर विचार करने के लिए विस्तृत प्रक्रिया है–चुनाव याचिका के संक्षिप्त निपटान के लिए प्रावधान नहीं है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित–विधि द्वारा विहित प्रक्रिया के अनुरुप इस पर विचार करने के लिए मामला अनुमंडलाधिकारी को वापस भेजा गया। (पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–M/s. K.M. Verma, Arvind Kumar Jha, For the Petitioner; J.C. to A.G., For the State.

आदेश

इस रिट याचिका में, याची ने अनुमंडलाधिकारी, गोड्डा द्वारा पारित दिनांक 8.1.2011 के आदेश को अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा उक्त प्रत्यर्थी ने याची द्वारा दाखिल चुनाव याचिका को सिरे से खारिज कर दिया है।

2. यह निवेदन किया गया है कि याची पंचायत चुनाव के उम्मीदवारों में से एक था और वह गोड्डा जिले में कस्बा पंचायत के मुखिया के पद के लिए चुनाव लड़ रही थी। दिनांक 24.12.2010 को परिणाम घोषित किया गया था और प्रत्यर्थी सं॰ 7 को निर्वाचित घोषित किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 7 का चुनाव विधि द्वारा विहित प्रावधानों के उल्लंघन में था। मतगणना में अनेक मतपत्रों जिन पर पीठासीन अधिकारी द्वारा सम्यक रूप से हस्ताक्षरित और मुहरबंद नहीं किया गया था, को भी विचार में लिया गया था। याची ने दिनांक 6.1.2011 को अनुमंडलाधिकारी के समक्ष झारखंड पंचायत चुनाव नियमावली, 2001 के अध्याय 13 के प्रावधानों के अनुरुप चुनाव याचिका दाखिल करके प्रत्यर्थी सं॰ 7 के उक्त चुनाव को चुनौती दी थी। इसे चुनाव याचिका सं॰ 6/2011 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त याचिका दिनांक 8.1.2011 को अनुमंडलाधिकारी के समक्ष प्रस्तुत की गयी थी और उसी दिन अनुमंडलाधिकारी ने स्वयं चुनाव याचिका के प्रथम पृष्ठ पर पृष्ठांकन करके चुनाव याचिका को सिरे से खारिज कर दिया था।

3. यह निवेदन किया गया है कि आदेश पूर्णत: अवैध, मनमाना और अधिकारितारहित है क्योंकि इसे विधि द्वारा विहित प्रक्रिया के अनुरूप दाखिल नहीं किया गया है।

4. याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री के॰ एम॰ वर्मा ने निवेदन किया कि झारखंड पंचायत चुनाव नियमावली, 2001 का अध्याय 13 चुनाव याचिका दाखिल करने, इसकी सुनवाई और निपटारे के लिए विस्तृत प्रक्रिया विहित करता है और इसका नियम 113 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अनुरुप चुनाव याचिका की सुनवाई के लिए प्रावधान बनाता है। किंतु विद्वान अनुमंडलाधिकारी ने इस पर मनमाने रूप से और लापरवाह तरीके से विचार किया है और संक्षिप्त और कारणरहित आदेश द्वारा चुनाव याचिका को खारिज कर दिया है। इस प्रकार, आदेश अकृतता है और इस न्यायालय द्वारा अभिखंडित किए जाने का दायी है।

5. राज्य प्रत्यर्थीगण ने प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है। निजी प्रत्यर्थी, जिसने चुनाव जीता है, ने भी प्रति शपथपत्र दाखिल किया है। प्रत्यर्थीगण ने रिट याचिका का प्रतिवाद इस आधार पर किया है कि अनुमंडलाधिकारी द्वारा पारित किसी आदेश के विरुद्ध अपील दाखिल करने के लिए वैकल्पिक उपचार है। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि अनुमंडलाधिकारी ने याचिका पर विचार किया है और विधि के प्रावधानों पर भी विचार किया है और सही प्रकार से चुनाव याचिका खारिज कर दिया है।

6. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और आक्षेपित आदेश का परिशीलन किया है, जो इसी तात्पर्य के साथ इसी तिथि के विस्तृत आदेश द्वारा अनुसरित उक्त याचिका के प्रथम पृष्ठ के हाशिया में पृष्ठांकन के रूप में है।

7. झारखंड पंचायत चुनाव नियमावली, 2001 के अध्याय 13 के परिशीलन पर, मैं पाता हूँ कि चुनाव याचिका पर विचार करने और इसकी सुनवाई और निपटान के लिए विस्तृत प्रक्रिया है। उक्त नियमावली, 2001 का नियम 113 सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में विहित प्रक्रिया के अनुरुप चुनाव याचिका की सुनवाई विहित करता है। यह आगे साक्ष्य अधिनियम, 1872 के प्रावधानों के अनुरुप साक्ष्य लेना प्रावधानित करता है। प्रत्यर्थीगण द्वारा मेरे ध्यान में कोई प्रावधान नहीं लाया गया है जो चुनाव याचिका के ऐसे संक्षिप्त निपटान की अनुमति देता है। चूँकि उक्त नियम सिविल प्रक्रिया संहिता में विहित प्रक्रिया के अनुरुप चुनाव याचिका की सुनवाई विहित करता है, अतः चुनाव याचिका को उक्त प्रक्रिया के अनुरुप और न कि किसी अन्य तरीके से सुनना और निपटाना होगा।

8. पूर्वोक्त कारणों से, चुनाव याचिका सं॰ 6/2011 में पारित दिनांक 8.1.2011 का आक्षेपित आदेश संपोषित नहीं किया जा सकता है और एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है। विधि द्वारा विहित प्रक्रिया के अनुरूप इस पर विचार करने के लिए अनुमंडलाधिकारी, गोड्डा को मामला वापस भेजा जाता है।

---

ekuuh; ,p॰ lh॰ feJk] U;k;efr

संजय कुमार सिंह

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 862 of 2009. Decided on 10th May, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 451—अभिग्रहित कोयले की निर्मुक्ति के लिए आवेदन की अस्वीकृति–याची को आरोपों से मुक्त किया गया–याची के कब्जा से कोयला अभिग्रहित किया गया था और याची द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों के आधार पर अधिहरण कार्यवाही रोक दी गयी थी–याची के पक्ष में कोयला निर्मुक्त नहीं करने का कोई प्रकट कारण नहीं है–ऐसी कोई उपधारणा नहीं हो सकती है कि अभिग्रहित कोयले का क्षय हो गया था–आक्षेपित आदेश अपास्त। (पैराएँ 5 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Prabhat Kumar Sinha, For the Petitioner; Ms. Sadhna Kumar, For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना। इस मामले में अवर न्यायालय के अभिलेखों का परिशीलन किया।

2. याची टी॰ आर॰ सं॰ 767 वर्ष 2007/जी॰ आर॰ सं॰ 2434 वर्ष 2004 में श्री राकेश कुमार मिश्रा, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 15.7.2009 के आदेश से व्यथित हैं जिसके द्वारा जी॰ आर॰ सं॰ 2434 वर्ष 2004 के तत्सम रामगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 350 वर्ष 2004, के संबंध में अभिग्रहित कोयले की निर्मुक्त के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

3. यह प्रतीत होता है कि कोयला से भरा एक ट्रक पुलिस द्वारा बरामद किया गया था और याची जो उक्त ट्रक का चालक था को भी गिरफ्तार किया गया था। चूँकि याची द्वारा कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया जा सका था, याची और अन्य सह–अभियुक्त के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 414, 120B/34, भारतीय वन अधिनियम की धारा 33 और कोयला खान अधिनियम की धारा 30(ii) के अधीन रामगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 350 वर्ष 2004, जी॰ आर॰ सं॰ 2434 वर्ष 2004 के तत्सम, संस्थापित किया गया था और कोयला एवं ट्रक जब्त कर लिया गया था।

4. यह भी प्रतीत होता है कि अधिहरण केस सं॰ 4 वर्ष 2005 में अभिग्रहित ट्रक एवं कोयले के लिए एक अधिहरण कार्यवाही आरंभ की गयी थी और उसमें पारित दिनांक 25.3.2009 के आदेश द्वारा उक्त अधिहरण कार्यवाही छोड़ दी गयी थी, क्योंकि अपराध में याची की अंतर्ग्रस्तता नहीं पायी गयी थी और यह भी पाया गया था कि कोयला के संबंध में बाद में प्रस्तुत दस्तावेजों को वास्तविक पाया गया था। आगे प्रतीत होता है कि याची ने उक्त रामगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 350 वर्ष 2004, जी॰ आर॰ केस सं॰ 2434 वर्ष 2004/टी॰ आर॰ केस सं॰ 767 वर्ष 2007 के तत्सम, में विचारण का सामना किया था और विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 11.5.2007 के निर्णय द्वारा याची को आरोपों से दोषमुक्त किया गया था। याची ने अपने पक्ष में कोयला की निर्मुक्ति के लिए आवेदन दाखिल किया, किंतु टी॰ आर॰ केस सं॰ 767 वर्ष 2007 में श्री आर॰ के॰ मिश्रा, न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 15.7.2009 के आदेश द्वारा याची का आवेदन इस तथ्य को विचार में लेते हुए अस्वीकार कर दिया गया था कि अधिहरण कार्यवाही में कोयला की निर्मुक्ति के लिए याची द्वारा कोई आवेदन दाखिल नहीं किया गया था, यद्यपि इसे बीच में ही छोड़ दिया गया था क्योंकि याची ने कोयला के यथार्थ कागजातों के अपने पास होने का दावा किया, बल्कि लगभग पाँच वर्ष बीतने के बाद आवेदन दाखिल किया गया था जो दस्तावेजों की वास्तविकता के बारे में संदेह सृजित करता है। अवर न्यायालय ने इस तथ्य को भी ध्यान में लिया कि विचारण के दौरान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज अपने बयान में, याची ने कोयले के स्वामित्व का दावा नहीं किया था। अवर न्यायालय ने यह भी पाया था कि कोयला क्षयशील वस्तु है जिसका वर्षा, हवा आदि के कारण क्षय होना ही है यदि इसे खुले में रखा जाता है और तद्नुसार याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश को विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है, क्योंकि स्वीकृत रूप से कोयला याची के कब्जा से जब्त किया गया था और याची द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों के आधार पर अधिहरण केस सं॰ 4 वर्ष 2005 में पारित दिनांक 25.3.2009 के आदेश द्वारा अधिहरण कार्यवाही छोड़ दी गयी थी जिसे इस आवेदन के परिशिष्ट 5 के रूप में अभिलेख पर लाया गया है। विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि विचारण न्यायालय द्वारा याची को विचारण में आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया था। इस प्रकार, याची के पक्ष में कोयला निर्मुक्त नहीं करने का कोई कारण नहीं है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश को विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है और यह अपास्त किए जाने योग्य है।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन करते हुए प्रार्थना का विरोध किया है कि अवर न्यायालय ने पाया है कि कोयला क्षयशील वस्तु है और इस तथ्य कि आवेदन पाँच वर्षों बाद दाखिल किया गया था, को विचार में लेते हुए याची द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों की वास्तविकता पर संदेह करते हुए अवर न्यायालय द्वारा सही प्रकार से कोयला की निर्मुक्ति के लिए आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था।

7. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि यह स्वीकृत तथ्य है कि कोयला याची के कब्जा से जब्त किया गया था। स्वीकृत रूप से, सक्षम

प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत दस्तावेजों के आधार पर, अधिहरण कार्यवाही इस तथ्य को विचार में लेते हुए छोड़ दी गयी थी कि याची द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों को वास्तविक पाया गया था, जैसा अधिहरण कार्यवाही में पारित आदेश से प्रकट है, जिसे परिशिष्ट-5 के रूप में अभिलेख पर लाया गया है। यह भी प्रकट है कि उक्त रामगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 350 वर्ष 2004, जी॰ आर॰ केस सं॰ 2434 वर्ष 2004/टी॰ आर॰ सं॰ 767 वर्ष 2007 में विचारण के बाद विचारण न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 11.5.2007 के निर्णय द्वारा याची को आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया है। अवर न्यायालय के अभिलेख दर्शाते हैं कि अवर न्यायालय को सूचित किया गया था कि अधिहरण केस सं॰ 4 वर्ष 2005 में पारित दिनांक 25.3.2009 के आदेश द्वारा अधिहरण कार्यवाही को छोड़े जाने के विरुद्ध अथवा विचारण न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 11.5.2007 के निर्णय द्वारा याची की दोषमुक्ति के विरुद्ध कोई अपील दाखिल नहीं किया गया था। आगे, अवर न्यायालय के अभिलेख में यह सुझाने के लिए कुछ भी नहीं है कि अभिग्रहित कोयला खुले में रखा गया था और हवा, वर्षा आदि के कारण इसका क्षय हो गया था। अभिलेख पर उपलब्ध किसी सामग्री की अनुपस्थिति में कि अभिग्रहित कोयले का क्षय हो गया था, ऐसी कोई उपधारणा नहीं की जा सकती है। इन तथ्यों की दृष्टि में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याची के पक्ष में कोयले को निर्मुक्त करने से इनकार करने का कोई युक्तियुक्त कारण नहीं हो सकता था। मैं पाता हूँ कि कोयले की निर्मुक्ति के लिए याची का आवेदन अवर न्यायालय द्वारा तकनीकी पेचीदगियों के आधार पर अस्वीकार कर दिया गया है, जिसे विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

8. इस प्रकार, टी॰ आर॰ सं॰ 767 वर्ष 2007/जी॰ आर॰ सं॰ 2434 वर्ष 2004 में श्री राकेश कुमार मिश्रा, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 15.7.2009 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और अवर न्यायालय को इन तथ्यों कि याची के कब्जा से कोयला जब्त किया गया था और कोयला से संबंधित दस्तावेजों को वास्तविक पाया गया था जैसा अधिहरण केस सं॰ 4 वर्ष 2005 में सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश से प्रकट है को ध्यान में रखते हुए और साथ ही इस तथ्य की दृष्टि में कि याची को विचारण में आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया है और शायद प्रश्नगत कोयला का कोई अन्य दावेदार नहीं है, विधि के अनुरूप नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

9. इस मामले में मंगाए गए अवर न्यायालय के अभिलेख को तुरन्त वापस भेजा जाए। तद्नुसार यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj] U;k;efr

बिशप डॉ॰ सैमुअल आर॰ थामस एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Writ Petition (CR.) No. 122 of 2002. Decided on 7th May, 2012.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948—धाराएँ 12A एवं 22 सह-पठित धारा 2 (e)—एस॰ ओ॰ सं॰ 1588 दिनांक 15.10.1976—नियत न्यूनतम मजदूरी से कम का भुगतान—संज्ञान—अगर कोई व्यक्तिपूर्त प्रयोजन से संगठन चला रहा है और यह अनुसूचित रोजगार के कार्यक्षेत्र के भीतर आता है, तब भी उक्त संगठन अपने कर्मचारियों को न्यूनतम मजदूरी का भुगतान करने का दायी

है–यदि यह पाया जाता है कि उक्त संगठन के कर्मचारी न्यूनतम मजदूरी नहीं पा रहे हैं, तब नियोक्ता दंडित किए जाने का दायी है–निजी अस्पताल के कर्मचारीगण न्यूनतम मजदूरी पाने के हकदार हैं। (पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Nilesh Kumar, For the Petitioner; Mr. Rajesh Kumar, For the Respondents.

आदेश

इस रिट आवेदन में याचीगण ओ॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 119/2002 से उद्भूत संपूर्ण दांडिक कार्यवाही और दिनांक 25.10.2000 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना कर रहे हैं जिसके द्वारा विद्वान ए॰ सी॰ जे॰ एम॰, पाकुड़ ने न्यूनतम मजदूरी अधिनियम (इसके बाद अधिनियम के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 22 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया। आगे याचीगण दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 65/2001 में सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 25.1.2002 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना कर रहे हैं।

2. यह प्रतीत होता है कि श्रम प्रवर्तन अधिकारी, महेशपुर (प्रत्यर्थी सं॰ 2) ने यह अभिकथन करते हुए परिवाद दाखिल किया कि उसने दिनांक 2.5.2000 को थियोडोरी इसाई अस्पताल, महेशपुर का निरीक्षण किया और पाया कि अधिनियम की धारा 12A में अंतर्विष्ट प्रावधानों के उल्लंघन में नियोक्ता ने अपने कर्मचारियों को नियत न्यूनतम मजदूरी से कम का भुगतान किया है।

3. यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने उनको मजदूरी का भुगतान करने के लिए और कारण बताने के लिए कि क्यों नहीं अभियोजन आरंभ किया जाए, याचीगण को नोटिस जारी किया किंतु याचीगण ने उक्त नोटिस पर कोई ध्यान नहीं दिया। तद्नुसार, सक्षम प्राधिकारी से मंजूरी प्राप्त करने के बाद यह अभिकथन करते हुए कि याचीगण ने अधिनियम की धारा 22 के अधीन अपराध किया था, ए॰ सी॰ जे॰ एम॰, पाकुड़ के न्यायालय में वर्तमान परिवाद दाखिल किया गया। यह प्रतीत होता है कि विद्वान ए॰ सी॰ जे॰ एम॰, पाकुड़ ने दिनांक 25.10.2000 के अपने आदेश के तहत अपराध का संज्ञान लिया और याचीगण को समन जारी किया। आगे प्रतीत होता है कि याची सं॰ 1 ने सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ के न्यायालय में दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 65/2001 के तहत संज्ञान लेने वाले आदेश के विरुद्ध दांडिक पुनरीक्षण दाखिल किया है। उक्त दांडिक पुनरीक्षण सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ के दिनांक 25.1.2002 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री कृष्णा शंकर निवेदन करते हैं कि थियोडोरी इसाई अस्पताल पूर्त अस्पताल है, अत: इसे किसी लाभ कमाने वाले अन्य निजी अस्पताल अथवा नर्सिंग होम के समतुल्य नहीं माना जा सकता है। वह निवेदन करते हैं कि अधिनियम पूर्त अस्पताल पर प्रयोज्य नहीं है। आगे निवेदन किया गया है कि याचीगण का अस्पताल के दैनिक क्रियाकलापों से सरोकार नहीं है, इसलिए, उन्हें अधिनियम की धारा 22 (c) के मुताविक दंडित नहीं किया जा सकता है। तद्नुसार, निवेदन किया गया है कि ओ॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 119/2002 में याचीगण के विरुद्ध आरंभ की गयी संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित किए जाने की दायी है।

5. दूसरी ओर, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री राजेश कुमार निवेदन करते हैं कि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम की अनुसूची के मुताबिक निजी अस्पताल, नर्सिंग होम और क्लिनिक अधिनियम के कार्य क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। वह निवेदन करते हैं कि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम अनुसूचित नियोजन के अधीन कार्यरत कर्मचारियों के लाभ के लिए अधिनियमित किया गया है जो निजी अस्पतालों को भी सम्मिलित करता है। अधिनियम का उद्देश्य अनुसूचित नियोजन में कार्यरत कर्मचारियों को न्यूनतम मजदूरी सुनिश्चित करना है। वह आगे निवेदन करते हैं कि श्रम प्रवर्तन अधिकारी ने निरीक्षण के क्रम में पाया कि थियोडोरी इसाई अस्पताल में कार्यरत कर्मचारी न्यूनतम मजदूरी नहीं पा रहे हैं। अत:, उन्होंने निष्कर्षित किया कि याचीगण ने अधिनियम और नियमावली के अनेक प्रावधानों का उल्लंघन किया

है जो अधिनियम की धारा 22 के अधीन दंडनीय है। निवेदन किया गया है कि ए॰ सी॰ जे॰ एम॰ ने सही प्रकार से अधिनियम की धारा 22 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया। उन्होंने आगे निवेदन करते हैं कि याचीगण न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अधीन यथा परिभाषित 'नियोक्ता' के कार्य क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। यह प्रश्न कि क्या याचीगण अस्पताल के कार्यकलाप के प्रभारी हैं या नहीं, तथ्य का प्रश्न है जिसे साक्ष्य देकर सिद्ध करने की आवश्यकता है। वह निवेदन करते हैं कि अधिनियम की धारा 23 के अधीन याचीगण उस व्यक्ति, जो अस्पताल के कार्यकलाप का प्रभारी है, का नाम प्रकट करते हुए न्यायालय के समक्ष आवेदन दाखिल कर सकते हैं और यदि वे इसे सिद्ध करने में सक्षम होंगे, उन्हें दंड से छूट दिया जा सकता है। तद्नुसार निवेदन किया गया है कि याचीगण द्वारा उठाया गया दूसरा आधार समुचित चरण पर अवर न्यायालय में प्रस्तुत किया जा सकता है।

6. निवेदनों को सुनने पर, मैंने मामले के अभिलेखों का परिशीलन किया है।

7. यह प्रतीत होता है कि थियोडोरी इसाई अस्पताल, चंद्रपुरा का प्रबंध सोसाइटी रजिस्ट्रेशन के अधीन रजिस्टर्ड सोसाइटी भारत के मेथडिस्ट चर्च द्वारा किया जाता है। यह कथन किया गया है कि याची सं॰ 1 पूर्वोक्त चर्च का बिशप है और प्रासंगिक समय पर वह लखनऊ में रह रहा था। पूर्वोक्त अस्पताल के प्रबंधन के साथ उसका कोई सरोकार नहीं है, अत: वह न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अधीन परिभाषित ''नियोक्ता'' के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत नहीं आएगा। अत:, उसे अभियोजित नहीं किया जा सकता है। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम की धारा 2 (e) के अधीन 'नियोक्ता' शब्द को परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> ***^^fu;kDrk**** dk vFk g dkb 0;fDr tk çR;{kr% vFkok fdlh vU; 0;fDr d ekè;e l] vFkok Lo; viuh vFkok fdlh vU; 0;fDr dh vkj l ,d vFkok vfèkd depkfj;k dk fdlh vulfpr fu;ktu e fu;kftr djrk g ftld lcèk e bl vfèkfu;e d vèkhu etnjh dh U;ure nj fu;r dh x;h g vkj èkkjk 26 d mièkkjk (3) d flok, fuEufyf[kr lfEefyr djrh g&*
>
> *(i) fdlh dkj[kkuk e] tgk vulfpr fu;ktu fn;k tkrk g ftld lcèk e bl vfèkfu;e d vèkhu etnjh dh U;ure nj fu;r dh x;h g dkj[kkuk vfèkfu;e] 1948 (1948 dk 63) dh èkkjk 7 dh mièkkjk (1) dk [kM (f) d vèkhu dkj[kkuk d çcèkd d :i e ukfer dkb 0;fDr(*
>
> *(ii) Hkkjr e fdlh ljdkj d fu;=.k d vèkhu fdlh vulfpr fu;ktu e] ftld lcèk e bl vfèkfu;e d vèkhu etnjh dh U;ure nj fu;r dh x;h g] depkfj;k d i;o{k.k vFkok fu;=.k d fy, ,lh ljdkj }kjk fu;Dr 0;fDr vFkok çkfèkdkjh vFkok tgk fdlh 0;fDr vFkok çkfèkdkjh dk fu;Dr ugh djuk g] foHkkxkè;{k(*
>
> *(iii) fdlh LFkkuh; çkfèkdkjh d vèkhu fdlh vulfpr fu;ktu e] ftld lcèk e bl vfèkfu;e d vèkhu etnjh dh U;ure nj fu;r dh x;h g(depkfj;k d i;o{k.k vkj fu;=.k d fy, ,l çkfèkdkjh }kjk fu;Dr 0;fDr vFkok tgk dkb 0;fDr bl çdkj fu;Dr ugh fd;k x;k g] LFkkuh; çkfèkdkj dk e[; dk;ikyd vfèkdkjh(*
>
> *(iv) fdlh vU; ekey e tgk dkb vulfpr fu;ktu fn;k tkrk g ftld lcèk e bl vfèkfu;e d vèkhu etnjh dh U;ure nj fu;r dh x;h g] depkfj;k d i;o{k.k vkj fu;=.k d fy, vFkok etnjh d Hkxrku d fy, Lokeh d çfr ftEenkj dkb 0;fDrA**

8. विद्वान सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ के आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि पूर्वोक्त प्रतिवाद पर विचार करते हुए, उन्होंने अस्पताल की उपविधियों पर विचार किया जिसमें याची सं॰ 1 को कमिटि के सदस्य के रूप में दर्शाया गया था और उक्त कमिटि को अस्पताल के कर्मचारियों के वेतनमान, भत्ता, मजदूरी नियत करने की शक्ति है और इसलिए अस्पताल अधिनियम की धारा 2 (e) के खंड (iv) के मुताबिक, मेरे दृष्टिकोण में, याचीगण नियोक्ता के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। यह प्रश्न कि क्या याचीगण प्रभारी हैं और/अथवा अस्पताल के व्यवसाय के संचालन के लिए जिम्मेदार हैं, तथ्य का प्रश्न है जिसे साक्ष्य देकर सिद्ध करने की आवश्यकता है। इस संबंध में, यह उल्लेखनीय है कि अधिनियम की धारा 23 ऐसे नियोक्ता को पर्याप्त सुरक्षा प्रावधानित करती है जिन्होंने स्वयं अधिनियम और नियमावली के प्रावधानों में से किसी का उल्लंघन नहीं किया है। पूर्वोक्त प्रावधान के अनुसार जब किसी नियोक्ता को अधिनियम के अधीन अपराध के लिए आरोपित किया जाता है, वह आरोप की सुनवाई के समय पर आवेदन दाखिल करने और यह सिद्ध करने कि वस्तुत: किसी अन्य व्यक्ति ने अधिनियम के अधीन अपराध किया है, का हकदार है। पूर्वोक्त धारा आगे प्रावधानित करती है कि यदि पूर्वोक्त नियोक्ता तर्कपूर्ण साक्ष्य द्वारा न्यायालय को संतुष्ट करता है, तब उसे अधिनियम के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता है। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, मैं पाता हूँ कि विद्वान सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ सही प्रकार से इस निष्कर्ष पर आए कि संज्ञान के चरण पर याची द्वारा उठाए गए प्रश्न को विनिश्चित नहीं किया जा सकता है।

9. अब याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए द्वितीय प्रतिवाद पर आते हुए, यह उल्लेखनीय है कि बिहार राज्य ने स्थायी आदेश अर्थात एस॰ ओ॰ सं॰ 1588 दिनांक 15.10.1976 जारी करके निजी अस्पतालों, नर्सिंग होम और क्लिनिक में नियोजन को अधिनियम की अनुसूची में जोड़ा है। अधिनियम के अनेक प्रावधान अनुसूचित नियोजन में कार्यरत कर्मचारियों को भुगतान योग्य मजदूरी की दरों पर विचार करते हैं। यह कोई सुभिन्नता नहीं करता है कि क्या संबंधित अनुसूचित नियोजन लाभ कमाने वाला नियोजन है अथवा पूर्त नियोजन। स्वीकृत रूप से, थियोडोरी इसाई अस्पताल एक निजी अस्पताल है। उक्त परिस्थिति के अधीन, इसमें कार्यरत कर्मचारी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार न्यूनतम मजदूरी पाने के हकदार हैं। यह अतात्विक है कि क्या सोसाइटी उक्त अस्पताल को पूर्त प्रयोजन के लिए चला रही है अथवा लाभ के प्रयोजन के लिए। मेरे दृष्टिकोण में, भले ही कोई व्यक्ति पूर्त प्रयोजन से संगठन चला रहा है और यह अनुसूचित नियोजन के कार्य क्षेत्र के अंतर्गत आता है, तब भी उक्त संगठन अपने कर्मचारियों को न्यूनतम मजदूरी का भुगतान करने का दायी है। अत:, यदि यह पाया जाता है कि उक्त संगठन के कर्मचारी न्यूनतम मजदूरी नहीं पा रहे हैं, तब नियोक्ता दंडित किए जाने का दायी है। इस प्रकार, मैं याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के पूर्वोक्त निवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ।

10. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इस रिट आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

बिमल कुमार डे एवं अन्य

cuke

अध्यक्ष हिंदुस्तान कॉपर लिमिटेड एवं अन्य

Civil Review No. 35 of 2004. Decided on 23rd April, 2012.

(क) भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—सी॰ पी॰ सी॰ के प्रावधान रिट कार्यवाहियों पर प्रयोज्य नहीं हैं—किंतु, सी॰ पी॰ सी॰ के अनेक प्रावधानों में संगणित सिद्धांत मामला विनिश्चित करने के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत हैं। (पैरा 12)

(ख) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 47 नियम 1—पुनर्विलोकन—जब पुनर्विलोकन के लिए आवेदन मंजूर किया जाता है, तब मूल याचिका को पुनः सुनने की आवश्यकता है—स्वयं पुनर्विलोकन याचिका में विवाद्यक, जो याचिका में विषय वस्तु है जिसमें पुनर्विलोकन याचिका में आक्षेपित आदेश जिसका पुनर्विलोकन किया जाना इप्सित किया गया है, विनिश्चित नहीं किया जा सकता है—समुचित प्रक्रिया आक्षेपित आदेश अपास्त करना है और मामला पुनर्स्थापित करना है जिसमें मूल आदेश पारित किया गया था। (पैरा 13)

निर्णयज विधि.—AIR 1987 SC 1015; AIR 1994 SC 1521—Referred.

अधिवक्तागण.—M/s M.M.Pal, Mahua Palit, For the Petitioners; Mr. A.K. Das, For the Respondent Nos. 1 to 5; Mr. A.K. Sinha, For the Respondent Nos. 6 to 112.

आदेश

पुनर्विलोकन आवेदन सं॰ 35 वर्ष 2004 पर पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया जिसके द्वारा इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 4.1.2002 के आदेश के तहत किए गए निर्देश पर खंडपीठ द्वारा पारित दिनांक 12.1.2004 के आदेश के पुनर्विलोकन के लिए प्रार्थना की गयी है। याचीगण का प्रतिवाद यह है कि खंडपीठ ने विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा इसको निर्दिष्ट विवाद्यक को विनिश्चित नहीं किया था।

2. याचीगण की रिट याचिका सं॰ सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ 1860 वर्ष 1996 (R) में दिनांक 4.1.2002 को निम्नलिखित आदेश पारित किया गया था:—

mBk, x, ç'uk e l ,d ;g g fd D;k dedkj tk vfèkof"krk vk; çkIr dju ij lokfuor gk x,] d ukefunf'kfr vkj dedkjh d ukefunf'kfr ftUgku igy gh lok d fuf'pr o"kk dk ijk dj fy;k g] dk çkFkfedrk d vkèkkj ij fu;Dr fd;k tk ldrk g vkj ,lh ;ktuk] ;fn vfHky[k ij ,lh ;ktuk gk] Hkkjr d lfoèkku d vuPNnk 14 vkj 16 dk mYy?ku djrh g ;k ughA

oreku ekey e vfHkdfFkr fd;k x;k g fd çkboV çR;FkhZx.k mu dedkjk tk igy gh lokfuoÙk gk pd g d ukefunf'kfr g vFkok mu dedkjk tk igy l gh lok e g d ukefunf'kfr g vkj] blfy,] mUg vU; d mij vfèkeku ugh fn;k tk ldrk gA

bu rF;k vkj ifjfLFkfr;k e] pfd HkÙkh vkj çkUufr fu;ekoyh] 1994, tlk ifjf'k"V D/2 e vrfo"V g] d [kM 4.1.2 (iv) vkj (v) ij ;ktuk dh 'kfDreÙkk dh ijh{kk dh tkuh g] [kMihB }kjk ekey dh luokbZ okNuh; gA

*ekuuh; e[; U;k;kèkh'k dh vè;{krk d vèkhu ihB d le{k ;g voèkkfjr dju d fy, ekey dk lphc) fd;k tk, fd D;k blI U;k;ky; }kjk ikfjr LFkxu d vrfje vkn'k d dkj.k tYn luokbZ dh frfFk r; dju dh vko';drk gA**

3. इस निर्देश की प्राप्ति पर, इस न्यायालय की खंडपीठ ने दिनांक 25.3.1994 को विनिश्चित इस सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3864 वर्ष 1992(R) के तथ्य को ध्यान में लेने के बाद और उन कर्मचारियों जिनकी सेवा में रहते मृत्यु हो गयी अथवा जो अधिवर्षिता की आयु प्राप्त करने पर सेवानिवृत्त हो गए के नाम निर्देशितियों के मामलों पर विचार करने के लिए कंपनी के कॉरपोरेट स्तर पर लिए गए निर्णय

के अनुसरण में मजदूर के पदों पर साक्षात्कार के लिए नाम निर्देशितियों को बुलाते हुए प्रत्यर्थीगण द्वारा जारी दिनांक 19.5.1990 के नोटिस को ध्यान में लेते हुए और तथ्यों पर गौर करने के बाद अभिनिर्धारित किया कि याचीगण उन कोटियों में से किसी में नहीं आते हैं जिनके मामले में भर्त्ती पर प्रतिबंध को शिथिल करने का विनिश्चय किया गया था और गलती से नोटिस में याचीगण के नामों को सम्मिलित किया गया था जिसे रद्दकरण और दिनांक 30.5.1990 के एक अन्य नोटिस के तहत सुधारा गया था।

4. जहाँ तक भर्त्ती और प्रोन्नति नियमावली, 1994 के खंड 4.1.2 (iv) और (v) की वैधता का संबंध है, खंडपीठ द्वारा इसका परीक्षण और विनिश्चय नहीं किया गया है।

5. प्रत्यर्थी–कॉरपोरेशन के विद्वान अधिवक्ता और प्राइवेट कर्मचारियों के अधिवक्ता इस अवस्था को विवादित नहीं कर सके थे कि याचीगण की रिट याचिका को खारिज करते हुए 1994 की उक्त नियमावली के खंड 4.1.2 (iv) और (v) की संवैधानिक वैधता पर खंडपीठ द्वारा विचार नहीं किया गया है।

6. इस मोड़ पर, यह उल्लेख करना समुचित होगा कि इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा खंडपीठ को यह विवाद्यक निर्दिष्ट किया गया था और, इसलिए, खंडपीठ अभिनिर्धारित कर सकता था कि ऐसा विवाद्यक उद्भूत नहीं होता है अथवा मामले के तथ्यों में विवाद्यक विनिश्चित करने की आवश्यकता नहीं है किंतु खंडपीठ द्वारा ऐसा निष्कर्ष दर्ज नहीं किया गया है।

7. पुनर्विलोकन याची के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि विधि के बिंदु पर विचार किया गया है क्योंकि विधि का यही बिन्दु **योगेन्द्र पाल सिंह एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, AIR 1987 SC 1015** मामले में और **भारत के ऑडिटर जनरल एवं अन्य बनाम जी॰ अनंत राजेश्वर राव, AIR 1994 SC 1521,** मामले में भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष पहले ही विषयवस्तु रहा है जिसमें सेवारत मृत कर्मचारी के परिवार के सदस्यों की अनुकंपा पर नियुक्ति को मान्यता देने के बाद भी और योजना की वैधता स्वीकार करने के बाद भी अभिनिर्धारित किया कि किसी अन्य कारण से सेवा में बने कर्मचारियों के संबंधियों अथवा उन वंशजों जो मृत कर्मचारी के आश्रितों की श्रेणी में नहीं आते हैं, अथवा चिकित्सीय नि:शक्तता के कारण जिनकी सेवा समाप्त कर दी गयी है, को लाभ देने के लिए ऐसी योजना बढ़ायी नहीं जा सकती है।

8. अत: नियुक्तियाँ, जिन्हें रिट याचिका दाखिल किए जाने के बाद किया गया था, यह पाने पर अभिखंडित किए जाने की दायी थी कि उक्त निर्दिष्ट खंड असंवैधानिक थे और भारत के संविधान के अनुच्छेदों 13, 14 और 16 का उल्लंघन करते थे। यह निवेदन भी किया गया था कि याचीगण की रिट याचिका में उक्त निर्दिष्ट खंडों के अधीन कोई नियुक्ति देने से नियोक्ता को प्रतिषिद्ध करते हुए इस न्यायालय द्वारा अंतरिम आदेश पारित किया गया था। किंतु, वह अंतरिम आदेश प्राइवेट प्रत्यर्थीगण की नियुक्ति के बाद पारित किया गया था। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि रिट याचीगण की पूर्विक रिट याचिका में इस न्यायालय की खंडपीठ ने स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया कि जब कभी भी प्रत्यर्थी नियुक्ति का प्रस्ताव देगा, याचीगण के मामले पर विचार किया जाएगा और, इसलिए, याचीगण किसी भावी रिक्ति पर नियुक्ति पाने के हकदार थे।

9. प्रत्यर्थी कॉरपोरेशन के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वस्तुत: यहाँ एक श्रम विवाद था जिसमें वर्ष 1947 में अधिनिर्णय पारित किया गया था जिसमें उन व्यक्तियों, जो मृत कर्मचारी के आश्रित हैं और जो उन कर्मचारियों जिन्हें चिकित्सीय आधार पर रोजगारहीन बना दिया गया था के आश्रित हैं,

से भिन्न संबंधियों और आश्रितों को नियुक्ति देने के विवाद्यक पर विचार किया गया था। उस अधिनिर्णय में भाईयों और अन्य व्यक्तियों जैसे निकट संबंधियों को नियुक्ति देने के विवाद्यक पर विचार किया गया था और निर्णय लिया गया था जिसका नियमित रूप से अनुसरण किया गया था। तत्पश्चात्, वर्ष 1994 में औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 12 (3) के अधीन व्यवस्थापन किया गया था जिसमें 1994 की नियमावली में आक्षेपित खंडों को सम्मिलित किया गया था और केवल उन नियमावली के अधीन निजी प्रत्यर्थीगण को नियुक्ति का प्रस्ताव दिया गया था, अत: कॉरपोरेशन नियमों का अनुसरण कर रहा है। यह निवेदन किया गया है कि 1947 के अधिनिर्णय को रिट याचीगण द्वारा चुनौती नहीं दी गयी है।

10. निजी प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि सुलह कार्यवाही में लिए गए निर्णय का अनुसरण करके और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन विधि का बल रखने वाले नियमों के अधीन प्राइवेट प्रत्यर्थीगण को नियुक्ति दी गयी थी, अत:, प्रत्यर्थीगण की नियुक्ति पूर्णत: न्यायोचित और वैध थी और इसे अभिखंडित नहीं किया जा सकता है। यह निवेदन भी किया गया था कि यह अधिमानी नियुक्ति थी और न कि नियमों के अधीन प्रतिस्पर्धा से पूर्ण इनकार किया गया था, अत:, नियम वैध हैं। विकल्प में, अगर यह अभिनिर्धारित भी किया जाता है कि पूर्व निर्दिष्ट खंड असंवैधानिक है, तब भी भविष्यलक्षी रूप से प्रभाव दिया जाना चाहिए ताकि निजी प्रत्यर्थीगण की नियुक्ति में छेड़छाड़ नहीं किया जा सके।

11. पुनर्विलोकन याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि स्वयं पुनर्विलोकन याचिका में इन समस्त विवाद्यकों को विनिश्चित किया जा सकता है, अत:, पहले हमें इस विवाद्यक का परीक्षण करना है कि क्या हम पुनर्विलोकन याचिका को विनिश्चित करते हुए गुणागुण पर स्वयं नियमों की वैधता का न्यायनिर्णयन कर सकते हैं?

12. सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधान स्वत: रिट कार्यवाहियों पर प्रयोज्य नहीं हैं किंतु सिविल प्रक्रिया संहिता के अनेक प्रावधानों में संगणित सिद्धांत मामलों का विनिश्चय करने के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत हैं। यह परीक्षण करने के लिए कि क्या हम पुनर्विलोकन याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों की दृष्टि में पुनर्विलोकन याचिका में उन समस्त विवाद्यकों का विनिश्चय कर सकते हैं, सिविल प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में सी॰ पी॰ सी॰) के आदेश XLVII का परिशीलन करना समुचित होगा। पुनर्विलोकन याचिका सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XLVII के अधीन आती है और न्यायालय सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XLVII के नियम 4 के उपनियम (1) के अधीन पुनर्विलोकन आवेदन अस्वीकार कर सकता है जहाँ न्यायालय को प्रतीत होता है कि पुनर्विलोकन का पर्याप्त आधार नहीं है। यदि न्यायालय पुनर्विलोकन आवेदन को अस्वीकार नहीं करता है, यह आदेश XLVII के नियम 4 के उपनियम (2) के मुताबिक अग्रसर हो सकता है और सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XLVII के नियम 4 के उपनियम (2) के अधीन उपखंड (a) के मुताबिक विरोधी पक्षकार को नोटिस जारी कर सकता है और यदि पुनर्विलोकन आवेदन अनुज्ञात किया जाता है, तब सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XLVII के नियम 8 के अधीन प्रक्रिया का अनुसरण करने की आवश्यकता होती है जो निम्नलिखित है:–

> *8.* ***etj fd, x, vkonu dk jftLVj e p<k;k tkuk vkj fQj l luokb d fy, vkn'k-*** *&;fn iufoykdu dk vkonu etj dj fy;k tkrk g rk mldk fVIi.k jftLVj e fd;k tk,xk vkj U;k;ky; ekey dk rjUr fQj lu ldxk ;k fQj l luokb d ckj e ,lk vkn'k dj ldxk tk og Bhd le>A*

13. सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XLVII के नियम 8 का कोरा परिशीलन आज्ञा देता है कि जब पुनर्विलोकन के लिए आवेदन मंजूर किया जाता है, तब मूल याचिका को पुन: सुनने की आवश्यकता होती है। अत:, स्वयं पुनर्विलोकन याचिका में विवाद्यक, जो उस याचिका जिसमें पुनर्विलोकन याचिका में दिया गया आक्षेपित आदेश विषयवस्तु है और जिसका पुनर्विलोकन इप्सित किया गया है, विनिश्चित नहीं किया जा सकता है। समुचित प्रक्रिया आक्षेपित आदेश को अपास्त करना है और मामले को

पुनर्स्थापित करना है जिसमें मूल आदेश पारित किया गया था और इसे तुरन्त अथवा तत्पश्चात् किसी समय पर अर्थात् पुनर्विलोकन के लिए इप्सित आदेश को अपास्त करने के बाद सुना जा सकता है।

14. चूँकि प्रश्न, जिसे खंडपीठ को निर्दिष्ट किया गया है, को इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा विनिश्चित नहीं किया गया है, अत: हमारा सुविचारित मत है कि यह पुनर्विलोकन याचिका सं॰ 35 वर्ष 2004 अनुज्ञात किए जाने योग्य है, अत: इसे अनुज्ञात किया जाता है और सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1863 वर्ष 1996 (R) में निर्देश पर पारित दिनांक 17.11.2003 का खंडपीठ का आदेश अपास्त किया जाता है और सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1863 वर्ष 1996 (R) को इसकी मूल संख्या में पुनर्स्थापित किया जाता है।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

जगनारायण सिंह उर्फ जिनारायण सिंह

cuke

झारखंड राज्य निगरानी के माध्यम से

W.P.(Cr.) No. 498 of 2010. Decided on 5th April, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 409, 467, 468, 469, 471, 477A, 109, 201 सह-पठित धारा 120B—भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धाराएँ 13(1)(d) एवं 13(2)—कूटरचना—भूमि अंतरण से संबंधित संव्यवहार—याची ने अंचलाधिकारी की हैसियत से सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 49 के अधीन भूमि के अंतरण की अनुशंसा की—अपनी अनुशंसा के साथ याची द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर कार्रवाई नहीं किया गया—बल्कि, याची के उत्तराधिकारी की रिपोर्ट पर कार्रवाई किया गया—याची को भूमि अंतरित करने के लिए अनुमति हेतु आदेश पाने के लिए अन्य अभियुक्त के साथ षडयंत्र करता हुआ कभी नहीं कहा जा सकता है—दांडिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 13 से 16)

अधिवक्तागण.—Mr. Sujeet Narayan Prasad, For the Petitioner; Mr. Nilesh Kumar, For the Vigilance.

आदेश

यह आवेदन भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 467, 468, 469, 471, 477A, 109, 201 सह-पठित धारा 120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(d) सह-पठित धारा 13(2) के अधीन भी दर्ज निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 29 वर्ष 2000 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

2. इस मामले की ओर ले जाने वाले तथ्य ये हैं कि किसी आर॰ एम॰ टिग्गा और अन्य ने भूमि का अधिभोगी रैयत होने के नाते मौजा हिनू अवस्थित .71 एकड़ क्षेत्रफल वाले खाता सं॰ 102 से संबंधित भूखंड सं॰ 636, 637 और 638 वाली भूमि को रजिस्टर्ड सहकारी सोसाइटी महावीर सहकारी गृह निर्माण समिति, धुर्वा, राँची को अंतरित करने के लिए उनको अनुमति प्रदान करने के लिए उपायुक्त, राँची के समक्ष छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 49 (2) के अधीन आवेदन दाखिल किया। उक्त आवेदन पर, लैंड परमिशन केस सं॰ 9 वर्ष 1987-88 के रूप में मामला दर्ज किया गया था। इसी प्रकार से, हरदुगन मुंडा और नौ अन्य ने 1.67 एकड़ कुल क्षेत्रफल वाले खाता सं॰ 174 से संबंधित भूखंड सं॰ 648 और खाता सं॰ 57 से संबंधित भूखंड सं॰ 635, 647 और 650 वाली भूमि को उक्त सहकारी सोसाइटी को अंतरित करने के लिए अनुमति प्रदान करने के लिए

आवेदन दाखिल किया। उस आवेदन पर लैंड परमिशन केस सं॰ 10 वर्ष 1987-88 दर्ज किया गया था। ऐसे आवेदनों को दाखिल किए जाने पर भूमि के मूल्यांकन और उपयोगिता के संबंध में याची सहित संबंधित अंचलाधिकारी से रिपोर्ट मांगा गया था। उसके अनुसरण में, अधिनियम की धारा 49 के अधीन भूमि के अंतरण की अनुमति प्रदान करने की अनुशंसा के साथ भूमि का मूल्यांकन देते हुए याची द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत किया गया था। किंतु तत्कालीन उपायुक्त, राँची ने सहकारी सोसाइटी को पूर्वोक्त भूमि अंतरित करने की अनुमति प्रदान करने से इनकार कर दिया क्योंकि उनके अनुसार प्रयोजन जिसके लिए भवन निर्माण के लिए सहकारी सोसाइटी को भूमि अंतरित किया जाना इप्सित किया गया था, को युक्तियुक्त और पर्याप्त प्रयोजन नहीं कहा जा सकता है। किंतु, विविध राजस्व अपील सं॰ 307 वर्ष 1987 द्वारा अपील करके उक्त आदेश को आयुक्त, राँची के समक्ष चुनौती दी गयी थी। उक्त अपील की सुनवाई करते हुए निम्नलिखित प्रश्न निरुपित किया गया था:–

*^^D;k Hkou@xg d ç;ktu l vkokl h; lgdkjh lkslkbVh dk Hkfe dk foØ; ;fDr;Dr gr le>k tk ldrk gA***

3. विवाद्यक पर विचार करते हुए, विद्वान आयुक्त ने संप्रेक्षित किया कि यद्यपि अधिनियम में कतिपय प्रयोजनों को विनिर्दिष्ट किया गया है जिनके अधीन अंतरण की अनुमति प्रदान की जा सकती है किंतु कुछ अन्य प्रयोजन भी हो सकते हैं जिन्हें अधिनियम में उल्लिखित नहीं किया गया है जिसके अधीन उपायुक्त अनुमति प्रदान कर सकता है बशर्ते वह प्रयोजन को युक्तियुक्त और पर्याप्त प्रयोजन पाता है। अत:, मामले पर नए सिरे से विचार करने के लिए दिनांक 14.12.1987 के अपने आदेश के तहत मामला उपायुक्त, राँची के पास भेजा गया था कि इसे विचार में लेते हुए कि विगत काल में भवन के निर्माण के लिए सहकारी सोसाइटी को भूमि का अंतरण करने के लिए अनुमति प्रदान करने के अनेक उदाहरण हैं और कि क्षेत्र में अनेक कॉलोनियाँ बनी हैं, और यह तथ्य भी कि क्या अंतरकों के पास पर्याप्त भूमि बची रहेगी और कि तय दर युक्तियुक्त है और भवन निर्माण करने के प्रयोजन से भूमि पाने का सहकारी सोसाइटी के दावा की वास्तविकता सुनिश्चित करने के लिए गृहों/भवनों का निर्माण युक्तियुक्त गतिविधि है या नहीं। इस बीच, रैयतों ने भूमि के मूल्यांकन के संबंध में नया रिपोर्ट देने के लिए आवेदन दाखिल किया क्योंकि मामला विगत तीन वर्षों से लंबित था और इन तीन वर्षों के दौरान भूमि का मूल्य बढ़ गया था। ऐसे आवेदन पर नया रिपोर्ट मांगा गया था जिसे तत्कालीन अंचलाधिकारी नरेश कुमार द्वारा अपने पत्र सं॰ 150 (ii) दिनांक 30.1.1991 के तहत प्रस्तुत किया गया था जिसके द्वारा भूमि का मूल्य 5000/- रुपया प्रति डिसमिल निर्धारित किया गया था।

4. आगे यह प्रतीत होता है कि रैयतों ने उसमें यह कथन करते हुए आवेदन दाखिल किया कि भूमि जिसका अंतरण इप्सित किया जा रहा है, खेती योग्य नहीं है बल्कि यह ''टांड'' भूमि है और इस प्रकार, उन्हें कोई लाभ नहीं हो रहा है और इसलिए वे इसे बेचना चाहते हैं ताकि अपने घरों के निर्माण/मरम्मती के लिए धन का उपयोग किया जा सके। इस पर, तत्कालीन उपायुक्त, राँची द्वारा मामला सुना गया था और इस तथ्य को ध्यान में लेते हुए कि भूमि 'टांड' भूमि होने के नाते खेती योग्य नहीं है और रजिस्टर्ड सहकारी सोसाइटी को भूमि का अंतरण करने के बाद भी रैयतों के पास पर्याप्त कृषि भूमि रहेगी और कि रैयतों ने अग्रिम के रूप में बड़ी राशि भी लिया है और कि अनेक मामलों में, जहाँ भवन निर्माण के प्रयोजन से सहकारी सोसाइटी को भूमि का अंतरण किया जाना इप्सित किया गया था, पहले भी अनुमति प्रदान की गयी है, उपायुक्त ने दिनांक 2.2.1992 के अपने आदेश के तहत रैयतों को सहकारी सोसाइटी

को भूमि अंतरित करने की अनुमति दी। ऐसे तथ्य पर, उपायुक्त, राँची ने यह पाने पर कि ऐसा अंतरण युक्तियुक्त और पर्याप्त प्रयोजन होगा, इस शर्त के अध्यधीन भूमि का अंतरण करने की अनुमति प्रदान किया कि भूमि 4000/- रुपया प्रति डिसमिल के बजाए 5000/- रुपया प्रति डिसमिल की दर पर बेची जाएगी जिसे याची द्वारा मूल्यांकित किया गया था और कि अंतरक केवल उसी प्रयोजन से भूमि का उपयोग करेगा जिसके लिए उसे अनुमति दी गयी है और सहकारी सोसाइटी के सदस्यों में से किसी के पास 7 डिसमिल भूमि से अधिक नहीं होगा और कि यदि भूमि पर तीन वर्षों के भीतर भवन का निर्माण नहीं किया जाता है, रैयत उन भूमियों का कब्जा वापस पाने के हकदार होंगे और अंतत: कि भुगतान रैयतों के नाम में एन॰ एस॰ एस॰ द्वारा किया जाएगा और नगद रैयतों के खातों में जमा किया जाएगा।

5. बाद में, उस आदेश को अधिनियम की धारा 49(5) में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार राज्य सरकार के समक्ष कुछ व्यथित व्यक्तियों द्वारा चुनौती दी गयी थी। सुनवाई के बाद, पीठासीन अधिकारी ने अनुमति प्रदान करने वाले उपायुक्त के आदेश में कोई दोष नहीं पाया क्योंकि उसके अनुसार, आदेश में उल्लिखित अनेक कारकों को विचार में लेने के बाद आदेश पारित किया गया है और इस प्रकार यह अभिनिर्धारित करके कि अंतरण जिसके लिए अनुमति प्रदान की गयी थी युक्तियुक्त और पर्याप्त प्रयोजन था, इसे संपुष्ट किया गया था। अत:, पीठासीन अधिकारी ने आदेश में हस्तक्षेप करना सुयोग्य नहीं पाया। किंतु, भूमि के विक्रय के लिए उपायुक्त द्वारा नियत दर 6000/- रुपया प्रति डिसमिल तक बढ़ा दी गयी थी।

6. किंतु, बिहार सरकार द्वारा आदेश संपुष्ट किए जाने के पहले निगरानी ब्यूरो, बिहार ने अनुसूचित जनजातियों की भूमि के अवैध अंतरण के संबंध में कुछ परिवाद पाने पर अवैध अंतरण से संबंधित मामले की जाँच करने के लिए कमिटि गठित किया। याची द्वारा प्रदान की गयी अनुमति से संबंधित परिवाद की जाँच तत्कालीन डी॰ एस॰ पी॰ निगरानी ब्यूरो, पटना द्वारा की गयी थी जिन्होंने पाया कि पहले महावीर आवासीय सहकारी सोसाइटी को भूमि का अंतरण करने की अनुमति देने से इनकार कर दिया गया था जब अधिभोगी रैयतों ने अनुमति इप्सित की थी। किंतु, तत्कालीन आयुक्त द्वारा आदेश अपास्त कर दिया गया था और यह विचार में लेने के बाद कि क्या प्रयोजन जिसके लिए सहकारी सोसाइटी को भूमि का अंतरण इप्सित किया गया है, युक्तियुक्त और पर्याप्त होगा, नया आदेश पारित करने के लिए मामला उपायुक्त को भेजा गया था। तत्कालीन उपायुक्तों द्वारा वह मामला विनिश्चित नहीं किया गया था जिन्हें समय के प्रासंगिक बिंदुओं पर पदस्थापित किया गया था किंतु केवल तत्कालीन उपायुक्त सुधीर प्रसाद ने ही भूमि के अंतरण की अनुमति प्रदान की थी, यद्यपि अधिनियम की धारा 49 के अधीन वर्जना की दृष्टि में आवासीय प्रयोजन से ऐसी अनुमति प्रदान नहीं की जा सकती थी, फिर भी उपायुक्त ने अन्य लोगों के साथ सांठ-गांठ करके भूमि के अंतरण की अनुमति प्रदान की थी।

7. ऐसी जाँच रिपोर्ट के आधार पर, पटना सदर निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 29 वर्ष 2009 दिनांक 13.11.2000 को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 467, 468, 471, 477A, 109, 201सह-पठित धारा 120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(d) सह-पठित धारा 13 (2) के अधीन भी संस्थापित किया गया था।

8. राज्य के विभाजन के बाद, निगरानी ब्यूरो, राँची ने मामले का अन्वेषण किया और अंतत: दिनांक 18.11.2007 को आरोप-पत्र दाखिल किया।

9. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सुजीत नारायण प्रसाद ने निवेदन किया कि तत्कालीन उपायुक्त जिन्होंने अनुमति प्रदान किया था, इस न्यायालय के समक्ष संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए आए थे जब उन्हें अभियुक्त बनाया गया था और इस न्यायालय ने संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों को विचार में लेने के बाद यह अभिनिर्धारित करते हुए कि जैसा अभिकथित किया गया है श्री सुधीर प्रसाद के विरुद्ध कोई अपराध नहीं बनता है, डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 403 वर्ष 2009 में पारित दिनांक 24.2.2010 के निर्णय के तहत संपूर्ण दांडिक कार्यवाही को अभिखंडित कर दिया।

10. चूँकि श्री सुधीर प्रसाद का मामला अभिखंडित कर दिया गया है, याची के विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही भी अभिखंडित कर दिए जाने की दायी बन गयी है क्योंकि याची का मामला और भी मजबूत आधार पर खड़ा है।

11. इस संबंध में यह इंगित किया गया था कि यद्यपि याची ने तत्कालीन उपायुक्त, राँची द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में भूमि का मूल्य निर्धारित करते हुए रिपोर्ट प्रस्तुत किया था किंतु इस याची द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर कार्रवाई कभी नहीं की गयी थी, बल्कि अंचलाधिकारी नरेश कुमार की रिपोर्ट पर कार्रवाई की गयी थी और तद्द्वारा याची को अन्य अभियुक्तगण की मौनानुकूलता के साथ याची के पक्ष में भूमि के अंतरण की अनुमति प्रदान करने वाला कभी नहीं कहा जा सकता है और केवल इस तथ्य पर, संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अपास्त किए जाने योग्य है। इसके अतिरिक्त, इस तथ्य की दृष्टि में भी मामला अभिखंडित किए जाने का दायी है कि याची के विरुद्ध अभिकथित अपराधों में से कोई भी नहीं बनता है जिस पहलू पर **सुधीर प्रसाद उर्फ सुधीर कुमार प्रसाद बनाम झारखंड राज्य, निगरानी के माध्यम से, राँची [डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 403 वर्ष 2009]** मामले में विस्तारपूर्वक विचार किया गया है।

12. किन्तु, निगरानी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्राथमिकी से प्रतीत होता है कि जब याची जो समय के प्रासंगिक बिंदु पर अंचलाधिकारी के रूप में पदस्थापित था, से रिपोर्ट मांगा गया था, उसने न केवल रिपोर्ट प्रस्तुत किया था। बल्कि अधिनियम की धारा 49 के अधीन भूमि के अंतरण की अनुशंसा भी किया था और तद्द्वारा अभिकथित अपराध में इस याची की संलिप्तता प्रतीत होती है।

13. यह सत्य है कि अपनी अनुशंसा के साथ याची द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत किया गया था किंतु याची के उस रिपोर्ट पर कार्रवाई कभी नहीं की गयी थी, बल्कि याची के उत्तरवर्ती के रिपोर्ट पर कार्रवाई की गयी थी जिसे रैयतों के अनुरोध पर अतिरिक्त मूल्यांकन रिपोर्ट पाने के लिए प्रस्तुत किया गया था।

14. इन परिस्थितियों के अधीन याची को भूमि के अंतरण के लिए अनुमति हेतु आदेश पाने के लिए अन्य अभियुक्तगण के साथ षडयंत्र करता हुआ कभी नहीं कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त, धारा 464 के अधीन कूटरचना की दी गयी परिभाषा की दृष्टि में धाराओं 467, 468, 471, 477 के अधीन अपराधों में से कोई भी कभी आकृष्ट नहीं होता है। **सुधीर प्रसाद उर्फ सुधीर कुमार प्रसाद बनाम झारखंड राज्य निगरानी के माध्यम से, राँची (डब्ल्यू॰ पी॰ (दा॰) सं॰ 403 वर्ष 2009)** में इस मामले पर विस्तारपूर्वक विचार किया जा चुका है।

15. इस स्थिति के अधीन, अगर यह उपधारित किया जाता है कि याची ने अपनी अनुशंसा के साथ मूल्यांकन के संबंध में रिपोर्ट प्रस्तुत किया था, फिर भी, यह झूठे दस्तावेज बनाने का लक्षण उपधारित कभी नहीं करता है। आगे, यह अभिलिखित किया जाए कि यह समझ से परे है कि किस प्रकार भारतीय दंड संहिता की धाराओं 419 और 420 के अधीन याची के विरुद्ध अपराध बनता है जब धारा 419 अथवा 420 के अधीन अपराध गठित करने के लिए ऐसा कोई तत्व नहीं है। इसी प्रकार से, मैं भ्रष्टाचार निवारण

अधिनियम की धारा 13 (1) (d) के अधीन अपराध आकृष्ट होता नहीं पाता हूँ क्योंकि याची के विरुद्ध कभी नहीं अभिकथित किया गया है कि उसने भ्रष्ट आचरण अपनाकर अथवा स्वयं के लिए धनीय लाभ/बहुमूल्य चीजों को पाने के लिए अवैध साधनों द्वारा अथवा किसी अन्य प्रयोजन से रिपोर्ट प्रस्तुत किया। धारा 13 (1) (d) के अधीन अपराध गठित करने के लिए पूर्वोक्त आवश्यक तत्वों की कमी है और इस प्रकार जहाँ तक याची का संबंध है, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 467, 468, 469, 471, 477A, 109, 201 सह-पठित धारा 120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(d) सह-पठित धारा 13(2) के अधीन भी निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 29 वर्ष 2000 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जाती है।

16. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

धनबीर मुंडा

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 709 of 2003. Decided on 14th February, 2012.

सत्र विचारण सं॰ 115/2001 में सत्र न्यायाधीश, गुमला द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 19.9.2002 और दिनांक 21.9.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—पत्नी की हत्या–आजीवन कारावास–सूचक ने पूरी तरह से अभियोजन मामले का समर्थन किया–अपीलार्थी दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपने बयान में अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् सिद्ध नहीं कर सका था–किंतु, डॉक्टर ने यह नहीं कहा है कि उपहतियाँ प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी–यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं है कि मृतका का इलाज करने का कोई प्रयास किया गया था–अपीलार्थी की दोषसिद्धि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 से धारा 304 में संपरिवर्तित की गयी–दंडादेश पहले ही भुगत ली गयी अवधि (11 वर्ष) तक घटाया गया। (पैराएँ 7 से 15)

निर्णयज विधि.–1998 SCC (Cri.) 399—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Zaid Ahmad, For the Appellant; Mr. Amaresh Kumar, For the State.

आदेश

यह अपील सत्र विचारण सं॰ 115/2001 में अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए और उसको आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए सत्र न्यायाधीश, गुमला द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 19.9.2002 और दिनांक 21.9.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है।

2. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि मृतका नुनी मुंडाइन की बहन तीजो मुंडाइन (अ॰ सा॰ 3) ने दिनांक 10.9.2000 को सायं 5 बजे गाँव सलामी में इस प्रभाव का अपना फर्दबयान दिया कि नुनी मुंडाइन का विवाह अपीलार्थी के साथ तीन वर्ष पहले हुआ था। दिनांक 7.9.2000 को नूनी मुंडाइन कर्मा उत्सव में भाग लेने ससुराल से आयी। दिनांक 9.9.2000 को अपीलार्थी रात्रि 7-8 बजे के बीच घर आया

जब उसकी बहन नूनी मुंडाइन अपनी छोटी संतान के साथ अकेले थी। तीजो मुंडाइन (अ॰ सा॰ 3) ने नूनी मुंडाइन की चीख सुनी जब वह अपने घर के बाहर दरवाजे पर थी। वह घर में घुसी और उसने अपीलार्थी को अपने दायें हाथ में दबिया चाकू लिए घर से भागते देखा। जब उसने उसे रोकने का प्रयास किया, तब उसने उसे धक्का दिया और पूरब की ओर भाग गया। उसकी बहन कमरे में रो रही थी और जब वह निकट गयी, उसने देखा कि उसका बायाँ हाथ कटा हुआ था और कलाई के निकट अलग हो गया था और बायाँ पैर भी fily के ऊपर कटा हुआ था और दायें पाँव का पैर भी कटा हुआ था और वह दर्द से चिल्ला रही थी। उसने सूचक को बताया कि अपीलार्थी ने उस पर चाकू से प्रहार किया था और उसका हाथ–पैर काट दिया था। सूचक ने आगे सूचित किया कि नूनी मुंडाइन कुछ समय के लिए जीवित थी और वह बोलने की दशा में थी और तत्पश्चात वह बेहोश हो गयी और उसकी मृत्यु हो गयी।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री जैद अहमद ने अनेक आधारों पर आक्षेपित निर्णय का विरोध किया। उन्होंने निवेदन किया कि किसी ने मृतका पर प्रहार होते नहीं देखा था। उपहतियाँ शरीर के महत्वपूर्ण अंगों पर नहीं थी और, इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि मृतका की हत्या करने का आशय था। आगे, यदि उसका समुचित इलाज करवाया जाता, वह बच सकती थी। गवाहों के साक्ष्य में विरोधाभास और अंतर है। जब दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपीलार्थी का परीक्षण किया गया था, उसने अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् किया था। उन्होंने यह निवेदन भी किया कि बचाव पक्ष ने अ॰ सा॰ 3 को सुझाव दिया था कि दो ओराँव लड़कों, जो नूनी मुंडाईन को उसके ससुराल से लाने गए थे, ने अंतरंग संबंध और उनके एवं मृतका के बीच झगड़ा होने के कारण शायद उसकी हत्या कर दी थी। अत:, उन्होंने निवेदन किया कि अभियोजन अपीलार्थी के विरुद्ध समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे मामला सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुआ है।

4. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता श्री अपरेश कुमार ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया।

5. अभियोजन ने आठ गवाहों का परीक्षण किया है। अ॰ सा॰ 1 और 2 मृत्यु समीक्षा के गवाह हैं; अ॰ सा॰ 3 सूचक है, अ॰ सा॰ 4 डॉक्टर है; अ॰ सा॰ 5, 6 और 7 ग्रामीण हैं; अ॰ सा॰ 8 अन्वेषण अधिकारी है।

6. डॉक्टर ने मृतका पर तेज धार वाले हथियार से कारित चार कटने की–उपहतियों को पाया था। उसकी बायीं अगली बाँह बीच से काट दी गयी थी। अन्य कटने का जख्म पैर के निचले भाग से तलवा तक जाते हुए बाएँ निचले पैर के बाहरी सतह के ऊपर 6" x 4" का अस्थि तक गहरा था। बायीं कोहनी और दाएँ पैर के डोरसम के ऊपर अन्य छिन्न जख्म उपस्थित थे। उनके मत में, मृत्यु का कारण आघात और हेमरेज था और भारी तेज धार वाले हथियार द्वारा उपहतियाँ कारित की गयी थी। उपहति सं॰ 1 और 2 गंभीर थी और उपहति सं॰ 3 और 4 सरल प्रकृति की थी।

7. अ॰ सा॰ 3 ने मामले का पूरा समर्थन किया जैसा प्राथमिकी में वर्णन किया गया है कि जब वह अपने घर के बाहर खड़ी थी, उसने मृतका की चीख सुनी; वह दौड़ कर घर के अंदर गयी; उसने अपीलार्थी को दबिया (तेज धार वाला हथियार) लिए भागते देखा; तब उसने अपनी बहन को उसके हाथों और पैरों पर कटने की तीक्ष्ण उपहतियों के साथ खून में लथपथ पाया; मृतका ने उसे बताया कि अपीलार्थी ने उस पर उपहतियाँ कारित किया था; उसके हल्ला करने पर अनेक लोग घटनास्थल पर जमा हुए; पुलिस ने रक्तरंजित वस्त्र और मिट्टी जब्त किया; उसने इस सुझाव से इनकार किया कि दो लड़कों, जो मृतका को उसके ससुराल से लाने गए थे, का मृतका के साथ अंतरंग संबंध था और उनके बीच हाथापाई के कारण शायद उन्होंने घटना को अंजाम दिया था।

8. अ॰ सा॰ 6 ने कहा कि मृतका ने उसे बताया था कि अपीलार्थी ने उस पर उक्त उपहतियों को कारित किया था किंतु अपने प्रति परीक्षण में, उसने कहा कि उसकी मृतका के साथ बातचीत नहीं हुई थी; और कि वह बेहोश थी। किंतु केवल ऐसे बयान पर, अभियोजन मामले पर अविश्वास नहीं किया जा सकता है।

9. अ॰ सा॰ 7 ने अपने मुख्य परीक्षण और प्रति परीक्षण में कहा कि मृतका ने सभी व्यक्तियों के समक्ष कहा था कि अपीलार्थी ने उस पर उक्त उपहतियों को कारित किया था।

10. अ॰ सा॰ 8 अन्वेषण अधिकारी ने अन्य बातों के साथ कहा कि उसने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 161 के अधीन अ॰ सा॰ 6 और 7 का बयान दर्ज किया था। केस डायरी से सत्यापन पर, यह प्रतीत होता है कि पुलिस द्वारा अ॰ सा॰ 5, 6 और 7 का बयान दर्ज किया गया था। यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 5 और 7 के बयान में कुछ भ्रम था जब उन्होंने यह कहा कि पुलिस ने उनका बयान दर्ज नहीं किया था, क्योंकि इन्हें केस डायरी में पाया गया है।

11. अपीलार्थी ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपने बयान में अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक किया था किंतु इसके समर्थन में अभिलेख पर कुछ नहीं लाया गया है।

12. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री जैद अहमद ने अंत में निवेदन किया कि अधिकाधिक अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 326 अथवा धारा 304 के अधीन दोषसिद्ध किया जा सकता है। उन्होंने **पंजाब राज्य बनाम बलकर सिंह एवं अन्य, 1998 SCC (Cri) 399,** में प्रकाशित मामले को निर्दिष्ट किया।

13. हम इस निवेदन को स्वीकार करने के इच्छुक हैं। डॉक्टर ने नहीं कहा है कि उक्त उपहतियाँ प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी। यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं है कि मृतका के इलाज का कोई प्रयास किया गया था। सूचक ने कहा कि डेढ़ घंटे बाद उसकी मृत्यु हो गयी जबकि अ॰ सा॰ 5 ने कहा कि उसकी मृत्यु 4 बजे हुई थी। यह भी प्रतीत होता है कि यदि मृतका की हत्या करने का आशय होता, अपीलार्थी ने उसके शरीर के महत्वपूर्ण अंग पर उपहतियों को कारित किया होता, किंतु उपहतियाँ हाथों और पैरों पर कारित की गयी है जिनमें से दो गंभीर और दो सामान्य प्रकृति की हैं। आगे प्रतीत होता है कि मृत्यु नस कटने के परिणामस्वरुप रक्तस्राव होने से हुई थी। इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, हम अपीलार्थी की दोषसिद्धि को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 से धारा 304 में संपरिवर्तित करने के इच्छुक हैं।

14. जहाँ तक दंडादेश का संबंध है, श्री जैद अहमद ने सूचित किया है कि अपीलार्थी अब तक 11 वर्षों से अधिक समय से अभिरक्षा में बना हुआ है। तद्नुसार, उसे उसके द्वारा पहले ही भुगत ली गयी अवधि तक के लिए दंडादेशित किया जाता है।

15. परिणामस्वरुप, यह अपील अंशत: अनुज्ञात की जाती है जैसा ऊपर उपदर्शित किया गया है। अपीलार्थी को तुरन्त निर्मुक्त किया जाए यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

सोहन लाल टिबरीवाल

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 1226 of 2004. Decided on 21st February, 2012.

सीमा शुल्क अधिनियम, 1962—धाराएँ 11 एवं 137 सह-पठित बिहार वित्त अधिनियम 1981 की धारा 49—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—चावल का अवैध निर्यात–अभियोजन के लिए मंजूरी के बिना सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 11 के अधीन संज्ञान–आदेश जिसके अधीन सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 11 के अधीन संज्ञान लिया गया है बिल्कुल दोषपूर्ण है–इसी प्रकार से, न्यायालय ने मंजूरी के आदेश के बिना जैसा बिहार वित्त अधिनियम की धारा 49(5) के अधीन प्रतिष्ठापित किया गया है, संज्ञान लिया है–संपूर्ण कार्यवाही अभिखंडित–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 12 से 18)

अधिवक्तागण.–Mr. S.N. Sharma, For the Petitioner; APP, For the State.

आदेश

वि॰ प॰ सं॰ 2 के लिए उपस्थित अधिवक्ता द्वारा कथन किया गया है कि चूँकि वि॰ प॰ सं॰ 2 सेवानिवृत्त हो गया है, वह इस मामले का अनुसरण करने का इच्छुक नहीं हैं।

2. चूँकि राज्य भी पक्षकार है, राज्य के लिए उपस्थित अधिवक्ता अभियोजन के मामले का अनुसरण करेंगे।

3. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

4. यह आवेदन सी॰ ओ॰ केस सं॰ 13 वर्ष 1998 में तत्कालीन विशेष न्यायाधीश, आर्थिक अपराध, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 1.12.2000 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन बिहार वित्त अधिनियम, 1981 की धारा 49 के अधीन और सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 11 के अधीन भी याची के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान लिया गया है।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अभियोजन का मामला यह है कि अब मेसर्स संजय इंडस्ट्रीज, कहलगाँव से मेसर्स एम॰ आर॰ इंटरप्राइजेज, कालियाचक, मालदा तक दो ट्रक चावल ढो रहे थे, उन्हें पाकुड़ में रास्ते में पकड़ा गया था और इस अभिकथन पर कि चावल को बांग्लादेश निर्यात किया जा रहा था, आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन और सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 11 के अधीन भी पाकुड़ (एन॰) पी॰ एस॰ केस सं॰ 195 वर्ष 1998 दर्ज किया गया था।

6. मामले का अन्वेषण किया गया था। अन्वेषण पूरा करने के बाद, पूर्वोक्त अपराधों के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया गया था। आरोप-पत्र दाखिल किए जाने पर आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराधों से संबंधित मामला विशेष न्यायाधीश के न्यायालय को अंतरित किया गया था।

7. साथ ही, आरोप पत्र की प्रति विशेष न्यायाधीश, आर्थिक अपराध, धनबाद को भेजी गयी थी जिस पर सी॰ ओ॰ केस सं॰ 13 वर्ष 1998 के रूप में मामला दर्ज किया गया था। उस पर, बिहार वित्त अधिनियम, 1981 की धारा 49 के अधीन और सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 11 के अधीन भी अपराधों का संज्ञान लिया गया था। वही आदेश चुनौती के अधीन है।

8. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एस॰ एन॰ शर्मा निवेदन करते हैं कि न तो बिहार वित्त अधिनियम, 1981 की धारा 49 के अधीन और न ही सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 11 के अधीन अपराध बनता है, फिर भी पूर्वोक्त अपराधों के अधीन अपराधों का संज्ञान लिया गया है जो बिल्कुल दोषपूर्ण है।

9. आगे निवेदन किया गया था कि संज्ञान का आदेश इस तथ्य के कारण भी दोषपूर्ण है कि संज्ञान

लिए जाने के पहले सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 137 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार सक्षम प्राधिकारी द्वारा अभियोजन की मंजूरी प्रदान नहीं की गई थी।

10. आगे इंगित किया गया था कि इसी प्रकार से बिहार वित्त अधिनियम के अधीन अपराध का संज्ञान बिहार वित्त अधिनियम, 1981 की धारा 49 (5) के निबंधनानुसार सक्षम प्राधिकारी द्वारा किसी मंजूरी के बिना नहीं लिया जा सकता है और इस प्रकार संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

11. इन तथ्यों और परिस्थितियों तथा ऊपर निर्दिष्ट विधि के प्रावधान को ध्यान में लेने पर मैं याची की ओर से किए गए निवेदन में वस्तुतः सार पाता हूँ।

12. यहाँ वर्तमान मामले में, अभियोजन के लिए मंजूरी के बिना सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 11 के अधीन संज्ञान लिया गया है, जबकि धारा 137 के अधीन धाराओं 132, 133, 134, 135 और 135A के अधीन अपराध का संज्ञान लेने के लिए मंजूरी की आवश्यकता होती है। यहाँ इंगित किया जाए कि यद्यपि सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 11 के अधीन संज्ञान लिया गया है, किंतु सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 11 अधिसूचित मालों के आयात अथवा निर्यात को प्रतिषिद्ध करने की शक्ति से संबंधित है।

> ***lhek 'kYd vfèkfu;e] 1962 dh èkkjk 11*** *vucfèkr djrh g fd ;fn dn ljdkj lr"V g fd mièkkjk (2) e fofufn"V ç;ktuk e l fdlh d fy, ,lk djuk vko';d g] ;g ljdkjh xtV e vfèklpuk }kjk fdlh fofufn"V o.ku d ekyk dk vk;kr vFkok fu;kr ijh rjg l vFkok ,lh 'krk] tlk vfèklpuk e fofufn"V fd;k tk ldrk g] d vè;èkhu] çfrfl) dj ldrh gA*

13. इस स्थिति के अधीन, धारा 11 दंड प्रावधान प्रतीत नहीं होती है।

14. इन स्थितियों के अधीन आदेश जिसके अधीन सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 11 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया है, बिल्कुल दोषपूर्ण है।

15. आगे, मैं पाता हूँ कि प्रावधान जैसा बिहार वित्त अधिनियम, 1981 की धारा 49 (5) के अधीन प्रतिष्ठापित है, मंजूरी प्रदान करने के बारे में कहती है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"dkb U;k;ky; dfe'uj dh io etjh d flok, bl Hkkx vFkok bld vèkhu cuk, x, fu;ek d vèkhu fdlh vijkèk dk lKku ugh yxk vkj çFke J.kh d nMkfèkdkjh d U;k;ky; l fuEu U;k;ky; ,l fdlh vijkèk dk fopkj.k ugh djxkA fcgkj foÙk vfèkfu;e dh èkkjk 49 (5) d fucèkuku lkj fdlh etjh d fcuk èkkjk 149 d vèkhu vfHk;ktu fcYdy voèk gkxkA**

16. किंतु यहाँ वर्तमान मामले में, न्यायालय ने मंजूरी के आदेश के बिना, बिहार वित्त अधिनियम की धारा 49 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया है।

17. इस प्रकार, तत्कालीन विशेष न्यायाधीश, आर्थिक अपराध, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 1.12.2000 के आदेश सहित सी॰ ओ॰ केस सं॰ 13 वर्ष 1998 की संपूर्ण कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

18. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

सागर गोस्वामी

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal D.B. No. 1323 of 2003. Decided on 15th March, 2012.

सत्र विचारण केस सं॰ 66 वर्ष 2002 में अपर न्यायिक कमिश्नर, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ VII, राँची द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 6.8.2003 और दिनांक 8.8.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—पत्नी की हत्या–आजीवन कारावास–फर्दबयान को मृत्युकालिक कथन के रूप में लिया गया और उस आधार पर अपीलार्थी को दोषसिद्धि किया गया–फर्दबयान को मृत्युकालिक कथन के रूप में नहीं माना जा सकता है–अन्वेषण अधिकारी ने फर्दबयान पर किसी डॉक्टर अथवा अस्पताल में किसी अन्य व्यक्ति का हस्ताक्षर नहीं लिया है–अपीलार्थी और मृतका के पुत्र ने अभिसाक्ष्य दिया कि स्वयं मृतका ने अपने ऊपर किरासन तेल डाला था और स्वयं को जलाया था–अन्वेषण अधिकारी स्वयं विरोधाभासी बयान दे रहा है–अपीलार्थी संदेह का लाभ पाने योग्य है–दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त।

(पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. G.K. Sinha, For the Appellant; Mr. Ravi Prakash, For the State.

न्यायालय द्वारा.–यह अपील सत्र विचारण केस सं॰ 66 वर्ष 2002 में अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए और उसको कठोर आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए अपर न्यायिक आयुक्त, फास्ट ट्रैक कोर्ट VII, राँची द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 6.8.2003 और दिनांक 8.8.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है।

2. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि उर्मिला देवी ने अ॰ सा॰ 6 के समक्ष दिनांक 20.5.2001 को प्रातः लगभग 8.45 बजे अस्पताल में इस प्रभाव का फर्दबयान दर्ज किया कि अपीलार्थी (उसका पति) चना बेचा करता था और जब वह घरेलू खर्च के लिए धन मांगती थी, वह उसे गाली देता था और उस पर प्रहार करता था। दिनांक 19.5.2001 को रात्रि लगभग 8 बजे जब वह लौटा और उसने घरेलू खर्च के लिए धन मांगा, उसने उसे गाली देना और उस पर प्रहार करना शुरू किया। तत्पश्चात, जब वह उसे खाना परोसने गयी, अपीलार्थी ने ढिबरी से उसकी पीठ पर किरासन तेल डाला और उसके कपड़ों में आग लगा दिया। वह मदद के लिए चिल्लायी। पड़ोसी जमा हुए। उसने जलने की उपहतियाँ पायी। अपीलार्थी ने पानी डालकर आग बुझाया। उसके देवर और पड़ोसियों द्वारा उसे अस्पताल ले जाया गया, जहाँ उसका इलाज हो रहा था।

इलाज के क्रम में, दिनांक 1.6.2001 को अर्थात् लगभग 10 दिन बाद उसकी मृत्यु हो गयी।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री जी॰ के॰ सिन्हा ने अनेक आधारों पर दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय का विरोध किया, जबकि राज्य के विद्वान अधिवक्ता श्री रवि प्रकाश ने इसका समर्थन किया।

4. पक्षों को विस्तारपूर्वक सुनने और अभिलेखों का परिशीलन करने के बाद, हम निम्नलिखित कारणों से अपीलार्थी को संदेह का लाभ देने के इच्छुक हैं:–

इसपर कोई विवाद नहीं है कि लगभग 10 दिनों बाद इलाज के दौरान जलने की उपहतियों के कारण अपीलार्थी की पत्नी की मृत्यु हो गयी किंतु प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी ने उस जलने की उपहतियों

को कारित किया है जैसा फर्दबयान में अभिकथित किया गया है। फर्दबयान को मृत्युकालिक कथन के रूप में लिया गया है और मुख्यत: उस आधार पर, अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया गया है।

फर्दबयान को मृत्युकालिक कथन के रूप में मानना संभव नहीं है। इसे दिनांक 20.5.2001 को दिया गया था किंतु यह लगभग 10 दिन बाद पुलिस थाना पहुँचा था। अ॰ सा॰ 6 पुलिस अधिकारी है जिसे फर्दबयान दर्ज करने वाला बताया गया है किंतु, आई॰ ओ॰, अ॰ सा॰ 7 द्वारा उसका परीक्षण नहीं किया गया था। अ॰ सा॰ 6 ने यह नहीं कहा था कि क्या मृतका फर्दबयान देने की अवस्था में थी। उसने यह नहीं कहा था कि फर्दबयान दर्ज करने के लिए किस प्रकार वह अस्पताल गया था और किसके अनुदेश पर अथवा किस प्राधिकार के अधीन उसने फर्दबयान दर्ज किया था। उसने फर्दबयान पर किसी डॉक्टर अथवा अस्पताल में किसी व्यक्ति का हस्ताक्षर नहीं लिया है।

फर्दबयान पर मृतका के भाई अ॰ सा॰ 3 का हस्ताक्षर लिया गया था किंतु अ॰ सा॰ 3 ने अन्य बातों के साथ कहा कि जब पुलिस पहुँची, उसकी बहन बेहोश थी और उसने पुलिस को फर्दबयान दर्ज करते नहीं देखा था और कि जब पुलिस लौट रही थी, उसकी माता ने कहा कि पुलिस ने कागज पर कुछ लिखने के बाद उसकी बहन के अंगूठे का निशान लिया था। इस गवाह ने यह भी कहा कि अपीलार्थी ने उसके इलाज के दौरान मृतका को खून दिया था। उसने यह भी कहा कि जब उसने मृतका से पूछा था, उसने कहा कि वह दुर्घटनावश जल गयी थी। इस गवाह को पक्षद्रोही घोषित नहीं किया गया था। उसने यह भी कहा कि मृतका ने उसे यह नहीं कहा था कि अपीलार्थी ने उस पर जलने की उपहतियाँ कारित की है, क्योंकि वह चना बेचने गया था। इस गवाह ने आगे कहा कि उसकी बहन और बच्चों द्वारा हल्ला करने पर उसकी भाभी और अन्य लोग आए और पानी डालकर आग बुझाया।

अ॰ सा॰ 1 अपीलार्थी और मृतका की पुत्री है। वह बालिका गवाह है। उसने यह नहीं कहा था कि अपीलार्थी ने उसकी माता को जलाया था। उसने कहा कि उसकी माता मदद के लिए चिल्ला रही थी जब वह जल रही थी। अपीलार्थी आग बुझाने का प्रयास कर रहा था।

अ॰ सा॰ 2 अपीलार्थी और मृतका का पुत्र है। उसने कहा कि मृतका ने उसे बताया था कि वह दुर्घटनावश जल गयी थी। इस गवाह को पक्षद्रोही घोषित किया गया था किंतु उसने पुन: प्रतिपरीक्षण में कहा कि मृतका ने उसे बताया था कि उसने स्वयं किरासन तेल डाला था और आग लगायी थी क्योंकि वह परेशान थी। जब न्यायालय ने उससे पूछा कि क्या उसने किसी को कहा था कि अपीलार्थी ने उसकी माता को जलाया है, उसने इनकार किया कि किसी ने उसे यह नहीं कहा था।

यह आश्चर्यजनक है कि अ॰ सा॰ 6 द्वारा दिनांक 20.5.2001 को दर्ज किया गया फर्दबयान 10 दिन बाद दिनांक 30.5.2001 को अ॰ सा॰ 5 के पास पहुँचा था। यह अ॰ सा॰ 5, आई॰ ओ॰ अन्वेषण अधिकारियों में से एक है। अ॰ सा॰ 6, वह पुलिस अधिकारी है जिसने मृतका का तात्पर्यित फर्दबयान दर्ज किया था। उसने कहा कि उसने फर्दबयान में डॉक्टर, नर्स अथवा किसी अन्य व्यक्ति जिसके समक्ष इसे लिया गया था, का नाम प्रकट नहीं किया था। वह यह नहीं कह सका था कि किस प्राधिकार पर वह अस्पताल पहुँचा और फर्दबयान दर्ज किया। अ॰ सा॰ 7 पश्चातवर्ती अन्वेषण अधिकारी है। उसने स्वयं का खंडन किया जब उसने कहा कि उसने मृतका का बयान लिया और तब उसने कहा कि उसने उसका बयान नहीं लिया था। उसने अस्पताल में डॉक्टर अथवा नर्स का बयान नहीं लिया था।

5. ऊपर गौर किए गए तथ्यों और परिस्थितियों में, हम संतुष्ट हैं कि अपीलार्थी संदेह का लाभ पाने का हकदार है।

6. परिणामस्वरुप, सत्र विचारण केस सं॰ 66 वर्ष 2002 में अपर न्यायिक कमिश्नर, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ VII, राँची द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध पारित क्रमश: दिनांक 6.8.2003 और 8.8.2003 का

दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी को तुरन्त कारा से निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

मधु कोड़ा उर्फ मधु कोरा

cuke

झारखंड राज्य, सी० बी० आई० के माध्यम से

B.A. No. 9658 of 2011. Decided on 5th April, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 439—जमानत–याची राज्य का भूतपूर्व मुख्यमंत्री है और भ्रष्टाचार के आरोपों का सामना कर रहा है–आज की तिथि तक सी० बी० आई० द्वारा याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया है–याची दिनांक 30.11.2009 से पहले से ही अभिरक्षा में है–महत्तम दंड जो याची को अधिनिर्णीत किया जा सकता है, सात वर्षों का कारावास है–सह-अभियुक्त को पहले ही जमानत प्रदान किया जा चुका है–जमानत प्रदान किया गया। (पैराएँ 11, 14 से 16)

निर्णयज विधि.–(2002) 9 SCC 372; (2012) 1 SCC 40—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. B. Mukherjee, For the Petitioner; Md. Mokhtar Khan, For the State through CBI.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और सी० बी० आई० के विद्वान स्थायी अधिवक्ता को सुना गया।

2. याची को आर० सी० 5 (A)/2010/AHD-R के संबंध में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 9 और 13 (2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) और भारतीय दंड संहिता की धारा 120B के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त बनाया गया है।

3. याची के विरुद्ध खान मंत्री के रूप में और बाद में इस राज्य के मुख्यमंत्री के रूप में अपने कार्यकाल के दौरान आस्तियों और धन की विपुल राशि जमा करने का अभिकथन है। यह भी उल्लिखित किया जा सकता है कि इस याची का जमानत आवेदन याची के विरुद्ध अभिकथनों को विचार में लेते हुए बी० ए० सं० 3843 वर्ष 2010 में दिनांक 2.7.2010 के विस्तृत आदेश द्वारा पहले अस्वीकार कर दिया गया था। बाद में, याची संसद के सत्र में भाग लेने के लिए उसको अनुमति देने के लिए अनंतिम जमानत के लिए इस न्यायालय के समक्ष आया था जिसे भी बी० ए० सं० 8421 वर्ष 2010 में दिनांक 4.11.2010 के आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

4. मामले के संक्षिप्त तथ्यों का उल्लेख करना आवश्यक है। किसी राजीव शर्मा द्वारा परिवाद मामला दाखिल किया गया था जिसे परिवाद केस सं० 1 वर्ष 2009 के रूप में दर्ज किया गया था और दं० प्र० सं० की धारा 156 (3) के प्रावधानों के अधीन पुलिस केस के संस्थापन के लिए भेजा गया था जिसके आधार पर भा० दं० सं० की धाराओं 409, 420, 423, 424, 465 और 120B और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराओं 7, 10, 11 और 13 के अधीन अपराध के लिए याची और अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध निगरानी पी० एस० केस सं० 9 वर्ष 2009 संस्थापित किया गया था। यह प्रतीत होता है कि उक्त निगरानी मामले में, पूर्वोक्त अपराधों के लिए याची के विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल किया गया था। डब्ल्यू० पी० (पी० आई० एल०) सं० 4700 वर्ष 2008 वाली रिट याचिका दाखिल की गयी थी और

उसमें पारित दिनांक 4.8.2010 के आदेश के अनुसरण में, मामले का अन्वेषण सी॰ बी॰ आई॰ को न्यस्त किया गया था जिस पर दिनांक 11.8.2010 को वर्तमान मामला संस्थापित किया गया था।

5. इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा इस आर॰ सी॰ 5 (A)/2010/AHD-R के संस्थापन के पहले बी॰ ए॰ सं॰ 3843 वर्ष 2010 में दिनांक 2.7.2010 के आदेश द्वारा इस याची के पूर्विक जमानत आवेदन को अस्वीकार कर दिया गया था। बाद में, मामले के अन्वेषण के बाद सी॰ बी॰ आई॰ ने भारतीय दंड संहिता की धारा 120B और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 9 और 13(2) सह-पठित धारा 13(1)(d) के अधीन अपराधों के लिए दिनांक 12.11.2010 को याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया।

6. याची ने यह निवेदन करते हुए कि वह दिनांक 30.11.2009 से अभिरक्षा में है और इस प्रकार, वह पहले ही लगभग 2 वर्ष पाँच माह कारा में बीता चुका है, जमानत के लिए प्रार्थना फिर से किया है।

7. बी॰ ए॰ सं॰ 3843 में दिनांक 2.7.2010 के पूर्विक आदेश में याची के विरुद्ध अभिकथनों को विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है जिसे दोहराने की आवश्यकता नहीं है। यह उल्लेख करना पर्याप्त है कि याची फरवरी, 2005 से सितंबर, 2006 तक झारखंड राज्य में खान एवं सहकारिता मंत्री के रूप में कार्य कर रहा था और सितंबर, 2006 से वह झारखंड राज्य का मुख्यमंत्री बन गया और इस रूप में अगस्त, 2008 तक पद पर बना रहा। वर्ष 2005 में विधान सभा चुनाव लड़ने के लिए अपने नामांकन कागजातों को दाखिल करते समय उसने अपने और अपने परिवार के सदस्यों के कब्जे में केवल 12,65,615/- रुपयों की अपनी आस्तियों को घोषित किया था और अभिकथित किया गया है कि चेक अवधि अर्थात् फरवरी, 2005 से अगस्त, 2008 तक के दौरान अन्य अभियुक्तगण अर्थात् बिनोद कुमार सिन्हा, सुनील कुमार सिन्हा और संजय कुमार चौधरी जो उसके निकट सहयोगी थे, के साथ दुरभिसंधि करके भ्रष्टाचार की सारी हदों को पार किया, उक्त अवधि के दौरान न केवल भारत में बल्कि दुबई, थाइलैंड, सिंगापुर, इंडोनेशिया और लाइबेरिया जैसे अन्य देशों में विपुल आस्तियों, चल और अचल, को जमा किया। याची के कार्यकाल के दौरान 44 बड़े औद्योगिक घरानों के साथ एम॰ ओ॰ यू॰ किया गया था जिसमें घूस के रूप में याची को करोड़ों रुपए दिए गए थे। निगरानी विभाग द्वारा मामले का अन्वेषण किया गया था और याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था, जिससे यह प्रतीत हुआ कि याची की आमदनी के ज्ञात स्रोत के अननुपातिक 1,40,00,000/- (एक करोड़ चालीस लाख) रुपयों की राशि पायी गयी थी और निगरानी विभाग द्वारा दाखिल आरोप पत्र के आधार पर इस याची का जमानत आवेदन दिनांक 2.7.2010 के आदेश द्वारा पहले अस्वीकार कर दिया गया था।

8. याची के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय का ध्यान याची के विरुद्ध सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा दाखिल आरोप-पत्र की ओर आकृष्ट किया है जो दर्शाएगा कि याची ने चाईबासा में बिनोद सिन्हा के माध्यम से किसी सुनील कुमार सिन्हा के नाम में 24 डिसमिल भूमि खरीदी थी, सुनील कुमार सिन्हा के नाम में 18.82/- लाख रुपयों के लिए 2.14 एकड़ भूमि खरीदी गयी थी, 38.88/- लाख रुपयों के लिए सुनील कुमार सिन्हा के नाम में 1.62 एकड़ भूमि खरीदी गयी थी और 38 लाख रुपयों के लिए सुनील कुमार सिन्हा के नाम में 76 एकड़ भूमि खरीदी गयी थी। आगे अभिकथित किया गया है कि याची मधु कोड़ा की ओर से बिनोद कुमार सिन्हा और संजय कुमार चौधरी द्वारा झारखंड में लोहे की खानों को आवंटित करवाने के लिए किसी मेसर्स कोर ग्रुप, मुंबई से अपने व्यक्तिगत प्रभाव का उपयोग करके अवैध परितोषण के रूप में 13 करोड़ रुपया प्राप्त किया गया था। आरोप-पत्र आगे दर्शाता है कि यद्यपि मेसर्स कोर ग्रुप, मुंबई से अवैध परितोषण के रूप में 13 करोड़ रुपया लिया गया था, किंतु झारखंड राज्य द्वारा मेसर्स कोर स्टील इंडस्ट्रीज प्रा॰ लि॰ के खनन पट्टा अधिनिर्णीत करने के लिए सर्वे नक्शों की अनुपलब्धता

और अन्य तकनीकी कारणों को उद्धृत करते हुए भारत सरकार को कोई अनुशंसा नहीं की गयी थी। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि मुख्यमंत्री के रूप में याची के कार्यकाल के दौरान मेसर्स कोर इंडस्ट्रीज प्रा॰ लि॰ के पक्ष में पट्टा के आवंटन की अनुशंसा नहीं करने के लिए इन कारणों को उद्धृत किया गया था और सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इस निवेदन का खंडन नहीं किया गया है। आरोप-पत्र आगे दर्शाएगा कि जब मेसर्स कोर ग्रुप, मुंबई के पक्ष में कोई अनुशंसा नहीं की गयी थी, उन्होंने संजय चौधरी से अपना धन वापस मांगा, जिसने उसके स्वामी को केवल 3.35 करोड़ रुपया वापस किया किंतु यह कथन करते हुए कि इसे याची को दे दिया गया था, शेष राशि को वापस नहीं दिया गया था। इस प्रकार, मुख्यत: यह इस अभिकथन कि याची ने ऐसी विपुल राशि को अवैध परितोषण के रूप में प्राप्त किया था, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 120B सह-पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 9 और धारा 13 (2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था।

9. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 9 पाँच वर्षों के महत्तम दंड द्वारा दंडनीय है जबकि भ्रष्टाचार अधिनियम की धारा 13 (2) सात वर्षों के महत्तम दंड द्वारा दंडनीय है और याची जो पहले से ही अभिरक्षा में लगभग 2 वर्ष 5 माह बिता चुका है, इस प्रकार, जमानत पर निर्मुक्त किए जाने का हकदार है। आगे इंगित किया गया है कि अन्य सह-अभियुक्त अर्थात् कमलेश कुमार सिंह उर्फ कमलेश सिंह, जो याची के कैबिनेट में एक मंत्री था और जो याची के साथ इस मामले में सह-अभियुक्त है, को बी॰ ए॰ सं॰ 9220 वर्ष 2010 में दिनांक 13.12.2010 के आदेश द्वारा मुख्यत: इस आधार पर जमानत प्रदान किया गया है कि उक्त याची एक वर्ष से अधिक समय तक अभिरक्षा में बना हुआ था जब इस न्यायालय द्वारा उसे जमानत प्रदान किया गया था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने याची को भी जमानत देने की प्रार्थना की है।

10. दूसरी ओर, सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता ने जमानत की प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि यद्यपि अभी तक संग्रहित की गयी सामग्रियों के आधार पर भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 9 और धारा 13 (2) के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया है, किंतु तथ्य बना रहता है कि मुख्य मामला अभी भी अन्वेषण के अधीन है। सी॰ बी॰ आई॰ ने इस मामले में प्रतिशपथ पत्र भी दाखिल किया है जिसमें याची के विरुद्ध अभिकथन दोहराया गया है और कथन किया गया है कि मामला राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव रखता है और एक अभियुक्त अभी भी फरार है, जो वर्तमान में दुबई में रह रहा है और उसके सम्बंध में प्रत्यर्पण प्रक्रिया चल रही है। प्रतिशपथ पत्र में यह कथन भी किया गया है कि मामले का अन्वेषण पूरे भारत और अन्य अनेक देशों तक फैला है जिस कारण अन्वेषण काफी समय ले रहा है। सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 409, 420, 423, 465 के अधीन अपराध निर्मित करने वाले याची के विरुद्ध किए गए अभिकथनों पर विश्वास किया और निवेदन किया कि उन अपराधों के संबंध में अन्वेषण को समय के भीतर इस तथ्य के कारण पूरा नहीं किया जा सका था कि मामले का अन्वेषण अनेक देशों तक फैला है। तद्नुसार, सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता ने याची की जमानत प्रार्थना का विरोध किया है। किंतु तथ्य बना रहता है कि आज की तिथि तक याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया है, यद्यपि याची स्वयं दिनांक 30.11.2009 से अभिरक्षा में है।

11. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने के बाद मैं पाता हूँ कि यद्यपि याची के विरुद्ध अकूत संपत्ति जमा करने के अभिकथन हैं, किंतु तथ्य बना रहता

है कि भारतीय दंड संहिता के प्रावधानों के अधीन याची के विरुद्ध अभिकथित पूर्वोल्लिखित अपराधों के लिए सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा आज की तिथि तक आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया है। केवल भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 120B सह-पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 9 और धारा 13 (2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया है। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 9 के अधीन अपराध उस अवधि के कारावास से जो छह माह से कम की नहीं होगी किंतु जिसे पाँच वर्षों तक बढ़ाया जा सकता है और जुर्माना से भी दंडनीय है जबकि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(2) उस अवधि के कारावास से जो एक वर्ष से कम की नहीं होगी, किंतु जिसे सात वर्षों तक बढ़ाया जा सकता है और जुर्माना से भी दंडनीय है और याची पहले ही लगभग दो वर्ष पाँच माह के कारावास की अवधि भुगत चुका है।

12. मैं इस मोड़ पर, सह-अभियुक्त कमलेश कुमार सिंह को जमानत प्रदान करते हुए बी॰ ए॰ सं॰ 9220 वर्ष 2010 में इस न्यायालय द्वारा विश्वास किए गए निर्णय को उद्धृत करना चाहूँगा। **लालू प्रसाद उर्फ लालू प्रसाद यादव बनाम झारखंड राज्य जगन्नाथ मिश्रा के साथ, (2002)9 SCC 372,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अधिकथित किया है:-

> *"6. pfd vihykFkhx.k fcgkj d pkjk ?kkVkyk l mnHkr ekeyk d lcèk e Ng ekg l vfèkd le; l igy l gh dkjk e g] vfHkopu fd;k x;k Fkk fd bl h ekey e vrxLr vU; vfHk;Dr dk çnku fd, x, ykHk dk bu 0;fDr;k dk Hkh çnku fd;k tk;A fnukd 8.5.2001 l fcgkj d pkjk ?kkVkyk e vrxLr vU; vfHk;Drx.k Ng ekg l vfèkd le; l dkjk e igy l gh cu g, gA bl U;k;ky; u ekeyk dh bu J[kykvk e vfHk;kftr vfHk;Drx.k e l fdl h d lcèk e] ;fn o Ng ekg vkj vfèkd d fy, dkjk e cu jg Fk] ek= bl vkèkkj ij tekur vkonu vLohdkj ugh fd;k g fd rc l e[; "kM;= dh fdl h vU; 'kk[kk ekey dk nt fd;k x;k g vFkok mld fo#) vkjki&i= nkf[ky Hkh fd;k x;k gA*
>
> *7. ;kph d fo#) dfFkr vijkèkk e lcl xHkhj vijkèk Hk"Vkpkj fuokj.k vfèkfu;e dh èkkjk 13g tk lkr o"kk d egÙke nM d lkFk nMuh; gA bl rF; fd ;khx.k vc rd Ng ekg l vfèkd dh vofèk d fy, (tk v'krh vU; lcfèkr ekeyk e Hkh fopkj.k io fujkèk lfEefyr djrh g) dkjk e jg Fk lfgr ekey d x.kkx.k ij fopkj dju ij ge ugh le>r g fd fopkj.k io dnh d :i e mudk vkx fujkèk bl ekey e vko';d gkxkA***

13. कुख्यात 2G स्पेक्ट्रम मामले में अभियुक्त को जमानत प्रदान करते हुए **संजय चंद्रा बनाम सी॰ बी॰ आई॰, (2012)1 SCC 40,** के हाल के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने इस दृष्टिकोण को अनुमोदित किया है।

14. लालू प्रसाद (ऊपर) के मामले में दिए गए निर्णय पर विश्वास करते हुए इस न्यायालय ने कतिपय शर्तों जो शर्त (a) से (e) के रूप में आदेश में वर्णित किए गए हैं, के साथ सह-अभियुक्त कमलेश सिंह को जमानत प्रदान किया था, क्योंकि सी॰ बी॰ आई॰ ने आशंका जतायी थी कि उक्त अभियुक्त को जमानत पर रिहा करने से सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा किए जा रहे अन्वेषण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। अपने प्रति शपथ पत्र में सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा वर्तमान मामले में भी उक्त आशंका जतायी गयी है। किंतु, पूर्वोल्लिखित तथ्यों और परिस्थितियों में इस तथ्य को विचार में लेते हुए कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं

409, 420, 423, 424 और 465 के अधीन अपराधों के लिए सी॰ बी॰ आई॰ ने तीन माह से कहीं अधिक समय के अवसान के बावजूद याची के विरुद्ध अब तक आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया है, केवल इस प्रत्याशा में कि अन्वेषण के दौरान भी उक्त आरोप के लिए याची के विरुद्ध पर्याप्त सामग्री मिल सकती है, याची को अनिश्चितकाल के लिए कारा में निरुद्ध नहीं किया जा सकता है। दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 167 स्पष्टत: विहित करती है कि अभियुक्त का निरोध 90 दिनों की अवधि के परे प्राधिकृत नहीं है यदि मृत्युदंड, आजीवन कारावास अथवा दस वर्षों या अधिक अवधि के कारावास से दंडनीय अपराधों से संबंधित मामलों में उस अवधि के भीतर अन्वेषण पूरा नहीं किया जाता है।

15. इस तथ्य की दृष्टि में कि याची पहले से ही दिनांक 30.11.2009 से अर्थात् लगभग दो वर्ष पाँच माह से अभिरक्षा में है और आरोप-पत्र, जिसे सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा याची के विरुद्ध दाखिल किया गया है, दर्शाता है कि याची को दिया जा सकने वाला महत्तम दंड सात वर्ष है और इस तथ्य की दृष्टि में भी कि बी॰ ए॰ सं॰ 9220 वर्ष 2010 में दिनांक 13.12.2010 के आदेश द्वारा अन्य सह-अभियुक्त को पहले ही जमानत प्रदान किया जा चुका है, अत: याची जमानत पर निर्मुक्त किए जाने का हकदार है।

16. पूर्वोल्लिखित चर्चा की दृष्टि में, मैं याची को जमानत पर निर्मुक्त करने का इच्छुक हूँ। तद्नुसार, याची मधु कोड़ा उर्फ मधु कोरा को उन्हीं शर्तों : (a) से (e) जैसा बी॰ ए॰ सं॰ 9220 वर्ष 2010 में दिनांक 13.12.2010 के आदेश में इस न्यायालय द्वारा अधिरोपित किया गया है, के साथ RC-5 (A)/ 2010/AHD-R के संबंध में विद्वान विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰, राँची के संतुष्टि 50,000/- रु॰ (पचास हजार रुपये) के दो प्रतिभूतियों के साथ इतनी ही राशि का जमानत बंधपत्र देने पर जमानत पर निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

मुकेश कुमार यादव उर्फ मुकेश यादव

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal No. 721 of 2004. Decided on 19th January, 2012.

सत्र विचारण सं॰ 214 वर्ष 2002/टी॰ आर॰ सं॰ 286 वर्ष 2002 में अपर न्यायिक कमिश्नर, फास्ट ट्रैक कोर्ट, राँची द्वारा पारित दिनांक 22.10.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34 एवं 201—आयुध अधिनियम, 1959—धाराएँ 25 (1) (B) एवं 26—हत्या—आजीवन कारावास—सूचक ने अभियोजन मामले का पूर्णत: समर्थन किया—अपीलार्थी ने छुरे से बारम्बार वार करके मृतक पर अनेक उपहतियाँ कारित की—अन्वेषण अधिकारी ने अभियोजन मामले का समर्थन किया है—घटना अनेक व्यक्तियों द्वारा देखी गयी—अपीलार्थी द्वारा झूठी कहानी गढ़ी गयी ताकि वह घटनास्थल पर अपनी उपस्थिति को न्यायोचित ठहरा सके—मंशा मृतक और अपीलार्थी के बीच पुरानी दुश्मनी अभिकथित—दोषसिद्धि एवं दण्डादेश बरकरार—अपील खारिज। (पैराएँ 12 से 17)

अधिवक्तागण.—M/s R.S. Mazumdar, Rajesh Kumar, For the Appellant; Mr. Amaresh Kumar, For the State.

आदेश

यह दांडिक अपील अपीलार्थी द्वारा सत्र विचारण सं॰ 214 वर्ष 2002/टी॰ आर॰ सं॰ 286 वर्ष 2002, सुखदेव नगर पी॰ एस॰ केस सं॰ 338 वर्ष 2001 के तत्सम, में अपर न्यायिक आयुक्त, फास्ट ट्रैक कोर्ट, राँची द्वारा पारित दिनांक 22.10.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया गया है और आजीवन कठोर कारावास और आगे आयुध अधिनियम की धारा 25 (1) (b) और 26 के अधीन दंडनीय अपराधों में से प्रत्येक के लिए एक वर्ष के कठोर कारावास और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए सात वर्षों के कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है और समस्त दंडादेशों को साथ चलने का निर्देश दिया गया है।

2. यह दांडिक अपील पहले इस न्यायालय की पीठ द्वारा सुनी गयी थी और दिनांक 17.1.2007 के निर्णय के तहत खारिज की गयी थी और दांडिक अपील सं॰ 941 वर्ष 2007 (एस॰ एल॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 1960 वर्ष 2007 से उद्भूत) में दिनांक 23.7.2007 के आदेश के तहत सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वापस भेजने के बाद इसे पुनः सुना गया है और इस निर्णय और आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

3. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि दिनांक 28.6.2001 को दोपहर 3 बजे आर॰ एम॰ सी॰ एच॰, राँची में दर्ज किया गया सुनील कुमार सिंह का फर्दबयान इस तथ्य को प्रकट करता है कि उक्त तिथि को दोपहर लगभग 12 बजे सूचक कब्रिस्तान, रातू रोड, राँची के निकट अवस्थित कबाड़ बेचने वाले के दुकान में बैठा हुआ था। इस बीच उसने नवजीवन टायर दुकान के शेड से हल्ला होते सुना। जब वह वहाँ पहुँचा, उसने अपीलार्थी मुकेश कुमार यादव को छुरे से सचिन कुमार सिंह पर उपहति कारित करते देखा। सचिन कुमार सिंह सूचक का भाई था और, इसलिए, वह उसे बचाने दौड़ा किन्तु तब तक, अपीलार्थी ने अपनी कमर से पिस्तौल निकाला और गोली चलायी जो मिस फायर हो जाने से नहीं लगी।

4. सचिन कुमार सिंह अनेक उपहतियाँ प्राप्त करने के बाद गिर गया। घटना अनेक व्यक्तियों द्वारा देखी गयी थी जिन्होंने मुकेश कुमार यादव (अपीलार्थी) को पकड़ने का प्रयास किया, किंतु अपीलार्थी ने उन पर निशान लगाकर ट्रिगर दबाया किंतु यह पुनः मिसफायर हो गया और तब वह घटनास्थल पर पिस्तौल फेंक कर बिरसा बोदी गली की ओर भाग गया।

सचिन कुमार सिंह को इलाज के लिए अस्पताल ले जाया गया किंतु उसने उपहतियों के कारण दम तोड़ दिया।

5. सुनील कुमार सिंह द्वारा दर्ज फर्दबयान के आधार पर एकमात्र अभियुक्त/अपीलार्थी मुकेश कुमार यादव के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन और आयुध अधिनियम की धाराओं 25(1-B), 26 और 27 के अधीन कोतवाली सुखदेव नगर पी॰ एस॰ केस सं॰ 338 वर्ष 2001 दिनांक 28.6.2001 दर्ज किया गया था।

पुलिस ने सम्यक अन्वेषण के बाद, आरोप-पत्र दाखिल किया और सुपुर्दगी के बाद भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और आयुध अधिनियम की धाराओं 25 (1-B), 26 और 27 के अधीन विरचित आरोप का सामना करने के लिए अपीलार्थी का विचारण किया गया था।

6. अभियोजन ने कुल मिलाकर 10 गवाहों का परीक्षण किया था जिसमें से मनोज कुमार सिंह (अ॰ सा॰ 1), बिनय कुमार सिंह (अ॰ सा॰ 2), अनिल कुमार सिंह (अ॰ सा॰ 4), सुनील कुमार सिंह (सूचक

अ॰ सा॰ 7) चश्मदीद गवाह हैं जबकि डॉ॰ अजित कुमार चौधरी (अ॰ सा॰ 6) ने सचिन कुमार सिंह के मृत शरीर का शव परीक्षण किया था और नरसिंह सिंह गौतम (अ॰ सा॰ 10) अन्वेषण अधिकारी है। नारायण प्रसाद अग्रवाल (अ॰ सा॰ 3) आंशिक चश्मदीद गवाह है। अशोक कुमार पाठक (अ॰ सा॰ 5) सार्जेन्ट मेजर है जिसने घटना स्थल से जब्त की गयी पिस्तौल का परीक्षण किया था। फतेहुल्ला खान (अ॰ सा॰ 8) और श्याम कुमार पूर्ति (अ॰ सा॰ 9) औपचारिक गवाह है।

7. सूचक ने पूरी तरह अभियोजन मामले का समर्थन किया है और उसने कहा है कि दिनांक 28.6.2001 को दोपहर लगभग 12 बजे वह रातू रोड अवस्थित कबाड़ बेचने वाले के दुकान पर बैठा हुआ था। वह उस घटना की ओर आकृष्ट हुआ जो नवजीवन टायर दुकान के निकट हो रही थी। जब वह वहाँ गया, अपीलार्थी मुकेश कुमार यादव सचिन कुमार सिंह (सूचक का भाई) पर छुरे से उपहतियाँ कारित कर रहा था। उसने देखा था कि अपीलार्थी ने छुरे से लगातार वार करके सचिन पर अनेक उपहतियों को कारित किया था जिसके परिणामस्वरुप घायल गिर गया। जब उसने अपने भाई को बचाने का प्रयास किया, अपीलार्थी ने अपनी कमर से पिस्तौल निकाला और उस पर गोली चलायी किंतु मिसफायर होने के कारण गोली नहीं लगी और वह घायल नहीं हुआ था।

मनोज सिंह ने घटनास्थल पर उपस्थित कुछ व्यक्तियों के साथ अपीलार्थी को पकड़ने का प्रयास किया किंतु उसने उन पर निशाना लगाकर पुनः ट्रिगर दबाया जो मिसफायर हो गया और तब वह पिस्तौल फेंक कर भाग गया।

घायल सचिन कुमार सिंह को आर॰ एम॰ सी॰ एच॰ ले जाया गया था और वहाँ सूचक का फर्दबयान दर्ज किया गया था जिस पर उसने हस्ताक्षर किया था। मनोज सिंह और बी॰ के॰ बेरी ने भी फर्दबयान पर गवाह के रूप में हस्ताक्षर किया था। उसने अपीलार्थी को कठघरे में पहचाना था।

8. अ॰ सा॰ 7 का बयान अ॰ सा॰ 1 से 4 तक के साक्ष्य से समर्थित हुआ जिन्होंने घटना को देखा था। उन्होंने उसी तथ्य को दोहराया कि हल्ला सुनकर वे नवजीवन टायर दुकान की ओर दौड़े और अपीलार्थी को छुरे से सचिन पर उपहति कारित करते देखा। उन्होंने मुकेश (अपीलार्थी) को पकड़ने का प्रयास किया था किंतु सफल नहीं हो सके थे क्योंकि अपीलार्थी ने उन पर निशाना लगाकार पिस्तौल से गोली चलायी थी किंतु सौभाग्यवश पिस्तौल से मिसफायर हो गया और वे घायल नहीं हुए।

अ॰ सा॰ 1 से 4 ने आगे कथित किया है कि अपीलार्थी द्वारा घटनास्थल पर फेंकी गयी पिस्तौल उनकी उपस्थिति में पुलिस द्वारा जब्त की गयी थी।

9. डॉ॰ अजित कुमार चौधरी (अ॰ सा॰ 6) ने शव परीक्षण रिपोर्ट सिद्ध किया था और उपहतियों को स्पष्ट किया था। उन्होंने मृतक के शरीर पर अनेक छुरे के वारों और कटने के जख्मों को पाया था।

10. अ॰ सा॰ 10 अन्वेषण अधिकारी ने अपने द्वारा किए गए अन्वेषण का समर्थन किया है। उसने कहा है कि यह अफवाह सुनने के बाद कि सुखदेव नगर पुलिस थाना के अंतर्गत रातू रोड पर कब्रिस्तान के निकट एक व्यक्ति को छुरा मारा गया था, उसने दोपहर 12.30 बजे स्टेशन डायरी में इसे लिखा और सूचना के सत्यापन के लिए घटनास्थल की ओर प्रस्थान किया। उसके घटनास्थल पर पहुँचने तक, घायल को इलाज के लिए अस्पताल ले जाया गया था और, इसलिए, उसने अपने साथी पुलिस अधिकारी को घायल का पता लगाने को कहा और स्वयं घटनास्थल पर बना रहा।

अ॰ सा॰ 7 का फर्दबयान प्राप्त करने के बाद, अपीलार्थी के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया था। उसने घटनास्थल से पिस्तौल जब्त किया था जिसे अपीलार्थी द्वारा फेंका गया था और रक्तरंजित मिट्टी को भी संग्रहित किया था और गवाहों का परीक्षण किया था। अन्वेषण के दौरान, जब्त पिस्तौल को इसके परीक्षण और प्रभावकारिता के लिए अ॰ सा॰ 5 के पास भेजा गया था। अन्वेषण पूरा करने के बाद, उसने आरोप-पत्र दाखिल किया।

11. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश के निष्कर्षों को जोरदार चुनौती दिया है और अनेक आधारों पर आक्षेपित निर्णय का विरोध किया है। उन्होंने निवेदन किया है कि तथाकथित चश्मदीद गवाहों में से किसी ने घटना को नहीं देखा था और वे घटनास्थल पर बिल्कुल उपस्थित नहीं थे। उनके द्वारा घटना के बारे में सुनायी गयी कहानी अविश्वसनीय है। उन्होंने कहा था कि घटना के समय पर अपीलार्थी के पास पिस्तौल था किंतु वह उसकी हत्या करने के आशय से मृतक पर छुरे से उपहति कारित कर रहा था और वह भी दोपहर के दौरान भीड़ वाले स्थान पर जिस पर विश्वास नहीं किया जा सकता था। यदि अपीलार्थी का आशय मृतक की हत्या करना होता, वह आसानी से पिस्तौल का उपयोग कर सकता था जो उसके कब्जे में था क्योंकि हत्या करने के लिए पिस्तौल का उपयोग करना ज्यादा आसान तरीका था। सूचक जो मृतक का भाई है, को खरोंच तक नहीं आयी थी यद्यपि शव परीक्षण रिपोर्ट उपदर्शित करती है कि मृतक के शरीर पर 7-8 उपहतियाँ थी। निश्चय ही, उपहतियों की ऐसी संख्या और वह भी दिन दहाड़े भीड़ भरे स्थान पर मृतक के भाई और संबंधी की उपस्थिति में कारित करना किसी के लिए संभव नहीं था।

12. घटनास्थल पर अपनी उपस्थिति को न्यायोचित ठहराने के लिए उन्होंने एक अन्य अनधिसंभाव्य कहानी गढ़ी थी कि उन्हें मृतक को बचाने से रोका गया था क्योंकि अपीलार्थी ने उन पर गोली चलायी थी। चूँकि उनमें से किसी ने आग्नेयास्त्र द्वारा कारित किसी उपहति को प्राप्त नहीं किया था, उन्होंने पुनः कहानी गढ़ी है कि पिस्तौल मिस फायर हुआ था किंतु यह कहानी पुनः इस तथ्य की दृष्टि में अविश्वसनीय है कि अभिकथित पिस्तौल जिसे घटनास्थल से अभिकथित रूप से बरामद किया गया था 0.315 बोर वाली एक नाली देशी पिस्तौल थी।

एक गोली वाली पिस्तौल से, जब यह एक बार मिसफायर कर जाती है, कारतूस भरे बिना दूसरी गोली चलाना बिल्कुल संभव नहीं है। पूर्वोक्त गवाहों ने पुनः झूठा अभिसाक्ष्य दिया है कि अपीलार्थी ने उक्त पिस्तौल जो पहले मिसफायर कर गया था, से पुनः गोली चलाने का प्रयास किया था। केवल यही नहीं, अ॰ सा॰ 5 का साक्ष्य अत्यन्त स्पष्ट है कि पिस्तौल, जिसे उसके द्वारा प्रस्तुत किया गया था, एक नाल वाली थी जिससे 0.315 बोर का कारतूस दागा जा सकता है। कारतूस, जिसे परीक्षण के लिए भेजा गया था, को प्रभावकारी पाया गया था। यदि गवाहों का पूर्वोक्त बयान सही है, तब उस मिसफायर हुए कारतूस का क्या हुआ जो गवाहों के अनुसार मिसफायर होने के कारण नाल में अटका था।

उन्होंने आगे तर्क किया है कि हत्या के पीछे कोई मंशा नहीं था यद्यपि मृतक, अपीलार्थी और गवाह एक दूसरे को जानते थे। यह भी आश्चर्यजनक तथ्य है कि अन्वेषण अधिकारी (अ॰ सा॰ 10) दोपहर 12.30 बजे से सायं 5.30 बजे तक घटनास्थल पर बना रहा था किंतु उसने यह कथन नहीं किया है कि उसने घटनास्थल पर गिरे पिस्तौल को ध्यान में लिया था।

13. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय और विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त के निष्कर्षों का पूर्णतः समर्थन किया है। उन्होंने निवेदन किया है कि यह अपीलार्थी के विरुद्ध सुसिद्ध मामला है और समस्त गवाह प्रति परीक्षण की कसौटी पर खरे उतरे हैं। किसी महत्वपूर्ण बिन्दु पर कोई तात्विक विरोधाभास निकाला नहीं गया है। ऐसे मामले में जहाँ प्रत्यक्ष साक्ष्य उपलब्ध है, मंशा का प्रकटीकरण महत्वपूर्ण नहीं है।

14. हमने आक्षेपित निर्णय का सावधानीपूर्वक परीक्षण किया है, अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य और प्रदर्शों के रूप में चिन्हित दस्तावेजों का परिशीलन किया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने पिस्तौल की बरामदगी पर काफी जोर दिया है और हमें प्रभावित करने का प्रयास किया है कि तथाकथित गवाहों में से किसी ने घटना को नहीं देखा था। हम इन तर्कों से कुछ सीमा तक सहमत हैं कि अपीलार्थी द्वारा पिस्तौल का उपयोग और घटनास्थल से इसकी बरामदगी अभियोजन द्वारा समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे सिद्ध नहीं की गयी है। तर्कों में बल प्रतीत होता है कि अन्वेषण अधिकारी, जो दोपहर 12.30 बजे से सायं 5.30 बजे तक घटनास्थल पर उपस्थित था, ने घटनास्थल पर अपीलार्थी द्वारा फेंके गए पिस्तौल को ध्यान में नहीं लिया था। यह तर्क भी विश्वासोत्पादक है कि गवाहों के शरीर पर उपहतियाँ नहीं आयी थी यद्यपि अपीलार्थी ने पिस्तौल का उपयोग करके उन पर गोली चलायी थी। अ॰ सा॰ 5 का रिपोर्ट भी इस तथ्य का उपदर्शक नहीं है कि कारतूस, जिसे परीक्षण के लिए भेजा गया था, पर परकशन कैप पर हैमर मार्क था।

तर्कों और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों पर विचार करके हम सहमत हैं कि आग्नेयास्त्र का उपयोग और बरामदगी अभियोजन द्वारा स्थापित नहीं किया गया है और, इसलिए, आयुध अधिनियम की धाराओं 25 (1-B), 26 और 27 के अधीन पारित दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त किया जाता है।

15. अब साक्ष्य के दूसरे भाग पर आते हुए जिसमें गवाहों ने कहा है कि अपीलार्थी ने अभिकथित घटनास्थल पर छुरे का लगातार वार करके मृतक पर उपहतियाँ कारित की थी।

हमने सावधानीपूर्वक अ॰ सा॰ 1, 2, 4 और 7 के साक्ष्य का संवीक्षण किया है। इन समस्त गवाहों का साक्ष्य इस बिन्दु पर संगत है कि वे हल्ला सुनकर घटना की ओर आकर्षित हुए और उन्होंने अपीलार्थी को छुरे से लगातार वार करके मृतक पर उपहतियाँ कारित करते देखा था। अ॰ सा॰ 3 नारायण प्रसाद अग्रवाल भी समान रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि वह स्वतंत्र गवाह है और वह समय के प्रासंगिक बिंदु पर घटना स्थल के निकट उपस्थित भी था। वह भी हल्ला सुनकर घटना की ओर आकर्षित हुआ था। उसने किसी लड़के द्वारा सचिन सिंह पर प्रहार होते देखा था और यह देखने के बाद, वह सचिन के पिता को सूचित करने के लिए भागा था। इस स्वतंत्र गवाह द्वारा घटना के आरंभिक भाग को देखा गया था। जब वह सचिन के माता-पिता को सूचित करने घटनास्थल से जा रहा था, उसने सुनील सिंह, मनोज सिंह, बिनय सिंह, बी॰ के॰ बेरी को आते हुए देखा था और उसके अभिसाक्ष्य के पैरा 1 में इस तथ्य का उल्लेख किया गया है।

इस स्वतंत्र गवाह के साक्ष्य की दृष्टि में, पूर्वोक्त चश्मदीद गवाहों अर्थात् अ॰ सा॰ 1, 2, 4 और 7 की उपस्थिति पर अविश्वास नहीं किया जा सकता था।

16. जहाँ तक घटना के पीछे मंशा का संबंध है, चश्मदीद गवाहों में से कुछ ने अभिसाक्ष्य दिया है कि विगत 2-3 दिनों से अपीलार्थी और मृतक के बीच का संबंध कटु हो गया था और उनको एक-दूसरे से शिकायत थी। हम राज्य के विद्वान अधिवक्ता से सहमत हैं कि ऐसे मामले में जहाँ चश्मदीद गवाह उपलब्ध है, वहाँ मंशा यदि इसे अभिलेख पर नहीं लाया गया है, की कोई भूमिका नहीं है।

17. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, हम अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन पारित दोषसिद्धि और दंडादेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं देखते हैं और तद्नुसार, इस अपील को खारिज किया जाता है।

ekuuh; idk'k rkfr;k] e[; U;k;k/kh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

मुरारी पाण्डेय

cuke

झारखंड राज्य, सचिव के माध्यम से एवं अन्य

LPA No. 392 of 2011. Decided on 2nd April, 2012.

विद्यालय विधि—भत्ता—याची शिक्षक के तौर पर सेवानिवृत्त हुआ—उस अवधि के अवकाश वेतन के भुगतान का प्रत्याख्यान जब याची पूर्वीक विद्यालय में सेवा में था—याची पूर्वीक विद्यालय में सरकारी सेवा में था—तत्पश्चात्, उसे नये विद्यालय में नियुक्त किया गया था और पूर्वीक विद्यालय के 25 प्रतिशत शिक्षकों को नये विद्यालय में लेने का पहले से ही प्रावधान है—याची की सेवा पुस्तिका में इस तथ्य का उल्लेख न किये जाने से याची को अवकाश वेतन के भुगतान का लाभ प्राप्त करने से वंचित नहीं किया जा सकता—आक्षेपित आदेश अपास्त—प्रत्यर्थीगण को अवकाश वेतन का भुगतान याची को करने का निर्देश दिया गया।

(पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.—Mr. Bhawesh Kumar, For the Appellant; JC to GP-1, For the Respondent.

आदेश

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

2. याची एक शिक्षक था, सेवानिवृत्त हुआ था और उसे पूर्ण पेंशनी लाभ एवं भविष्य निधि तथा उपदान भी प्रदान किया गया है परन्तु केवल 32 दिनों के अवकाश वेतन के भुगतान, अर्थात्, उस अवधि के अवकाश वेतन के भुगतान से वंचित किया गया है जब याची पूर्वीक विद्यालय में सेवा में था। याची को इस लाभ से केवल इस आधार पर वंचित किया गया है कि याची यह सिद्ध करने में विफल रहा था कि वह सीमित रूप से चयनित उम्मीदवारों के 25 प्रतिशत के भीतर आने वाला एक उम्मीदवार था और उस कोटि के अधीन नियुक्ति प्राप्त किया था।

3. हमने 13 नवम्बर, 2006 के आदेश के माध्यम से WPS सं॰ 6171 वर्ष 2006 में पारित इस न्यायालय के निर्देश के अनुसरण में प्रत्यर्थीगण द्वारा पारित आदेश का परिशीलन किया। इस आदेश में, प्रत्यर्थीगण ने केवल याची की पूर्वीक नियुक्ति के संबंध में तथा राजकीय माध्यमिक उच्च विद्यालय में उसके बने रहने के संबंध में तथ्यों को अभिलिखित किया। उस आदेश के पैरा 6 में, यह उल्लिखित है कि याची की सेवा पुस्तिका से, यह स्पष्ट नहीं है कि याची को उपरोक्त पद के 25 प्रतिशत के अंदर नियुक्त किया गया था और विभिन्न परिपत्रों की दृष्टि में प्रत्यक्ष नियुक्ति की गयी थी।

4. चाहे जो भी स्थिति हो, याची पूर्वीक विद्यालय में सरकारी सेवा में था और इसके उपरांत, उसे नये विद्यालय में नियुक्त किया गया था तथा नये विद्यालय में पूर्वीक विद्यालय के 25 प्रतिशत शिक्षकों को लेने का पहले से ही प्रावधान है और याची की सेवा पुस्तिका में इस तथ्य का उल्लेख न किया जाना कि वह 25 प्रतिशत कोटा के अंतर्गत आता है, याची को अवकाश वेतन के भुगतान से वंचित नहीं कर सकता।

5. प्रत्यर्थी–राज्य के विद्वान अधिवक्ता का तर्क यह है कि दिनांक 18 जुलाई, 1992 के अधीन यद्यपि यह उल्लिखित है कि ऐसे कर्मचारीगण पेंशनी लाभ समेत किसी अन्य लाभ के हकदार होंगे और उपरोक्त तथ्य के उल्लेख न किये जाने याची उस अवधि के वेतन अवकाश के भुगतान से वंचित नहीं हो सकता जिस दौरान वह पूर्वीक विद्यालय में सेवा कर चुका है, जिसका याची द्वारा पूर्वीक विद्यालय में

अपनी सेवा किये जाने के आधार पर दावा कर रहा है। अतएव, याची को पूर्वोक्त अवधि के अवकाश वेतन का हकदार अभिनिर्धारित किया जाता है और यह दर्शाना प्रत्यर्थीगण का दायित्व था कि वह पूर्वोक्त अवधि के लिए अवकाश वेतन का हकदार नहीं था।

6. उपरोक्त की दृष्टि में, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है तथा प्रत्यर्थीगण को इस आदेश की प्रतिलिपि की प्राप्ति की तिथि से दो महीनों की एक अवधि के भीतर रिट याची को 32 दिनों के अवकाश वेतन का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है।

7. पूर्वोक्त सम्परीक्षणों एवं निर्देशों के साथ, यह LPA अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ujæ ukFk frokjh] U;k;efr

मेसर्स सेंट्रल कोल्ड फिल्ड्स लिमिटेड

cuke

बिहार राज्य एवं अन्य

CWJC No. 774 of 2000 (R). Decided on 1st March, 2012.

मोटर यान अधिनियम, 1988—धारा 55—पथ कर की मांग—वाहन जीर्ण-शीर्ण हो गयी थी तथा निबंधन प्रमाण पत्र के रद्दकरण के लिए आग्रह किया गया था—याची के आवेदन पर लंबे समय तक कोई आदेश पारित न करना तथा पथ कर की मांग करना न्यायसंगत नहीं था, जबकि याची ने रिपोर्ट दिया था कि वाहन बेकार हो गया है और इसकी कोई रिपोर्ट नहीं है कि यह सड़क पर चल रहा था—निबंधन के रद्दकरण के लिए याची के आवेदन पर लंबे समय तक बैठे रहना तथा पथकर एवं जुर्माना की मांग करना मनमाना एवं अन्यायपूर्ण कार्य है—याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 12 से 19)

अधिवक्तागण.—M/s Ananda Sen, Ranjan Kumar, For the Petitioner; M/s Srijit Choudhary, C.S. Singh, For the Respondents.

आदेश

इस रिट याचिका में, याची ने दिनांक 21.12.1999 की मांग की नोटिस (परिशिष्ट-10) को निरस्त करने का आग्रह किया है, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने 1.4.1998 से 31.12.1999 तक की अवधि के लिए निबंधन सं॰ BRM 7129 वाले वाहन (ट्रक) के विरुद्ध याची से पथकर की मांग की है और इस निर्देश के लिए आग्रह किया है कि याची पथ कर जमा करने का दायी नहीं है और उक्त वाहन के निबंधन को रद्द करने का प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने का भी आग्रह है।

2. याची के अनुसार, निबंधन सं॰ BRM 7129 वाला उक्त वाहन एक पुराना ट्रक है। इसके खराब हो जाने के कारण यह नहीं चल रहा था और इसकी मरम्मती आर्थिक रूप से लाभकर नहीं थी। इस प्रकार, उक्त वाहन को हटा लेने तथा इसे नीलाम कर देने का निर्णय लिया गया था। इस उद्देश्य के लिए याची ने काफी पहले 25.3.1998 को उक्त वाहन के पंजीकरण के रद्दकरण का आग्रह करते हुए जिला परिवहन पदाधिकारी, हजारीबाग के समक्ष आवेदन दाखिल किया था। परन्तु बार-बार किये जाने वाले आग्रहों तथा अभ्यावेदनों के बावजूद आवेदन पर जिला परिवहन पदाधिकारी द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया था। अचानक ही प्रत्यर्थीगण ने 1.4.1998 की अवधि से 52,416 रुपये के बराबर जुर्माने के साथ पथ कर जमा करने की मांग करते हुए याची को दिनांक 21.12.1999 की आक्षेपित मांग की नोटिस

निर्गत कर दी थी। याची ने तर्क रखा कि जब वाहन के पंजीकरण के रद्दकरण के लिए आवेदन काफी पहले 25.3.1998 को दाखिल कर दिया गया था, तो कर एवं जुर्माने की मांग करने का कोई औचित्य नहीं था। चूंकि यह रिपोर्ट दे दी गयी थी कि वाहन चलाया नहीं जा रहा था, यह खराब हो चुका था तथा निबंधन प्रमाण पत्र के रद्दकरण के लिए आग्रह कर दिया गया था, अत: प्रत्यर्थीगण को निबंधन रद्द करना चाहिए था। याची को पथकर के भुगतान का दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता और, इस प्रकार, दिनांक 21.12.1999 की मांग की नोटिस (परिशिष्ट-10) पूर्णत: मनमाना एवं अवैधानिक है तथा निरस्त किये जाने योग्य है।

3. प्रतिशपथ पत्र दाखिल करके प्रत्यर्थीगण द्वारा याचिका का प्रतिवाद किया गया है। अन्य के साथ-साथ यह तर्क रखा गया है कि रद्दकरण के उद्देश्य के लिए याची को उक्त वाहन से संबंधित सारे दस्तावेजों को जमा करने की आवश्यकता थी परन्तु उन्हें पत्र निर्गत करने के बावजूद, अपेक्षित दस्तावेज जमा नहीं किये गये थे। अपेक्षित दस्तावेजों के न होने के कारण पंजीकरण के रद्दकरण के याची के आग्रह पर कोई आदेश पारित नहीं किया गया था। जब तक वाहन के पंजीकरण का रद्दकरण नहीं होता है, याची पथ कर के भुगतान का दायी है। जब याची पथ कर का भुगतान करने में विफल रहा था, उस पर उक्त मांग की नोटिस का तामिला कराया गया था। उक्त नोटिस में कोई मनमानापन एवं अवैधानिकता नहीं है तथा याची मांग की नोटिस की राशि जमा करने का दायी है।

4. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है तथा अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्रियों पर विचार किया है। परिशिष्ट-3, दिनांक 25.3.1998 के परिशीलन पर, मैं पाता हूँ कि याची ने निबंधन सं० BRM 7129 वाले ट्रक के निबंधन प्रमाण पत्र को रद्द करने का जिला परिवहन पदाधिकारी, हजारीबाग से आग्रह करते हुए उसके समक्ष आवेदन दाखिल किया था। उक्त आवेदन में यह स्पष्टत: उल्लिखित था कि मूल निबंधन प्रमाण पत्र पुस्तिका, कर पुस्तिका, कर टोकन, ट्रक का बीमा प्रमाण पत्र भी आवेदन के साथ संलग्न किया गया था। प्रत्यर्थीगण के अनुसार, ये दस्तावेज आवेदन प्राप्त करने के समय याची को लौटा दिये गये थे तथा 25.3.1998 के आवदेन (परिशिष्ट-3) के हाशिये में यह उल्लिखित भी किया गया था।

5. परिशिष्ट-3 के परिशीलन पर, मैं पाता हूँ कि आवेदन में ऐसा कोई उल्लेख नहीं है। हाशिये में, वाहन की जांच करने एवं रिपोर्ट देने के एक निर्देश के साथ आवेदन MVI को निर्दिष्ट करने का केवल एक पृष्ठांकन है।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यद्यपि निबंधन के रद्दकरण के लिए MVI द्वारा किसी निरीक्षण का कोई प्रावधान नहीं है, पर रद्दकरण का आदेश इस आधार पर पारित नहीं किया गया था कि MVI ने अपनी रिपोर्ट नहीं सौंपी थी। उक्त आधार मोटर यान अधिनियम, 1988 (इसमें इसके पश्चात उक्त अधिनियम के तौर पर निर्दिष्ट) के प्रावधानों की दृष्टि में एक वैध आधार नहीं है।

7. विद्वान अधिवक्ता ने उक्त अधिनियम की धारा 55 में अंतर्विष्ट सुसंगत प्रावधानों को निर्दिष्ट किया, जो निबंधन के रद्दकरण का प्रावधान करती है।

8. उक्त अधिनियम की धारा 55 निम्नवत् पठित है:–

^jftLVhdj.k dk jí fd;k tkuk-*&(1) ;fn dkb ekVj ;ku u"V gk x;k g ;k LFkk;h :i l bl yk;d ugh jg x;k g fd mldk mi;kx fd;k tk ld] rk Lokeh ml ckr dh fjikV pkng fnu d vUnj vFkok ;Fkk'kD; 'kh?k] ml jftLVhdrk çkfèkdkjh dk nxk ftldh vfèkdkfjrk d vUnj] ;FkkfLFkfr] mldk fuokl LFkku ;k dkjkckj dk LFkku g] tgk ;ku lkekU;r;k j[kk tkrk g rFkk og ;ku d jftLVhdj.k çek.k i= dk ml çkfèkdkjh d ikl Hkt nxkA*

(2) ;fn jftLVhdrk çkfèkdkjh ey jftLVhdrk çkfèkdkjh g rk og jftLVhdj.k vkj jftLVhdj.k çek.ki= dk jí djxk] vFkok ;fn og , lk çkfèkdkjh ugh g rk ey jftLVhdrk çkfèkdkjh dh og fjikV vkj jftLVhdj.k çek.ki= Hkt nxk vkj og çkfèkdkjh jftLVhdj.k dk jí djxkA

(3) dkb jftLVhdrk çkfèkdkjh fdlh , l ekVj ;ku dh ckcr] tk mldh viuh vfèkdkfjrk d vnj g] ;g vkn'k n ldxk fd mldh ijh{kk , l çkfèkdkjh }kjk dh tk, ftl jkT; ljdkj vkn'k }kjk fu;Dr dj rFkk ;fn , lh ijh{kk dju ij vkj mld Lokeh dk (mldh ey ir l] tk jftLVhdj.k çek.ki= e fn;k gvk g jlhnh jftLVh Mkd l lpuk Hkt dj) , lk vH;konu dju dk] tk og djuk pkg] volj nu d i'pkr mldk ;g lekèkku gk tkrk g fd og ;ku , lh gkyr e g fd og bl yk;d ugh g fd mldk mi;kx fd;k tk ld vFkok lkotfud LFkku e mld mi;kx e turk d fy, [krjk ink gkxk vkj og bl ;kX; Hkh ugh g fd mldh lefpr ejEer dh tk ld rk og jftLVhdj.k dk jí dj ldxkA

(4) ;fn jftLVhdrk çkfèkdkjh dk lekèkku gk tkrk g fd] dkb ekVj ;ku LFkk;h :i l Hkkjr d ckgj y tk;k x;k g rk jftLVhdrk çkfèkdkjh mld jftLVhdj.k dk jí djxkA

(5) ;fn jftLVhdrk çkfèkdkjh dk lekèkku gk tkrk g fd fdlh ekVj ;ku dk jftLVhdj.k , l nLrkotk d vkèkkj ij ;k rF;k d , l 0;in'ku }kjk vfHkçkIr fd;k x;k g tk fdlh lkjoku fof'kf"V d lcèk e feF;k Fk ;k ml ij lenHkr bftu l[;kd ;k pfll l[;kd jftLVhdj.k çek.ki= e çfo"V , l l[;kd l fHkUu g rk jftLVhdrk çkfèkdkjh (mld ml ir ij tk jftLVhdj.k çek.ki= e fn;k gvk g] jlhnh jftLVh Mkd l lpuk Hktdj) Lokeh dk , lk vH;konu dju dk volj nu d i'pkr tk og djuk pkg mu dkj.kk l tk y[kc) fd, tk,x] jftLVhdj.k jí djxkA

(6) èkkjk 54 d vèkhu ;k bl èkkjk d vèkhu fdlh ekVj ;ku d jftLVhdj.k dk jí dju okyk jftLVhdrk çkfèkdkjh ;ku d Lokeh dk ml ckr dh l lpuk fyf[kr :i l nxk vkj ml ;ku dk Lokeh ml ;ku d jftLVhdj.k çek.ki= dk ml çkfèkdkjh dk vH;fir dj nxkA

(7) èkkjk 54 d vèkhu ;k bl èkkjk d vèkhu jí dju dk vkn'k nu okyk jftLVhdrk çkfèkdkjh] ;fn og ey jftLVhdrk çkfèkdkjh g rk jftLVhdj.k çek.ki= dk vkj viu vfHky[kk e ml ;ku d ckj e tk dN nt fd;k x;k g mldk jí djxk rFkk ;fn og ey jftLVhdrk çkfèkdkjh ugh g rk ml jftLVhdrk çkfèkdkjh dk jftLVhdj.k çek.ki= Hktxk vkj og çkfèkdkjh jftLVhdj.k çek.ki= dk vkj viu vfHky[kk e ml ekVj ;ku d ckj e dh xb çfof"V dk jí djxkA

(8) bl èkkjk e vkj èkkjk 41, èkkjk 49, èkkjk 50, èkkjk 51, èkkjk 52, èkkjk 53 vkj èkkjk 54 e ^^ey jftLVhdrk çkfèkdkjh** in l og jftLVhdrk çkfèkdkjh vfHkçr g] ftld vfHky[k e ;ku dk jftLVhdj.k vfHkfyf[kr fd;k x;k gA

(9) bl èkkjk e ^^jftLVhdj.k çek.ki=** d vUrxr bl vfèkfu;e d micèkk d vèkhu uohÑr jftLVhdj.k çek.ki= vkrk gA

9. धारा 55 के उक्त प्रावधान के सरल पठन पर यह स्पष्ट है कि किसी निर्बंधित वाहन का मालिक वाहन के निबंधन के प्रमाण पत्र के रद्दकरण के लिए आवेदन कर सकता है। आवेदन की प्राप्ति के उपरांत

निबंधन प्राधिकार निबंधन एवं निबंधन के प्रमाण पत्र को रद्द कर देगा या रिपोर्ट एवं निबंधन के प्रमाण पत्र को मूल निबंधन प्राधिकारी को अग्रसारित कर देगा और वह प्राधिकार निबंधन को रद्द करेगा।

10. यद्यपि उपधारा (3) अपनी अधिकारिता के भीतर किसी निबंधन प्राधिकारी के लिए मोटर वाहन को जांचने की शक्ति का प्रावधान करती है, पर यह ऐसा नहीं कहती है कि मालिक द्वारा निबंधन के रद्दकरण के आवेदन पर ऐसी जांच पड़ताल आवश्यक है।

11. धारा 55 की उपधारा (3) निबंधन को रद्द करने की शक्ति किसी निबंधन प्राधिकारी को प्रदान करती है, अगर उसे समाधान हो कि वाहन ऐसी अवस्था में है कि यह इस्तेमाल किये जाने योग्य नहीं है या एक सार्वजनिक स्थान में इसका इस्तेमाल जनता को खतरा कारित करेगी और यह युक्तिसंगत रूप से मरम्मत किये जाने योग्य नहीं रह गया है।

12. वर्तमान मामले में, याची ने अपने आवेदन में स्पष्टत: उल्लेख किया है कि वाहन खराब हो चुका है और यह युक्तिसंगत रूप से मरम्मत किये जाने योग्य नहीं है। जब उक्त सूचना प्रदान की गयी थी, सम्बद्ध प्राधिकार द्वारा ऐसे किसी परीक्षा का कोई अवसर नहीं था तथा निबंधन प्राधिकार को याची के आवेदन पर आदेश पारित करना चाहिए था।

13. ऐसा करने के बजाए, निबंधन प्राधिकार ने MVI को वाहन का निरीक्षण करने को कहते हुए उसे आवेदन अग्रसर कर दिया था।

14. अभिलेख पर यह दर्शाने के लिए कुछ नहीं है कि MVI ने भी कोई प्रतिकूल रिपोर्ट सौंपी थी।

15. उपरोक्त की दृष्टि में, एक लंबी अवधि तक कोई आदेश पारित न करना और पथ कर की मांग करना न्यायसंगत नहीं कहा जा सकता, विशेषकर तब जब याची ने रिपोर्ट दिया था कि वाहन खराब हो चुका है और ऐसी कोई सूचना नहीं हैं कि यह सड़क पर चलाया जा रहा था।

16. इसके अतिरिक्त इतनी लंबी अवधि तक निबंधन के रद्दकरण के याची के आवेदन पर बैठे रहना तथा पथ कर एवं जुर्माने की मांग करना मनमाना एवं अन्यायपूर्ण कार्य है।

17. आवेदन की प्राप्ति पर आदेश पारित करना निबंधन प्राधिकार का कर्त्तव्य था जब सभी दस्तावेज आवेदन के साथ संलग्न किये गये थे।

18. विद्वान सरकारी अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आवेदन के साथ संलग्न दस्तावेज याची को लौटा दिये गये थे और तत्पश्चात् पत्रों के बावजूद, दस्तावेज पेश नहीं किये गये थे। याची जोरदार रूप से दस्तावेजों को वापस लेने की बात से इंकार करता है। यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि याची को दस्तावेज लौटा दिये गये थे। बुद्धिमत्ता यह भी ग्रहण नहीं करती कि जब दस्तावेज उक्त उद्देश्य के लिए जमा किये गये थे, तब निबंधन प्राधिकार द्वारा आदेश पारित किये जाने से पहले दस्तावेज लौटाये क्यों जाएंगे।

19. उपरोक्त की दृष्टि में, बिना किसी औचित्य के याची को निर्गत दिनांक 21.12.1999 की मांग की नोटिस (परिशिष्ट–10) का पोषण नहीं किया जा सकता और एतद् द्वारा उसे निरस्त किया जाता है। प्रत्यर्थी सं॰ 2 जिला परिवहन पदाधिकारी, हजारीबाग को उक्त वाहन के निबंधन के रद्दकरण हेतु इस आदेश की एक प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुतिकरण की तिथि से 6 सप्ताहों के भीतर याची के आवेदन पर आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है, अगर पहले ही पारित नहीं कर दिया गया है।

20. तदनुसार, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

ekuuh; ujæ ukFk frokjh] U;k;efr

राम अवध पाण्डेय

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (Cr.) No. 272 of 2004. Decided on 3rd May, 2012.

भारतीय वन अधिनियम, 1927—धारा 52—भारत का संविधान—अनुच्छेद 300A—वन अपराध—वाहन का अधिहरण—वन अपराध कारित किये जाने के संबंध में ट्रक के स्वामी की जानकारी को सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर किसी अकाट्य सामग्री के बिना धारा 52 के अधीन किसी भी सम्पत्ति का अधिहरण नहीं किया जा सकता—अधिहरण का आदेश इस उपधारणा पर आधृत कि वाहन को एक बार पटरों से भरा हुआ पाये जाने पर, कोई और जांच की आवश्यकता नहीं थी—उपधारणा या आशंका वैधानिक साक्ष्य का एक स्थानापन्न नहीं हो सकता—आक्षेपित आदेश निरस्त—याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 17 से 23)

अधिवक्तागण.—Mr. Amit Kumar Tiwari, For the Petitioner; J.C. to G.P. II, For the State.

न्यायालय द्वारा.—इस याचिका में, याची ने अधिहरण कार्यवाही सं॰ 15/2001 में प्राधिकृत पदाधिकारी-सह-डिवीजनल वन पदाधिकारी, गढ़वा, दक्षिणी वन डिवीजन द्वारा पारित आदेश को निरस्त करने का आग्रह किया है, जिसके द्वारा MPL 5937 संख्या वाले याची के ट्रक का सेमल एवं सलाई के पटरों के साथ अधिहरण किया गया था। याची ने वन अधिहरण अपील सं॰ XV/24 वर्ष 2001-02 में पारित आदेश को भी निरस्त करने का तथा पुनरीक्षण केस सं॰ C-44/2002 में पुनरीक्षण प्राधिकार द्वारा पारित आदेश को भी निरस्त करने का आग्रह किया है जिसके द्वारा याची के वाहन के अधिहरण का आदेश अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकार द्वारा भी बरकरार रखा गया है।

2. याची के अनुसार, वह निबंधन सं॰ MPL 5937 वाले ट्रक का एक निबंधित स्वामी है। उक्त वाहन वाणिज्यिक वाहन है और किराये पर दिया जाता है। 17.3.2001 को याची के ट्रक को वनपाल ए॰पी॰ सिंह द्वारा रोका गया था तथा उस पर लदे सेमल एवं सलाई के पटरों के साथ उसे जब्त कर लिया गया था। चालक एवं सफाईकर्मी के साथ पांच व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया था। वनपाल की लिखित रिपोर्ट पर भारतीय वन अधिनियम की धाराओं 33, 41, 42 एवं 52 के अधीन एक मामला दर्ज किया गया था।

3. याची द्वारा यह दावा किया गया है कि अभियुक्त सं॰ 8-जसीन मियां एवं अभियुक्त सं॰ 9-रामरेखा साव द्वारा बरांव गांव में पिस्तौल की नोक पर बलपूर्वक पटरों को लाद दिया गया था। उक्त अभियुक्त व्यक्तियों ने चालक तथा सफाईकर्मियों को ट्रक गढ़वा ले जाने के लिए बाध्य किया था। पटरे पुराने थे और सीमेंट के आवरण तथा यत्र-तत्र कंक्रीट के साथ छत ढ़ंकने में इस्तेमाल किये गये थे।

4. उक्त लिखित रिपोर्ट के आधार पर, प्राधिकृत पदाधिकारी ने अधिहरण के लिए एक कार्यवाही प्रारंभ किया था। याची को भी नोटिस निर्गत की गयी थी। नोटिस प्राप्त करने पर याची हाजिर हुआ था तथा कारणपृच्छा दाखिल किया था अन्य के साथ-साथ यह कथन करते हुए कि ट्रक डाल्टेनगंज से आ रहा था और रास्ते में इसे पिस्तौल की नोक पर अभियुक्त जसीम मियां एवं रामरेखा साव द्वारा रोक लिया गया था। उन्होंने पटरों को ट्रक पर जबर्दस्ती लाद दिया था तथा याची को प्लैंक्स गढ़वा ले जाने के लिए बाध्य किया था।

5. विद्वान प्राधिकृत पदाधिकारी-सह-डिवीजनल वन पदाधिकारी ने याची के जवाब को अस्वीकार कर दिया था यह सम्परीक्षित करते हुए कि अगर पटरों को ट्रक पर जबर्दस्ती लादा गया था, तब पुलिस को इसकी सूचना क्यों नहीं दी गयी थी। विद्वान प्राधिकृत पदाधिकारी-सह-डिवीजनल वन पदाधिकारी ने उस आधार पर याची के वाहन तथा उस पर लदे पटरों का अधिहरण करते हुए आक्षेपित आदेश पारित कर दिया।

6. याची ने उपायुक्त, पलामू के समक्ष अपील में उक्त आदेश की आलोचना की थी। इसे वन अधिहरण अपील सं० XV/24 वर्ष 2001-02 के तौर पर निर्बंधित किया गया था। याची ने कई आधार लिये थे इस आधार समेत कि बंदूक की नोंक पर ट्रक को गढ़वा तक अभियुक्त सं० 8 एवं 9 द्वारा बलपूर्वक अपने कब्जे में ले लिया गया था जहां इसे जब्त कर लिया गया था। बीच के रास्ते में कोई पुलिस थाना नहीं था। याची के पास एक प्राथमिकी दर्ज करने का कोई अवसर नहीं था। याची ने यह भी आधार लिया था कि याची को इसकी जानकारी नहीं थी कि जिन पटरों को लादा जा रहा था, वे वन उत्पाद थे या यह कि उक्त अभियुक्त सं० 8 एवं 9 ने कोई वन अपराध कारित किया है।

7. याची द्वारा उठाये गये आधारों पर उपयुक्त रूप से विचार किये बिना विद्वान अपीलीय न्यायालय ने अपील खारिज कर दिया था।

8. तत्पश्चात्, याची ने आयुक्त एवं सचिव, वन एवं पर्यावरण विभाग, झारखंड सरकार के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल किया था। याची ने पुनरीक्षण में कई आधार लिये थे। विद्वान पुनरीक्षण प्राधिकार ने यह दृष्टिकोण अपनाया था कि याची के वाहन को पटरों के साथ जब्त किया गया था और यह अपने आप में एक वन अपराध बनाता था। उन्होंने यह भी सम्परीक्षित किया कि अभियुक्त सं० 8 एवं 9 द्वारा बलपूर्वक ट्रक को नियंत्रण में लेने का अभिवाक् एक बहाना है। विद्वान पुनरीक्षण प्राधिकार ने भी पुनरीक्षण खारिज कर दिया था।

9. याची ने पूर्वोक्त प्राधिकारों द्वारा पारित आक्षेपित आदेशों को चुनौती देते हुए इस रिट याचिका को दाखिल किया है। उक्त आदेशों को मुख्यत: इस आधार पर चुनौती दी गयी है कि यह एक स्वीकृत मामला है कि पटरे अभियुक्त सं० 8 एवं 9 के थे। याची वाणिज्यिक वाहन का एक निर्बंधित मालिक है। वाहन डाल्टेनगंज से आ रहा था और बीच रास्ते में इसे रोक दिया गया था और पटरों को अभियुक्त सं० 8 एवं 9 द्वारा जबर्दस्ती लाद दिया गया था। अभिलेख पर इसका खंडन करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं था कि पटरों को याची के ट्रक पर बलपूर्वक नहीं लादा गया था। विद्वान पुनरीक्षण प्राधिकार एवं अन्य प्राधिकारों ने लापरवाही के साथ अभिनिर्धारित किया है कि याची द्वारा बहाना के तौर पर उक्त अभिवाक लिया गया है। इस न्यायालय द्वारा पिछले इतिहास से संबंधित रिपोर्ट मंगायी गयी थी और ऐसी स्पष्ट रिपोर्ट थी कि याची कभी भी कोई दांडिक मामले में अंतर्ग्रस्त नहीं रहा था और उसका कोई आपराधिक इतिहास नहीं है। याची के इस आधार पर विचार किये बिना आक्षेपित आदेश पारित किये गये हैं कि याची को इसकी जानकारी नहीं थी कि पटरे वन उत्पाद थे और वे किसी वन अपराध में संलिप्त था। पटरे पुराने थे तथा कपाट के निर्माण के लिए इस्तेमाल किये जाते थे जो कि देखने से ही प्रतीत होता था। समूची कार्यवाही एवं आदेश शंका पर आधारित है। प्राधिकृत पदाधिकारी द्वारा तथा अपीलीय एवं पुनरीक्षण प्राधिकारों द्वारा निकाले गये निष्कर्ष कोई वैधानिक साक्ष्यों पर आधारित नहीं है और पूर्णत: अनुचित एवं अपोषणीय है तथा उनके आदेश इस न्यायालय द्वारा निरस्त किये जाने योग्य हैं।

10. प्रत्यर्थीगण ने याचिका का प्रतिवाद किया था अन्य के साथ-साथ यह कथन करते हुए कि यद्यपि याची पटरों का मालिक नहीं था, वन उत्पाद उसके ट्रक पर लदे हुए पाए गये थे। याची पटरों का

परिवहन करने के लिए कोई वैध कागजात पेश नहीं कर सका था। अभियुक्त सं॰ 8 एवं 9 द्वारा पिस्तौल की नोंक पर ट्रक पर कब्जा किये जाने का अभिकथन भी किसी साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है। विद्वान प्राधिकृत पदाधिकारी, अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षण प्राधिकारी ने इस पहलू पर विचार किया है और उचित रूप से याची के अभिवाक को अस्वीकार कर दिया है। आदेश में कोई दुर्बलता या अवैधानिकता नहीं है तथा रिट याचिका खारिज किये जाने योग्य है।

11. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है तथा अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्रियों पर विचार किया है।

12. डिवीजनल वन प्राधिकारी-सह-प्राधिकृत पदाधिकारी के आदेश के परिशीलन पर, मैं पाता हूँ कि यद्यपि याची ने जोर देकर दावा किया था कि ट्रक को अभियुक्त सं॰ 8 एवं 9 द्वारा पिस्तौल की नोंक पर कब्जे में ले लिया गया था, फिर भी याची के उक्त दावे पर कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया गया है।

13. विद्वान प्राधिकृत पदाधिकारी ने एक संक्षिप्त आदेश पारित किया है यह सम्परीक्षित करते हुए कि मौके पर अवैधानिक वन उत्पाद की जब्ती तथा ट्रक के मालिक की गिरफ्तारी इस पर विश्वास करने के लिए कोई गुंजाईश नहीं छोड़ती है कि उसने अपराध में सांठ-गांठ नहीं की थी। उन्होंने अभिनिर्धारित किया कि अवैधानिक वन उत्पाद का परिवहन उतना ही बड़ा वन अपराध है जितना की जंगल से इसे काटना उस आधार पर उन्होंने याची के ट्रक का अधिहरण करते हुए आक्षेपित आदेश पारित कर दिया है।

14. विद्वान अपीलीय प्राधिकारी तथा पुनरीक्षण प्राधिकारी ने भी उक्त आदेश को बरकरार रखा है याची द्वारा लिये गये आधारों पर विचार किये बिना तथा इसका मूल्यांकन किये बिना कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कोई साक्ष्य या सामग्री नहीं है कि याची को इसकी जानकारी थी कि लादे गये पटरे वन उत्पाद थे जो कपाट बनाने में प्रयुक्त पुराने पटरे थे।

15. भारत के संविधान का अनुच्छेद 300-A प्रावधान करता है कि विधि के प्राधिकार के सिवाए किसी भी व्यक्ति को उसकी सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा।

16. भारतीय वन अधिनियम (बिहार संशोधन) की धारा 52 की उपधारा 5 स्पष्ट रूप से निम्नवत् अनुबद्ध करती है:–

> *^(5) mièkkjk (3) d vèkhu fdlh midj.k] gfFk;kj] ukdk] okgu] jLlh] fldMh] ;k fdlh vU; lkexh (vfHkxghr ou mRikn d vykok) d vfèkgj.k dk dkb vkn'k ikfjr ugh fd;k tk,xk vxj mièkkjk (4) d [kM (b) e fufn"V dkb 0;fDr ikfèkÑr inkfèkdkjh dk lekèkku djkr g, ;g fl) dj nrk g fd ,lk dkb midj.k] gfFk;kj] ukdk] okgu] jLlh] fldMh ;k vU; lkeku mldh tkudkjh ;k lkB&xkB d fcuk] tk Hkh fLFkfr gk] bLreky fd;k x;k Fkk] ;k mld lod ;k ,tV dh tkudkjh ;k lkB&xkB d fcuk bLreky fd;k x;k Fkk rFkk ou vijkèk dkfjr dju d fy, iokDr oLrvk d bLreky d fo#) lHkh ;fDrlxr ,o vko';d lkoèkkfu;k cjrh x;h FkhA***

17. इस प्रकार, वन अपराध, कारित करने के संबंध में ट्रक के मालिक की जानकारी को सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर किसी अकाट्य सामग्री के बिना धारा 52 के अधीन कोई सम्पत्ति अधिहृत नहीं की जा सकती।

18. वर्तमान मामले में प्राधिकृत प्राधिकारी ने याची के वाहन के अधिहरण का आदेश इस उपधारणा पर पारित किया था कि वाहन के एक बार पटरों से लदा पाये जाने पर, याची के वाहन का अधिहरण करने के उद्देश्य के लिए किसी और जांच की आवश्यकता नहीं थी।

19. विद्वान प्राधिकृत पदाधिकारी का निष्कर्ष अभिलेख पर मौजूद किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है। धारणा या शंका चाहे कितनी भी प्रबल क्यों हो, वैधानिक साक्ष्य का एक प्रतिस्थापन नहीं होती। अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षण प्राधिकारी ने लापरवाही के साथ तथा यांत्रिक रूप से मामले से निपटा तथा अभिलेख पर मौजूद सामग्री तथा विधि के सुसंगत सिद्धांतों को अपनी बुद्धि का इस्तेमाल किये बिना प्राधिकृत पदाधिकारी के आदेश को बरकरार रखा।

20. इस न्यायालय के समक्ष भी प्रत्यर्थीगण अभिलेख पर किसी साक्ष्य को निर्दिष्ट करने में सक्षम नहीं रहे हैं यह सिद्ध करने के लिए कि याची को इसकी जानकारी थी कि इसके वाहन का वन उत्पाद का वहन करने के लिए इस्तेमाल किये जाने की संभावना है तथा वाहन का इस्तेमाल स्वैच्छिक रूप से किया गया था तथा अभियुक्त सं॰ 8 एवं 9 द्वारा बलपूर्वक इसे नियंत्रण में नहीं लिया गया था।

21. इसके अतिरिक्त, प्रत्यर्थीगण द्वारा पटरों के मूल्य का आकलन 12,500/- रुपये किया गया है और उस अभिकथन पर प्रत्यर्थीगण ने याची के ट्रक का अधिहरण कर दिया है, जिसका मूल्य लाखों में है।

22. उपरोक्त परिचर्चा के दृष्टि में, प्राधिकृत पदाधिकारी, अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षण प्राधिकारी के आदेश विधि में समर्थित नहीं किये जा सकते।

23. तद्नुसार, यह याचिका अनुज्ञात की जाती है। प्राधिकृत पदाधिकारी-सह-डिवीजनल वन पदाधिकारी, गढ़वा, दक्षिण वन प्रमंडल द्वारा अधिहरण कार्यवाही सं॰ 15/2001 में पारित दिनांक 4.7. 2001 का आक्षेपित आदेश; अपीलीय प्राधिकारी द्वारा वन अधिहरण अपील सं॰ XV/24 वर्ष 2001-02 में पारित दिनांक 28.11.2002 का आदेश तथा पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पुनरीक्षण केस सं॰ C-44/ 2002 में पारित दिनांक 17.4/18.6.2003 का आदेश निरस्त किया जाता है।

24. प्रत्यर्थीगण को याची का ट्रक तत्काल छोड़ने का निर्देश दिया जाता है।

25. तथापि, व्यय को लेकर कोई आदेश नहीं होगा।

---

ekuuh; idk'k rkfr;k] e[; U;k;k/kh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

मेसर्स मेकॉन लिमिटेड

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W. P. (T) No. 1006 of 2010. Decided on 4th May, 2012.

बिहार वित्त अधिनियम, 1981—धारा 17(3)—प्रभार समेत अतिरिक्त कर दायिता का अधिरोपण—करदाता को सुनवाई का अवसर दिये बिना निर्धारण आदेश पारित किया गया था—नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करके निर्धारण किया गया था—निर्धारण आदेश एवं मांग की नोटिस अपास्त—मांग की नोटिस के अनुसरण में याची से वसूल की गयी किसी राशि का याची को प्रतिदाय किया जाय। (पैराएँ 6 एवं 7)

निर्णयज विधि.—(1994)93 STC 406 (SC)—Referred.

अधिवक्तागण.—M/s. Biren Poddar, Darshana Poddar, Piyush Poddar, Amrita Sinha, For the Petitioner; Rajesh Shankar, For the Respondents.

आदेश

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

2. याची दिनांक 25.1.2007 के निर्धारण आदेश (परिशिष्ट-5) से व्यथित है, जो उपायुक्त वाणिज्यिक कर, बोकारो सर्किल, बोकारो द्वारा बिहार वित्त अधिनियम, 1981 की धारा 17(3) के अधीन वर्ष 2002-03 के लिए पारित किया गया है। इस आदेश द्वारा, याची पर प्रभार समेत अतिरिक्त कर के आधार पर 2,20,474 रुपये की स्वीकृत कर दायिता के विरुद्ध 39,83,019.32 रुपये के बराबर कर अधिरोपित किया गया है और उप-संवेदकों द्वारा निष्पादित कार्य संविदाओं से संबंधित 1,98,34,946 रुपये के टर्न ओभर पर कर अधिरोपित किया गया है तथा 2,00,43,101 रुपये के कर-संदत्त विक्रय पर भी कर अधिरोपित किया गया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ताओं के अनुसार दिनांक 25.1.2007 का आदेश एक पूर्व दिनांकित आदेश है और करदाता को सुनवाई का एक अवसर दिये बिना इसे पारित किया गया था। यह भी निवेदन किया गया है कि याची भारत सरकार का एक उपक्रम है तथा उसका प्रतिनिधि लगातार रूप से निर्धारण पदाधिकारी के समक्ष उपस्थित होता रहा था और अंतत: उसे 2.5.2005 को उपस्थित होने के लिए कहा गया था, जो कि 21 मार्च, 2005 के आदेश पत्रक से प्रकट है और जिसे रिट याची के प्रतिनिधि द्वारा सम्यक् रूप से प्रति हस्ताक्षरित किया गया था। तथापि, 2.5.2005 को न तो याची के मामले पर विचार किया गया और न ही रिट याची को कोई नई तिथि संसूचित की गयी तथा लगभग 6 महीने के उपरांत 21.11.2005 को मामले पर विचार किया गया। 21.11.2005 से कई तिथियां प्रदान की गयीं और उन तिथियों पर यह आदेश किया गया कि करदाता को नई नोटिस निर्गत की जाए परन्तु करदाता को कोई नोटिस निर्गत नहीं की गयी थी। इतना ही नहीं, प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल सम्पूरक प्रति शपथ पत्र में प्रत्यर्थीगण द्वारा यह तथ्य विनिर्दिष्टत: स्वीकार किया गया है कि 21 मार्च, 2005 के उपरांत निर्धारण पदाधिकारी द्वारा याची को कोई नोटिस प्रदान नहीं की गयी थी। यह निवेदन किया गया है कि इतना ही नहीं बल्कि 25.1.2007 को निर्धारण पदाधिकारी द्वारा किये गये अभिकथनानुसार तार्तियत रूप से निर्धारण के उपरांत भी ढ़ाई वर्षों से अधिक समय तक याची को किसी मांग की नोटिस का तामिला नहीं कराया गया था। यह भी निवेदन किया गया है कि निर्धारण आदेश निश्चित रूप से पूर्व तिथि में पारित किया गया था और इसे इस तथ्य से समर्थन मिलता है कि दिनांक 25.1.2007 के आदेश पत्रक के हाशिये पर यह उल्लिखित है कि 31.1.2007 को मांग की एक नोटिस भी भेजी गयी थी। यह तथ्य प्रत्यर्थीगण के ही दस्तावेज, अर्थात्, दिनांक 31.1.2007 की मांग की नोटिस (परिशिष्ट-3) के प्रतिकूल है जिसका 26.10.2009 को करदाता को तामिला कराया गया है जो कि एक सार्वजनिक उपक्रम है। अतएव, याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार सारे तथ्य उपलब्ध हैं एक ऐसा निष्कर्ष निकालने के लिए कि 21 मार्च, 2005 के उपरांत सभी आदेश पत्रक एक दिन में तैयार किये हैं और सारी कार्यवाहियां पूर्व तिथिक हैं।

याची के विद्वान अधिवक्ता ने **आंध्र प्रदेश राज्य बनाम एम॰ रामकिश्तैया एवं अन्य** के मामले, जो कि **(1994) 93 STC 406 (SC)** में रिपोर्ट किया गया था, में प्रदत्त निर्णय पर भरोसा किया था।

4. प्रत्यर्थी-विभाग के विद्वान अधिवक्ता ने स्वीकार किया कि यह सही है कि अभिलेख पर यह दर्शाने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि 2.5.2005 के उपरांत करदाता को कोई नोटिस निर्गत की गयी थी। तथापि, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, याची का प्रतिनिधि स्वयं प्राधिकार के समक्ष हाजिर हुआ करता था और बाद की तारिखों पर वह हाजिर नहीं हुआ था। अतएव, करदाता को नोटिस

का तामिला कराने की कोई आवश्यकता नहीं थी। यह भी निवेदन किया गया है कि ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि आदेश पूर्व तिथिक आदेश है।

5. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के निवेदनों पर विचार किया तथा आदेश पत्रकों, जिनकी प्रतिलिपियां अभिलेख पर परिशिष्ट-4 के तौर पर रखी गयी हैं, तथा दिनांक 31 जनवरी, 2007 की मांग की नोटिस-परिशिष्ट-3 समेत अभिलेख का परिशीलन किया। उपरोक्त दस्तावेजों से यह स्पष्ट है कि करदाता का प्रतिनिधि नियमित रूप से निर्धारण पदाधिकारी के समक्ष उपस्थित हुआ करता था और अंतिम बार वह 2 मई, 2005 को हाजिर हुआ था तथा कर निर्धारण पदाधिकारी के समक्ष अपनी उपस्थिति के साक्ष्य के तौर पर आदेश पत्रक के हाशिये पर उसने अपने हस्ताक्षर किये थे। 2 मई, 2005 को, कर निर्धारण पदाधिकारी ने अगली तिथि 21 मई, 2005 तय की थी। 21 मई, 2005 को मामले की सुनवाई नहीं हुई थी और इसे 6 महीनों के उपरांत 21.11.2005 को विचारित किया गया था और तत्पश्चात्, कई तारीखें दी गयी थी और आदेश पत्रकों में यह स्पष्टत: उल्लिखित था कि करदाता को नई नोटिस निर्गत की जाए स्वाभाविक रूप से इस कारण कि 21 मई, 2005 को कार्यवाही के लिए तय तारीख पर मामले पर विचार नहीं हुआ था। प्रति शपथ पत्र में किये गये कथन की दृष्टि में, यह स्पष्ट है कि 21 मई, 2005 के उपरांत कार्यवाहियों की तिथि करदाता को संसूचित करते हुए कोई भी नोटिस निर्गत नहीं की गयी थी। अतएव, दिनांक 21 जनवरी, 2007 का आक्षेपित आदेश करदाता को सुनवाई का अवसर उपलब्ध कराये बिना पारित किया गया था तथा करदाता की किसी जानकारी के बिना पारित किया गया है और अतएव, इस आधार पर अपास्त किये जाने योग्य है।

6. जहां तक याची-करदाता के विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क का सवाल है कि 21 नवम्बर, 2005 से निर्धारण के आदेश तक समूचे आदेश तक पारित समूचे आदेश-पत्रक पूर्व तिथि के आदेश पत्रक हैं, हमारा सुविचारित मत है कि इस आशंका से इंकार नहीं किया जा सकता इस तथ्य की दृष्टि में कि निर्धारण आदेश करने के लिए अवधि के अवसान के केवल 6 दिन पहले तथा दिनांक 25.1.2007 के आदेश-पत्रक के हाशिये पर 31 जनवरी, 2007 को मांग की नोटिस के भेजे जाने का एक पृष्ठांकन करते हुए करदाता को सुनवाई का अवसर दिये बिना 25.1.2005 को तात्पर्यित रूप से कर निर्धारण आदेश पारित किया गया है परन्तु ऐसी मांग की नोटिस का करदाता को तामिला नहीं कराया गया, जो एक सार्वजनिक उपक्रम है जिस पर कर निर्धारण आदेश तथा मांग की नोटिस का दिन के घंटों के दौरान ही तामिला कराया जा सकता था और ढ़ाई वर्षों के विलम्ब के उपरांत, अर्थात्, 26 अक्टूबर, 2009 को करदाता को इस पर तामिला कराया गया था जबकि याची एक सार्वजनिक उपक्रम है और रांची में उसका कार्यालय है तथा कर निर्धारण कार्रवाई से वह बचता नहीं रहा है। उपरोक्त कारणों की दृष्टि में तथा 25 जनवरी, 2007 के तात्पर्यित आदेश द्वारा नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करके कर निर्धारण करने के कारण, कर निर्धारण आदेश अपास्त किये जाने योग्य है और अतएव अपास्त किया जाता है। परिणामत:, याची के विरुद्ध मांग की नोटिस भी अपास्त की जाती है।

7. चूंकि, दिनांक 25.1.2007 का आदेश तथा मांग की नोटिस अपास्त की जाती है, तब कर दायिता के विरुद्ध मांग की नोटिस के अनुसरण में याची से वसूली गयी कोई भी राशि सांविधिक ब्याज के साथ रिट याची को लौटा दी जाएगी।

8. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थीगण को नयी कार्यवाही प्रारंभ करने की अनुमति दी जाए।

प्रत्यर्थीगण तद्नुसार कार्यवाही कर सकते हैं, अगर विधि अनुमति देती हो।

ekuuh; vkjï dï ejkfB;k ,o Mhï ,uï mikè;k;] U;k;efrx.k

राज कुमार सिंह मुंडा

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal No. 1268 of 2003 (D.B.). Decided on 14th May, 2012.

एस॰ टी॰ सं॰ 511 वर्ष 2001 में श्री रबीन्द्र नाथ तिवारी, अपर न्यायिक आयुक्त, एफ॰ टी॰ सी॰ 9, राँची द्वारा पारित दिनांक 22.11.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302 एवं 309—हत्या और आत्महत्या करने का प्रयास–आजीवन कारावास–अपीलार्थी ने संयोगवश अपनी पत्नी की हत्या कर दी और तब भ्रमित होकर आत्महत्या करने का प्रयास किया–चश्मदीद गवाह घटना के बारे में विवरण देने में संगत नहीं–मृतक के मस्तक पर तीन उपहतियाँ अस्पष्ट बनी रही–अभिकथित घटना के लिए कोई हेतु नहीं–अपीलार्थी लगभग 11 वर्षों से कारा में बना रहा है–अपीलार्थी निर्मुक्त किया जाए–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–None, For the Appellant; A.P.P., For the State.

न्यायालय द्वारा.–अपीलार्थी की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ। किंतु, राज्य के अधिवक्ता उपस्थित हैं।

2. यह अपील एस॰ टी॰ सं॰ 511 वर्ष 2001 में अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए और कठोर आजीवन कारावास भुगतने और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 309 के अधीन आरोप के लिए छह माह का कारावास भुगतने का दंडादेश उसे देते हुए श्री रबिन्द्र नाथ तिवारी, अपर न्यायिक आयुक्त, एफ॰ टी॰ सी॰ 9, राँची द्वारा पारित दिनांक 22.11.2003 के निर्णय के विरुद्ध दाखिल की गयी है। दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया था।

3. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि अ॰ सा॰ 7 (महेश मुंडा) ने दिनांक 8.8.2001 को रात्रि 2.30 बजे अस्पताल में अपनी बहन सकरी देवी के मृत शरीर के निकट फर्दबयान दर्ज किया कि लगभग एक वर्ष पहले उसका विवाह अपीलार्थी के साथ हुआ था। दिनांक 5.8.2001 को प्रातः लगभग 7 बजे वह झाड़ू बना रही थी जहाँ अपीलार्थी बैठा हुआ था। उसने अपीलार्थी को झाड़ू काटने को कहा। ऐसा करते हुए जब झाड़ू काटने के लिए अपीलार्थी ने 'दाब' का उपयोग किया, यह अचानक सकरी देवी के मस्तक से टकराया और खून बहने की उपहति कारित किया और तब वह गिर गयी। इस पर, अपीलार्थी ने भ्रमित होकर अपनी गर्दन काट कर आत्महत्या करने का प्रयास किया। वहाँ उपस्थित लोगों ने उसके हाथ से 'दाब' छीन लिया।

4. भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 के अधीन प्राथमिकी दर्ज की गयी थी किंतु अन्वेषण अधिकारी के अनुरोध पर भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302 और 309 को जोड़ा गया था।

5. मृतका की माता अ॰ सा॰ 1 ने केवल इतना कहा कि जब उसकी पुत्री झाड़ू बना रही थी, अपीलार्थी ने दाब से उस पर प्रहार किया। अ॰ सा॰ 2 मृतका की चाची है। उसने अन्य बातों के साथ कहा कि अपीलार्थी ने सकरी को छोटा झाड़ू बनाने को कहा जिसके लिए वह सहमत नहीं हुई। अपीलार्थी ने 'दाब' से उसके सिर पर प्रहार किया। जब उसकी 'गोतनी' ने उसको बचाने का प्रयास किया, अपीलार्थी ने उस पर भी प्रहार किया। अ॰ सा॰ 3 अनुश्रुत गवाह है। अ॰ सा॰ 4 डॉक्टर है जिसने शव परीक्षण किया और मृतका के मस्तक पर तीन उपहतियों को पाया। अ॰ सा॰ 5, 6 और 8 अनुश्रुत गवाह हैं। अ॰ सा॰

7 सूचक है। उसने प्राथमिकी में विवरण का समर्थन किया है। उसने कहा कि अपीलार्थी और मृतका के बीच अच्छा संबंध था। अ॰ सा॰ 9 अन्वेषण अधिकारी है। अ॰ सा॰ 10 और 11 औपचारिक गवाह हैं।

6. राज्य के अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन करने के बाद, हम अपीलार्थी को संदेह का लाभ देने के इच्छुक हैं। चश्मदीद गवाह घटना के बारे में विवरण में संगत नहीं है। मृतका के मस्तक पर तीन उपहतियाँ अस्पष्ट बनी रही। अभिकथित घटना के लिए कोई हेतु प्रतीत नहीं होता है। घटना दुर्घटनावश हुई अथवा छोटा झाड़ू बनाने के अपीलार्थी के आदेश की अवज्ञा करने के कारण हुई, स्पष्ट नहीं है। अपीलार्थी लगभग 11 वर्षों से कारा में बना हुआ है।

7. परिणामस्वरुप, यह अपील अनुज्ञात की जाती है।

8. अपीलार्थी, जो लगभग 11 वर्षों से कारा में बना हुआ है, को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

न्यायालय स्वयं अपने प्रस्ताव पर

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (P.I.L.) No. 1783 of 2008. Decided on 27th April, 2012.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–क्वार्टर–आवंटी संपत्ति के स्वामी द्वारा बेदखली का प्रतिरोध नहीं कर सकता है–आवेदक, जो परिसर आवंटित किए जाने का दावा करता है, का संपत्ति में अधिकार, हक और हित नहीं है–जब आवेदक से पहले ही कब्जा लिया जा चुका है, उसे कब्जा वापस पाने का दावा करने का अधिकार नहीं है जब आवेदक संपत्ति में अधिकार, हक और हित का दावा नहीं कर रहा है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Mahesh Tiwari, For the Applicant; Mr. S. Shrivastava, For the Respondent; Mr. Rajiv Ranjan, For the Respondent-BSL; Mr. A.K. Mehta, For the Respondents-CCL & BCCI; Md. Mokhtar Khan, For the UOI/CAG.

आदेश

आई॰ ए॰ सं॰ 633 वर्ष 2012

आवेदक के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. आवेदक का प्रतिवाद यह है कि आवेदक रजिस्टर्ड बोकारो स्टील मजदूर यूनियन का महासचिव था और स्वयं प्रत्यर्थी कंपनी बोकारो स्टील लिमिटेड ने यूनियन को तीन परिसर आवंटित किया था जिसके प्रमाण में आवेदक ने परिशिष्टों 1, 2 और 3 के तहत आदेशों की प्रतियों को प्रस्तुत किया है। निवेदन किया गया है कि आवेदक अप्राधिकृत अधिभोगी कभी नहीं था और वह प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा आवंटित परिसरों पर काबिज था। निवेदन किया गया है कि जब यूनियन के महासचिव को सांसद के रूप में निर्वाचित किया गया था, उसे बड़ा बंगला आवंटित किया गया था और जब वह सांसद नहीं रहा, उसने स्वयं छोटे बंगला के लिए अनुरोध किया था जिसे पहले यूनियन के महासचिव, आवेदक को आवंटित किया गया था। निवेदन किया गया है कि डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 1783 वर्ष 2011 में इस न्यायालय की

खंडपीठ द्वारा पारित आदेश की दृष्टि में दिनांक 27.7.2011 को यूनियन का परिसर सील कर दिया गया था। अब फरवरी, 2012 में आवेदक को कब्जा देने का अनुतोष इप्सित करते हुए इस अंतर्वर्ती आवेदन को दाखिल किया गया है।

3. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चूँकि आवेदक अप्राधिकृत अधिभोगी नहीं है, अत: वह परिसर का कब्जा पाने का हकदार है।

4. हमने आवेदक के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन पर विचार किया है। यहाँ यह उल्लेख करना समुचित होगा कि इस न्यायालय ने डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 1783 वर्ष 2011 में केवल चार लोक उपक्रमों के 35,000 क्वार्टरों और बंगलों के अधिक्रमण और इन कंपनियों के हजारों एकड़ भूमि पर अधिक्रमण के गंभीर मामले पाए थे। यह पाते हुए कि उच्च पदों पर आसीन उच्च पदाधिकारियों, जो सांसद अथवा आरक्षी अधीक्षक जैसे सरकारी अधिकारी अथवा यूनियन नेता, आदि हो सकते हैं के नाम भी अधिक्रमणकर्ता की सूची में थे। समस्त अधिक्रमणों को हटाने के अभियान में दिनांक 27 जुलाई, 2011 के बाद इस न्यायालय द्वारा अनेक आदेश पारित किए गए थे और यह स्पष्ट करने के लिए सी॰ ए॰ जी॰ को नोटिस भी जारी किए गए थे कि क्या सी॰ ए॰ जी॰ ने लोक उपक्रमों के ऐसे घोर कुप्रबंधन को ध्यान में लिया है और इन कंपनियों ने अधिक्रमणकारियों के विद्युत प्रभार के लिए 100 करोड़ रुपयों से अधिक का भुगतान किया है। पी॰ आई॰ एल॰ में इस न्यायालय द्वारा पारित अनेक आदेशों के कारण हजारों अधिक्रमणों को हटाया गया था। उस तथ्यपरक स्थिति में प्रत्यर्थी कंपनी बी॰ एस॰ एल॰ ने इसी स्थिति को पुन: दोहराए जाने से रोकने के लिए समुचित व्यवस्था करके निवारक कदमों को उठाने की अनुमति इप्सित करते हुए आवेदन दाखिल किया और इस न्यायालय ने पहले ही आदेश दिया कि कंपनी अपनी संपत्तियों की व्यवस्था करने के लिए स्वतंत्र है और यह न्यायालय कंपनी के प्रबंधन में किसी तरह से हस्तक्षेप नहीं करेगा। इस न्यायालय का सरोकार केवल जन संपत्तियों, चल अथवा अचल के दुरुपयोग के साथ हैं और हमने पहले ही कहा है कि चार कंपनियों के 35,000 क्वार्टरों और बंगलों का अधिक्रमण खतरनाक स्थिति है और उस तथ्यपरक स्थिति में यदि कंपनी ने कार्रवाई किया है और संपत्तियों जिन्हें कंपनी अप्राधिकृत रूप से कब्जा किया गया समझती है, का कब्जा लेने के लिए कार्रवाई कर रही है, तब अनेक कारणों से हम मामले में कोई अनुतोष प्रदान करने के लिए इस अंतर्वर्ती आवेदन को ग्रहण करने के इच्छुक नहीं हैं जब जुलाई, 2011 में परिसर सील कर दिया गया था और यह अंतर्वर्ती आवेदन प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा कार्रवाई किए जाने के बाद फरवरी, 2012 में दाखिल किया गया है।

5. इस चरण पर, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वर्तमान आवेदक ने नियमित रिट याचिका भी दाखिल किया है, जो विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष लंबित है और विद्वान एकल न्यायाधीश ने संप्रेक्षित किया है कि आवेदक डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) 1783 वर्ष 2008 में पारित आदेश की दृष्टि में खंडपीठ के पास जा सकता है।

6. चाहे जो भी हो, तथ्य बना रहता है कि आवेदक, जो परिसर को आवंटित किए जाने का दावा करता है, का संपत्ति में अधिकार, हक और हित नहीं है और जब आवेदक से पहले ही कब्जा लिया जा चुका है, तब उसे कब्जा वापस पाने का दावा करने का अधिकार नहीं है जब स्वीकृत रूप से आवेदक संपत्ति में हक और हित का दावा नहीं कर रहा है, न केवल तब बल्कि आवेदक का संपत्ति में हक नहीं है। समस्त तथ्यों और परिस्थितियों में आवंटी संपत्ति के स्वामी द्वारा बेदखली का प्रतिरोध नहीं कर सकता है, विशेषत: जब यह लोक उपक्रमों की संपत्तियों पर व्यापक अधिक्रमण का मामला है।

7. अत: यह अंतर्वर्ती आवेदन खारिज किया जाता है।

डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 1783 वर्ष 2008

8. सी॰ ए॰ जी॰ के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि लेखा परीक्षा के बाद सार्वजनिक क्षेत्र की इकाईयों में संपत्तियों का व्यापक घालमेल पाया गया था और सी॰ ए॰ जी॰ द्वारा अनेक आपत्तियाँ की गयी थी और केंद्रीय मंत्रालय को सम्यक रूप से सूचित किया गया था।

9. यदि ऐसा है, तब इस कारण से यह गंभीर मामला है कि हमने पहले ही इस तथ्य को ध्यान में लिया है कि 35,000 क्वार्टर और बंगले राजनीति, यूनियन और सरकार के व्यक्तियों के कब्जे में थे और सी॰ ए॰ जी॰ ने केंद्र सरकार को लिखा था और भारत संघ की जानकारी में इसे लाया था कि कंपनियाँ कंपनी के कोष से सौ करोड़ रुपयों से अधिक का भुगतान विद्युत और जल प्रभारों का भुगतान करने के लिए कर रही हैं।

10. कंपनियों और भारत संघ के विद्वान अधिवक्ता ने स्थिति, जिसके अधीन लोक खजाने को 100 करोड़ रुपयों से अधिक की हानि कारित करते हुए ऐसी गतिविधियाँ की जा रही थी, को स्पष्ट करते हुए जिम्मेदार अधिकारियों द्वारा समुचित शपथपत्र दाखिल करके समस्त विवाद्यकों के बारे में इस न्यायालय को संबोधित करने के लिए समय इप्सित किया।

11. शपथ पत्र को दिनांक 12 जून, 2012 तक दाखिल करना होगा।

12. इस मामले का दिनांक 12 जून, 2012 को सुनवाई के लिए रखा जाए।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

दूधनाथ राम

cuke

मेसर्स टाटा आयरन एंड स्टील कं॰ लि॰ का प्रबंधन

L.P.A. No. 317 of 2008. Decided on 3rd May, 2012.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–दंड–याची को घूस लेते हुए रंगे हाथ पकड़ा गया–जब अपीलार्थी डयुटि पर था, उसने किसी व्यक्ति से 150/- रुपया लिया–स्वयं घूस लिया जाना आदेश पारित करने का पर्याप्त आधार है–इस पर किसी तरीके से समझौता नहीं किया जा सकता है–कोई व्यक्ति उस सीमा तक जहाँ तक वह कर सकता है काम को डिस्टर्ब और प्रदूषित कर सकता है–आक्षेपित अधिनिर्णय अभिपुष्ट–अपील खारिज। (पैराएँ 5 से 9)

अधिवक्तागण.–M/s Ananda Sen, Ranjan Kumar, For the Appellant; M/s G.M. Mishra, T.Kabiraj, Umesh Mishra, For the Respondent.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. अपीलार्थी डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5477 वर्ष 2007 में पारित विद्वान एकल न्यायाधीश के दिनांक 21.4.2008 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा श्रम न्यायालय, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 5.6.2007 के अधिनिर्णय को चुनौती देते हुए अपीलार्थी की रिट याचिका खारिज कर दी गयी है।

3. तथ्य प्रकट करते हैं कि याची को, जब वह 'ई॰' शिफ्ट में कर्तव्य पर था, 150/- रुपया घूस लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया था। श्रम न्यायालय ने पक्षों के साक्ष्य पर विचार करने के बाद अभिनिर्धारित

किया कि याची को वस्तुत: घूस लेते रंगे हाथों गिरफ्तार किया गया था और इसके तुरन्त बाद 150/- रुपयों की राशि भी बरामद की गयी थी। कर्मकार को दिया गया दंड अधिनिर्णय द्वारा मान्य ठहराया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश ने भी मामले के तथ्यों पर विचार करने के बाद रिट याचिका को खारिज कर दिया, अत: यह एल॰ पी॰ ए॰ दाखिल किया गया है।

4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि अपीलार्थी को केवल माल प्राप्त करने का कर्तव्य दिया गया था और, इसलिए, कोई अवसर नहीं था और वर्तमान मामले में घूस लेने या देने का कोई कारण नहीं हो सकता था। यह निवेदन भी किया गया है कि एक अन्य व्यक्ति अर्थात बी॰ के॰ सिंह को घूस लेते रंगे हाथ पकड़ा गया था किंतु उसके मामले में, वह सेवा में पुनर्बहाल किया गया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य नहीं हैं जिसके आधार पर यह निष्कर्षित किया जा सकता है कि विभागीय कार्यवाही में और श्रम न्यायालय के समक्ष किए गए अपीलार्थी के बचाव की दृष्टि में घूस के रूप में धन लिया गया था। अपीलार्थी का बचाव यह था कि दिनांक 24.1.1995 को प्रात: लगभग 11 बजे आपूर्तिकर्ता कर्मकार के पास आया और कुछ अत्यावश्यक काम के लिए 150/- रुपयों की राशि मांगा। उक्त व्यक्ति सामान्यत: और विगत काल में भी अपीलार्थी से धन लिया करता था। वर्तमान मामले में, आपूर्तिकर्ता ने 150/- रुपयों के उक्त धन को लौटा दिया। कर्मकार ने यह भी स्वीकार किया कि वह प्रत्यर्थी कंपनी के कर्मकारों एवं अन्य व्यक्तियों से घिरा हुआ था और उससे 150/- रुपया बरामद किया गया था। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, जहाँ तक घूस मांगने और लेने का संबंध है, अपीलार्थी द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण की दृष्टि में कोई साक्ष्य नहीं है।

5. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया है और अभिलेख का परिशीलन भी किया है। इस मोड़ पर यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि रिट याचिका दो गणनाओं पर ग्रहण की गयी थी। प्रथमत:, यह कि क्या सेवा समाप्ति का आदेश उस व्यक्ति, जिससे अपीलार्थी को अवैध परितोषण प्राप्त करता हुआ अभिकथित किया गया है, के अपरीक्षण के आधार पर विधि की दृष्टि में संपोषित किया जा सकता है और द्वितीयत:, यह कि क्या दंड दोष के अनुपात में था क्योंकि केवल 150/- रुपया घूस लेने का अभिकथन है।

6. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि व्यक्ति, जिससे राशि ली गयी थी, का परीक्षण विभागीय कार्यवाही में किया गया था और, इसलिए, प्रथम आधार शेष नहीं रहता है। यह भी निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी द्वारा किया गया बचाव इस तथ्य की दृष्टि में अविश्वसनीय था कि स्वयं अपीलार्थी ने उस व्यक्ति, जो धन वापस प्राप्त कर रहा था, के विरुद्ध परिवाद दर्ज किया था।

7. चाहे जो भी हो, यह निर्विवादित तथ्य है कि जब अपीलार्थी कर्तव्य पर था, उसने किसी व्यक्ति से 150/- रुपया लिया था और स्वीकृत रूप से, वह कंपनी को मालों की आपूर्ति करने वाला था। यदि श्रम न्यायालय ने, साक्ष्य के अधिमूल्यन के बाद, अपीलार्थी के बचाव को अस्वीकार कर दिया है कि यह आपूर्तिकर्ता द्वारा अपीलार्थी को धन लौटाए जाने का मामला था, तब यह शुद्धत: तथ्य का प्रश्न है। अन्यथा भी, प्रकटत: बचाव अविश्वसनीय है। उक्त कारण की दृष्टि में, हम याची/अपीलार्थी को दोषी अभिनिर्धारित करने वाले आदेश में हस्तक्षेप का कारण नहीं पाते हैं।

8. जहाँ तक मात्रा का संबंध है, स्वयं घूस लिया जाना आदेश, जिसे रिट याची के विरुद्ध पारित किया गया है, पारित करने के लिए पर्याप्त आधार है और इस पर किसी तरीके से समझौता नहीं किया जा सकता है क्योंकि पद, जिसे कंपनी के लिए अन्य पक्षों से मालों को प्राप्त करने के लिए याची धारण

कर रहा था, को देखते हुए उसने 150/- रुपया घूस लिया था। इस कारण से 150/- रुपयों की राशि अप्रासंगिक हो सकती है क्योंकि कोई व्यक्ति उस सीमा तक जहाँ तक वह कर सकता है, काम को डिस्टर्ब और प्रदूषित कर सकता है और व्यक्ति जो निम्नतर पद धारण कर रहा है यदि ऐसी गतिविधियों में लिप्त होता है, वह प्रणाली को हानि कारित कर सकता है क्योंकि उसे अनेक व्यक्तियों के साथ व्यवहार करना पड़ सकता है।

9. चाहे जो भी हो, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में और श्रम न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप करने का मामला नहीं बनता है। अत: एल॰ पी॰ ए॰ गुणागुण रहित होने के कारण खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

विशाल ओराँव

cuke

सेंट्रल कोल फील्ड्स लिमिटेड एवं अन्य

W.P. (S) No. 5762 of 2009. Decided on 7th May, 2012.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति लाभ एवं अनुकंपा पर नियुक्ति–प्रत्यर्थीगण ने भुगतान का विवरण दिया है जिसका भुगतान विधिक उत्तराधिकारियों को पहले ही किया जा चुका है–एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ 5 के निबंधनानुसार अवयस्क आश्रितों के नाम को रखने का प्रावधान वर्ष 1996 में प्रभाव में लाया गया था किंतु याची की माता की मृत्यु वर्ष 1993 में हो चुकी थी–अनुज्ञेय देयों के भुगतान के लिए महाप्रबंधक के समक्ष अभ्यावेदन देने की स्वतंत्रता याची को दी गयी। (पैराएँ 5 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Manoj Kr. Mishra, For the Petitioner; M/s Ananda Sen, K. Panda, For the Respondents.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता तथा साथ ही प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. याची ने ब्याज के साथ मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति लाभों के भुगतान के लिए और याची की माता की मृत्यु के कारण अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए भी प्रत्यर्थीगण को निर्देश जारी करने के लिए इस रिट याचिका को दाखिल किया है।

3. याची की ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची की माता की मृत्यु कार्यरत रहते हुए दिनांक 6.1.1993 को हो गयी जब वह सी॰ सी॰ एल॰ के अधीन केंद्रीय सौंडा कोलियरी में पी॰ आर॰ लोडर के रूप में काम कर रही थी। आगे निवेदन किया गया है कि याची ने अपनी माता की मृत्यु के कारण अनुकंपा पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए भी प्रार्थना किया है।

4. प्रत्यर्थीगण उपस्थित हुए हैं और अपना प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है जिसमें याची और उसके भाईयों को किए गए भुगतानों का विवरण दिया गया है, किंतु साथ ही उन्होंने अनुकंपा पर नियुक्ति के दावा को इस आधार पर इनकार किया है कि याची की माता की मृत्यु के समय पर पूर्वोक्त एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ 4, जो समय की प्रासंगिक अवधि के दौरान प्रभाव में था, में लाइव रोस्टर पर अवयस्क को रखने

का प्रावधान नहीं था। आगे कथन किया गया है कि इस याची सहित उसके परिवार के किसी सदस्य ने अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए अथवा मृत्यु–सह–सेवानिवृत्ति देयों के भुगतान के लिए दिनांक 2.6.1993 के पत्र के तहत अनुरोध किए जाने के बावजूद आवेदन नहीं दिया था।

5. प्रत्यर्थीगण ने प्रति शपथपत्र के पैराग्राफ 20 में भुगतानों का विवरण दिया है जिनका भुगतान पहले ही समान अनुपात में वर्तमान याची सहित उसके विधिक उत्तराधिकारियों को किया जा चुका है जो निम्नलिखित है:–

क्रमांक	विधिक उत्तराधिकारी का नाम	मृतका के साथ संबंध	राशि
1.	विशाल ओराँव	पुत्र	6666.67/- रुपया
2.	भगत ओराँव	पुत्र	6666.67/- रुपया
3.	तपन ओराँव	पुत्र	6666.67/- रुपया

6. प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ 21 में आगे कथन किया गया है कि उपदान तैयार किया गया है और दिनांक 22.4.2010 के चेक के तहत जारी किया गया है, किंतु इसे याची और उसके भाईयों द्वारा लिया नहीं गया है, अत:, उपदान अधिनियम, 1972 के अधीन का भुगतान दिनांक 4.6.2010 के पत्र सं॰ 224 के तहत याची और उसके भाईयों को फॉर्म–एल॰ जारी किया गया है जिसे प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट K के रूप में चिन्हित किया गया है। कोयला खान भविष्य निधि के भुगतान के लिए याची और उसके भाईयों को दिनांक 10.3.2000 के पत्र द्वारा आवेदन करने का सलाह दिया गया है और निवेदन किया गया है कि दावेदार की वास्तविकता और प्रासंगिक नियमों, विनियमों, सन्नियमों, प्रावधानों और विभिन्न निर्देशों के परीक्षण और संतुष्टि पर दावा प्रसंस्कृत किया जाएगा। सामूहिक बीमा से संबंधित मामले पर कथन किया गया है कि समय के प्रासंगिक अवधि पर, जब याची की माता की मृत्यु हुई थी, ऐसी कोई योजना प्रचलित नहीं थी।

7. याची ने अन्य बातों के साथ एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ के प्रावधान पर विश्वास करते हुए प्रत्युत्तर दाखिल किया है और उसमें कथन किया है कि यदि मृतका का आश्रित अवयस्क है, उसका नाम लाइव रोस्टर पर रखा जाएगा और वयस्कता प्राप्त करने पर आश्रित को रोजगार दिया जाएगा। किंतु, उक्त प्रावधान एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ 5 में पुर:स्थापित किया गया था जिसे केवल वर्ष 1996 में प्रभाव में लाया गया था, किंतु याची की माता की मृत्यु वर्ष 1993 में ही हो गयी थी और यह याची के मामले पर प्रयोज्य नहीं है।

8. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, याची को दो सप्ताह की अवधि के भीतर उपादान और सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰ राशि, जैसा प्रत्यर्थीगण की ओर से दाखिल प्रतिशपथ पत्र में उपदर्शित किया गया है, के दावा के संबंध में समस्त आवश्यक विवरणों और समर्थनकारी दस्तावेजों को अंतर्विष्ट करने वाले इस आदेश की प्रति के साथ प्रत्यर्थी सं॰ 3 महाप्रबंधक सौंडा बरका सयाल क्षेत्र, रामगढ़, झारखंड के समक्ष अभ्यावेदन दाखिल करने की स्वतंत्रता के साथ इस रिट याचिका को निपटाया जाता है। यदि प्रत्यर्थी सं॰ 3 महाप्रबंधक सौंडा 'डी' बरका सयाल रामगढ़, झारखंड के समक्ष ऐसा अभ्यावेदन दाखिल किया जाता है, वह विधि के अनुरुप इस पर विचार करेंगे।

9. यदि ऐसा दावा वास्तविक पाया जाता है और वे उनको विधिक रूप से देयों में किसी के हकदार है, इसका भुगतान तत्पश्चात आठ सप्ताह के भीतर किया जाना चाहिए।

10. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों और निर्देशों के साथ इस रिट याचिका को निपटाया जाता है।

ekuuh; ,p lhh feJk] U;k;efr

वीणा देवी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Misc. No. 9073 of 2000. Decided on 24th April, 2012.

दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन दाखिल एक आवेदन के मामले में।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A सह-पठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धाराएँ 3/4—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 320 एवं 482—दहेज की मांग और क्रूरता—संज्ञान—पक्षों के बीच मामले में सुलह हो गयी है—दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 320 दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्ति को प्रभावित नहीं कर सकती है—यह सुयोग्य मामला है जिसमें दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने के लिए दोनों पक्षों के हित में उच्च न्यायालय को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करना चाहिए—दांडिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 7 से 9)

निर्णयज विधि.—2003 (2) East Cr. C. 220 (SC)—Relied on.

अधिवक्तागण.—Mr. A.K. Das, For the Petitioners; Mr. Tapas Roy, For the State; M/s. S.L. Agarwal, Dev Kant Rai, For the Opp. Parties.

न्यायालय द्वारा.—याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता और निजी विरोधी पक्षकार के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण ने इस आवेदन को सिंद्री (गोशाला) पी॰ एस॰ केस सं॰ 56 वर्ष 2000, जी॰ आर॰ सं॰ 1836 वर्ष 2000 के तत्सम, जिसे वि॰ प॰ सं॰ 2 श्रीमती माया देवी खेरिया, जो याची सुरेश कुमार खेरिया की पत्नी है, द्वारा दर्ज प्राथमिकी के आधार पर संस्थापित किया गया था, के संबंध में भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3/4 के अधीन अपराध के लिए संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया है।

3. यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण के बाद, मामले में आरोप-पत्र दाखिल किया गया था और दिनांक 29.9.2000 के आदेश द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3/4 के अधीन अपराध के लिए याचीगण के विरुद्ध संज्ञान लिया गया था और मामला विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, धनबाद के न्यायालय को अंतरित किया गया था जिस आदेश को भी वर्तमान मामले में चुनौती दी गयी है।

4. मामले के गुणागुण में गए बिना, यह उल्लेख करना समुचित होगा कि पक्षों के बीच अनेक वैवाहिक विवाद थे जिनमें से एक भरण-पोषण मामला था जिसमें याची सुरेश कुमार खेरिया को मुकदमा खर्च के रूप में 2000/- रुपयों की राशि के अतिरिक्त 1500/- रुपया प्रतिमाह की दर से अपनी पत्नी को भरण-पोषण का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, धनबाद द्वारा पारित उक्त आदेश को याची द्वारा डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 4648 वर्ष 2001 में चुनौती दी गयी थी जिसमें पक्षों के बीच सुलह हुआ था और सुलह के निबंधनानुसार वि॰ प॰ सं॰ 2 श्रीमती माया देवी खेरिया को एकमुश्त राशि का भुगतान किया गया था। पक्षों के बीच सुलह के निबंधनानुसार उक्त डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 4648 वर्ष 2001 को इस न्यायालय द्वारा दिनांक 10.4.2003 के आदेश द्वारा निपटाया गया था, जिसमें इस न्यायालय ने वर्तमान दांडिक विविध सं॰ 9073 वर्ष 2000 सहित पक्षों के बीच अन्य विवादों

को ध्यान में लिया था और इस न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि पक्ष वर्तमान दांडिक मामला सहित अपने बीच समस्त मामलों में सुलह करने के लिए सहमत हैं।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पक्षों के बीच सुलह की दृष्टि में **बी॰ एस॰ जोशी एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं एक अन्य, 2003 (2) East Cr. C 220 (SC),** मामले में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडन योग्य है।

6. दूसरी ओर, वि॰ प॰ सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निष्पक्ष रूप से स्वीकार किया है कि पक्षों के बीच सुलह हुआ था जिसमें वर्तमान दांडिक मामला सहित समस्त मामलों में सुलह करने का निर्णय किया गया था और उन्हें याचीगण के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही को अभिखंडित करने के प्रति आपत्ति नहीं है।

7. बी॰ एस॰ जोशी के मामले (ऊपर) में, भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन समरुप मामले में जहाँ भी पक्षों के बीच सुलह हुआ था, में अभिनिर्धारित किया है कि उच्च न्यायालय दांडिक कार्यवाही अथवा प्राथमिकी अथवा परिवाद अभिखंडित करने के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग कर सकता है और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 320 उच्च न्यायालय की शक्ति को सीमित अथवा प्रभावित नहीं करेगी।

8. बी॰ एस॰ जोशी के मामले (ऊपर) में भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि की दृष्टि में और इस तथ्य की दृष्टि में भी कि पक्षों के बीच मामले में पहले ही सुलह कर लिया गया है जैसा डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 4648 वर्ष 2001 में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 10.4.2003 के आदेश से प्रकट है जिसकी प्रति को अभिलेख पर परिशिष्ट–7 के रूप में लाया गया है, मैं इसे सुयोग्य मामला पाता हूँ जिसमें इस न्यायालय को याचीगण के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने के लिए दोनों पक्षों के हित में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करना चाहिए।

9. तद्नुसार, सिंदरी (गोशाला) पी॰ एस॰ केस सं॰ 56 वर्ष 2000, जी॰ आर॰ सं॰ 1836 वर्ष 2000 के तत्सम, के संबंध में याचीगण के विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही और उसमें विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 29.9.2000 के आक्षेपित आदेश को एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है और इस आवेदन को तद्नुसार अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

दामोदर प्रसाद एवं अन्य (246, 247 में)

बनवारी सिंह एवं अन्य (265 में)

cuke

मो॰ कासिम अली एवं अन्य (दोनों में)

S.A. Nos. 246-247 with 265 of 2007. Decided on 17th November, 2011.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 100—मात्र अपील दाखिल किया जाना न्यायालय में चुनौती दिए गए निर्णय और डिक्री के प्रभाव को निलंबित नहीं करता है–जब तक सिविल अधिकारिता के सक्षम न्यायालय का निर्णय और डिक्री बना रहता है, यह राजस्व न्यायालयों पर बाध्यकारी है–राजस्व न्यायालय को विपरीत दृष्टिकोण अपनाने अथवा सिविल न्यायालय की डिक्री के निबंधनों के विरुद्ध मामला विनिश्चित करने का प्राधिकार नहीं है–पक्षों के अधिकार, हक और हित को विनिश्चित करने वाला सिविल न्यायालय का निर्णय और डिक्री उन पर बाध्यकारी है। (पैराएँ 12 एवं 13)

अधिवक्तागण.–M/s Lalit Kumar Lal, Kundan Kr. Ambastha, For the Appellants; None, For the Respondents.

आदेश

ये अपीलें अभिधान अपील सं॰ 4 वर्ष 2005, अभिधान अपील सं॰ 05 वर्ष 2005 और अभिधान अपील सं॰ 6 वर्ष 2005 में पारित एक ही निर्णय और डिक्री के विरुद्ध हैं। चूँकि उक्त अपीलों में अंतर्ग्रस्त तथ्य और विधि समरुप थे, विद्वान अवर न्यायालय ने उक्त अपीलों को एक ही निर्णय से विनिश्चित किया है।

2. उक्त की दृष्टि में, समस्त उक्त द्वितीय अपीलों को एक साथ ग्रहण किया तथा सुना गया है जैसी प्रार्थना अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गयी है और इस आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

3. ये द्वितीय अपीलें व्यवस्थापन अधिकारी, लातेहार के न्यायालय में छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 87 के प्रावधानों के अधीन दाखिल वादों अर्थात् **राजस्व वाद सं॰ 1032/1990 (मो॰ कासिम अली एवं अन्य बनाम सज्जाद हुसैन एवं अन्य), राजस्व वाद सं॰ 1035/1990 (मो॰ कासिम अली एवं अन्य बनाम बनवारी सिंह एवं अन्य)** एवं **राजस्व वाद सं॰ 1469/1990 (दामोदर प्रसाद एवं अन्य बनाम मो॰ निजाम एवं अन्य)** से उद्भूत होती हैं।

4. उक्त वादों में वादीगण ने सी॰ एस॰ खाता सं॰ 4, ग्राम मनिका, पी॰ एस॰ मनिका, जिला लातेहार से संबंधित वाद भूमि के संबंध में अधिकार अभिलेख (खतियान) में की गयी प्रविष्टियों को चुनौती दिया था।

5. विद्वान सहायक व्यवस्थापन अधिकारी ने राजस्व वाद सं॰ 1032/1990 और राजस्व वाद सं॰ 1035/1990 को डिक्री किया और दामोदर प्रसाद एवं अन्य द्वारा दाखिल राजस्व वाद सं॰ 1469/1990 को खारिज कर दिया।

6. उक्त निर्णयों और डिक्रियों को अभिधान अपील सं॰ 4/2005, अभिधान अपील सं॰ 5 वर्ष 2005 और अभिधान अपील सं॰ 6 वर्ष 2005 के रूप में रजिस्टर्ड अपील में जिला न्यायाधीश, लातेहार के न्यायालय में चुनौती दी गयी थी।

7. विद्वान जिला न्यायाधीश ने पक्षों को सुना और अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और साक्ष्यों पर विचार किया और अपना निष्कर्ष दर्ज किया और अभिनिर्धारित किया कि वर्तमान मामले में विवाद्यक के बिन्दु पहले के अभिधान वाद सं॰ 6/1991 में अंतर्ग्रस्त थे जिसे काफी पहले विनिश्चित किया गया था। हक अपील सं॰ 4/1996 को भी निपटाया गया था। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय के उक्त निर्णय और डिक्री के विरुद्ध द्वितीय अपील एस॰ ए॰ सं॰ 134/2002 दाखिल किया गया था और यह अभी भी लंबित है। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि सिविल न्यायालय का निर्णय और डिक्री राजस्व न्यायालय पर बाध्यकारी है, जो सीमित अधिकारिता का न्यायालय है। सक्षम न्यायालय द्वारा पहले ही अधिकार और हक को विनिश्चित किया गया है और उस दृष्टि में उक्त राजस्व वादों में विचारण न्यायालय द्वारा निर्णय पारित किया है। विचारण न्यायालय के निर्णय में गलती नहीं है। तब, विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अपील खारिज कर दिया।

8. इन द्वितीय अपीलों में विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय के उक्त निर्णय और डिक्री को इस आधार पर चुनौती दी गयी है कि चूँकि द्वितीय अपील अभी भी लंबित है, सक्षम सिविल न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री अंतिम नहीं है, और विद्वान अवर न्यायालयों ने उसको ध्यान में लेने और सिविल न्यायालय के उक्त निर्णय और डिक्री के आधार पर मामला विनिश्चित करने में गलती की है।

9. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री ललित कुमार लाल ने निवेदन किया कि जब तक प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध द्वितीय अपील लंबित है, उक्त निर्णय और डिक्री पक्षों पर बाध्यकारी नहीं है और विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने उक्त सिविल न्यायालय के निर्णय और डिक्री, जो अंतिम नहीं है, के आलोक में पक्षों के मामले को गलत रूप से विनिश्चित किया है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यदि द्वितीय अपील को अनुज्ञात किया जाता है और अपीलार्थीगण के पक्ष में विनिश्चित किया जाता है, यह जटिलता कारित करेगा। इस दृष्टि में, अपीलीय न्यायालय को नहीं कहना चाहिए था कि प्रथम अपीलीय न्यायालय की डिक्री राजस्व न्यायालयों पर बाध्यकारी है और उक्त डिक्री की दृष्टि में पक्षों के दावा को विनिश्चित करना होगा।

10. मैंने अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना है तथा विद्वान अवर न्यायलयों के निर्णय तथा डिक्री का परिशीलन किया है।

11. यह एक स्वीकृत तथ्य है कि इसी भूमि के लिए नियमित अभिधान वाद सिविल अधिकारिता के सक्षम न्यायालय में दाखिल किया गया था और इसे प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट किया गया था। अपीलार्थीगण के अनुसार, अपीलीय न्यायालय के उक्त निर्णय और डिक्री के विरुद्ध द्वितीय अपील दाखिल किया गया है और यह लंबित है।

12. यह विधि का सुनिश्चित सिद्धांत है कि मात्र अपील का दाखिल किया जाना न्यायालय में चुनौती दिए गए निर्णय और डिक्री के प्रभाव को निलंबित नहीं करता है। जब तक सिविल अधिकारिता के सक्षम न्यायालय का निर्णय और डिक्री बना रहता है, यह राजस्व न्यायालयों पर बाध्यकारी है तथा विद्वान अवर न्यायालय ने उचित रूप से सक्षम सिविल न्यायालय के निर्णय एवं डिक्री का अनुसरण किया है।

13. चूँकि राजस्व न्यायालय सीमित अधिकारिता का है, इसे सिविल न्यायालय की डिक्री के निबंधनों के विरूद्ध कोई विपरीत दृष्टिकोण अपनाने या मामले का निर्णय करने का कोई प्राधिकार नहीं है। विद्वान राजस्व न्यायालय और जिला न्यायाधीश ने सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया है कि पक्षों के अधिकार, हक और हित को विनिश्चित करने वाला सिविल न्यायालय का निर्णय और डिक्री उन पर बाध्यकारी है।

14. आक्षेपित निर्णय और डिक्री पर पूरी तरह विचार किया गया है और यह तर्कपूर्ण और सुतार्किक है। मैं आक्षेपित निर्णय और डिक्री में गलती अथवा अवैधता नहीं पाता हूँ जो विधि के सारवान प्रश्न को उद्भूत करता हो।

15. तद्नुसार, इन अपीलों को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

अब्दुल रहीम अंसारी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1099 of 2008. Decided on 4th May, 2012.

सेवा विधि–पेंशन–याची ने अस्थायी आधार पर केवल 46 माह की अवधि के लिए पट्टा प्रहरी के रूप में काम किया था–दांडिक मामले में उसकी अंतर्ग्रस्तता के कारण एक से अधिक अवसरों पर उसकी सेवा समाप्त कर दी गयी थी–याची पेंशन लाभों का हकदार नहीं है–मामले के पुराना और खराब होने के नाते इसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–None, For the Petitioner; JC to SC, L& C, For the Respondents.

आदेश

याची की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ।

2. प्रत्यर्थीगण उपस्थित हुए हैं और अपना शपथ पत्र दाखिल किया है।

3. यह रिट याचिका याची द्वारा यह कथन करते हुए कि वह प्रत्यर्थीगण के अधीन पट्टा प्रहरी के पद से दिनांक 31.8.2000 को सेवानिवृत्त हुआ, सेवानिवृत्ति पश्चात् देयों, पेंशन, आदि के भुगतान के लिए दाखिल की गयी है।

4. प्रतिशपथ पत्र के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि याची को डालटेनगंज दक्षिण डिविजन में पट्टा प्रहरी के अस्थायी पद पर दिनांक 13.3.1962 को नियुक्त किया गया था और दिनांक 28.5.1962 को उसकी सेवा समाप्त कर दी गयी थी। तत्पश्चात्, उसे पुनः दिनांक 18.1.1963 को पट्टा प्रहरी के रूप में नियुक्त किया गया था और पुनः दिनांक 7.11.1963 को उसकी सेवा समाप्त कर दी गयी थी। तीसरी बार उसे दिनांक 3.12.1963 को पट्टा प्रहरी के अस्थायी पद पर नियुक्त किया गया था जिस पर वह सितंबर, 1967 तक सेवा में बना रहा था और तत्पश्चात्, दिनांक 29.12.1967 को डिविजनल वन अधिकारी, डालटेनगंज, दक्षिण डिविजन द्वारा जारी दिनांक 5.1.1968 के आदेश सं॰ 84 के तहत उसकी सेवा समाप्त कर दी गयी थी क्योंकि याची को दांडिक मामले के संबंध में कारा भेजा गया था और इस प्रकार याची ने केवल दिनांक 3.12.1963 को अपनी नियुक्ति की तिथि से 46 माह की अवधि के लिए अस्थायी पट्टा प्रहरी के रूप में सेवा दिया था। प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ 9 में आगे कथन किया गया है कि याची लातेहार में दो दांडिक मामलों में अंतर्ग्रस्त था। उनमें से एक में उसे दिनांक 9.10.1967 को दोषमुक्त किया गया था और दूसरे दांडिक मामले में याची को कारा भेजा गया था और बाद में दिनांक 21.4.1968 को दोषमुक्त किया गया था किंतु दिनांक 29.12.1967 को उसकी सेवा समाप्ति के बाद उसे अपनी सेवा ग्रहण करने की अनुमति नहीं दी गयी थी। तत्पश्चात्, याची तीन अवसरों पर माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष आया था। रिट याचिका में से एक सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2826 वर्ष 1993 (R) था जिसे माननीय पटना उच्च न्यायालय, राँची पीठ ने दिनांक 17.7.1998 के आदेश के तहत निपटाया था जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> ^^vkjHk e gh dgk tk ldrk g fd tlk io e fofufn"Vr% vknf'kr fd;k x;k g fd fjV vfèkdkfjrk e dkb vurk"k ugh fn;k tk ldrk g] vr% ;kph viuh iucgkyh d lcèk e ekeyk] tk ;kph d vulkj ljdkj d le{k yfcr g] vkx y tk ldrk g] fdr fu'p; gh bl fjV vkonu e mlI vurk"k çnku ugh fd;k tk ldrk gA**

5. अंततः दिनांक 15.3.2007 के पत्र सं॰ 1350 के तहत याची का अभ्यावेदन निपटाया गया था और पत्र सं॰ 11E–5(3)/91-1760 दिनांक 3.4.2007 के तहत, जो क्रमशः प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट D और D/1 पर है, याची को सरकार का निर्णय संसूचित किया गया था। प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ 14 में कथन किया गया है कि याची ने केवल 46 माह की अवधि के लिए डिविजनल वन कार्यालय, डालटेनगंज, दक्षिण डिविजन में पट्टा प्रहरी के अस्थायी पद पर काम किया था और उसने पेंशन योग्य सेवा की अवधि पूरा नहीं किया था, अतः, वह विधि में किसी अनुतोष का हकदार नहीं है।

6. पूर्वोक्त तथ्यों के परिशीलन से और प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता को सुनने पर स्पष्ट है कि एक ओर याची ने केवल 46 माह की अवधि के लिए अर्थात् दिनांक 3.12.1963 से सितंबर, 1967 तक पट्टा प्रहरी के रूप में अस्थायी आधार पर काम किया है और, इसलिए, वह किसी पेंशन लाभ का हकदार नहीं है, वहीं दूसरी ओर मामला पुराना और बासी होने के नाते यह न्यायालय असाधारण अधिकारिता के अधीन मामले में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाता है।

7. यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

कृष्णा मंडल

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal No. 1567 of 2003 (D.B.). Decided on 14th May, 2012.

एस॰ टी॰ सं॰ 72 वर्ष 2002 में श्री आर॰ डी॰ यादव, अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ III, धनबाद द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 27.8.2003 और दिनांक 28.8.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या–आजीवन कारावास–जहर देकर स्त्री की हत्या–अभिकथित घटना का कोई चश्मदीद गवाह नहीं है–गवाह कथन करते हैं कि मृतका मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं थी–अभियोजन के अनुसार, चूँकि मृतका अपीलार्थी के घर में रह रही थी, यह उपधारित किया जा सकता है कि अपीलार्थी ने गला दबाकर उसकी हत्या की थी–यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं है कि अपीलार्थी घर में अकेला रह रहा था अथवा अन्य व्यक्ति भी उसके साथ रह रहे थे–अपीलार्थी को संदेह का लाभ देकर आक्षेपित निर्णय अपास्त किया गया। (पैराएँ 3 से 7)

न्यायालय द्वारा.–न तो अपीलार्थी की ओर से कोई उपस्थित हुआ और न ही प्रत्यर्थी की ओर से कोई उपस्थित हुआ।

2. यह अपील एस॰ टी॰ सं॰ 72 वर्ष 2002 में अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि करते हुए और उसको कठोर आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए श्री आर॰ डी॰ यादव, अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ III, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 27.8.2003 के निर्णय के विरुद्ध दाखिल की गयी है।

3. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि अ॰ सा॰ 3 (दर्शन मंडल) ने दिनांक 23.4.2001 को दोपहर लगभग 12.45 बजे पुलिस के समक्ष फर्दबयान दर्ज किया कि उसकी पुत्री मुसरी मंडलाइन (मृतका) का विवाह किसी गोपी मंडल के साथ लगभग पाँच वर्ष पहले हुआ था। विगत दो वर्ष से गोपी पागल हो गया था, अतः, वह अपने माएके में रहने लगी। लगभग छह माह पहले, अपीलार्थी ने जबरन उसको रखा। अपीलार्थी उसको भोजन नहीं देता था और मुसरी के साथ मारपीट करता था। जब सूचक ने उसको वापस ले जाना चाहा, अपीलार्थी ने उसको धमकाया। मुसरी वहाँ रहना नहीं चाहती थी किंतु उसे जबरन रखा गया था। प्रातः लगभग 4 बजे अ॰ सा॰ 6 (अरोनी मंडल) ने उसको सूचित किया कि अपीलार्थी ने जहर देकर मुसरी की हत्या कर दी है। जब वह अपीलार्थी के घर गया, उसने मुसरी को 'खटिया' पर मृत पाया। उसकी नाक से झाग बह रहा था। घर में कोई नहीं था।

4. अभियोजन ने आठ गवाहों का परीक्षण किया। डॉक्टर ने इसे गला दबाने का मामला पाया। अभिकथित घटना का कोई चश्मदीद गवाह नहीं है। अ॰ सा॰ 6 (अरोनी मंडल), जो सूचक का संबंधी है, ने कहा कि उसने मसूरी की मृत्यु के बारे में सूचक को सूचित नहीं किया था, जैसा सूचक द्वारा फर्दबयान में कहा गया है। मसूरी की माता अ॰ सा॰ 5 ने भी कहा कि अरोनी मंडल ने उसे घटना के बारे में बताया था। अरोनी मंडल ने अन्य बातों के साथ कहा कि मसूरी की मानसिक दशा ठीक नहीं थी। वह इस मामले का चश्मदीद गवाह नहीं है।

5. अभियोजन मामले के अनुसार, चूँकि मसूरी अपीलार्थी के घर में रह रही थी, यह उपधारित किया जा सकता है कि अपीलार्थी ने उसका गला दबाकर उसकी हत्या की है। यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं है कि क्या अपीलार्थी अपने घर में अकेला रह रहा था अथवा अन्य व्यक्ति भी उसके साथ रह रहे थे।

6. अभिलेखों का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने के बाद हम अपीलार्थी को संदेह का लाभ देने के इच्छुक हैं।

7. तद्नुसार, आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया जाता है।

8. अपीलार्थी लगभग 11 वर्षों से कारा में बना हुआ प्रतीत होता है, उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

प्रभात कुमार शाह एवं एक अन्य

cuke

आनन्द कुमार मोदी

W.P. (C) No. 980 of 2012. Decided on 7th May, 2012.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 6, नियम 17—लिखित कथन का संशोधन–बेदखली वाद–संशोधन आवेदन की अस्वीकृति–प्रश्नगत संशोधन पश्चातवर्ती घटना से संबंधित है जो अपील के लंबित रहने के दौरान घटित हुआ है और यह इस मामले में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक से संबंधित है–लिखित कथन में संशोधन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 7 से 9)

निर्णयज विधि.–(2008) 14 SCC 364; (2009) 10 SCC 197—Relied; (2001)2 SCC 604—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Sandeep Gadodia, For the Petitioners; Mr. Pradeep Modi, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इस याचिका को दाखिल करके अभिधान अपील सं० 120/10 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त-IV, राँची द्वारा पारित दिनांक 25.1.2012 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VI नियम 17 के अधीन याचीगण द्वारा दाखिल संशोधन आवेदन को अस्वीकार कर दिया है।

3. मामले के संक्षिप्त तथ्य निम्नलिखित हैं:

याचीगण कचहरी रोड, राँची अवस्थित न्यू बिहार मेडिकल स्टोर (एजेंसीज) के नाम और शैली में दुकान चला रहे हैं और प्रत्यर्थी उक्त दुकान परिसर का अभिकथित भूस्वामी है। प्रत्यर्थी ने वाद परिसर से याचीगण की बेदखली इप्सित करते हुए विद्वान अपर मुंसिफ I, राँची के न्यायालय में बेदखली अभिधान वाद सं० 7 वर्ष 2003 दाखिल किया। याचीगण पूर्वोक्त वाद में उपस्थित हुए और प्रत्यर्थी के दावा से इनकार किया। विद्वान अवर न्यायालय ने अध्यपेक्षित विवाद्यक विरचित करने के बाद याचीगण के विरुद्ध वाद विनिश्चित किया। याचीगण उक्त निर्णय से व्यथित होकर विद्वान न्यायिक आयुक्त, राँची के न्यायालय में अभिधान अपील सं० 120 वर्ष 2010 दाखिल किया और अपील के लंबित रहने के दौरान याचीगण ने

वाद में दाखिल लिखित कथन का संशोधन इप्सित करते हुए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VI नियम 17 के अधीन आवेदन दाखिल किया किंतु विद्वान अवर न्यायालय ने प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल उत्तर को विचार में लेने के बाद दिनांक 25.1.2012 के अपने आदेश के तहत सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VI नियम 17 के अधीन संशोधन के लिए याचीगण द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने परिशिष्ट 3 अर्थात् विद्वान अवर न्यायालय के समक्ष दाखिल संशोधन आवेदन को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया कि याची ने वाद में दाखिल लिखित कथन में पैरा 13A अंत:स्थापित करके संशोधन अनुज्ञात करने के लिए अवर न्यायालय से अनुरोध किया जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"13A. fd oknh u doy dN fnu igy vFkkr tu 2011 d vfre lIrkg e 0;olk; dju d fy, okn ifjlj d ik'o e ,d cgr cM dej dk iu#}kj djuk vkj fQDlpj ,o Quhpj LFkkfir djuk 'k# fd;kA mDr ifjlj 0;olk; dju d fy, oknh d fy, lokfèkd mi;Dr vkj lfoèkktud g tlk okn e nkok fd;k x;k gA**

5. यह निवेदन किया गया है कि पूर्वोक्त संशोधन आवेदन तथ्यों के पश्चातवर्ती घटनाक्रम के कारण दाखिल किया जा रहा था जो वर्तमान याचीगण के ध्यान में आया। यह भी निवेदन किया गया है कि पूर्वोक्त संशोधन अपील के प्रभावकारी न्याय निर्णयन के लिए आवश्यक था विशेषत: इस कारण से कि याची ने वाद के विचारण के दौरान अभिवचन किया कि स्वयं वाद परिसर में अनेक दुकानें हैं और याचीगण की दुकान की आवश्यकता का अभिकथित आधार सद्भावपूर्ण नहीं है। यह निवेदन भी किया गया है कि विद्वान अवर न्यायालय इस तथ्य का समुचित रूप से अधिमूल्यन किए बिना इस निष्कर्ष पर आया कि प्रस्तावित संशोधन, जैसा याची द्वारा इप्सित किया गया है, का वाद परिसर के साथ कोई सरोकार नहीं है और इसे अनुज्ञात करने से वाद की प्रकृति परिवर्तित होने की संभावना है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **जय प्रकाश गुप्ता बनाम रियाज अहमद एवं एक अन्य, 2009 (10) SCC 197** के मामले में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है।

6. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिशपथ पत्र को निर्दिष्ट करके निवेदन किया कि विद्वान अवर न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करते हुए गलती नहीं की है और सही प्रकार से संशोधन आवेदन अस्वीकार कर दिया है क्योंकि यदि प्रस्तावित संशोधन अनुज्ञात किया जाता है, वाद की प्रकृति परिवर्तित होने की संभावना है। यह निवेदन भी किया गया है कि याची (मूल प्रतिवादी) ऐसी एक या दूसरी रुकावट सृजित करके वाद के निपटारे में विलंब करना चाहता है। इप्सित किया गया संशोधन मामले के न्याय निर्णयन के प्रयोजन से बिल्कुल आवश्यक और प्रासंगिक नहीं है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **गया प्रसाद बनाम प्रदीप श्रीवास्तव, 2001 (2) SCC 604,** में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है और इस पर विश्वास किया है।

7. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए परस्पर विरोधी पूर्वोक्त निवेदनों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर मौजूद सामग्री के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय ने वर्तमान याचीगण द्वारा दाखिल संशोधन के लिए आवेदन, जो याचिका के परिशिष्ट–3 पर है, को अनुज्ञात नहीं करके गलती किया है क्योंकि प्रश्नगत संशोधन पश्चातवर्ती घटनाक्रम से संबंधित है जो अपील के लंबित रहने के दौरान घटित हुआ है और यह इस मामले में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक से संबंधित है। यह प्रतीत होता है कि इस मामले में अंतर्ग्रस्त मुख्य विवाद्यक वादी की वास्तविक आवश्यकता के संबंध में है और प्रश्नगत

संशोधन उक्त आवश्यकता के संबंध में प्रतीत होता है जो वाद दाखिल करने के बाद उत्पन्न हुआ है। यह भी प्रतीत होता है कि दूसरा पक्ष अपीलीय चरण पर उक्त संशोधन आवेदन के प्रति लिखित कथन/उत्तर दाखिल करके संशोधन आवेदन में किए गए कथन का प्रतिवाद करने का अवसर पाएगा और वाद/अपील में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक को अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद गुणागुण पर न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जाएगा और इसलिए, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किया गया तर्क विवाद की प्रकृति को देखते हुए स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय द्वारा इस पहलू पर समुचित रूप से विचार नहीं किया गया है। पूर्वोक्त अवस्था की दृष्टि में प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट और विश्वास किया गया निर्णय प्रत्यर्थी की मदद नहीं करता है जबकि याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट और विश्वास किया गया निर्णय, **2009 (10) SCC 197** में प्रकाशित, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के प्रति प्रासंगिक और प्रयोज्य है। वर्तमान विवाद्यक विनिश्चित करने के लिए पैराएँ 19, 33 और 34 प्रासंगिक हैं। पैराओं 19, 33 और 34 को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *"19. gekj nf"Vdk.k e] ;g rd ugh fd;k tk ldrk g fd i'pkrorh ?kVukØe d :i e yk, x, rF; çkIfxd g vkj fu'p; gh lk{; ij bue tku dh vko';drk gA fdr pfd foxr ing o"kk vFkkr o"k 1992 l ednek yfcr g] gekjk nf"Vdk.k g fd vihyh; U;k;ky; dk li.k vkn'k vkLr dju vkj i'pkrorh ?kVukØek] ftUg mPp U;k;ky; d le{k yk;k x;k g] ij u, fu.k; d fy, mlh U;k;ky; dk ekeyk okil Hktu d ctk,] viu le{k Qkby dk yfcr j[kr g, mPp U;k;ky; }kjk vihyh; U;k;ky; dk lhfer fjekM dk vkn'k ikfjr fd;k tkuk pkfg, Fkk vkj okLrfod vko';drk d ç'u ij i'pkrorh ?kVukØek d çHkko ij vkj ,l ç'u ij vihyh; U;k;ky; l ryukRed dfBukb vkj vihyh; U;k;ky; d fu"d"k ij lk{; çkIr dju d ckn] li.k lk{; vkj i{kk }kjk nkf[ky ijd 'kiFk i= vkj çfr'kiFk i= vkj vfHky[k ij vU; lkefx;k ij fopkj djr g, fjV ;kfpdk dk u, flj l fofuf'pr fd;k tk ldrk gA*

> *33. ;fn vihyh; U;k;ky; Lo; lk{; yu e ef'dy ikrk g] bl fook|d fojfpr dju vkj lk{; yu d fy, fofgr çkfèkdkjh d ikl Hktu dh NV gkxh tk cny e i{kk dk lk{; yxk vkj vihykFkh edkuekfyd dh okLrfod vko';drk vkj i{kk dh ryukRed dfBukb d fook|d ij fopkj dju d ç;ktu l bl vihyh; U;k;ky; dk Hktxk A*

> *34. vihykFkh edkuekfyd }kjk nkf[ky çfr'kiFk i= e bl lhek rd fn, x, c;ku dh nf"V e fd mld nk o;Ld i= vkj i=h g vkj ,lh voLFkk gku d ukr oreku edkuekfyd dh vko';drk c< x;h g vkj] blfy,] çR;Fkh fdjk,nkj cn[ky fd, tku dk nk;h gA olh voLFkk gku d ukr gekjk nf"Vdk.k g fd bl l'kkfèkr djd nk i=k vkj ,d i=h dh vko';drk d rF; dk lfEefyr dju d ç;ktu l ey fuefDr vkonu d l'kkèku d fy, vkonu nkf[ky dju dh NV vihykFkh edku ekfyd dk gkxh vkj ft ld çfr fyf[kr vkifÙk nkf[ky dju dh NV çR;Fkh fdjk,nkj dk gkxhA***

8. राजकुमार गुरावरा बनाम एस॰ के॰ सरवागी एंड कंपनी प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य, (2008)14 SCC 364 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के एक अन्य निर्णय में आदेश VI, नियम

17 के अधीन दाखिल आवेदन के विवाद्यक पर विचार करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

*^^fu;e dk igyk Hkkx bl i;kIr :i l Li"V djrk g fd dk;okgh d fdlh pj.k ij i{kx.k viu vfHkopuk dk ifjofrr vFkok l'kks/ku dju d fy, Lor= g tlk fookn e okLrfod ç'uk dk voèkkfjr dju d ç;ktu l vko';d gk ldrk gA fdr] ;g fu;e mle mikc) ijUrd d vè;èkhu gA fnukd 1.7.2002 d çHkko l vfèkfu;e 22 o"k 2002 }kjk iuk çfrLFkkfir ijUrd d lkFk mDr fu;e bl Li"V djrk g fd fopkj.k vkjHk gku d ckn l'kks/ku d fy, vkonu vuKkr ugh fd;k tk,xkA fdr] ;fn dk;okgh d i{kx.k U;k;ky; dk lr"V dju e l{ke gkr g fd lE;d rRijrk d ckotn o fopkj.k vkjHk gku d igy fook|d mBk ugh ld Fk vkj U;k;ky; mud Li"Vhdj.k l lr"V g] fopkj.k vkjHk gku d ckn Hkh l'kks/ku vuKkr fd;k tk ldrk gA***

9. वर्तमान मामले के पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों की दृष्टि में और ऊपर निर्दिष्ट निर्णय के आलोक में, इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि वर्तमान रिट याचिका को अनुज्ञात करने की आवश्यकता है और टी॰ ए॰ सं॰ 120/10 में पारित दिनांक 25.1.2012 के आदेश को अपास्त किया जाता है। लिखित कथन में प्रस्तावित संशोधन को अनुज्ञात करने का आदेश दिया जाता है। तद्नुसार, मूल प्रतिवादी (वर्तमान याची) को उक्त संशोधन करने की अनुमति दी जाएगी। चूँकि प्रत्यर्थी (मूल वादी) को याची (प्रतिवादी) द्वारा विलंब कारित किए जाने की युक्तियुक्त आशंका है, आवश्यक निर्देश भी जारी करने की आवश्यकता है कि याची कार्यवाही में सहयोग करेगा और अवर न्यायालय के समक्ष मामले में आगे की कार्यवाही में अनावश्यक विलंब कारित नहीं करेगा। अवर न्यायालय भी आदेश की प्राप्ति की तिथि से छह माह के भीतर मामले को सुनने और विनिश्चित करने का प्रयास करेगा।

10. उक्त संप्रेक्षणों और निर्देशों के साथ वर्तमान रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

श्रीमती अनिमा घोष एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

L.P.A No. 166 of 2012. Decided on 3rd May, 2012.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—वैकल्पिक उपचार–कोई कारण दिए बिना अपीलीय न्यायालय द्वारा विधिपूर्ण आदेश में हस्तक्षेप विधि की दृष्टि में आदेश नहीं है–इस प्रकार, छह वर्षों की अवधि के बाद वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता के आधार पर रिट याचिका खारिज करने के लिए कारण नहीं था–जब एक बार रिमांड आदेश को बिल्कुल अवैध और अकृत पाया जाता है, तब उस आदेश के अनुसरण में उठाए गए समस्त कदमों को भी बने रहने की अनुमति नहीं दी जा सकती है–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 8)

अधिवक्तागण.–M/s Sujit Narayan Prasad, Nitin Prasad, Ranjeet Kumar Singh, For the Appellants; JC to Sr.S.C. II, For the State.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. अपीलार्थीगण डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5685 वर्ष 2006 में पारित दिनांक 1 फरवरी, 2012 के आदेश के विरुद्ध व्यथित है जिसके द्वारा अपीलार्थीगण की रिट याचिका को इस आधार पर खारिज कर दिया गया है कि याचिका में अपीलार्थीगण ने रिमांड के आदेश को चुनौती दिया था और उसके बाद, रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, रिमांड के बाद सब-डिविजनल अधिकारी द्वारा अंतिम आदेश पारित किया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थीगण सब-डिविजनल अधिकारी के आदेश, जिसे रिमांड के आदेश के बाद पारित किया गया है, को चुनौती देने के लिए स्वतंत्र है।

3. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 24 जून, 2006 का रिमांड आदेश पूर्णत: अवैध था और, वस्तुत:, विधि की दृष्टि में यह आदेश ही नहीं था और, इसलिए, विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस तथ्य को अनदेखा करके विधि में गंभीर गलती की है कि जब स्वयं रिमांड का आदेश विधि की दृष्टि में आदेश नहीं था, तब रिमांड आदेश के परिणामत: पारित किसी पारिणामिक आदेश को बने रहने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। यह निवेदन किया गया है कि याचीगण ने वर्ष 2006 में रिट याचिका दाखिल किया और इसे वर्ष 2012 में उक्त आधार पर खारिज कर दिया गया है जिसे न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता है।

4. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि प्रत्यर्थीगण इन कार्यवाहियों के पहले किराए का भुगतान कर रहे थे किंतु तत्पश्चात वे मजबूरीवश और अवर प्राधिकारियों द्वारा पारित आदेश के कारण किराए का भुगतान कर रहे हैं। यह निवेदन किया गया है कि रिमांड का आदेश बिहार मकान (पट्टा, किराया और बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1982 की धारा 26 के अधीन पुनरीक्षण योग्य था। निवेदन किया गया है कि इसलिए रिट याचिका पोषणीय नहीं थी, क्योंकि याचीगण वैकल्पिक उपचार का लाभ लिए बिना रिट याचिका दाखिल करके इस न्यायालय के पास आए। यह निवेदन भी किया गया है कि रिमांड आदेश के बाद अंतिम आदेश पहले ही पारित किया जा चुका है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने मामले के गुणागुण पर भी निवेदन करने का प्रयास किया है।

5. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया है और रिमांड आदेश का परिशीलन किया है जो निम्नलिखित है:-

*^^u, flj l fuèkkj.k d fy, ekeyk ,l0 Mh0 vk0 dk Hkstk tkrk gA***

यही कुल आदेश है। यह प्रतीत होता है कि अपीलीय प्राधिकारी विधि से अवगत नहीं थे कि कैसे अपील में आदेश अपास्त किया जा सकता है और विधि के बारे में भी अवगत नहीं थे कि किन परिस्थितियों के अधीन और किस कारण से रिमांड आदेश पारित किया जा सकता है। अपीलीय न्यायालय इस तथ्य पर गौर करने में भी विफल रहा कि अपीलीय न्यायालय के पास विचारण न्यायालय की समस्त शक्तियाँ हैं और यदि अपीलीय न्यायालय के समक्ष समस्त सामग्री और साक्ष्य है, तब अपीलीय न्यायालय समस्त विवाद्यकों पर मामला विनिश्चित करने के लिए बाध्य है। यदि किसी पक्ष को अथवा अन्य विधिपूर्ण कारणों से कुछ साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दी जाती है, मामले को वापस विचारण न्यायालय भेजने की आवश्यकता है और तब उन कारणों को दर्ज करने की आवश्यकता है। कोई कारण दिए बिना अपीलीय न्यायालय द्वारा विधिपूर्ण आदेश में हस्तक्षेप विधि की दृष्टि में आदेश नहीं है। हमने पहले ही गौर किया है कि आदेश में न तो तथ्य है और न ही कारण और न ही पक्षों का तर्क है और न ही रिमांड का आदेश पारित करते हुए कोई कारण दिया गया है। केवल यही नहीं, आदेश में विचारण न्यायालय का आदेश तक अपास्त नहीं किया गया है।

6. चाहे जो भी हो, आदेश विधि की दृष्टि में आदेश नहीं है। जब आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में आदेश नहीं है, तब यदि याचीगण तुरन्त वर्ष 2006 में रिट याचिका दाखिल करके इस न्यायालय के

पास आए हैं, तब उस स्थिति में, वर्ष 2012 में छह वर्षों की अवधि के बाद वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता के आधार पर रिट याचिका खारिज करने का कारण नहीं था।

7. जहाँ तक दिनांक 24 जून, 2006 के रिमांड आदेश के बाद अंतिम आदेश पारित करने का संबंध है, हमारा सुविचारित मत है कि जब एक बार रिमांड आदेश को बिल्कुल अवैध और अकृत और विधि की दृष्टि में आदेश न होना पाया जाता है, तब उस आदेश के अनुसरण में उठाए गए समस्त कदमों को बने रहने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और वे रिमांड के आदेश को विधिमान्य नहीं कर सकते हैं।

8. उक्त कारणों की दृष्टि में, वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील को अनुज्ञात किया जाता है। विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को अपास्त किया जाता है और इसके परिणामस्वरुप, दिनांक 24 जून, 2006 के रिमांड आदेश को भी अपास्त किया जाता है। अब अपीलीय न्यायालय विधि के अनुरुप मामला विनिश्चित करने के लिए अग्रसर हो सकता है। दोनों पक्ष दिनांक 18 जून, 2012 को अपीलीय न्यायालय के समक्ष उपस्थित होंगे।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

मेसर्स गजराज एस्टेट्स (प्रा॰) लि॰ का प्रबंधन

cuke

उनके कर्मकार श्री अनिल कुमार अग्रवाल एवं एक अन्य

L.P.A. No. 327 of 2011. Decided on 3rd May, 2012.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–पिछली मजदूरी–एकल न्यायाधीश द्वारा पिछली मजदूरी की राशि को 25% तक घटाया गया–प्रत्यर्थी को लेखाकार के पद पर नियुक्त किया गया था–प्रत्यर्थी को कोई प्रबंधकीय कार्य नहीं दिया गया है–आक्षेपित निष्कर्ष सही प्रकार से साक्ष्य पर आधारित हैं–अपील खारिज। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Indrajit Sinha, For the Appellant; M/s S.N. Prasad, N. Prasad, K. Sundram, For the Respondent No.1.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. अपीलार्थी डब्ल्यू॰ पी॰ (एल॰) सं॰ 4223/2008 में पारित दिनांक 13 जुलाई, 2011 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा रेफरेंस केस सं॰ 1/1996 में दिनांक 2 अप्रिल, 2008 को श्रम न्यायालय, धनबाद द्वारा पारित अधिनिर्णय को मान्य ठहराया गया है, किंतु, पिछली मजदूरी को 25% तक घटाकर अधिनिर्णय को उपांतरित कर दिया गया है।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वस्तुतः, प्रत्यर्थी औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2(s) की परिभाषा के अंतर्गत कर्मकार नहीं था क्योंकि उसे धारा 2 के खंड (s) के उपखंड (iii) द्वारा अपवर्जित किया गया था जो उस व्यक्ति को अपवर्जित करता था जो मुख्यतः प्रशासनिक अथवा प्रबंधकीय हैसियत से कार्यरत था। यह निवेदन किया गया है कि स्वयं प्रत्यर्थी ने श्रम न्यायालय के समक्ष अपने उत्तर में स्वीकार किया कि वह अन्य कंपनियों को संभाल रहा था और उनके साथ व्यवहार कर रहा था और उसे मुफ्त इंधन के साथ स्कूटर दिया गया था और इसलिए, वह प्रबंधकीय प्रकृति के कर्तव्य का निर्वहन कर रहा था।

4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थी पिछली मजदूरी का हकदार नहीं था क्योंकि वह यह सिद्ध करने में विफल रहा कि वह संपूर्ण अवधि के दौरान लाभदायी रोजगार में नहीं लगा हुआ था।

5. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया और अधिनिर्णय में और दिनांक 13 जुलाई, 2011 के आक्षेपित आदेश में दिए गए कारणों का परिशीलन किया।

6. प्रथमत: यह तथ्य का प्रश्न है कि प्रत्यर्थी को कौन सा कर्तव्य दिया गया था और साक्ष्य के अधिमूल्यन के बाद श्रम न्यायालय और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दर्ज निष्कर्ष यह था कि प्रत्यर्थी लेखाकार के पद पर कार्यरत था। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन करने का प्रयास किया कि चूँकि वह अन्य कंपनियों के साथ व्यवहार कर रहा था और समस्त लेखाओं और इनके समाधान, आदि की देख-रेख कर रहा था, वह कर्मकार नहीं था। हमारा सुविचारित मत है कि प्रत्यर्थी, जिसे स्वीकृत रूप से लेखाकार के पद पर नियुक्त किया गया था, को अन्य कंपनियों से राशि की वसूली करने का कर्तव्य दिया गया था और उस प्रयोजन से, उसे स्कूटर और इंधन दिया गया था और कर्मकार द्वारा यही दृष्टिकोण अपनाया गया था। इस तथ्य को विवादित नहीं किया गया है और इसलिए, श्रम न्यायालय और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दर्ज निष्कर्ष सही रूप से साक्ष्य पर आधारित हैं और प्रत्यर्थी को इस प्रकार का कोई प्रबंधकीय कार्य नहीं दिया गया था।

7. जहाँ तक पिछली मजदूरी के अधिनिर्णय का संबंध है, विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस पहलू पर विचार किया है और पिछली मजदूरी को 25% तक घटा दिया है। हम एल॰ पी॰ ए॰ अधिकारिता में आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने के इच्छुक नहीं हैं। अत:, इस एल॰ पी॰ ए॰ को गुणागुण रहित होने के कारण खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

मो॰ वाजिद अली उर्फ बॉबी

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 212 of 2012. Decided on 4th May, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 311—गवाह का परीक्षण—अभियोजन द्वारा धारा 311 के अधीन दाखिल आवेदन अनुज्ञात किया गया—परीक्षण के लिए इप्सित गवाहों को सूचक द्वारा प्राथमिकी में नामित नहीं किया गया था और न ही आई॰ ओ॰ के समक्ष नामित किया गया था और ये गवाह आरोप-पत्र गवाह नहीं थे—इन गवाहों का परीक्षण करने के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन आवेदन अनुज्ञात करने का कोई कारण नहीं है—केवल कमी को पूरा करने के लिए इन गवाहों का परीक्षण किया जाना इप्सित किया गया था क्योंकि आरोप-पत्र गवाहों ने अभियोजन मामले का समर्थन नहीं किया था—आक्षेपित आदेश संपोषित नहीं किया जा सकता है—आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.—Mr. Akshay Kumar Mahato, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याची ने एस॰ टी॰ सं॰ 235 वर्ष 2010 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, प्रथम जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 20.1.2012 के आदेश को चुनौती दिया है जिसके द्वारा गवाहों जिन्हें सूचक के साक्ष्य में नामित किया गया था, का परीक्षण करने के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन अभियोजन द्वारा दाखिल आवेदन को अवर न्यायालय द्वारा अनुज्ञात किया गया है।

3. यह प्रतीत होता है कि याची को साकची पी॰ एस॰ केस सं॰ 56 वर्ष 2010, जी॰ आर॰ सं॰ 565 वर्ष 2010, में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त बनाया गया है। मामला सूचक के भाई की हत्या से संबंधित है। अभियोजन मामले के अनुसार मृतक को अचेत अवस्था में उसके घर लाया गया था। तत्पश्चात्, मृतक को अस्पताल ले जाया गया था, जहाँ उसे मृत घोषित किया गया था। प्राथमिकी से यह प्रतीत होता है कि सूचक तत्पश्चात् साकची बस अड्डा गया था, जहाँ उसे सूचित किया गया था कि वहाँ मृतक पर याची और अन्य द्वारा प्रहार किया गया था और तद्नुसार, याची को इस मामले में अभियुक्त बनाया गया था।

4. यह प्रतीत होता है कि आरोप-पत्र दाखिल करने के बाद याची के विरुद्ध संज्ञान लिया गया था और मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था। याची अवर न्यायालय में विचारण का सामना कर रहा था और विचारण में अभियोजन गवाहों का परीक्षण किया गया था। केवल दो गवाहों का परीक्षण करना शेष था जिनका परीक्षण करना अभियोजन नहीं चाहता था, बल्कि अभियोजन ने उन गवाहों, जिन्हें सूचक के साक्ष्य में नामित किया गया था, का परीक्षण करने के लिए आवेदन दाखिल किया था। प्राथमिकी और आक्षेपित आदेश से प्रकट है कि इन गवाहों को सूचक द्वारा प्राथमिकी में अथवा अन्वेषण अधिकारी के समक्ष नामित नहीं किया गया था। अन्वेषण अधिकारी, जिसका परीक्षण पहले ही अ॰ सा॰ 10 के रूप में किया गया था, ने स्पष्टत: कथन किया था कि समस्त चश्मदीद गवाहों को आरोप-पत्र गवाहों के रूप में नामित किया गया था। सूचक के साक्ष्य को भी इस आवेदन के परिशिष्ट-2 के रूप में अभिलेख पर लाया गया है जिसमें पैरा 5 और 6 पर सूचक ने केवल यह कथन किया है कि वह घर से बाहर आया जब मृतक को घर लाया गया था। उसके द्वारा नामित उसके परिवार के सदस्य भी घर से बाहर आए थे और उसके द्वारा नामित पड़ोसी भी उसके घर के बाहर उपस्थित थे। अभियोजन ने इन गवाहों, जिन्हें सूचक के साक्ष्य के पैरा 5 और 6 पर नामित किया गया है, के परीक्षण के लिए आवेदन दाखिल किया है। प्रकट है कि घटनास्थल सूचक के घर के निकट का स्थान नहीं है बल्कि साकची बस अड्डा है और इस प्रकार, याची के घर के निकट इन व्यक्तियों की उपस्थिति मामले में कोई अंतर करने नहीं जा रही है।

5. चाहे जो भी हो, चूँकि इन गवाहों को प्राथमिकी में सूचक द्वारा नामित नहीं किया गया था और न ही इन गवाहों को आई॰ ओ॰ के समक्ष नामित किया गया था और ये गवाह आरोप-पत्र गवाह नहीं थे, मैं इन गवाहों का परीक्षण करने के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन आवेदन अनुज्ञात करने का कारण नहीं पाता हूँ। यह प्रतीत होता है कि केवल कमी पूरा करने के लिए इन गवाहों का परीक्षण इप्सित किया गया है क्योंकि अब तक परीक्षित किए गए आरोप-पत्र गवाहों ने अभियोजन मामले का समर्थन नहीं किया है, जैसा स्वयं आक्षेपित आदेश से प्रतीत होता है। अभियोजन की इस कार्रवाई को जारी रहने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और आक्षेपित आदेश को विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. इस प्रकार, एस॰ टी॰ सं॰ 235 वर्ष 2010 में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन अभियोजन द्वारा दाखिल आवेदन अनुज्ञात करते हुए विद्वान प्रथम सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 20.1.2012 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। अवर न्यायालय को यथासंभव शीघ्रतापूर्वक विचारण निपटाने का निर्देश दिया जाता है। तद्नुसार, इस आवेदन को अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî dî ejkfB;k ,o Mhî ,uî mikè;k;] U;k;efrx.k

चैतू महली

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal No. 77 of 2003 (D.B.). Decided on 15th May, 2012.

एस॰ टी॰ सं॰ 43 वर्ष 2002 में श्री आलोक कुमार दूबे, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ I, गुमला द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 3.10.2002 और दिनांक 4.10.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302 एवं 201—हत्या–आजीवन कारावास–किसी ने नहीं कहा कि उसने मृतक को अंतिम बार अपीलार्थी के साथ देखा था–शव अपीलार्थी की संस्वीकृति पर बरामद नहीं किया गया था–केवल संस्वीकृति पर दोष का निष्कर्ष दर्ज नहीं किया जा सकता है–अपीलार्थी मृतक का मित्र था–अपीलार्थी के रक्त-रंजित कपड़ों को एफ॰ एस॰ एल॰ भेजा गया था किंतु वहाँ से यह संपुष्ट करने वाला कोई रिपोर्ट नहीं आया था कि यह मृतक का रक्त था अथवा मानव रक्त था–अपीलार्थी को संदेह का लाभ दिया गया–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Kashyap, For the Appellant; A.P.P, For the State.

न्यायालय द्वारा.–यह अपील एस॰ टी॰ सं॰ 43 वर्ष 2002 में अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए और आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 201 के अधीन भी उसको दोषसिद्ध करते हुए और पाँच वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए श्री आलोक कुमार दूबे, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ I, गुमला द्वारा पारित दिनांक 3.10.2002 के निर्णय के विरुद्ध दाखिल की गयी है। किंतु, दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया था।

2. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि अ॰ सा॰ 7 (गंडूर राम) ने दिनांक 8.6.2001 को प्रातः लगभग 7.45 बजे पुलिस के समक्ष फर्दबयान दर्ज किया कि उसका भाई विष्णु राम (मृतक) अपने घर में अकेला रह रहा था। दिनांक 7.6.2001 को रात्रि लगभग 8 बजे विष्णु राम उसके घर आया और तुरन्त वापस चला गया और उससे कहा कि उसने 'मांस' खरीदा है और वह इसे पकाने और खाने के लिए अपीलार्थी के घर जा रहा था और तब वह उसके घर में सोएगा। अपीलार्थी मृतक का मित्र था। मृतक अपीलार्थी को कर्ज दिया करता था। सुबह में, विष्णु राम का मृत शरीर उसकी गर्दन पर कटने की उपहति के साथ सड़क पर फेंका पाया गया था। वह अन्य के साथ घटनास्थल पर भाग कर गया जहाँ मृत शरीर पड़ा था। रास्ते में उसने देखा कि अपीलार्थी के आंगन में काफी मात्रा में खून फैला हुआ था और उसके घर की दीवार और दरवाजा पर और अपीलार्थी की जांघिया पर खून के छींटे थे। अपीलार्थी खून के धब्बों को धोने का प्रयास कर रहा था। गाँव वालों को देख कर, वह घबरा गया। पूछे जाने पर अपीलार्थी ने कुछ नहीं कहा था और तब वह घर बंद कर भाग गया। सूचक गया और अपने भाई का मृत शरीर उसकी

गर्दन पर गहराई तक कटने की उपहति के साथ पाया। जमीन पर खून टपक रहा था। सूचक ने अभिकथन किया कि अपीलार्थी ने उसके भाई की हत्या की है और सड़क के निकट उसका मृत शरीर फेंक दिया है।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने अनेक आधारों पर आक्षेपित निर्णय का विरोध किया और निवेदन किया कि इस मामले में परिस्थितियों की श्रृंखला पूर्ण नहीं है। पूर्वोक्त एफ॰ एस॰ एल॰ रिपोर्ट की अनुपस्थिति में, यह स्थापित नहीं किया गया है कि अपीलार्थी के कपड़े पर पाया गया खून मानव रक्त था अथवा यह मृतक का खून था और यह दर्शाने के लिए कुछ नहीं है कि अपीलार्थी को अंतिम बार मृतक के साथ देखा गया था और कि ऐसे अपराध के लिए कोई मंशा नहीं था क्योंकि अपीलार्थी और मृतक स्वीकृत रूप से अच्छे मित्र थे।

अंत में निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी लगभग 11 वर्ष से कारा में बना हुआ है।

4. राज्य के अधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया।

5. अभिलेखों का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने और पक्षों को विस्तारपूर्वक सुनने के बाद हम अपीलार्थी को संदेह का लाभ देने के इच्छुक हैं। यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी के रक्त रंजित कपड़ों को एफ॰ एस॰ एल॰ भेजा गया था किंतु वहाँ से यह संपुष्ट करने वाला कोई रिपोर्ट नहीं आया है कि यह मृतक का रक्त था अथवा मानव रक्त था। इसके अतिरिक्त, किसी ने यह नहीं कहा है कि उसने मृतक को अंतिम बार अपीलार्थी के साथ देखा था। सूचक ने ही कहा था कि मृतक ने उससे कहा था कि वह 'मांस' के साथ अपीलार्थी के घर पकाने-खाने और सोने जा रहा था। मृत शरीर को अपीलार्थी की संस्वीकृति पर बरामद नहीं किया गया था। इसके अतिरिक्त, केवल उसकी संस्वीकृति पर दोष का निष्कर्ष दर्ज नहीं किया जा सकता है।

6. परिणामस्वरुप, अपीलार्थी को संदेह का लाभ देते हुए इस अपील को अनुज्ञात किया जा रहा है।

7. तद्नुसार, आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाता है।

8. अपीलार्थी को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

भारत संघ एवं अन्य

cuke

अंजु कुमारी

W.P.(S) No. 5987 of 2011. Decided on 4th May, 2012.

सेवा विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–ग्रुप ''सी॰'' पद के विरुद्ध आवेदक की नियुक्ति के मामले पर विचार करने का अधिकरण द्वारा निर्देश–मृतक केंद्रीय विद्यालय का ग्रुप ''डी॰'' कर्मचारी था–आवेदन तीन माह के भीतर दिया गया था किंतु एक अथवा दूसरे आधार पर बार-बार दावा अस्वीकार कर दिया गया था–उच्च न्यायालय नियुक्ति का आदेश अथवा सारवान आदेश पारित नहीं कर सकता है ताकि रिट याची को पूरा अनुतोष दिया जा सके–किंतु, ऐसी विधिक अवस्था का परिणाम सामान्यतः उच्च न्यायालय के आदेश को भिन्न अर्थ देते हुए जो कभी नहीं आशयित था उसी प्राधिकारी द्वारा पुनः आदेश पारित किए जाने में होता है और

ऐसा प्राधिकारी अनुतोष को पुनः अस्वीकार करने के लिए नया कारण और आधार दे सकता है–प्रत्यर्थी वह प्रतिवाद नहीं कर सकता है जो उसने मुकदमा के पूर्व दौर में नहीं किया था–आक्षेपित आदेश अभिपुष्ट–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 6 से 11)

अधिवक्तागण.–Mr. Ajay Trivedi, For the Petitioners; None, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याची भारत संघ ओ॰ ए॰ सं॰ 102/2010 (R) में केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण, पटना, सर्किट बेंच, राँची (संक्षेप में अधिकरण) द्वारा पारित दिनांक 8.3.2011 के आदेश के विरुद्ध व्यथित है जिसके द्वारा अधिकरण ने याची को अपने कार्यालय में अथवा उनके प्रत्यक्षतः अधीन स्थापना में जिसमें ऐसे पद उपलब्ध हैं, गुणागुण पर ग्रुप 'सी॰' पद के विरुद्ध अनुकंपा के आधार पर आवेदक की नियुक्ति के मामले पर विचार करने का निर्देश दिया है।

3. तथ्यों से यह प्रतीत होता है कि आवेदक कर्मचारी डी॰ के॰ दास जो मेघाहातुबुरु, पश्चिम सिंहभूम, स्थित केंद्रीय विद्यालय का ग्रुप 'डी' कर्मचारी था जिसकी मृत्यु अपने पीछे दो अवयस्क पुत्रियों और आवेदक पत्नी को छोड़कर दिनांक 21.3.2000 को कार्यरत रहते हुए हो गयी थी। आवेदिका ने दिनांक 29.6.2000 को अनुकंपा के आधार पर अपनी नियुक्ति के लिए आवेदन दिया। सितंबर, 2000 में उसे दिनांक 8.9.2000 के पत्र के तहत सूचित किया गया था कि ग्रुप 'डी॰' पद पर अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए आवेदिका के अनुरोध को स्वीकार नहीं किया जा सकता था। आवेदिका ने दिनांक 20.2.2001 को आवेदन दाखिल किया था जिसका अनुसरण दिनांक 18.8.2001 के एक अन्य आवेदन द्वारा किया गया था जिसे अनुकूल अनुशंसा के साथ प्राचार्य, केंद्रीय विद्यालय, मेहाहातुबुरु द्वारा सम्यक रूप से अग्रसर किया गया था। उच्चतर प्राधिकारी द्वारा दिनांक 26.12.2001 के पत्र के तहत आवेदिका को उसमें यह कथन करते हुए सूचित किया गया था कि चूँकि ग्रुप 'डी॰' पद की कुछ सेवाओं का निजीकरण कर दिया गया था, ग्रुप 'डी॰' में कोई रिक्ति विद्यमान नहीं थी और, इसलिए, अनुकंपा पर नियुक्ति का अनुरोध स्वीकार नहीं किया जा सकता था। आवेदिका के पास अध्यपेक्षित अर्हता थी और वह अनुकंपा पर नियुक्ति की पात्र थी किंतु उस कारण से अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए उसका आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था। उक्त की दृष्टि में उसने अधिकरण के समक्ष ओ॰ ए॰ सं॰ 114/2002 दाखिल किया जिसे उनके उत्तर में प्रत्यर्थीगण द्वारा किए गए कथनों की दृष्टि में आवेदिका के मामले पर पुनर्विचार करने का निर्देश प्रत्यर्थी प्राधिकारी को देते हुए दिनांक 12.3.2003 को निपटाया गया था।

4. प्रत्यर्थी के दिनांक 14.5.2003 के आदेश के तहत आवेदिका का दावा पुनः अस्वीकार कर दिया गया था। तब आवेदिका एक अन्य ओ॰ ए॰ सं॰ 224/2004 दाखिल करके पुनः अधिकरण के पास गयी और उसके मामले पर पुनर्विचार करने का निर्देश प्राधिकारी को देकर इसे निपटाया गया था किंतु प्रत्यर्थी–प्राधिकारी ने यह कथन करते हुए कि दिनांक 14.5.2003 को पहले ही आदेश पारित किया गया है जिसके द्वारा आवेदिका का दावा अस्वीकार कर दिया गया था, पुनः आवेदिका का दावा अस्वीकार कर दिया। आवेदिका तीसरी बार ओ॰ ए॰ सं॰ 33/2008 दाखिल करके अधिकरण के पास गयी जिसे दिनांक 27.10.2008 के आदेश के तहत निपटाया गया था और अधिकरण ने संप्रेक्षित किया कि ''चूँकि यह दीर्घकालिक मामला है और दिनांक 21.3.2000 को आवेदिका के पति की मृत्यु हो गयी थी, अतः अधिकरण के आदेश की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर सकारण आदेश द्वारा प्रत्यर्थी अपना निर्णय आवेदिका को सूचित करे।'' तब, पुनः दिनांक 20.7.2009 को प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए आवेदिका का दावा अस्वीकार कर दिया गया था।

5. अत:, कर्मचारी की मृत्यु के मामले में जिसकी कार्यरत रहते हुए अपने पीछे अपनी विधवा और दो अवयस्क, पुत्रियों को छोड़कर वर्ष 2000 में मृत्यु हो गयी थी, और विधवा ने अपने पति की मृत्यु के समय से तीन माह के भीतर अनुकंपा के आधार पर अपनी नियुक्ति के लिए आवेदन दिया था, अत: उसका मामला बार-बार तीन बार अधिकरण के समक्ष आया और अधिकरण ने आवेदिका के मामले पर विचार करने के लिए रिट याची-प्राधिकारी को निर्देश जारी किया किंतु बार-बार एक या दूसरे आधार पर उसका दावा अस्वीकार कर दिया गया था। चौथे चक्र में ''गुणागुण पर ग्रुप 'सी०' पद के विरुद्ध अनुकंपा के आधार पर आवेदिका की नियुक्ति के मामले पर विचार करने के लिए'' प्रत्यर्थी प्राधिकारी को पुन: निर्देश जारी किया गया था। अत:, अब प्रत्यर्थी प्राधिकारी अर्थात् भारत संघ हमारे समक्ष है जिसने दिनांक 8.3.2011 को अधिकरण द्वारा पारित आदेश के फलस्वरुप आवेदिका के अभ्यावेदन को अस्वीकार करने का चौथा अवसर पाया।

6. यह सत्य है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट अधिकारिता में, उत्प्रेषण रिट में, उच्च न्यायालय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश, जिस आदेश को बिल्कुल अवैध पाया गया था, के स्थान पर अपना आदेश प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है। किंतु उच्च न्यायालय रिट याचिका में उठाए गए समस्त विवाद्यकों को विनिश्चित कर सकता है और विवाद्यकों पर निष्कर्ष दे सकता है किंतु रिट की विधि के मुताबिक उच्च न्यायालय ऐसे मामलों में नियुक्ति का आदेश अथवा कोई सारवान आदेश पारित नहीं कर सकता है ताकि रिट याची को पूरा अनुतोष प्रदान किया जा सके और अनुतोष प्रदान करने के लिए मामले को प्राधिकारी के पास भेज सकता है जिसने गलत अथवा गैर कानूनी आदेश पारित किया था और केवल प्राधिकारियों को निर्देश जारी किए जाते हैं कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के आलोक में उन्हें आदेश पारित करना चाहिए। ऐसी विधिक अवस्था का परिणाम सामान्यत: उच्च न्यायालय के आदेश को भिन्न अर्थ देते हुए जो कभी नहीं आशयित था, उसी प्राधिकारी द्वारा आदेश पारित करने में होता है और ऐसा प्राधिकारी अनुतोष पुन: अस्वीकार करने के लिए नया कारण और आधार दे सकता है जो मुकदमा के पूर्व दौर में आधार नहीं था और न्याय निर्णीत सिद्धांत और संरचनात्मक न्याय-निर्णीत सिद्धांत को अनदेखा करके और सिद्धांत जिसे सी० पी० सी० के आदेश II नियम 2 में रेखांकित किया गया है, के उल्लंघन में जो किसी वाद में वादी पर प्रयोज्य है और यही सिद्धांत प्रत्यर्थी पर भी लागू होता है, तब प्रत्यर्थी वह प्रतिवाद नहीं कर सकता है जो उसने मुकदमा के पूर्व दौर में प्रतिवाद के रूप में नहीं किया था।

7. इस मामले में, यह ऐसा मामला है जहाँ व्यक्ति, जिसकी सेवा में रहते हुए मृत्यु हो गयी थी, के आश्रितों के लिए लाभकारी विधान बनाया गया है और स्वयं नियोक्ता द्वारा ऐसे आश्रितों के लिए लाभकारी नियम अथवा योजना विरचित किया गया है और ऐसे मामले में आवेदक एक के बाद दूसरा अभ्यावेदन दाखिल करते रहता है जो अधिकतर मामलों में वर्षों का समय बीत जाने के कारण उसका दावा मृत अथवा बासी बन जाता है जो दशकों तक चलता है और जिसका परिणाम उच्च न्यायालय के समक्ष रिट में होता है। यह मामला एक ऐसा ही उदाहरण है जहाँ अपने पति की मृत्यु के कारण दो अवयस्क पुत्रियों वाली माता अत्यन्त कठिनाई में है और जिसने अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए समय पर आवेदन दिया था और यदि समय पर निर्णय किया जाता, वह स्वयं वर्ष 2000 में नियुक्ति पा सकती थी और उसने तीन बार अपने पक्ष में अधिकरण से आदेश पाया था किंतु फिर भी उसे वास्तविक अनुतोष नहीं मिला। यह गंभीर विवाद्यक है जिस पर विचार करने की आवश्यकता है और सीमित अधिकारिता के ऐसे प्रकार के बारे में परीक्षण करने की जरूरत है जो न्यायालय में निहित है और वह भी जिसे अपने जीवन यापन के लिए व्यक्तियों को शीघ्रातिशीघ्र अनुतोष देने के प्रयोजन से गठित और सृजित किया गया है क्योंकि ऐसे कानूनों के कारण अधिकरण के एक के बाद एक आदेशों के बाद भी कर्मचारी के आश्रित वास्तविक अनुतोष नहीं पा सकते हैं। विधि जैसी यह है पर समुचित समय पर विचार किया जा सकता

है किंतु इस मामले के तथ्य ऐसे उदाहरणों में से एक हैं जो विधि निर्माताओं को ऐसी प्रक्रियात्मक मामले पर पुनर्विचार करने के लिए मार्गदर्शित कर सकता है जिसका परिणाम न केवल बुरी दशा में रह रहे व्यक्ति के लिए कार्यवाही की बहुलता में होता है बल्कि यह न्यायालयों और अधिकरणों पर भारी बोझ भी डालता है।

8. इस मामले में, तथ्य प्रकट करते हैं कि आवेदिका नियुक्ति की पात्र थी और उसे किस पद पर नियुक्ति दी जानी चाहिए, इसे नियोक्ता को विनिश्चित करना था। आवेदिका का दावा इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया था कि ग्रुप 'डी॰' पदों में से कुछ को निजीकृत कर दिया गया था जिससे ग्रुप 'डी॰' पद में रिक्ति नहीं थी और आवेदिका की शर्त थी कि उसे ग्रुप 'सी॰' पद में समायोजित किया जा सकता है जिसके लिए प्रत्यर्थी प्राधिकारी का दृष्टिकोण था कि ग्रुप 'सी' पद में रिक्ति नहीं थे जिसे झूठा पाया गया था क्योंकि आवेदिका ने आर॰ टी॰ आई॰ अधिनियम के अधीन सूचना पाया था कि वर्ष 2002 से ग्रुप 'सी॰' पद पर अनुकंपा के आधार पर 11 ''नियुक्तियाँ'' पहले की गयी थी।

9. अब, याची भारत संघ के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि ग्रुप 'सी॰' पद के लिए अध्यपेक्षित शैक्षणिक अर्हता हिंदी और अंग्रेजी भाषा की अच्छे ज्ञान के साथ इंटरमीडिएट है।

10. जैसी उम्मीद की जाती थी कि याची आवेदिका के दावा, जो 12 वर्षों से लंबित है, को अस्वीकार करने के लिए नया आधार बना सकता है, यहाँ मुकदमा के पाँचवें दौर में, अधिकरण के समक्ष चौथे दौर के बाद, हम याची प्राधिकारी को नया आधार, जो केवल आवेदिका का दावा खारिज करने के लिए लिया जाएगा, लेने की अनुमति देने के इच्छुक नहीं है।

11. उक्त कारणों की दृष्टि में, हम आवेदिका, जो दो अवयस्क पुत्री वाली कर्मचारी की विधवा है और 12 वर्षों से पीड़ित है को अनुकंपा पर नियुक्ति देने का निर्देश प्रत्यर्थी प्राधिकारी को देते हुए दिनांक 8.3.2011 के अधिकरण के आदेश में हस्तक्षेप करने के इच्छुक नहीं हैं।

12. यह रिट याचिका व्यय के बिना खारिज किया जाता है क्योंकि हमने प्रत्यर्थी आवेदिका को नोटिस जारी नहीं किया है।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

मुकेश आर॰ गुप्ता एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 941 of 2008. Decided on 1st May, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406 एवं 420—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग एवं छल–संज्ञान–पक्षों द्वारा अपना विवाद सुलझाने के बाद अवर न्यायालय के समक्ष संयुक्त सुलह याचिका दाखिल की गयी जिसके द्वारा राशि, जिसका भुगतान परिवादी को किया जाना देय था, का भुगतान पहले ही किया जा चुका था–चूँकि पक्षों ने अपना मामला सुलझा लिया है जो निजी प्रकृति का है, याची को विचारण की कठोरता का सामना करने की अनुमति देना निरर्थक होगा क्योंकि याचीगण की दोषसिद्धि सुरक्षित करने का शायद ही अवसर होगा–दांडिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 3, 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. S.P. Sinha, For the Petitioners; A.P.P., For the State; None, For the Opp. Party No. 2.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने न्यायिक दंडाधिकारी, बोकारो के समक्ष परिवाद केस सं॰ 51 वर्ष 2004 दाखिल किया जिसमें अभिकथन किया गया कि परिवादी ने एक वर्ष की अवधि के लिए मेसर्स ल्वायड्स फिनांस लिमिटेड द्वारा चलायी जा रही सावधि जमा खाते में 61,000/- रुपयों का निवेश किया था किंतु परिपक्वता के बाद, उक्त कंपनी ने ब्याज के साथ उक्त राशि का भुगतान करने से इनकार कर दिया और तद्द्वारा उन्होंने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420 के अधीन अपराध किया।

3. ऐसे परिवाद पर, दिनांक 5.8.2004 को याची के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया गया था जिस आदेश को इस न्यायालय के समक्ष दांडिक विविध सं॰ 1463 वर्ष 2005 में चुनौती दी गयी थी जिसे दिनांक 28.2.2008 को याची को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 के अधीन अवर न्यायालय के समक्ष आवेदन दाखिल करने का निर्देश देते हुए निपटाया गया था। उस आदेश के अनुसरण में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था और उसमें कथन किया गया था कि पक्षों ने न्यायालय के बाहर अपना विवाद सुलझा लिया है और, इसलिए, याची को आरोप से उन्मोचित करने की प्रार्थना की गयी थी। उस आवेदन पर, अवर न्यायालय द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया था। किंतु, जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 205 के अधीन आवेदन दिया गया था, इसे अस्वीकार कर दिया गया था। उस आदेश को इस आवेदन में चुनौती दी गयी थी। चूँकि पक्षों ने अपना मामला सुलझा लिया था, जिसके द्वारा राशि, जो परिवादी को भुगतान किए जाने को देय था, का पहले ही भुगतान किया जा चुका था, पूरक शपथ पत्र दाखिल किया गया था जिसमें अवर न्यायालय के समक्ष दाखिल संयुक्त सुलह याचिका परिशिष्ट 1 के रूप में संलग्न की गयी थी और तद्द्वारा संपूर्ण दांडिक कार्यवाही को अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना की गयी थी।

4. विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता स्वीकार करते हैं कि पक्षों ने अपने विवाद का मैत्रीपूर्ण समाधान कर लिया है।

5. चूँकि पक्षों ने अपना विवाद सुलझा लिया है, जो निजी प्रकृति का प्रतीत होता है, अत: याचीगण को विचारण की कठोरता का सामना करने की अनुमति देना निरर्थक होगा क्योंकि याचीगण की दोषसिद्धि करने का शायद ही कोई अवसर होगा।

6. तद्नुसार, न्यायिक दंडाधिकारी, बोकारो के न्यायालय में लंबित सी॰ पी॰ केस सं॰ 51 वर्ष 2004 की संपूर्ण कार्यवाही एतद्द्वारा अभिखंडित की जाती है।

7. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,p lhh feJk] U;k;efr

शिव चन्द्र प्रसाद सिंह आजाद

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 616 of 2011. Decided on 14th May, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 362 एवं 482—आदेश वापस लेने के लिए आवेदन की अस्वीकृति–प्रश्नगत आदेश पारित करने के तीन वर्ष बाद याची द्वारा आदेश वापस लेने के

लिए आवेदन दाखिल किया गया–विचारण न्यायालय ने याची की उपस्थिति में उन दस्तावेजों को मंगाने का आदेश पारित किया था, किंतु इसे याची द्वारा कभी नहीं चुनौती दी गयी थी–दस्तावेज केस डायरी के साथ उपलब्ध थे और वे मामले के न्यायोचित निर्णय के लिए आवश्यक थे–आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Prabhat Kumar Sinha, For the Petitioner; Mr. D.K. Prasad, For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याची ने जी॰ आर॰ सं॰ 2065 वर्ष 1999/टी॰ आर॰ सं॰ 205 वर्ष 2011 में श्री सत्यपाल, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 4.7.2011 के आदेश को चुनौती दिया है, जिसके द्वारा अवर न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 8.5.2006 के पूर्व आदेश को वापस लेने के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन विचारण न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

3. आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि याची केंद्रीय सहकारी बैंक, भुरकुंडा शाखा के 35,04,563/- रुपयों के गबन के अभिकथन पर भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 409/467/468/471/419/420 के अधीन अपराध के लिए पतरातु (भुरकुंडा) पी॰ एस॰ केस सं॰ 218 वर्ष 1999, जी॰ आर॰ सं॰ 2065 वर्ष 1999 के तत्सम, के संबंध में अवर न्यायालय में विचारण का सामना कर रहा है। उक्त विचारण में, अभियोजन साक्ष्य दे रहा था जब अभियोजन द्वारा कतिपय दस्तावेजों, जो बचत खाता, चालू खाता, वाउचर, स्क्रॉल आदि थे, को विचारण में इनको सिद्ध करने के लिए मंगाने के लिए आवेदन दिया गया था। उक्त आवेदन स्वयं वर्ष 2006 में अवर न्यायालय में अभियोजन द्वारा दाखिल किया गया था और दिनांक 8.5.2006 के आदेश द्वारा इसे अनुज्ञात किया गया था और उन दस्तावेजों को सम्बन्धित बैंक से मंगाया गया था। दिनांक 8.5.2006 के आदेश, जिसे परिशिष्ट-3 के रूप में अभिलेख पर लाया गया था, से यह प्रतीत होता है कि उक्त आदेश याची की उपस्थिति में पारित किया गया था, जिसने अवर न्यायालय में हाजिरी दाखिल किया था।

4. यह प्रतीत होता है कि उक्त आदेश को याची द्वारा चुनौती नहीं दी गयी थी और लगभग तीन वर्ष बीतने के बाद अर्थात् दिनांक 28.5.2009 को अवर न्यायालय में दिनांक 8.5.2006 का आदेश वापस लेने के लिए आवेदन दाखिल किया गया था। अवर न्यायालय ने यह कथन करते हुए आवेदन अस्वीकार कर दिया है कि इसको आदेश का पुनर्विलोकन करने की शक्ति नहीं है और यह कथन भी करते हुए कि मामले के न्यायपूर्ण निर्णय के लिए दस्तावेज आवश्यक थे, आवेदन खारिज कर दिया था। आक्षेपित आदेश से यह भी प्रतीत होता है कि यद्यपि अवर न्यायालय में याची का मामला यह था कि मंगाए गए दस्तावेज न तो केस डायरी के भाग थे और न ही उन्हें लेखा परीक्षक के रिपोर्ट में उल्लिखित किया गया था किंतु यह आक्षेपित आदेश में उल्लिखित पाया गया है कि उक्त दस्तावेजों की छाया प्रतिलिपियाँ केस डायरी में उपलब्ध थी।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 4.7.2011 का आक्षेपित आदेश पूर्णत: अवैध है क्योंकि आक्षेपित आदेश में उल्लिखित दस्तावेज केस डायरी के भाग नहीं थे और साक्ष्य में उन दस्तावेजों को लेना याची के मामले पर महत्वपूर्ण प्रतिकूलता कारित करेगा। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. स्वयं अभिलेख के परिशीलन से प्रकट है कि विचारण न्यायालय ने दिनांक 8.5.2006 को ही उन दस्तावेजों को मंगाते हुए आदेश पारित किया था और वह भी याची की उपस्थिति में किंतु याची द्वारा

इसको चुनौती कभी नहीं दी गयी थी। यह प्रतीत होता है कि उक्त आदेश को वापस लेने के लिए आवेदन दिनांक 28.5.2009 को काफी विलंब के बाद अवर न्यायालय में दाखिल किया गया था और अवर न्यायालय ने सही प्रकार से यह कथन करते हुए कि इसे पूर्व आदेश के पुनर्विलोकन की शक्ति नहीं थी, आवेदन अस्वीकार कर दिया था। आगे प्रतीत होता है कि यद्यपि याची का मामला यह है कि मंगाए गए दस्तावेज केस डायरी के भाग नहीं थे और बैंक के लेखाकार द्वारा उनको विचार में नहीं लिया गया था, किंतु स्वयं आक्षेपित आदेश से स्पष्ट है कि वे दस्तावेज केस डायरी में उपलब्ध थे और मामले के न्यायपूर्ण निर्णय के लिए आवश्यक थे।

7. तद्नुसार, मैं पुनरीक्षण अधिकारिता में आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने लायक कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इस पुनरीक्षण आवेदन में गुणागुण नहीं है और इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

दिनेश चंद्र मिश्रा एवं एक अन्य

cuke

प्रोजेक्ट एंड डेवलपमेंट इंडिया लि॰, धनबाद एवं अन्य

W.P. (S) No. 5178 of 2002. Decided on 16th April, 2012.

सेवा विधि–स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति–पुनरीक्षित योजना के अधीन पुनरीक्षित वी॰ आर॰ एस॰ और अनुग्रहपूर्ण भुगतान के लाभ का दावा–जब एक बार कर्मचारीगण वी॰ आर॰ एस॰ के अधीन सेवानिवृत्ति चुनते हैं और उसके अधीन लाभों को स्वीकार करते हैं, कर्मचारी के रूप में उनके अधिकार समाप्त हो जाते हैं–तत्पश्चात्, वे पुनरीक्षित/उपांतरित वी॰ आर॰ एस॰ के अधीन अपना दावा पुनः नहीं रख सकते हैं तथा पुनः अपने अधिकारों का प्राख्यान नहीं कर सकते हैं–याचीगण, जिनको पुनरीक्षित/उपांतरित योजना के पहले सेवामुक्त कर दिया गया है, उपांतरित योजना के लाभों के हकदार नहीं हैं–रिट आवेदन खारिज। (पैराएँ 6 से 11)

निर्णयज विधि.–(2001) 8 SCC 71—Distinguished; (2003) 5 SCC 163; (2003) 6 SCC 490; (2006) 3 SCC 708—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s. M.K. Habib, Md. Manzoor Ahmad, For the Petitioners; Mr. K.B. Sinha, Amitabh, For the Respondents.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. कागजात का परिशीलन किया गया।

3. याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन वर्तमान रिट याचिका के जरिए दिनांक 5.5.2000 से दिनांक 6.11.2001 के ऑफिस मेमोरेन्डम को प्रभाव देने के लिए और दिनांक 6.11.2001 की उपांतरित/पुनरीक्षित स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के अधीन याचीगण जैसे कर्मचारियों को आच्छादित करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देते हुए समुचित रिट/आदेश/निर्देश जारी करने के लिए प्रार्थना किया है।

4. याचीगण का मामला यह है कि उन्होंने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिए दिनांक 29.8.2001 को आवेदन दिया था और उनका वी॰ आर॰ एस॰ स्वीकार किया गया था और उन्हें दिनांक 30.9.2001 को

सेवामुक्त/निर्मुक्त कर दिया गया था। उनकी सेवानिवृत्ति के समय पर, भारत सरकार, भारी उद्योग मंत्रालय, पब्लिक इंटरप्राइजेज विभाग द्वारा जारी दिनांक 5.5.2000 को जारी वी॰ आर॰ एस॰ से संबंधित नीति प्रभाव में थी और बाद में दिनांक 6.11.2001 के परिपत्र द्वारा उक्त वी॰ आर॰ एस॰ योजना उपांतरित की गयी थी। याचीगण के अनुसार उन्हें पुनरीक्षित स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना का लाभ दिया जाना चाहिए और विशेषतः, पुनरीक्षित योजना के अधीन अनुग्रह राशि के भुगतान के प्रयोजन से उनके मामलों पर विचार किया जाना चाहिए।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **सुब्रत सेन एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2001)8 SCC 71,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया और इस पर विश्वास किया।

6. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि वर्तमान मामले के अवधारण के प्रयोजन से कतिपय तिथियाँ प्रासंगिक हैं। प्रतिशपथ पत्र के पैरा 7 को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया गया है कि याचीगण ने भारत सरकार, भारी उद्योग मंत्रालय, पब्लिक इंटरप्राइजेज विभाग द्वारा जारी दिनांक 5.5.2000 की पुरानी वी॰ आर॰ एस॰ योजना (परिशिष्ट–1) के अधीन दिनांक 29.8.2001 को स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के लिए आवेदन दिया था और अब वे भारत सरकार द्वारा उपांतरित दिनांक 6.11.2001 की पुनरीक्षित वी॰ आर॰ एस॰ योजना के लाभ का दावा कर रहे हैं। आगे निवेदन किया गया है कि उनके वी॰ आर॰ एस॰ को दिनांक 30.9.2001 के प्रभाव से स्वीकार किया गया था और इसलिए वे दिनांक 6.11.2001 की पुनरीक्षित/उपांतरित वी॰ आर॰ एस॰ योजना के अधीन लाभ पाने के पात्र और हकदार नहीं हैं। अपने निवेदनों के समर्थन में, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने (i) **ए॰ के॰ बिंदल एवं एक अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2003)5 SCC 163;** (ii) **आई॰ डी॰ पी॰ एल॰ के अधिकारीगण एवं पर्यवेक्षकगण बनाम अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक, आई॰ डी॰ पी॰ एल॰ एवं अन्य, (2003)6 SCC 490;** और (iii) **एच॰ ई॰ सी॰ के स्वैच्छिक रूप से सेवानिवृत्त कर्मचारी कल्याण सोसाइटी एवं एक अन्य बनाम हेवी इंजीनियरिंग कॉरपोरेशन लि॰ एवं अन्य, (2006)3 SCC 708,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए तीन निर्णयों को उद्धृत किया और निवेदन किया कि पूर्वोक्त निर्णयों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार के मुताबिक जब एक बार कर्मचारीगण वी॰ आर॰ एस॰ के अधीन सेवानिवृत्ति चुनते हैं और उसके अधीन लाभों को स्वीकार करते हैं, कर्मचारी के रूप में उनके अधिकार समाप्त हो जाते हैं और तत्पश्चात् वे पुनः पुनरीक्षित/उपांतरित वी॰ आर॰ एस॰ योजना के अधीन वेतन पुनरीक्षण के लिए अपने अधिकार का प्रख्यापन नहीं कर सकते हैं और अपना दावा नहीं कर सकते हैं।

7. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के परिशीलन पर यह पता लगता है कि याचीगण दिनांक 6.11.2001 की पुनरीक्षित/उपांतरित वी॰ आर॰ एस॰ योजना के अधीन लाभ का दावा कर रहे हैं। यह प्रतीत होता है कि याचीगण ने भारत सरकार, भारी उद्योग मंत्रालय, पब्लिक इंटरप्राइजेज विभाग द्वारा जारी दिनांक 5 मई, 2000 की पुरानी योजना (परिशिष्ट–1) के अधीन वी॰ आर॰ एस॰ के लिए आवेदन दिया था। उनका वी॰ आर॰ एस॰ स्वीकार किया गया था तथा उन्हें दिनांक 30 सितम्बर, 2001 को सेवा से मुक्त कर दिया गया था। यह प्रतीत होता है कि भारत सरकार, भारी उद्योग मंत्रालय, पब्लिक इंटरप्राइजेज विभाग द्वारा जारी दिनांक 6 नवंबर, 2001 के ऑफिस मेमोरेंडम (परिशिष्ट–5) के मुताबिक पुनरीक्षित/उपांतरित वी॰ आर॰ एस॰ योजना दिनांक 6 नवंबर, 2001 को प्रभाव में आयी।

8. उक्त ऑफिस मेमोरेंडम का खंड 4 निम्नलिखित प्रावधानित करता है:–

*^^depkjhx.k] ftUg bl vk0 ,e0 dk tkjh dju dh frfFk l igy lokeDr@fueDr fd;k tk pdk g] dk mikrfjr ;ktuk d vèkhu vkPNkfnr ugh fd;k tk,xkA***

अत:, उक्त प्रावधान की दृष्टि में याचीगण, जिन्हें पुनरीक्षित/उपांतरित योजना के पहले सेवामुक्त कर दिया गया है, उपांतरित योजना के लाभ के हकदार नहीं हैं।

9. इस मामले को विनिश्चित करने के प्रयोजन से **ए॰ के॰ बिंदल एवं एक अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2003)5 SCC 163,** पर प्रकाशित मामले में निर्णय का पैरा 34 प्रासंगिक है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

"34. ;g n'kkrk g fd lok lekfIr ykHkk d vfrfjDr vR;fèkd vuxg jkf'k dk Hkxrku depkjh dk djuk gkxk ;fn og ;ktuk d vèkhu LofPNd lokfuofÙk dk fodYi purk g vkj mldk fodYi Lohdkj fd;k tkrk gA bl jkf'k dk Hkxrku dkb dke ugh dju d fy, vFkok dkb lok ugh nu d fy, fd;k tkrk gA bldk Hkxrku Lo; depkjh }kjk diuh vFkok vk|kfxd çfr"Bku dh lok NkMu vkj ble viu nkok vFkok vfèkdkjk dk R;kxu d cny e fd;k tkrk gA ;g yu&nu dk idt Mhy gA ;gh dkj.k g fd bl 0;olkf;d {k= e ^xkYMu gM'kd d :i e tkuk tkrk gA bl jkf'k dk Hkxrku dju dk e[; ç;ktu fu;kDrk vkj depkjh d chp d fofèkd lcèk dk ijh rjg lekIr djuk gA jkf'k dk Hkxrku dju d ckn depkjh diuh vFkok miØe d fu;ktu d vèkhu lok l eDr gk tkrk g] og viu leLr vfèkdkjk dk NkM nrk g vkj fdlh iorj vofèk d fy, orueku e of) d lcèk e dkb nkok dju lfgr viu vc rd d fu;kDrk d lkFk fdlh çdkj d foxr vfèkdkjk d fy, mld }kjk iuh nkok dju dk ç'u gh ugh gA ;fn LofPNd lokfuofÙk ;ktuk puu d ckn Hkh depkjh dk Hkry{kh frFk l orueku dh of) d lcèk e f'kdk;r dju dh vuefr vHkh Hkh nh tkrh g] ;ktuk ijh LFkkfir dju dk li.k ç;ktu fcYdy foQy gk tk,xkA***

10. मैंने याचीगण और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट और विश्वास किए गए निर्णय का परिशीलन किया है। इस मामले को विनिश्चित करने के प्रयोजन से याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट और विश्वास किए गए निर्णय प्रासंगिक नहीं हैं और यह याचीगण के मामले की मदद नहीं करता है क्योंकि यह गैर योगदायी पेंशन योजना के संबंध में थे। वर्तमान मामले में, प्रश्न उपांतरित वी॰ आर॰ एस॰ की प्रयोज्यता के संबंध में है जहाँ भारत सरकार की उपांतरित/पुनरीक्षित योजना जारी करने के पहले उनके द्वारा वी॰ आर॰ एस॰ की स्वीकृति पर याचीगण को सेवामुक्त किया गया है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय प्रत्यक्षत: इस मामले में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक पर हैं और पूर्वोक्त निर्णयों में अधिकथित निर्णयाधार स्पष्टत: प्रावधानित करता है कि याचीगण उपांतरित/पुनरीक्षित वी॰ आर॰ एस॰ योजना के अधीन लाभों के पात्र और हकदार नहीं हैं जब एक बार वी॰ आर॰ एस॰ स्वीकार किया गया है और उन्हें सेवामुक्त कर दिया गया है।

11. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में और यहाँ ऊपर चर्चा किए गए तथ्यों और परिस्थितियों के आलोक में याचीगण अनुतोष के हकदार नहीं हैं जैसी प्रार्थना की गयी है। अत:, व्यय के आदेश के बिना इस रिट आवेदन को खारिज किया जाता है।

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

श्रीमती सीमा घोष एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (Cr) No. 350 of 2010. Decided on 2nd July, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420/34—भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—छल—आदेशिका जारी—यह शुद्ध रूप से पक्षों के बीच व्यावसायिक संविदा से उद्‌भूत होने वाला मामला है जिसमें याचीगण की ओर से संविदा के भंग का अभिकथन किया गया है—यह नहीं कहा जा सकता है कि याचीगण का आरंभ से ही छल करने का गैरईमानदार आशय था बल्कि परिवादी को भी फ्रैंचाइजी का प्रस्ताव दिया गया था—याचीगण के विरूद्ध दांडिक दायित्व नहीं है यद्यपि सिविल दायित्व हो सकता है—इस प्रकार, याचीगण के विरूद्ध दांडिक मामला जारी रखना विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग है और इसे जारी रहने की अनुमति नहीं दी जा सकती है—दांडिक कार्यवाही अभिखंडित—रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Kaushik Sarkhel, For the Petitioners; J.C. to S.C-III, For the Respondent-State; Mr. Kripa Shankar Nanda, For the Respondent No.2.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण ने सी॰ 1 केस सं॰ 170 वर्ष 2010 के संबंध में उसमें श्री ए॰ के॰ तिवारी, न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर द्वारा पारित आदेश, जिसके द्वारा परिवाद याचिका में जाँच के बाद भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420/34 के अधीन अपराध के लिए याचीगण के विरूद्ध प्रथम दृष्टया मामला पाया गया था और उनके विरूद्ध आदेशिका जारी करने का आदेश दिया गया था, सहित उनके विरूद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने के लिए समुचित रिट, आदेश अथवा निर्देश जारी करने के लिए इस रिट याचिका को दाखिल किया है।

3. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 दीपक सिंह ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर के न्यायालय में परिवाद याचिका दाखिल किया जिसे सी॰ 1 केस सं॰ 170 वर्ष 2010 के रूप में दर्ज किया गया था। परिवाद याचिका से, यह प्रतीत होता है कि परिवादी ने अभियुक्त याचीगण, जो कंप्यूटर संबंधित पाठ्यक्रम में शिक्षा प्रदान करने के लिए मेसर्स आई॰ सी॰ ए॰ इंफोटेक प्रा॰ लि॰ चला रहे थे, से फ्रैंचाइजी के लिए आवेदन दिया था। परिवाद याचिका से यह प्रतीत होता है कि परिवादी ने पहले राँची में फ्रैंचाइजी के लिए आवेदन दिया था जिसके लिए उसने 3,20,600/- रुपयों की राशि का भुगतान किया था और दिनांक जून 29, 2009 तक सेंटर शुरू किया जाना था। यह भी प्रतीत होता है कि बाद में अभियुक्तगण ने राँची में किसी फ्रैंचाइजी को नियुक्त करने में अपनी अनिच्छा अभिव्यक्त किया, किंतु उन्होंने जमशेदपुर में फ्रैंचाइजी का प्रस्ताव दिया और इस प्रकार दिनांक 23.5.2009 को पक्षों के बीच एक अन्य एम॰ ओ॰ यू॰ किया गया था। अभिकथन है कि याचीगण ने जमशेदपुर में एक अन्य फ्रैंचाइजी को नियुक्त किया है। तद्नुसार, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 120B के अधीन अपराध के लिए परिवादी द्वारा परिवाद याचिका दाखिल किया गया था। अवर न्यायालय ने जाँच के बाद याचीगण के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 420/34 के अधीन अपराध के लिए प्रथम दृष्टया मामला पाया और उनके विरूद्ध समन जारी करने का निर्देश दिया जिसे इसे रिट याचिका में चुनौती दी गयी है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि स्वयं परिवाद याचिका से प्रतीत हो सकता था कि याचीगण के विरूद्ध जो भी अभिकथन हैं, यह केवल व्यावसायिक संव्यवहार में पक्षों के बीच संविदा भंग के तुल्य है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिवादी का मामला यह नहीं है कि आरंभ से ही याचीगण का छल करने का गैरईमानदार आशय था और तदनुसार, भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन याचीगण के विरूद्ध अपराध बनता नहीं कहा जा सकता है। इस प्रकार, यह सुयोग्य मामला है जिसमें याचीगण के विरूद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित कर दी जानी चाहिए।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि परिवाद याचिका में किए गए अभिकथन के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन अपराध के लिए याचीगण के विरूद्ध स्पष्ट अपराध बनता है क्योंकि याचीगण ने परिवादी से 3,20,600/- रुपयों की राशि को स्वीकार किया था और फिर भी जमशेदपुर में एक अन्य फ्रैंचाइजी को नियुक्त किया गया था। किंतु, स्वीकार किया गया है कि परिवादी प्रत्यर्थी सं॰ 2 को भी फ्रैंचाइजी का प्रस्ताव दिया गया था।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के परिशीलन पर, यह प्रतीत होता है कि यह शुद्ध रूप से पक्षों के बीच व्यावसायिक संविदा से उद्भूत होने वाला मामला है जिसमें याचीगण की ओर से संविदा के भंग का अभिकथन किया गया है। परिवाद याचिका के परिशीलन से यह नहीं कहा जा सकता है कि याचीगण का आरंभ से ही छल करने का गैरईमानदार आशय था, बल्कि परिवादी के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार परिवादी को भी फ्रैंचाइजी का प्रस्ताव दिया गया था।

7. मामले के उस दृष्टिकोण में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याचीगण के विरूद्ध दांडिक दायित्व नहीं है, यद्यपि सिविल दायित्व हो सकता है। इस प्रकार, मामले के तथ्यों में याचीगण के विरूद्ध दांडिक मामला जारी रखना विधि की प्रक्रिया का पूरा दुरुपयोग है और इसे जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

8. उक्त चर्चा की दृष्टि में, सी॰/1 केस सं॰ 170 वर्ष 2010 में, श्री ए॰ के॰ तिवारी, न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर द्वारा उसमें पारित आदेश सहित याचीगण के विरूद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

9. तद्नुसार, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mh ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

लीलावती देवी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (Cr.) (HB) No. 184 of 2012. Decided on 2nd July, 2012.

भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—अवैध निरोध—बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका—विवाह के प्रयोजन से उसकी पुत्री को भगा ले जाने के लिए अभियुक्तगण के विरूद्ध याची द्वारा दांडिक मामला दर्ज किया गया है—याची ने दांडिक मामला स्थापित किया है जो सक्षम न्यायालय के

समक्ष चल रहा है और दांडिक न्यायालय को विधि के अनुरूप याची के परिवादों पर समुचित आदेशों को पारित करना है—बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट ग्रहण करने के लिए मामला निर्मित नहीं हुआ है—याचिका खारिज। (पैराएँ 3 एवं 4)

अधिवक्तागण.—Mr. Azeemuddin, For the Petitioner; GP-III, For the State.

आदेश

यह बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट अभियुक्तगण द्वारा अपहरण कर ली बतायी गयी याची की पुत्री की निर्मुक्ति/सौंपने के लिए दाखिल की गयी है जो चिनिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 9 वर्ष 2012 में संपरिवर्तित परिवाद केस सं॰ 344 वर्ष 2012 में उनके अवैध निरोध के अधीन है।

2. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यद्यपि याची की पुत्री को दंडेयी पुलिस थाना, गढ़वा की अधिकारिता के भीतर प्रत्यर्थी सं॰ 7 द्वारा बरामद कर लिया गया था, किंतु उसे पुनः अभियुक्तगण को सौंप दिया गया था और कि अभियुक्तगण का राजनीतिक प्रभाव है और कि वे याची को धमकी दे रहे हैं।

3. यह प्रतीत होता है कि याची द्वारा विवाह के प्रयोजन से उसकी पुत्री सोनी कुमारी को भगाने के लिए अभियुक्तगण के विरूद्ध दांडिक मामला दर्ज किया गया है। आगे अभिकथित किया गया है कि अभियुक्त विनायक यादव जबर्दस्ती उससे विवाह करना चाहता है जिसके लिए सोनी कुमारी सहमत नहीं है। अन्य अभिकथनों को भी किया गया है।

4. स्वीकृत रूप से, याची ने दांडिक मामला संस्थापित किया है जो सक्षम न्यायालय के समक्ष चल रहा है और दांडिक न्यायालय का याची के परिवादों पर, यदि हो, विधि के अनुरूप समुचित आदेशों को पारित करना है। हमारे मत में, इस बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट को ग्रहण करने के लिए मामला निर्मित नहीं हुआ है और यह न्यायालय की प्रक्रिया का दुरूपयोग प्रतीत होता है।

तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

नैंसी टुडु

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

WPC No. 6007 of 2011. Decided on 9th July, 2012.

संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949—धाराएँ 32, 33 एवं 57—भारत का संविधान—अनुच्छेद 227—भूमि का व्यवस्थापन—रद्दकरण—रद्दकरण के आदेश को इस आधार पर चुनौती दी गयी कि विवाद्यक विनिश्चित करने में सक्षम प्राधिकारी उपायुक्त है और आक्षेपित आदेश एस॰ डी॰ ओ॰ द्वारा पारित किया गया था—आक्षेपित आदेश के विरूद्ध धारा 57 के अधीन अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील दाखिल किया गया था—चूँकि प्रभावकारी उपचार उपलब्ध है, अनुच्छेद 227 के अधीन रिट याचिका पोषणीय नहीं है—रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 3, 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.—M/s Ritu Kumar, Ravi Kr. Sinha, Niki Sinha, For the Petitioners; J.C. to A.A.G., For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया और अभिलेख का परिशीलन किया गया।

2. भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन दाखिल वर्तमान याचिका बंदोबस्ती रद्दकरण केस सं॰ 11/2011-12 में सबडिविजनल अधिकारी, गोड्डा द्वारा पारित दिनांक 14.9.2011 के आदेश (परिशिष्ट 9) के विरूद्ध दाखिल की गयी है, जिसके द्वारा बंदोबस्ती केस सं॰ 145/71-72 में की गयी भूमि की बंदोबस्ती रद्द कर दी गयी है और अंचलाधिकारी, गोड्डा को रजिस्टर II में आवश्यक शुद्धि करने का निर्देश दिया गया है और आगे प्रश्नगत भूमि का कब्जा ले लेने का निर्देश दिया गया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि एस॰ पी॰ टी॰ अधिनियम, 1949 की धाराओं 32 और 33 के प्रावधानों की दृष्टि में इस विवाद्यक को विनिश्चित करने में सक्षम प्राधिकारी उपायुक्त है और आक्षेपित आदेश सबडिविजनल अधिकारी द्वारा पारित किया गया है और आक्षेपित आदेश अधिकारिताहीन है और इसलिए, याची इस रिट याचिका को दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया है।

4. इसके विरूद्ध, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची अधिनियम की धारा 57 के अधीन भी अपीलीय प्राधिकारी के पास गया है और इसलिए वर्तमान रिट याचिका पोषणीय नहीं है।

5. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और अभिलेख के परिशीलन करने पर प्रतीत होता है कि वर्तमान याचिका बंदोबस्ती रद्दकरण केस सं॰ 11/2011-12 में सबडिविजनल अधिकारी, गोड्डा द्वारा पारित दिनांक 14.9.2011 के आदेश (परिशिष्ट-9) के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा बंदोबस्ती केस सं॰ 145/71-72 में की गयी भूमि की बंदोबस्ती रदद् कर दी गयी है और अंचलाधिकारी, गोड्डा को रजिस्टर II में आवश्यक शुद्धि करने का निर्देश दिया गया है। यह भी प्रतीत होता है कि आक्षेपित आदेश के विरूद्ध अधिनियम की धारा 57 के अधीन अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील दाखिल की गयी है और इसलिए इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि चूँकि वैकल्पिक प्रभावकारी उपचार उपलब्ध है, भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन रिट याचिका पोषणीय नहीं है और इसलिए यह याचिका अस्वीकार करने योग्य है।

6. तद्नुसार, इस रिट याचिका को अस्वीकार किया जाता है।

7. चूँकि सबडिविजनल अधिकारी द्वारा संबंधित प्राधिकारी को कब्जा ले लेने का निर्देश दिया गया है, यह वांछनीय है कि अपीलीय प्राधिकारी अपील के लंबित रहने के दौरान मामले के गुणागुण पर अंतरिम अनुतोष प्रदान करने के संबंध में प्रश्न पर विचार करेगा अथवा विकल्प में, अधिनियम की धारा 57 के अधीन दाखिल अपील सुनी जाएगी और शीघ्रातिशीघ्र विनिश्चित की जाएगी।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

सुनील कुमार (437 में)

पप्पु कुमार (457 में)

संजय कुमार सिंह (501 में)

हरि शंकर सिंह (504 में)

cuke

झारखण्ड राज्य एवं अन्य (सभी में)

W.P. (Cr.) Nos. 437, 457, 501 with 504 of 2009. Decided on 29th June, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 409/34—महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005—धारा 30—भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—लोक सेवक द्वारा न्यास का दांडिक भंग–संज्ञान—याचीगण (अभियंतागण) के विरूद्ध सरकारी धन, जिसे उन्हें नरेगा योजना के अधीन काम निष्पादित करने के लिए दिया गया था, की विपुल राशि के दुर्विनियोग का प्रत्यक्ष अभिकथन है जिसे स्वयं प्राथमिकी में वर्णित किया गया है—प्राथमिकी में अभिकथनों के आधार पर याचीगण के विरूद्ध स्पष्टतः अपराध बनता है—अतः, इस चरण पर याचीगण के विरूद्ध प्राथमिकी अथवा दांडिक कार्यवाही में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है—रिट याचिकाएँ खारिज। (पैराएँ 4, 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–Mr. S.K. Keshri, For the Petitioners; J.C. to G.P.-III, For the Respondent-State.

आदेश

चूँकि ये सारे मामले एक ही पुलिस मामले से उद्भूत होते हैं, उन्हें साथ सुना जा रहा है और इस एक ही आदेश से निपटाया जा रहा है।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना।

3. याचीगण ने इन रिट याचिकाओं को बड़कागाँव पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 2009, 4278 वर्ष 2009 के तत्सम, में भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409/34 के अधीन अपराध के लिए प्राथमिकी सहित अपने विरूद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए समुचित रिट, आदेश अथवा निर्देश जारी किए जाने के लिए प्रार्थना किया है।

4. याचीगण कनीय अभियंताओं/सहायक अभियंताओं के रूप में काम कर रहे थे और उनके विरूद्ध सरकारी धन, जिसे उन्हें नरेगा योजना के अधीन काम निष्पादित करने के लिए न्यस्त किया गया था, की विपुल राशि के दुर्विनियोग का अभिकथन है जिसे प्राथमिकी में वर्णित किया गया है।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याचीगण सद्विश्वास में नरेगा योजना के अधीन कामों को करवा रहे थे और इस प्रकार उन्हें महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारन्टी अधिनियम, 2005 की धारा 30 के अधीन सुरक्षित किया गया है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उनके विरूद्ध पुलिस मामले का संस्थापन और दांडिक कार्यवाही जारी रखना पूर्णत अवैध है और इसे विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन करते हुए प्रार्थना का विरोध किया है कि इन याचीगण के विरूद्ध अभिकथनों के आधार पर अपराध स्पष्टतः बनता है और इस प्रकार, इस चरण पर प्राथमिकी अभिखंडित नहीं की जा सकती है।

7. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि इन याचीगण के विरूद्ध सरकारी धन की विपुल राशि जिसे उन्हें नरेगा योजना के अधीन कामों को निष्पादित करने के लिए न्यस्त किया गया था, का दुर्विनियोग करने का प्रत्यक्ष अभिकथन है जिसे स्वयं प्राथमिकी में वर्णित किया गया है। प्राथमिकी में अभिकथनों के आधार पर याचीगण के विरूद्ध अपराध स्पष्टतः बनता है। इस प्रकार, इस चरण पर याचीगण के विरूद्ध प्राथमिकी अथवा दांडिक कार्यवाही में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

8. मैं इन रिट याचिकाओं में गुणागुण नहीं पाता हूँ जिन्हें तद्नुसार, खारिज किया जाता है। इस आदेश को फैक्स के माध्यम से संबंधित न्यायालय को संसूचित किया जाए।

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

बिरेन भंडारी उर्फ कृष्णा भंडारी एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal No. 649 of 2003 (D.B.). Decided on 14th June, 2012.

एस॰ सी॰ सं॰ 64 वर्ष 2002 में श्री राकेश रंजन वर्मा, सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 29.4.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302, 323 एवं 325—हत्या एवं उपहति—आजीवन कारावास—मस्तक पर लोहे की छड़ से प्रहार—प्राथमिकी में अभिकथन है कि दोनों अपीलार्थीगण ने मृतक पर लाठी एवं छड़ से प्रहार किया जब उसने बच्चों के बीच लड़ाई को लेकर सूचक और अपीलार्थीगण के बीच झगड़े के दौरान मध्यक्षेप किया—घायल गवाहों ने नहीं कहा था कि अपीलार्थी ने मृतक पर प्रहार किया—धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि अपास्त—दोषसिद्धि एवं दंडादेश उपांतरित। (पैराएँ 5 से 10)

अधिवक्तागण.—Mr. Kailash Prasad Deo, For the Appellants; A.P.P., For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.—यह अपील एस॰ सी॰ सं॰ 64 वर्ष 2002 में अपीलार्थी सं॰ 1 बिरेन भंडारी उर्फ कृष्णा भंडारी को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/325 के अधीन दोषसिद्धि करते और भा॰ दं॰ सं॰ धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कठोर करावास भुगतने और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 325 के अधीन अपराध के लिए छह माह की अवधि का कठोर करावास भुगतने का दंडादेश देते और अपीलार्थी सं॰ 2 मुन्ना भंडारी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/323 के अधीन दोषसिद्ध करते और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कठोर कारावास भुगतने और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन अपराध के लिए दो माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए श्री राकेश रंजन वर्मा, सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 29.4.2003 के निर्णय से उद्भूत होती है। दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया था।

2. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि डोली देवी (अ॰ सा॰ 5) ने दिनांक 7.3.2000 को सायं 4.30 बजे अस्पताल में पुलिस के समक्ष फर्दबयान दर्ज किया कि दोपहर लगभग 3 बजे जब वह अपने घर के सामने खड़ी थी, अपीलार्थीगण आए और उसको गाली देने लगे। अपीलार्थी सं॰ 1 बिरेन भंडारी उर्फ कृष्णा भंडारी ने उसको अपने घर में खींच कर ले जाने का प्रयास किया जिसका विरोध उसके द्वारा किया गया था जिस पर उसने उस पर लाठी से प्रहार किया जिस कारण वह गिर गयी। अपीलार्थी सं॰ 2 मुन्ना भंडारी ने उसको उसकी हत्या करने के लिए कहा जिस पर बिरेन भंडारी ने उसके मस्तक पर लाठी द्वारा प्रहार किया। जब वह मदद के लिए चिल्लायी, तब उसकी बहन का लड़का लाखू सरदार (मृतक) उसे बचाने आया, तब अपीलार्थीगण ने उस पर भी लाठी और छड़ से उसके मस्तक पर प्रहार किया जिस कारण वह जमीन पर गिर गया, तब उसकी पुत्री (अ॰ सा॰ 4) भी उसको बचाने आयी किंतु उसके दायें हाथ पर लाठी से प्रहार किया गया था। चिल्लाने पर जब गाँववाले जमा हुए, अपीलार्थीगण भाग गए। घायलों को अस्पताल ले जाया गया था जहाँ उनका ईलाज किया जा रहा था। घटना का कारण यह था कि प्रात: लगभग 11 बजे बच्चों के बीच झगड़ा को लेकर पक्षों के बीच झगड़ा हुआ था।

3. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि मृतक, जिसने अपीलार्थीगण और सूचक के बीच झगड़ा के दौरान मध्यक्षेप किया था, की हत्या करने का आशय नहीं

था और कि प्राथमिकी में अभिकथन किया गया है कि अपीलार्थी सं॰ 2 ने मृतक पर प्रहार किया था किंतु अ॰ सा॰ 4 और 5 ने अपने साक्ष्य में केवल अपीलार्थी सं॰ 1 के विरूद्ध प्रहार अभिकथित किया।

4. राज्य के अधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया।

5. प्राथमिकी में अभिकथित किया गया था कि दोनों अपीलार्थीगण ने मृतक पर लाठी और छड़ से प्रहार किया किंतु घायल गवाहों अ॰ सा॰ 4 और 5 ने अभिकथित किया कि अपीलार्थी सं॰ 1 बिरेन भंडारी उर्फ कृष्णा भंडारी ने लोहे की छड़ से मृतक पर प्रहार किया। आगे प्रतीत होता है कि डोली देवी (अ॰ सा॰ 5) को छड़ द्वारा कारित एक सामान्य उपहति और कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित फ्रेक्चर आयी थी जिसे गंभीर प्रकृति का पाया गया था।

6. मुख्य प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थीगण का मृतक की हत्या करने का आशय था। प्राथमिकी में अभिकथन है कि दोनों अपीलार्थीगण ने लाठी और छड़ से मृतक पर प्रहार किया था जब उसने बच्चों के बीच लड़ाई को लेकर सूचक और अपीलार्थीगण के बीच झगड़े के दौरान मध्यक्षेप किया। किंतु अ॰ सा॰ 5, जो घायल गवाह है, ने नहीं कहा था कि अपीलार्थी सं॰ 2 मुन्ना भंडारी ने मृतक पर प्रहार किया। इसी प्रकार, अ॰ सा॰ 4 जो एक अन्य घायल गवाह है, ने नहीं कहा था कि अपीलार्थी सं॰ 2 ने मृतक पर प्रहार किया।

7. अभिलेख का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने और पक्षों को सुनने के बाद हम अपीलार्थी सं॰ 1 (बिरेन भंडारी उर्फ कृष्णा भंडारी) की दोषसिद्धि को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 के अधीन उपांतरित करने के इच्छुक हैं। हम भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 के अधीन उपांतरित करने के इच्छुक हैं। हम भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 325 के अधीन उसकी दोषसिद्धि को मान्य ठहराते हैं।

8. चूँकि यह संदेहास्पद है कि अपीलार्थी सं॰ 2 ने भी मृतक के मस्तक पर प्रहार किया, उसे, जहाँ तक भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि का संबंध है, संदेह का लाभ दिया जाता है। किंतु भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन उसकी दोषसिद्धि मान्य ठहरायी जाती है।

9. अपीलार्थी सं॰ 1 को नौ वर्षों से अधिक समय से कारा में रह रहा बताया जाता है। अपीलार्थी सं॰ 2 मुन्ना भंडारी लगभग 3 माह से कारा में बने रहने के कारण अपना दंडादेश पहले ही भुगत चुका है। अत: अपीलार्थीगण को उनके द्वारा भुगत ली गयी अवधि तक के लिए दंडादेशित किया जाता है।

10. इस अपील को पूर्वोक्तानुसार दोषसिद्धि और दंडादेश में उपांतरण के साथ निपटाया जाता है। अपीलार्थी सं॰ 1 को तुरन्त निर्मुक्त करने का आदेश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है। अपीलार्थी सं॰ 2 को उसके जमानत बंधपत्रों से उन्मोचित किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

मेसर्स ओरियेंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

cuke

बोदया ओरावँ एवं एक अन्य

W.P. (C) No. 1975 of 2007. Decided on 30th April, 2012.

विधिक सेवा प्राधिकार अधिनियम, 1987—धारा 22C—स्थायी लोक अदालत की अधिकारिता–स्थायी लोक अदालत समझौत के समस्त प्रयास करने की प्रक्रिया का अनुसरण करने के बाद और सुलह करने में पक्षों की विफलता पर धारा 22-C(8) के अधीन न्यायनिर्णयन की प्रक्रिया के अनुसार विवाद का न्यायनिर्णयन कर सकता है। (पैरा 4)

निर्णयज विधि.–(2011) 7 SCC 463—Followed; 2005 (3) JCR 366; 2006 (3) JCR 404; 2007 (2) JLJR 344—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s A. Kr. Mishra, For the Petitioner; M/s. Pradeep Kr. Agrawal, Sameer Saurabh, For the Respondents.

आदेश

यह मामला (i) **शाखा प्रबंधक, यूनाइटेड इंडिया बीमा कंपनी लि०, डोरंडा शाखा 2 बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2005(3) JCR 366;** (ii) **अजय सिन्हा बनाम शाखा प्रबंधक, यूनाइटेड इंडिया बीमा कंपनी लि० एवं अन्य, 2006 (3) JCR 404** और (iii) **श्री खेमन महतो बनाम मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड, धनबाद एवं अन्य,** 2007(2) JLJR 344, मामलों में दिए गए इस न्यायालय के विरोधी निर्णयों की दृष्टि में इस न्यायालय को निर्दिष्ट किया गया है।

2. किंतु प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने **इन्टरग्लोब एविएशन लिमिटेड बनाम एन० सच्चिदानंद, (2011) 7 SCC 463** में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया जिसने विधिक सेवा प्राधिकार अधिनियम, 1987, जैसा समय-समय पर संशोधित किया गया है, के अनेक प्रावधानों और विनिर्दिष्टत: धारा 22C(8) पर विचार करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *^^ijk 27—vkjHk e LFkk;h ykd vnkyr d le{k dk;okgh dh çÑfr lyg dh gkrh g tk xj&U;k;fu.k;u çÑfr dh gA doy rHkh tc i{k lyg }kjk le>kr ij vku e foQy jgr g] LFkk;h ykd vnkyr fookn fofuf'pr djd U;k;fu.k;dkjh fudk; e mRifjofrr gk tkrk gA l{ki e] LFkk;h ykd vnkyrk }kjk viuk;h x;h çfØ;k ogh gkrh g tk vefjdk e ^^dku&vkc** (vFkkr lyg&lg&eè;LFkrk) d :i e ykdfç; :i l tkuh tkrh g tgk i{kx.k lyg d fy, rVLFk rrh; i{k vFkok çkfèkdkjh d ikl tk ldr g vkj ;fn lyg foQy gkrk g] ,l rVLFk rrh; i{k vFkok çkfèkdkjh dk Lo; fookn fofuf'pr dju d fy, çkfèkÑr djr g ft ldk fu.k; vfre vkj ckè;dkjh gkrk gA LFkkuh; ykd vnkyr d le{k ^^dku&vkc** dh voèkkj.kk flfoy çfØ;k lfgrk }kjk 'kkfl r U;k;ky;k }kjk U;kf;d U;k;&fu.k;u dh voèkkj.kk l fcydy fHkUu gA LFkk;h ykd vnkyr ^^U;k;ky;** ugh gku d ukr fnYyh e U;k;ky;k dh vfèkdkfjrk dh vuU;rk l lcfèkr lfonk e çkoèkku ykx ugh gkxA**

3. अत: माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उक्त प्रामाणिक उद्घोषणा की दृष्टि में उपर निर्दिष्ट माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों के विपरीत लिया गया दृष्टिकोण अर्थहीन है और स्थायी लोक अदालत को वर्ष 1987 के अधिनियम की धारा 22(c) के अधीन प्रावधानित प्रक्रिया का अनुसरण करने के बाद विवाद का न्यायनिर्णय करने की शक्ति है।

4. उक्त की दृष्टि में अभिनिर्धारित किया जाता है कि स्थायी लोक अदालत समझौते के समस्त प्रयास करने की प्रक्रिया का अनुसरण करने के बाद और पक्षों के सुलह करने में विफल होने पर वर्ष 1987 के अधिनियम की धारा 22(c) की उपधारा (8) के अधीन न्यायनिर्णयन की प्रक्रिया के अनुसार विवाद का न्यायनिर्णयन कर सकता है।

5. तद्नुसार, प्रश्न का उतर दिया जाता है और गुणागुण पर मामला विनिश्चित करने के लिए मामला माननीय एकल न्यायाधीश के समक्ष रखा जाय।

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

साहेब मियाँ उर्फ कलीमुद्दीन अंसारी

cuke

बिहार राज्य (अब झारखंड) एवं एक अन्य

Criminal Revision No. 337 of 2000(R). Decided on 2nd July, 2012.

परिवाद केस सं॰ 1067 वर्ष 1996/टी॰ आर॰ सं॰ 263 वर्ष 2000 में श्री एम॰ श्रीवास्तव, न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, गिरीडीह द्वारा पारित दिनांक 28.8.2000 के आदेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 147, 427, 379 एवं 323—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 239—रिष्टि एवं चोरी—उन्मोचन याचिका अस्वीकार किया जाना—याची को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 145 के अधीन कार्यवाही में प्रश्नगत भूमि पर काबिज पाया गया था—इसी भूमि के संबंध में पक्षों के बीच अभिधान वाद लंबित है—जब प्रश्नगत भूमि के उपर कब्जा ही विवादित है और सक्षम न्यायालय द्वारा याची को काबिज पाया गया है, याची के विरूद्ध अपराध बनाया नहीं जा सकता है भले ही परिवाद याचिका में संपूर्ण अभिकथन को सत्य स्वीकारा जाता है—आक्षेपित आदेश अपास्त—आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. P.C. Roy, For the Petitioner; Mr. Shree Prakash Jha, For the State.

न्यायालय द्वारा.—याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य में विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ को सुना गया। वैध नोटिस तामील किए जाने के बावजूद परिवादी-विरोधी पक्षकार सं॰ 2 उपस्थित नहीं हुआ है।

2. याची ने परिवाद केस सं॰ 1067 वर्ष 1996/टी॰आर॰ सं॰ 263 वर्ष 2000 में श्री एम॰ श्रीवास्तव, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, गिरिडीह द्वारा पारित आदेश को चुनौती दिया है जिसके द्वारा उन्मोचन के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन उसके विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 427, 379 और 323 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री पाए जाने पर अस्वीकार कर दिया गया है।

3. यह प्रतीत होता है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी गिरिडीह के समक्ष परिवाद मामला दाखिल किया था जिसे परिवाद केस सं॰ 1067 वर्ष 1996 के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें अभिकथित किया गया था कि अभियुक्तगण ने परिवादी द्वारा उगाए गए धान को प्रश्नगत भूमि से काट लिया था। यह प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय द्वारा किए गए जाँच के आधार पर, याची के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 427, 379 और 323 के अधीन अपराधों के लिए संज्ञान लिया गया था। संज्ञान लेने वाले उक्त आदेश की याची और अन्य सह-अभियुक्त द्वारा पटना उच्च न्यायालय, राँची पीठ के समक्ष दांडिक विविध सं॰ 4111 वर्ष 1997 (R) में चुनौती दी गयी थी जिसे उन सबों को आरोप विरचित किए जाते समय समस्त बिंदुओं को उठाने की स्वतंत्रता उनको देते हुए निपटाया गया था। तद्नुसार, याची ने अवर न्यायालय में उन्मोचन के लिए आवेदन दाखिल किया जिसे भी विचारण सं॰ 263 वर्ष 2000 में दिनांक 28.8.2000 के आक्षेपित आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि प्रश्नगत भूमि के लिए पक्षों के बीच विवाद है जिसके लिए याची को मामले में झूठा फँसाया गया है। निवेदन किया गया है कि प्रश्नगत उसी भूमि

के संबंध में पक्षों के बीच दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 145 के अधीन कार्यवाही की गयी थी जिसमें दिनांक 19.10.1966 के आदेश द्वारा याची को काबिज पाया गया था जिसे इस पुनरीक्षण आवेदन में परिशिष्ट 4 के रूप में अभिलेख पर लाया गया है। यह निवेदन भी किया गया है कि पुनरीक्षण में जिसे परिवादी पक्ष की ओर से दाखिल किया गया था में भी आदेश को पोषित किया गया है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि स्वयं आक्षेपित आदेश से प्रकट है कि अवर न्यायालय ने इन तथ्यों पर विचार किया है और इस तथ्य पर भी गौर किया है कि परिवादी द्वारा याची पर परिवाद दाखिल किया गया है जो लंबित है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिवाद मामला बिल्कुल झूठे अभिकथनों के साथ संस्थापित किया गया था, क्योंकि प्रश्नगत भूमि के संबंध में पक्षों के बीच कब्जा का विवाद था और याची को उक्त भूमि पर काबिज पाया गया है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह सुयोग्य मामला है जिसमें अवर न्यायालय को याची को उन्मोचित कर देना चाहिए था।

5. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन करते हुए प्रार्थना का विरोध किया है कि परिवाद याचिका में किए गए अभिकथनों के आधार पर याची के विरूद्ध स्पष्टतः अपराध बनता है।

6. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि पक्षों के बीच दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 145 के अधीन कार्यवाही में याची को प्रश्नगत भूमि पर काबिज पाया गया था और यह तथ्य आक्षेपित आदेश में भी सामने आता है जिसमें उल्लिखित किया गया था कि उक्त आदेश को पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा भी पोषित किया गया है। आक्षेपित आदेश में यह उल्लेख भी किया गया है कि उसी प्रश्नगत भूमि के संबंध में पक्षों के बीच अभिधान वाद लंबित है। मामले के तथ्यों में, जब प्रश्नगत भूमि के उपर पक्षों का कब्जा ही विवादित है और सक्षम न्यायालय द्वारा याची का कब्जा ही विवादित है और सक्षम न्यायालय द्वारा याची को काबिज पाया गया है, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याची के विरूद्ध अपराध बनाया नहीं जा सकता है भले ही परिवाद याचिका में याची के विरूद्ध संपूर्ण अभिकथन को सत्य स्वीकार किया जाता है।

7. पूर्वोल्लिखित चर्चा की दृष्टि में, परिवाद केस सं॰ 1967 वर्ष 1996/टी॰आर॰ सं॰ 263 वर्ष 2000 में याची द्वारा दाखिल उन्मोचन के लिए आवेदन को अस्वीकार कर श्री एम॰ श्रीवास्तव, न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, गिरिडीह द्वारा पारित दिनांक 28.8.2000 का आक्षेपित आदेश एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है। परिणामस्वरूप, याची उन्मोचित किया जाता है। तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ujUæ ukFk frokjh] U;k;efr

सिंटू कुमार साव

cuke

भारतीय तेल निगम एवं अन्य

W.P. (C) No. 365 of 2012. Decided on 25th June, 2012.

सरकारी संविदा—गैस एजेंसी—स्थानीय निवासी होने की शर्त—गैस एजेंसी देने के प्रयोजन से स्थानीय क्षेत्र का निवासी होने की आवश्यकता है—उक्त प्रयोजन से गाँव में निवास की अवधि

प्रासंगिक नहीं है—प्रत्यर्थी को गैस एजेंसी आवंटित करने में प्रत्यर्थी के निर्णय में अवैधता नहीं है–याचिका खारिज। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. V.K. Roy, For the Petitioner; Mr. V. Shivnath, For the Respondent Nos. 1 & 2.

आदेश

इस रिट याचिका में राजीव गाँधी ग्रामीण एल॰ पी॰ जी॰ वितरक योजना के अधीन प्रत्यर्थी सं॰ 3 के पक्ष में एल॰ पी॰ जी॰ गैस एजेंसी के आवंटन को अभिखंडित करने की प्रार्थना की गयी है।

2. कथन किया गया है कि नीति और उक्त योजना के अधीन विज्ञापन के निबंधनानुसार, एल॰ पी॰ जी॰ गैस एजेंसी उस व्यक्ति को दी जानी थी जो स्थानीय निवासी हो। याची स्थानीय निवासी है और वह कई पीढ़ीयों से गाँव में निवास कर रहा है। प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने हाल में भूमि खरीदी है और निवासी बन गया है। प्रत्यर्थीगण ने उक्त पहलू पर विचार नहीं किया और मनमाने तरीके से प्रत्यर्थी सं॰ 3 को गैस एजेंसी अधिनिर्णीत किया है। आवंटन पूर्णत: अवैध है और अभिखंडित किए जाने का दायी है।

3. प्रत्यर्थीगण द्वारा अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए इस रिट याचिका का प्रतिवाद किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 3 भी उसी गाँव का निवासी है, जो आवासीय प्रमाण पत्र (प्रतिशपथ पत्र का परिशिष्ट R/2) से स्पष्ट होगा। प्रत्यर्थी सं॰ 3 भी समस्त मापदंडों को परिपूर्ण करता है। लॉट निकालकर आवेदकों में से चयन किया गया था याची को प्रत्यर्थी सं॰ 3 और दो अन्य उम्मीदवारों के साथ पात्र आवेदक पाया गया था। ड्रॉ के लिए उन्हें चयनित किया गया था। संवीक्षण के बाद प्रत्यर्थी सं॰ 3 को सफल घोषित किया गया था। उक्त प्रत्यर्थी को गैस एजेंसी आवंटित करने में अवैधता अथवा मनमानापन नहीं है।

4. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों और सामग्रियों का परिशीलन किया है। प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने प्रतिशपथ पत्र (परिशिष्ट R/2) के साथ निवास प्रमाण पत्र दाखिल किया है। परिशिष्ट R/2 के परिशीलन पर, मैं पाता हूँ कि प्राधिकारियों ने प्रत्यर्थी सं॰ 3 को स्थानीय निवासी दर्शाते हुए प्रमाणपत्र जारी किया है। उक्त तथ्य पर याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विवाद नहीं किया गया है। याची के अनुसार, प्रत्यर्थी सं॰ 3 केवल एक वर्ष से गाँव में रह रहा है जबकि वह कई पीढ़ीयों से गाँव में निवास कर रहा है।

5. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि गैस एजेंसी देने के प्रयोजन से स्थानीय क्षेत्र का निवासी होने की आवश्यकता है। उक्त प्रयोजन से गाँव में निवास की अवधि प्रासंगिक नहीं है।

6. उक्त पर विचार करते हुए, मैं प्रत्यर्थी सं॰ 3 को गैस एजेंसी आवंटित करने के प्रत्यर्थीगण के निर्णय में अवैधता अथवा मनमानापन नहीं पाता हूँ।

7. तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

उमेश प्रसाद

cuke

मोस्मात तिलवा

Civil Review No. 24 of 2010. Decided on 1st May, 2012.

मोटर यान अधिनियम, 1988—धाराएँ 168 एवं 173—दुर्घटना में मृत्यु—अपराधकारी वाहन के स्वामी पर मुआवजा का भुगतान करने का दायित्व इस आधार पर डाला गया कि मृतक सब्जी ढोनेवाले ट्रक पर सवार हुआ था—खंडपीठ ने संप्रेक्षित किया कि मृतक सामान ढोनेवाले वाहन में यात्रा कर रहा था—खंडपीठ द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है—पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.—M/s. Asutosh Kumar, For the Petitioner; M/s Alok Lal, For the Respondents.

आदेश

पुनरीक्षण याचिका पर पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. पुनरीक्षण याची उस वाहन का स्वामी है जिसने दुर्घटना कारित किया था। पुनरीक्षण याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, खंडपीठ ने त्रुटि की थी, जो दिनांक 20.3.2009 के आदेश को देखते ही प्रकट है। निवेदन किया गया है कि आक्षेपित आदेश के पैरा 4 में खंड पीठ ने मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण द्वारा पारित अधिनिर्णय में कथित तथ्यों पर गौर किया है और उक्त अधिनिर्णय में अभिनिर्धारित किया गया है कि मृतक उक्त ट्रक में न केवल यात्री के रूप में यात्रा कर रहा था बल्कि वह सब्जी ढोने के लिए इसमें सवार हुआ था।

3. किंतु, अधिनिर्णय के विरूद्ध अपील विनिश्चित करते हुए पैरा-7 में खंडपीठ ने संप्रेक्षित किया है कि मृतक अन्य व्यक्तियों के साथ माल ढोने वाले वाहन में यात्री के रूप में यात्रा कर रहा था और इसलिए बीमा कंपनी को मुआवजा का भुगतान करने का दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, व्यक्ति जो अपना माल ढो रहा है अथवा माल ढोने के लिए माल वाहन में सवार हुआ है। धारा 147(i) (B) की दृष्टि में आच्छादित है।

5. बीमा कंपनी के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि खंडपीठ द्वारा दिए गए आक्षेपित निर्णय में तथ्य अथवा विधि की कोई गलती नहीं है। उन्होंने हमारा ध्यान अधिनिर्णय में दर्ज तथ्यों की ओर आकृष्ट किया जिसमें पहले ही अधिकरण द्वारा दर्ज किया गया है कि याची सह-यात्रियों में से एक था जो माल वाहन में यात्रा कर रहे थे और यह दावेदारों का मामला तक नहीं है कि पीड़ित माल ढोने के लिए यात्रा कर रहा था।

6. उक्त कारणों की दृष्टि में, हम खंडपीठ द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में कोई गलती नहीं पाते हैं और पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

मूटर धोबी

cuke

परबिल धोबी एवं अन्य

W.P. (C) No. 6771 of 2011. Decided on 7th May, 2012.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 13, नियम 4—प्रदर्शों को चिन्हित करना—मूल विक्रय विलेख और विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति को प्रदर्शों के रूप में चिन्हित करने और

किराया रसीदों को सिद्ध करने के लिए याची-प्रतिवादी द्वारा दाखिल याचिकाओं को अस्वीकार किया जाना—याची को न्यायोचित और युक्तियुक्त अवसर देने की दृष्टि से अवर न्यायालय को अभिलेख पर दस्तावेजों को लेने की अनुमति देने और तद्द्वारा दूसरे पक्ष को न्यायोचित और उचित अवसर देने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 3, 6, 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.—M/s. Atanu Banerjee, D.C. Mishra, For the Petitioner; M/s. Amar Kumar Sinha, P.K. Prasad, K.K. Ambastha, For the Respondents.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता से सुना गया।

2. कागजातों का परिशीलन किया गया।

3. भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान याचिका अभिधान वाद सं॰ 145 वर्ष 1992 में विद्वान उप-न्यायाधीश VI, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 29.6.2011 के आदेश को अभिखंडित और अपास्त करने के लिए समुचित रिट/आदेश/निर्देश जारी करने की प्रार्थना के साथ दाखिल की गयी है जिसके द्वारा प्रतिवादी (वर्तमान याची) की ओर से मूल विक्रय विलेख सं॰ 16038 दिनांक 16.12.1976 को और विक्रय विलेख सं॰ 10607 दिनांक 4.9.1989 की प्रमाणित प्रति को चिन्हित करने के लिए और किराया रसीदों को सिद्ध करने के लिए प्रतिवादी को अवसर देने के लिए उसमें प्रार्थना के साथ दाखिल दिनांक 17 जून, 2011 की दो पृथक याचिकाओं को अस्वीकार कर दिया गया है। आगे, अभिधान वाद सं॰ 145 वर्ष 1992 में विद्वान उप-न्यायाधीश VI, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 17.8.2011 के आदेश को अभिखंडित और अपास्त करने के लिए प्रार्थना की गयी है जिसके द्वारा साक्ष्य में दिनांकों 1.6.2011, 10.6.2009 और 1.8.2009 को दाखिल दस्तावेजों को प्राप्त करने और तत्पश्चात दो विक्रय विलेखों को प्रदर्शों के रूप में चिन्हित करने और विधि के अनुरूप सरकारी किराया रसीदों को सिद्ध करने के लिए अनुमति प्रदान करने के लिए उसमें प्रार्थना करते हुए प्रतिवादी (वर्तमान याची) की ओर से दाखिल दिनांक 20.7.2011 की याचिका को अस्वीकार कर दिया गया है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि अवर न्यायालय के समक्ष प्रासंगिक दस्तावेजों को प्रस्तुत करने का युक्तियुक्त अवसर याची को नहीं दिया गया है। अपने निवेदनों के समर्थन में, याची के विद्वान अधिवक्ता ने डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 4253 वर्ष 2008 में पारित आदेश को निर्दिष्ट किया और उस पर विश्वास किया जिसमें तथ्यों के समरूप संवर्ग में और समरूप परिस्थितियों में, इस न्यायालय ने याचिका अनुज्ञात करके रिट याची को दस्तावेजों को प्रस्तुत करने का अवसर दिया।

5. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची समय पर अध्यपेक्षित दस्तावेजों को प्रस्तुत करने में विफल रहा और सिविल प्रक्रिया संहिता में अंतर्विष्ट प्रावधानों की दृष्टि में दस्तावेजों को विवाद्यक के अंतिमकरण के पहले प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है और इसलिए, अवर न्यायालय ने सही प्रकार से याचिका अस्वीकार कर दिया है।

6. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों के परिशीलन पर और विशेषत: अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश के परिशीलन पर, यह प्रतीत होता है कि याची को दो विक्रय विलेखों और सरकारी किराया रसीदों जैसे प्रासंगिक और तात्विक दस्तावेजों को प्रस्तुत करने से वंचित कर दिया गया है। वाद की प्रकृति अभिधान वाद की है और इसलिए, यह प्रतीत होता है कि मामले में न्यायनिर्णय और निर्णय के प्रयोजन से प्रश्नगत दस्तावेज प्रासंगिक और तात्विक हैं। आगे

पता चलता है कि तथ्यों के समरूप संवर्ग में इस न्यायालय ने मामला (डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 4253 वर्ष 2008) को विनिश्चित किया, जिसमें रिट याची ने भी विलंबित चरण पर ऐसा आवेदन दाखिल किया था किंतु न्यायालय ने महसूस किया कि दस्तावेजों, जिन्हें प्रदर्शित किया जाना इप्सित किया गया था, का अवर न्यायालय द्वारा सूक्ष्म रूप से परीक्षण किया जाना चाहिए था और अवर न्यायालय को मामले के न्यायोचित निर्णय के लिए दस्तावेजों का संवीक्षण करना चाहिए था और इस प्रकार, अवर न्यायालय अभिलेख पर दस्तावेजों को लेने की अनुमति देने का दायी था। उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, पूर्वोक्त रिट याचिका अनुज्ञात की गयी थी और उसमें याची को दस्तावेज प्रस्तुत करने की अनुमति दी गयी थी और अभिलेख पर दस्तावेजों को लेने का निर्देश अवर न्यायालय को दिया गया था।

7. वर्तमान मामले में भी, याची ने विलंबित चरण पर आवेदन दाखिल किया था जब वादीगण के अंतिम तर्क को पहले ही बंद किया जा चुका है और इसलिए अवर न्यायालय ने उस आवेदन को खारिज कर दिया किंतु डब्ल्यू पी० (सी०) सं० 4253 वर्ष 2008 में पारित आदेश की दृष्टि में प्रतीत होता है कि याची को न्यायोचित और युक्तियुक्त अवसर देने की दृष्टि से अवर न्यायालय को अभिलेख पर लेने की अनुमति देने और तद्द्वारा दूसरे पक्ष को न्यायोचित और उचित अवसर देने की आवश्यकता है ताकि मामले के समस्त आवश्यक और प्रासंगिक दस्तावेजों पर विचार करने के बाद और अवर न्यायालय के समक्ष पक्षों को युक्तियुक्त अवसर देने के बाद अवर न्यायालय के समक्ष विवाद्यक को विनिश्चित किया जा सके।

8. उक्त चर्चा की दृष्टि में, वर्तमान याचिका अनुज्ञात की जाती है। दिनांक 29.6.2011 और दिनांक 17.8.2011 के आक्षेपित आदेशों को अभिखंडित और अपास्त करने का आदेश दिया जाता है। यह प्रतीत होता है कि वाद वर्ष 1992 का है और इसलिए, यह वांछनीय है कि विचारण न्यायालय ऐसे पुराने मामले को प्राथमिकता दे। अवर न्यायालय आदेश की प्राप्ति की तिथि से दो सप्ताह के भीतर दो विक्रय विलेखों और सरकारी किराया रसीदों, जिन्हें याची द्वारा पहले ही दाखिल किया जा चुका है, सहित दस्तावेजों को अभिलेख पर लेने का कार्य पूरा करेगा और तत्पश्चात, वाद में अग्रसर होगा और इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से छह माह की अवधि के भीतर उक्त वाद को पूरा/विनिश्चित करने का संभव प्रयास करेगा।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

सुमन दत्ता

cuke

झारखण्ड राज्य

W.P. (Cr) No. 345 of 2010. Decided on 2nd July, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 363/366A/34—भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—अपहरण—संज्ञान—अवयस्क लड़की का अपहरण—पीड़ित लड़की अभी भी गायब है—संदेह के आधार पर याची के विरूद्ध अभिकथन है, किंतु याची के विरूद्ध दांडिक कार्यवाही में इस चरण पर रिट न्यायालय के हस्तक्षेप का मामला नहीं है—रिट याचिका खारिज।
(पैराएँ 4, 5, 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Ashish Verma, For the Petitioner; Mr. Jalisur Rahman, For the Respondent State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याची ने साकची पी॰ एस॰ केस॰ सं॰ 126 वर्ष 2007, जी॰ आर॰ सं॰ 1623 वर्ष 2007 के तत्सम, में भारतीय दंड संहिता की धाराओं 363/366A/34 के अधीन अपराध के लिए अपने विरूद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही, जो एस॰ टी॰ सं॰ 201 वर्ष 2008 में पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर के न्यायालय में विचारण के लिए लंबित है, के अभिखंडन के लिए यह रिट याचिका दाखिल किया है।

3. प्राथमिकी से यह प्रतीत होता है कि याची को सूचक की अवयस्क पुत्री के अपहरण के अभिकथन पर साकची पी॰ एस॰ केस सं॰ 126 वर्ष 2007 में अभियुक्त बनाया गया है। प्राथमिकी दर्शाती है कि मोबाइल फोन पर मिस्ड कॉल का पता लगाने पर प्रतीत हो सका था कि एक खास नंबर जिससे मिस कॉल किया गया था, किसी पीयूष कुमार का था। जब उक्त पीयूष कुमार से संपर्क किया, उसने सूचित किया कि मोबाइल फोन किसी राजू कुमार द्वारा उपयोग किया जा रहा था। जब राजू कुमार से संपर्क किया गया था, उसने सूचित किया कि उक्त मोबाइल फोन उपयोग के लिए पीड़ित लड़की द्वारा लिया गया था। प्राथमिकी से यह भी प्रतीत होता है कि राजू कुमार ने सूचित किया कि पीड़ित लड़की का इस याची के साथ प्रेम प्रसंग था और इस प्रकार संदेह किया गया था कि याची का लड़की के अपहरण में हाथ हो सकता था। तद्नुसार, याची के विरूद्ध और राजू कुमार और पीयूष कुमार के विरूद्ध भी मामला संस्थापित किया गया था।

4. आगे यह प्रतीत होता है कि राजू कुमार और पीयूष कुमार को विचारण पर रखा गया था और उन्हें एस॰ टी॰ सं॰ 201 वर्ष 2008 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश II, जमशेदपुर द्वारा दोषमुक्त किया गया था। उक्त निर्णय याची की ओर से दाखिल पूरक शपथपत्र के परिशिष्ट 3 के रूप में अभिलेख पर लाया गया है। यह प्रतीत होता है कि पीड़िता लड़की अभी भी गायब है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची झारखंड राज्य का निवासी नहीं है और तद्नुसार, याची के विरूद्ध कार्यवाही अभिखंडित की जा सकती है।

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है।

7. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने के बाद और अभिलेख के परिशीलन पर, मैं पाता हूँ कि याची के विरूद्ध अभिकथन यद्यपि संदेह के आधार पर किया गया है, किंतु यह इस चरण पर याची के विरूद्ध दांडिक कार्यवाही में रिट न्यायालय के हस्तक्षेप का मामला नहीं है।

8. मैं इस रिट आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ, जिसे तद्नुसार, खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

सूर्या बाला एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1598 of 2010. Decided on 26th June, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A, 323, 341 एवं 406/34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 320 एवं 482—क्रूरता एवं उपहति—संज्ञान—पक्षों ने अपना विवाद सुलझा लिया है और सुलह कर लिया है—विवाद निजी प्रकृति का है और लोक नीति अंतर्ग्रस्त नहीं करता है—दांडिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 5 से 9)

निर्णयज विधि.–(2003) 4 SCC 675; **2012 (1) BLJ & JLJ 33 (SC) :** 2011(4) JLJR 421(SC)—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Shailesh, For the Petitioners; A.P.P., For the State; Mr. J.P. Pandey, For the Opp. Party No. 2.

आदेश

पक्षकारों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता जो न्यायालय में उपस्थित हैं।

2. यह आवेदन दिनांक 6.8.2010 के आदेश जिसके द्वारा याचीगण के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 498A, 323, 341, 406/34 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए संज्ञान लिया गया है सहित सी॰ पी॰ केस सं॰ 1752 वर्ष 2009 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है।

3. याचीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं चूँकि पक्षों ने अपना विवाद सुलझा लिया है और सुलह कर लिया है, दिनांक 6.8.2010 के आदेश सहित परिवाद मामला की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही को **बी॰ एस॰ जोशी एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं एक अन्य, (2003)4 SCC 675** के मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में अभिखंडित करने की आवश्यकता है।

4. विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करता हैं कि पक्षों ने मित्रतापूर्वक अपना विवाद सुलझा लिया है।

5. कथन किया जाए कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन अपराध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार गैर-शमनीय है किंतु न्याय के उद्देश्य के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने की अपनी अंतर्निहित अधिकारिता के प्रयोग में न्यायालय के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 की वर्जना नहीं होगी विशेषत: जब वैवाहिक विवाद सुलझा लिया गया है।

6. इस संबंध में, **बी॰ एस॰ जोशी एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं एक अन्य (उपर)** निर्दिष्ट किया जाए जिसमें निम्नलिखित संप्रेक्षित किया गया है:–

> *^^fu%lng] Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 498A vrfo"V dju okys vè;k; XX-A dk iu%LFkkfir dju dk mí'; mld ifr vFkok mld ifr d lcfèk;k }kjk L=h dh ;kruk dk jkduk gA èkkjk 498A ngt dh voèk ekx dk ijk dju d fy, iRuh vFkok mld lcfèk;k dk çihfMr dju d fy, mldk ij'kku dju vFkok ;kruk nu oky ifr vkj mld lcfèk;k dk nM nu dh nf"V l tkMh x;h FkhA gkbijVduhdy nf"Vdk.k vuRiknd gkxk vkj efgykvk d fgrk d fo:) vkj mí'; ftld fy, çkoèkku tkMk x;k Fkk d fo:) dk; djxkA bldh ijh lHkkouk g fd U;k; d mí'; dk ijk dju d fy, dk;okgh dk vfHk[kfMr dju dk vç;kx efgykvk dk igy gh ekeyk ly>ku l jkdxkA ;g Hkkjrh; nM lfgrk d vè;k; XX-A dk mí'; ugh gA***

7. हाल में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **शिजी उर्फ पप्पू एवं अन्य बनाम राधिका एवं एक अन्य,** 2011(4)JLJR 421 (SC): **2012(1) BLJ & JLJ 33 (SC)** मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *^^oreku ekey ij vkr g, gekjk nf"Vdk.k g fd ç'uxr ?kVuk dh mRifÙk nk Hk[kMk] tk ,d&nlj d ik'o e g(rd igp l lcfèkr fookn e gA ;g ykHk d fy, fnu&ngkM Mdrh dk ekeyk ugh gA ;g olk ekeyk Fkk ftldh mRifÙk i{kk*

d chp g, flfoy fookn e Fkh] ftl fookn dk] çrhr gkrk g] mud }kjk ly>k fy;k x;k gA ,lk gku d pyr] vfHk;ktu tkjh j[kuk tgk ifjoknh vfHkdFkuk dk leFku dju d fy, r;kj ugh g ftUg vc mld }kjk dN ^^xyrQgeh ,o Hke** l mnHkr d rkj ij of.kr fd;k x;k g] fujFkd dk; gkxk] ftll dkb i;ktu ijk ugh gkxkA ;g xkj dju ;kX; g fd nk vfHkdfFkr p'enhn xokg] tk ifjoknh d fudV lcèkh g] Hkh vc vfHk;ktu ekey d leFkd ugh gA vr% dk;okgh tkjh j[kuk vkj dN ugh cfYd vkipkfjdrk ek= gA ,lh ifjfLFkfr;k e] fofèk dh çfØ;k dk n#i;kx jkdu d fy, vkj rn}kjk voj U;k;ky;k }kjk fujFkd dk; fd, tku dk jkdu d fy, mPp U;k;ky; }kjk nO çO lO dh èkkjk 482 dk U;k;kfpr :i l voyc fy;k tk ldrk FkkA**

8. इस स्थिति के अधीन, जहाँ तक धारा 498A के अधीन अपराध का संबंध है, पूर्वोक्त निर्णयों को दृष्टि में रखते हुए पक्षों के बीच हुए सुलह को स्वीकार करने में मुश्किल नहीं होगी। इसी समय पर, जहाँ तक धारा 406 के अधीन अपराध का संबंध है, सुलह स्वीकार करने में मुश्किल नहीं है क्योंकि विवाद निजी प्रकृति का है और यह लोकनीति अंतर्ग्रस्त नहीं करता है।

9. तद्नुसार, संज्ञान लेने वाले दिनांक 6.8.2010 के आदेश सहित परिवाद केस सं॰ 1752 वर्ष 2009 में संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जाती है।

10. परिणामस्वरूप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

गुरू चरण सिंह एवं एक अन्य

cuke

झारखण्ड राज्य एवं एक अन्य

Criminal Revision No. 235 of 1999 (R). Decided on 18th June, 2012.

झरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 286 वर्ष 1996, जी॰ आर॰ सं॰ 3242 वर्ष 1996 के तत्सम, न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 12.8.1999 के आदेश के विरूद्ध।

बिहार उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1915—धाराएँ 47, 57 एवं 87—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 239—निषेध आज्ञा का अभिकथित उल्लंघन—धारा 87 दंडाधिकारी की जानकारी अथवा संदेह, अथवा उत्पाद शुल्क अधिकारी अथवा राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त सशक्त बनाए गए अधिकारी के परिवाद के सिवाए धारा 47 के अधीन अपराध का संज्ञान स्पष्टतः प्रतिषिद्ध करती है—धारा 57 के अधीन संज्ञान लिया जाना भी कलक्टर के अथवा इस निमित्त कलक्टर द्वारा प्राधिकृत उत्पाद शुल्क अधिकारी के परिवाद के सिवाए प्रतिषिद्ध है—धारा 87 के अधीन स्पष्ट प्रतिषेध की दृष्टि में उन्मोचन के लिए आवेदन अस्वीकार करने वाले आदेश अवैध है—आक्षेपित आदेश अपास्त—याचीगण उन्मोचित। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–M/s Rajesh Kumar, Amit Kumar Sinha, M.K. Sinha, For the Petitioners; Mr. Shashank Shekhar Prasad, For the State.

न्यायालय द्वारा.—याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ सुने गए।

2. याचीगण के झरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 286 वर्ष 1996, जी॰ आर॰ सं॰ 3242 वर्ष 1996 के तत्सम, में श्री एस॰ एन॰ सिंह, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 12.8.1999 के आदेश, जिसके द्वारा उन्मोचन के लिए याचीगण द्वारा दाखिल पुनरीक्षण याचिका विद्वान अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है, को चुनौती देते हुए इस पुनरीक्षण याचिका को दाखिल किया है।

3. यह प्रतीत होता है कि उक्त झरिया पी॰ एस॰ केस॰ सं॰ 286 वर्ष 1996 याचीगण के विरूद्ध संस्थापित किया गया था क्योंकि याचीगण को अनुज्ञप्तिधारक होने के नाते उपायुक्त, धनबाद द्वारा पारित प्रतिषेध आदेश के उल्लंघन में दुर्गा पूजा के अवसर पर शराब बेचते पाया गया था। तद्नुसार, मामला संस्थापित किया गया था और प्रतीत होता है कि अन्वेषण के बाद याचीगण के विरूद्ध आरोप-पत्र भी दाखिल किया गया था। यह भी प्रतीत होता है कि याचीगण के विरूद्ध संज्ञान लिया गया था और बाद में याचीगण ने उन्मोचन के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 239 के अधीन आवेदन दाखिल किया था, जिसे अवर न्यायालय द्वारा यह पाने पर कि उनके विरूद्ध उत्पाद शुल्क अधिनियम की धाराओं 47 और 57 के अधीन आरोप विरचित करने के लिए प्रथम दृष्टया मामला था, अस्वीकार कर दिया गया था।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश पूर्णत: अवैध है क्योंकि यह बिहार उत्पाद शुल्क अधिनियम की धारा 87 के प्रतिकूल है जो दंडाधिकारी की जानकारी अथवा संदेह, अथवा उत्पाद शुल्क अधिकारी अथवा राज्य सरकार द्वारा इस निमित्त सशक्त बनाए गए अधिकारी के परिवाद अथवा रिपोर्ट के सिवाए उत्पाद शुल्क अधिनियम की धारा 47 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया जाना स्पष्टत: प्रतिषिद्ध करती है। इसी प्रकार से, कलक्टर अथवा इस निमित्त कलक्टर द्वारा प्राधिकृत उत्पाद शुल्क अधिकारी के परिवाद अथवा रिपोर्ट के सिवाए अधिनियम की धारा 57 के अधीन संज्ञान लिया जाना भी स्पष्टत: प्रतिषिद्ध है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि बिहार उत्पाद शुल्क अधिनियम की धारा 87 की दृष्टि में उन्मोचन के लिए याचीगण द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश पूर्णत: अवैध है और इसे विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

5. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने यद्यपि याची की प्रार्थना का विरोध किया है, किंतु वह यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी लाने में विफल रहे हैं कि पुलिस सब-इंस्पेक्टर जिसके लिखित आवेदन पर प्राथमिकी संस्थापित की गयी थी अथवा जिसने याचीगण के विरूद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया है, को ऐसा रिपोर्ट दाखिल करने के लिए राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत किया गया था।

6. पूर्वोल्लिखित चर्चा की दृष्टि में और बिहार उत्पाद शुल्क अधिनियम की धारा 87 के अधीन स्पष्ट प्रतिषेध की दृष्टि में, मेरा सुविचारित मत है कि उत्पाद शुल्क अधिनियम की धाराओं 47 और 57 के अधीन अपराधों के लिए याचीगण के विरूद्ध प्रथम दृष्टया सामग्री पाते हुए, उन्मोचन के लिए आवेदन अस्वीकार करने वाला आदेश बिलकुल अवैध है और इसे विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

7. तद्नुसार, झरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 286 वर्ष 1996, जी॰ आर॰ सं॰ 3242 वर्ष 1996 के तत्सम ने, श्री एस॰ एन॰ सिंह, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 12.8.1990 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और परिणामस्वरूप याचीगण को उन्मोचित किया जाता है। तद्नुसार, इस पुनरीक्षण आवेदन को अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

कनाई मुंडा एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 843 of 2003. Decided on 26th June, 2012.

सत्र विचारण सं॰ 30 वर्ष 2002 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, सरायकेला-खरसाँवा, सरायकेला द्वारा क्रमश: दिनांक 21.5.2003 और दिनांक 22.5.2003 को पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—हत्या—आजीवन कारावास—घटना का कोई चश्मदीद गवाह नहीं है—सूचक का साक्ष्य विरोधाभासों से पीड़ित है—अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लाए गए ऐसे साक्ष्यों के आधार पर दोषसिद्धि मान्य ठहराना सुरक्षित नहीं होगा—अपीलार्थीगण संदेह के लाभ के योग्य हैं—दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त—अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. M. Ahmad, For the Appellant; Mr. Amaresh Kumar, For the State.

न्यायालय द्वारा.—यह अपील सत्र विचारण सं॰ 30 वर्ष 2002 में अपीलार्थीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्ध करते और उनको आजीवन कठोर कारावास का दंडादेश देते हुए विद्वान सत्र न्यायाधीश, सरायकेला-खरसावाँ, सरायकेला द्वारा पारित क्रमश: दिनांक 21.5.2003 और दिनांक 22.5.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरूद्ध दाखिल की गयी है।

2. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि सूचक सोयना मुंडा (अ॰सा॰ 1) ने अ॰ सा॰ 4 और 5 की उपस्थिति में दिनांक 5.8.2001 को दोपहर लगभग 12.30 बजे फर्दबयान यह कथन करते हुए दर्ज किया कि पिछली रात लगभग 8 बजे उसका पड़ोसी (अपीलार्थी) उसके घर आया और उसके पुत्र कोले मुंडा (मृतक) के बारे में पूछा। तत्पश्चात, कोले मुंडा अपीलार्थीगण के घर गया जिसपर अपीलार्थी ने उस पर टांगी से वार किया, जिस कारण वह गिर गया और घटनास्थल पर उसकी मृत्यु हो गयी। अपीलार्थीगण भाग गए। अभिकथित किया गया था कि सह-अंशधारियों के बीच भूमि विवाद के कारण अपीलार्थीगण ने उक्त अपराध किया था।

3. यद्यपि अ॰ सा॰ 1 ने अपने मुख्य परीक्षण में उक्त विवरण का समर्थन किया, किंतु उसने यह भी कहा कि अपीलार्थीगण के साथ विवाद नहीं था। प्रतिपरीक्षण में उसने कहा कि अंधेरी रात थी और उसके परिवार के सदस्य सोए हुए थे और जब वह सवेरे उठा तो उसने आंगन में अपने पुत्र का मृत शरीर पाया। उसी प्रकार, मृतक की पत्नी अ॰ सा॰ 2 ने अपने मुख्य परीक्षण में कहा कि अपीलार्थीगण नशे में उसके घर आए थे और उसके पति की हत्या की थी, किंतु प्रतिपरीक्षण में उसने कहा कि वह अपने घर में सो रही थी और सुबह में उसने आंगन में अपने पति का मृत शरीर पाया था। तब उसने गाँववालों को सूचित किया। यद्यपि अ॰ सा॰ 3 और 4 ने अपने मुख्य परीक्षण में कहा कि उन्होंने अपीलार्थीगण को घटनास्थल से भागते देखा किंतु अपने प्रति परीक्षण में उन्होंने कहा कि जब वे घटना स्थल पर गए, गाँव वाले पहले से ही जमा थे। इस प्रकार, इस मामले का चश्मदीद गवाह प्रतीत नहीं होता है।

4. अभिलेखों का सावधानीपूर्वक परीक्षण करने पर हम संतुष्ट हैं कि अपीलार्थीगण संदेह के लाभ के योग्य हैं क्योंकि अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लाए गए ऐसे साक्ष्यों के आधार पर दोषसिद्धि मान्य ठहराना सुरक्षित नहीं होगा।

5. परिणामस्वरूप, यह अपील अनुज्ञात की जाती है। अपीलार्थीगण के विरूद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश अपास्त किया जाता है। अपीलार्थीगण को आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है। अपीलार्थीगण कनाई मुंडा और बाडू मुंडा कारा में है। उन्हें तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उनकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

दिनेश महतो

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Rev. No. 1025 of 2007 with I.A. No. 798 of 2012. Decided on 18th June, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 320 एवं 482—क्रूरता—पक्षों के बीच मामले में सुलह—जहाँ पक्षों के बीच मामला में सुलह हो गया है, उच्च न्यायालय अपनी अंतर्निहित शक्ति के प्रयोग में दांडिक कार्यवाही अभिखंडित कर सकता है—दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 320 दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन शक्ति को सीमित अथवा प्रभावित नहीं करेगी—दोषसिद्धि और दंडादेश अपास्त—आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 6 एवं 7)

निर्णयज विधि.—(2003) 4 SCC 675—Relied.

अधिवक्तागण.—M/s. Rajesh Kumar Mahtha, For the Petitioner; Mr. T.N. Verma, For the Respondent.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और सूचक परिवादी, जो वकालतनामा के माध्यम से उपस्थित हुआ, के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. यह याचिका दांडिक अपील सं॰ 40 वर्ष 2007 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त, फास्ट ट्रैक कोर्ट, खूँटी द्वारा पारित दिनांक 11.9.2007 के निर्णय के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा जी॰ आर॰ केस सं॰ 358 वर्ष 2004 (टी॰ आर॰ सं॰ 26/07) में याची को भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 4 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि करते और दंडादेश देते हुए श्री सत्य प्रकाश, विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, खूँटी द्वारा याची के विरूद्ध पारित दिनांक 7.2.2007 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के आदेश को विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट किया गया था और याची द्वारा दाखिल अपील खारिज कर दी गयी थी।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है चूँकि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में पक्षों के बीच मामले में सुलह कर लिया गया है जिसमें यह भी कथन किया गया है कि इसके पुनरीक्षण से संबंधित पक्षों के बीच दांडिक मामले में भी पक्षों के बीच सुलह कर लिया गया था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पक्षों के बीच सुलह की दृष्टि में याची को उन्मोचित किया जाए। याची के विद्वान अधिवक्ता ने **बी॰ एस॰ जोशी एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं एक अन्य, (2003) 4 SCC 675,** में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें अभिनिर्धारित किया गया है कि वर्तमान मामले की तरह के मामले में, जहाँ पक्षों के बीच

सुलह कर लिया गया है, उच्च न्यायालय अपनी अंतर्निहित शक्तियों के प्रयोग में दांडिक कार्यवाही अथवा प्राथमिकी अथवा परिवाद अभिखंडित कर सकता है और संहिता की धारा 320 संहिता की धारा 482 के अधीन शक्तियों को सीमित या प्रभावित नहीं करेगी।

5. सूचक के विद्वान अधिवक्ता उपस्थित हुए हैं और पक्षों के बीच सुलह को स्वीकार किया है।

6. बी॰ एस॰ जोशी के मामले (उपर) में सर्वोच्च न्यायालय ने विधि को निम्नलिखित रूप में अधिकथित किया है:

"12. , l ookfgd ekey d fo'k"k y{k.k Li"V gA ookfgd fooknk d okLrfod lekèkku dk çkIkfgr djuk U;k;ky; dk dr0; gA

*** ** ** ***

14. fu%lng] Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 498A vrfo"V dju oky vè;k; XXA dk iu%LFkkfir dju dk mí'; mld ifr vFkok mld ifr d lcfèk;k }kjk L=h dh ;kruk dk jkduk gA èkkjk 498A ifr vkj mld lcfèk;k] tk ngt dh voèk ekx ijk dju d fy, iRuh vFkok mld lcfèk;k dk çihfMr dju d fy, mldk ij'kku djr vFkok ;kruk nr g] dk nM nu dh nf"V l tkMh x;h FkhA gkbijVDuhdy nf"Vdk.k vui;kxh gkxk vkj fL=;k d fgrk d fo:) vkj ml mí'; ftld fy, ;g çkoèkku tkMk x;k Fkk d fo:) dk; djxkA bldh i.k lHkkouk g fd U;k; dk mí'; ijk dju d fy, dk;okgh dk vfHk[kfMr dju dh vrfufgr 'kfDr dk vç;kx fL=;k dk igy gh ekeyk ly>ku l jkdxkA Hkkjrh; nM lfgrk d vè;k; XXA dk mí'; ;g ugh gA

*15. mDr ppk dh nf"V e] ge vfHkfuèkkfjr djr g fd mPp U;k;ky; viuh vrfufgr 'kfDr d ç;kx e nkfMd dk;okgh vFkok çkFkfedh vFkok ifjokn vfHk[kfMr dj ldrk g vkj lfgrk dh èkkjk 320 lfgrk dh èkkjk 482 d vèkhu 'kfDr;k dk lhfer vFkok çHkkfor ugh djxhA***

7. पक्षों के बीच सुलह की दृष्टि में और **बी॰ एस॰ जोशी के मामले (ऊपर)** में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करते हुए जी॰ आर॰ केस सं॰ 358 वर्ष 2004 (टी॰ आर॰ सं॰ 26/07) में याची को भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 4 के अधीन दोषसिद्ध करते और दंडादेश देते हुए श्री सत्य प्रकाश, विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, खूँटी द्वारा याची के विरूद्ध पारित दिनांक 7.2.2007 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश और दांडिक अपील सं॰ 40 वर्ष 2007 में विद्वान अपर न्यायिक कमिश्नर, फास्ट ट्रैक कोर्ट, खूँटी द्वारा पारित दिनांक 11.9.2007 के निर्णय को भी एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और याची को आरोप से दोषमुक्त किया जाता है। याची को उसके जमानत बंधपत्र के दायित्व से भी उन्मोचित किया जाता है। तद्नुसार, अंतर्वर्ती आवेदन के साथ यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj] U;k;efr

राम निवास प्रसाद सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2256 of 2008. Decided on 16th May, 2012.

सेवा विधि—निलंबन—आंगनबाड़ी सेविका और सहायिका की नियुक्ति में अभिकथित अनियमितताएँ—याची को विभागीय कार्यवाही के अनुध्यान में निलंबित किया गया था—याची ने आंगनबाड़ी सेविका और सहायिका की नियुक्ति में अनेक अनियमितताएँ अभिकथित रूप से किया था—रिट आवेदन खारिज। (पैराएँ 2, 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.—Mr. Sameer Saurabh, For the Petitioner; J.C. to G.P.-III, For the Respondents.

आदेश

यह रिट आवेदन दिनांक 9.4.2008 की अधिसूचना सं॰ 2806 (परिशिष्ट-8) अभिखंडित करने के लिए दाखिल किया गया है, जिसके द्वारा याची को इस अभिकथन कि उसने आंगनबाड़ी सेविका और सहायिका की नियुक्ति में अनेक अनियमिताएँ किया था, पर निलंबित किया गया था।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री समीर सौरभ निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश में यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं है कि याची को विभागीय कार्यवाही के अनुध्यान में अथवा विभागीय कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान निलंबित किया गया था और न ही यह दर्शाने के लिए कुछ है कि याची के विरूद्ध कोई दांडिक मामला लंबित है। अत:, प्रतीत होता है कि याची को दंड के रूप में निलंबित किया गया है। तद्नुसार, निवेदन किया गया है कि आक्षेपित आदेश संपोषित नहीं किया जा सकता है क्योंकि याची को सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया है।

3. दूसरी ओर, जी॰ पी॰ III के विद्वान जे॰ सी॰ निवेदन करते हैं कि परिशिष्ट A/3 के परिशीलन से स्पष्ट है कि याची को विभागीय कार्यवाही के अनुध्यान में लंबित किया गया था।

4. निवेदन को सुनने पर, मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है। परिशिष्ट A/3 के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि राज्य सरकार ने इस अभिकथन कि याची ने आंगनबाड़ी सेविका और सहायिका की नियुक्ति में अनेक अनियमिततायें की है, पर विभागीय कार्यवाही के अनुध्यान में याची को निलंबित करने का निर्णय लिया है।

5. उक्त परिस्थितियों में, मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के पूर्वोक्त निवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार इस रिट आवेदन को गुणागुणरहित होने के कारण खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

मो॰ वाजिद अली उर्फ वाजिद अली एवं अन्य (365 में)

मोहम्मद मसीर आलम उर्फ मो॰ मसीर आलम एवं एक अन्य (723 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य (दोनों में)

W.P. (Cr.) No. 365 with 723 of 2004. Decided on 20th June, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A—भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—दहेज के लिए क्रूरता एवं यातना—दहेज की मांग के लिए परिवादी को क्रूरता और यातना के अध्यधीन करने का याचीगण के विरूद्ध प्रत्यक्ष अभिकथन है—भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन

अपराध जारी रहने वाला अपराध है—अवर न्यायालय द्वारा लिया गया संज्ञान परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं है—अभिखंडन आवेदन खारिज। (पैराएँ 4, 5 एवं 7)

अधिवक्तागण.—Mr. Purendu Sharan, For the Petitioners; J.C. to G.P. II, For the State; Mr. S.N. Rajgarh, For the Respondent No. 2.

आदेश

ये दोनों आवेदन एक ही परिवाद मामले से उद्भूत होते हैं और दोनों को एक ही आक्षेपित आदेश के विरूद्ध दाखिल किया गया है और इसलिए, उन्हें एक ही आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थी सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

3. याचीगण ने परिवाद केस सं॰ 330 वर्ष 2003/टी॰ आर॰ सं॰ 974 वर्ष 2004 में विद्वान सबडिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, चतरा द्वारा पारित दिनांक 29.6.2004 के आदेश को चुनौती देते हुए दाखिल किया गया है, जिसके द्वारा परिवाद याचिका में किए गए अभिकथन के आधार पर और सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान पर दर्ज परिवादी के बयान के आधार पर भी और जाँच के चरण में परिवादी द्वारा परिक्षित दो गवाहों के बयान के आधार पर अवर न्यायालय ने भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन अपराध के लिए याचीगण के विरूद्ध प्रथम दृष्टया मामला पाया है और याचीगण के विरूद्ध आदेशिका जारी करने का आदेश दिया है।

4. यह प्रतीत होता है कि परिवादी असमा खातून ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, चतरा के न्यायालय में परिवाद याचिका दाखिल किया था जिसे परिवाद केस सं॰ 330 वर्ष 2003 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त परिवाद मामले में, परिवादी ने कथन किया है कि उसके पहले पति की मृत्यु के वाद उसने याची मो॰ वाजिद अली के साथ विवाह किया था और विवाहोपरांत उसे उसके पति और ससुरालवालों द्वारा दहेज की मांग के लिए क्रूरता और यातना के अध्यधीन किया गया था और उनसबों को इस मामले में अभियुक्त बनाया गया है। प्रतीत होता है कि परिवादी का बयान सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान पर दर्ज किया गया था और परिवादी ने जाँच के चरण पर अवर न्यायालय में दो गवाहों का परीक्षण भी किया था जिसके आधार पर विद्वान सबडिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, चतरा के दिनांक 29.6.2004 के आक्षेपित आदेश द्वारा पति सहित याचीगण के विरूद्ध प्रथम दृष्टया मामला पाया गया है जिसे इन दोनों आवेदनों में चुनौती दिया गया है।

5. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश पूर्णत: अवैध है, क्योंकि घटना, यदि हुई थी, वर्ष 1991 से 1994 अथवा 1995 के बीच हुई थी जबकि याचीगण के विरूद्ध परिवाद मामला दिनांक 10.12.2003 को दाखिल किया गया था और तद्नुसार, यह परिसीमा द्वारा वर्जित है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थी सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है।

7. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि याचीगण के विरूद्ध परिवादी प्रत्यथी सं॰ 2 को दहेज की मांग के लिए क्रूरता एवं यातना के अध्यधीन करने का प्रत्यक्ष अभिकथन है। यह विधि का सुनिश्चित सिद्धांत है कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के

अधीन अपराध जारी रहने वाला अपराध है और, इसलिए, मैं याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में बल नही पाता हूँ एवं अवर न्यायालय द्वारा लिया गया संज्ञान परिसीमा द्वारा वर्जित था। तद्नुसार, इन दोनों आवेदनों में गुणागुण नहीं है और तद्नुसार, इन्हें खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

अशोक कुमार सिंह

cuke

केंद्रीय कोलफील्ड्स लि॰ एवं अन्य

L.P.A. No. 265 of 2011. Decided on 2nd May, 2012.

श्रम एवं औद्योगिक विधि—सेवानिवृत्ति—जन्म तिथि—15 वर्ष की आयु का बड़ा अंतर जैसा याची ने दावा किया है—मेडिकल बोर्ड के दो रिपोर्टों की दृष्टि में याची का जन्म वर्ष उस वर्ष के अधिक निकट आता है, जैसा याची द्वारा दावा किया गया है, जिसे याची के मैट्रिकुलेशन प्रमाण-पत्र में दर्ज किया गया है—समस्त पारिणामिक लाभों के साथ सेवानिवृत्ति आदेश अभिखंडित किया गया। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.—M/s S. Dalabehera, For the Appellant; Mr. Ananda Sen, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. अपीलार्थी-याची ने अपने सही जन्म तिथि के बारे में विवाद किया था और याची की रिट याचिका दिनांक 30.6.2011 के विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश के तहत खारिज कर दी गयी थी। किंतु चूँकि 15 वर्षों की आयु का बड़ा अंतर है, जैसा याची द्वारा दावा किया गया है अत: इस न्यायालय ने याची-अपीलार्थी की आयु के संबंध में प्रत्यर्थी कंपनी और अपीलार्थी को मेडिकल मत प्राप्त करने का निर्देश दिया गया था।

3. याची-अपीलार्थी ने मेडिकल बोर्ड की राय प्राप्त किया जबकि प्रत्यर्थी-कंपनी ने भी याची-अपीलार्थी की आयु के संबंध में मेडिकल बोर्ड की राय प्राप्त किया। मेडिकल बोर्ड ने मत दिया कि वर्ष 2012 में याची की आयु 52 से 55 वर्ष के बीच की हो सकती है और प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा प्राप्त रिपोर्ट में भी यही अवस्था है।

4. मेडिकल बोर्ड के दो रिपोर्टों की दृष्टि में याची का जन्म वर्ष उस वर्ष के अधिक निकट आता है जैसा दावा याची अपीलार्थी द्वारा किया गया है और जिसे याची के मैट्रिकुलेशन प्रमाण-पत्र में दिनांक 12.12.1960 के रूप में दर्ज किया गया है।

5. इस तथ्य और विचित्र तथ्य की दृष्टि में कि प्रत्यर्थी-कंपनी के अभिलेख में और अपीलार्थी-याची के मैट्रिकुलेशन प्रमाण-पत्र में और मेडिकल रिपोर्टों में 15 वर्ष का अंतर है, अत: अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची की जन्म तिथि दिनांक 12.12.1960 मानी जाएगी। दिनांक 12.12.1960 के रूप में उसकी जन्म तिथि को विचार में लेने के वाद याची को सेवा से सेवानिवृत्त किया जा सकता है। याची की अधिवर्षिता आदेश अर्थात, परिशिष्ट-1 को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है और याची समस्त पारिणामिक लाभों का हकदार होगा।

6. उक्त संप्रेक्षणों के साथ इस एल॰ पी॰ ए॰ को अनुज्ञात किया जाता है और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 30.6.2011 के आक्षेपित आदेश को अपास्त किया जाता है।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

धानो देवी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 5519 of 2004. Decided on 2nd July, 2012.

सेवा विधि—कुटुंब पेंशन—याची अपने स्वर्गीय पति की अंतिम तनख्वाह के आधार पर फैमिली पेंशन नियत करने के लिए और याची के पक्ष में इसे निर्मुक्त करने का प्रत्यर्थीगण को निर्देश इप्सित कर रही है—वेतन के गलत नियतिकरण के कारण याची के स्वर्गीय पति को किए गए अधिक भुगतान की वसूली के लिए आदेश पारित किया गया था—लेखा परीक्षा आपत्ति के कारण पेंशन निर्मुक्त अथवा नियत नहीं किया जा सका था—कोई अभिकथन नहीं है कि उसके द्वारा किए गए कपट अथवा दुर्विनियोग के कारण याची के स्वर्गीय पति को अधिक राशि का भुगतान किया गया था—उसके स्वर्गीय पति के अंतिम तनख्वाह के आधार पर याची का फैमिली पेंशन नियत किया जाना चाहिए और याची के पारिवारिक पेंशन से कोई वसूली नहीं की जाएगी—याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 15 से 21)

निर्णयज विधि.—2007 (4) JCR (Jhr) (FB); (2007) 4 SCC 502—Relied on.

अधिवक्तागण.—M/s Manoj Tandon, Navin Kumar Singh, For the Petitioner; Ms. Sunita Kumari, For the Respondents.

आदेश

प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है।

2. याची का पति सहायक शिक्षक के रूप में कार्यरत था। उसके स्वर्गीय पति के अंतिम तनख्वाह के आधार पर याची का पारिवारिक पेंशन नियत करने के लिए और याची के पक्ष में इसे निर्मुक्त करने के लिए याचीगण को निर्देश इप्सित करते हुए वर्ष 2004 में वर्तमान याचिका दाखिल की गयी थी।

3. आज दाखिल प्रति शपथ पत्र में प्रत्यर्थीगण द्वारा किया गया एकमात्र बचाव यह है कि पेंशन पहले ही नियत किया जा चुका है और समस्त कागजातों को पहले ही पेंशन की निर्मुक्ति के लिए महालेखाकार, झारखंड राज्य को अग्रसारित किया जा चुका है। किंतु, वेतन के गलत नियतिकरण के कारण याची के स्वर्गीय पति को किए गए भुगतान आधिक्य की वसूली का आदेश पारित किया गया था। तर्क किया गया है कि लेखा परीक्षा आपत्ति के कारण पेंशन निर्मुक्त अथवा नियत नहीं किया जा सका था। उन्होंने आगे तर्क किया कि याची वेतन के गलत नियतिकरण के कारण उसको भुगतान किए गए अधिक राशि का भुगतान करने पर सहमत थी और इसलिए कटौती वैध है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने **मुरारी देवी बनाम बिहार राज्य विद्युत बोर्ड, पटना एवं अन्य, 2007 (4) JCR 471 (Jhr) (FB),** मामले में इस न्यायालय के पूर्ण पीठ के निर्णय पर विश्वास करते हुए जोरदार तर्क किया कि पारिवारिक पेंशन उसके पति के अंतिम तनख्वाह के आधार पर नियत किया जाना चाहिए और उसके वेतन के गलत नियतिकरण की दृष्टि में उसके स्वर्गीय पति को किए गए अधिक भुगतान के लिए पारिवारिक पेंशन से वसूली निर्देशित नहीं की जा सकती है। कोई अभिकथन नहीं है कि उसके द्वारा कपट और दुर्विनियोग के कारण याची के स्वर्गीय पति को अधिक राशि का भुगतान किया गया था। अत: **एन॰ डी॰ पी॰ नंबूदरीपाद बनाम भारत संघ, (2007)4 SCC 502,** मामले में सर्वोच्च

न्यायालय की उक्ति की दृष्टि में मृत कर्मचारी के सेवानिवृत्ति पश्चात लाल से वसूली का आदेश नहीं दिया जा सकता है।

5. याचिका अनुज्ञात की जाती है। याची का पारिवारिक पेंशन उसके पति के अंतिम तनख्वाह के आधार पर नियत किया जाना चाहिए, याची के पारिवारिक पेंशन से वसूली नहीं की जाएगी और आज के दिन से 90 दिनों के भीतर याची के पक्ष में संपूर्ण राशि निर्मुक्त की जाएगी।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

माधब कुमार एवं अन्य

cuke

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (S) No. 2900 of 2011. Decided on 2nd May, 2012.

सेवा विधि—स्थानांतरण—भेदभाव—विशेष पद के लिए चयन के कारण मात्र से कोई व्यक्ति अधिकार नहीं पा सकता है—याचीगण पहले से ही सेवा में हैं—उनको स्थानांतरित कर दिया गया है और नौ में से दो को भारोन्मुक्त कर दिया गया था और उन्होंने उस विभाग में पदग्रहण किया था—इसका अर्थ यह नहीं है कि यह भेदभाव का मामला था—याचिका खारिज। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.—M/s. S.D. Singh, For the Petitioner; M/s Ram Nivas Roy, For the Respondent.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याचीगण का प्रतिवाद है कि स्वयं प्रत्यर्थी रेलवे ने रेलवे के तकनीकी विभाग में ग्रुप डी॰ पद भरने का निर्णय किया था और मेडिकल विभाग से तकनीकी विभाग में स्थानांतरण की प्रक्रिया में याचीगण को सम्यक रूप से चयनित किया गया था। स्थानांतरित स्थानों पर पद ग्रहण करने के लिए याचीगण का भारोन्मुक्त नहीं किया गया था। और कुल नौ व्यक्तियों में से दो को भारोन्मुक्त किया गया था और उन्होंने तकनीकी विभाग में पदग्रहण किया। तत्पश्चात, दिनांक 29 जुलाई, 2009 के आदेश द्वारा स्थानांतरण पदस्थापन आदेश रद्द किया गया था। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार इस प्रकार भेदभाव करके दो व्यक्तियों को स्थानांतरण पर पदग्रहण करने की अनुमति दी गयी थी जबकि रिट याचीगण को पदग्रहण करने की अनुमति नहीं दी गयी थी और उनका स्थानांतरण-पदस्थापन आदेश रद्द कर दिया गया था।

3. याचीगण ने केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण, पटना पीठ राँची सर्किट पीठ के समक्ष ओ॰ ए॰ सं॰ 62 वर्ष 2010 (R) दाखिल किया जिसे दिनांक 8 फरवरी, 2011 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया था। अत: यह रिट याचिका दाखिल की गयी है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह भेदभाव का स्पष्ट मामला है और याचीगण को स्थानांतरित स्थान पर प्रोन्नति का अधिक अवसर पाने के लाभ से गलत रूप से इनकार किया गया था।

5. हमारा सुविचारित मत है कि विशेष पद के लिए चयन मात्र से कोई व्यक्ति अधिकार नहीं पा सकता है और वर्तमान मामले में याचीगण पहले से ही सेवा में हैं और उनका स्थानांतरण किया गया है और नौ में से दो को भारोन्मुक्त किया गया था और उन्होंने उस विभाग में पदग्रहण किया था, अत: इसका अर्थ यह नहीं है कि यह भेदभाव का मामला था और यह निवेदन करके कि मेडिकल विभाग में व्यक्तियों

की भारी कमी है, स्थिति को स्पष्ट किया गया है। भले ही इस कारण को आदेश में दर्ज नहीं किया गया है, हम नहीं पाते हैं कि कोई कारण अस्पष्टीकृत कारण था।

6. अत:, हम इस रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाते हैं।

7. अत:, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

सरयू बुइया

cuke

झारखंड राज्य

Cr. (Jail) Appl. (DB) No. 991 of 2007. Decided on 2nd July, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या—आजीवन कारावास और 1000/- रुपयों का जुर्माना अधिनिर्णीत—अपीलार्थी ने पत्नी के पेट पर रॉड से प्रहार करके अपनी पत्नी की हत्या कर दी—डॉक्टर जिन्होंने मृतका का परीक्षण किया, पेट पर सूजन के सिवाए किसी बाह्य उपहति नहीं पायी—कोई चश्मदीद गवाह नहीं है—अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लायी गयी सामग्रियों के आधार पर दोषसिद्धि मान्य ठहराना सुरक्षित नहीं होगा—अपीलार्थी लगभग साढ़े आठ वर्षों से कारा अभिरक्षा में है—दोषसिद्धि और दंडादेश अपास्त—अपील अनुज्ञात।

(पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.—None, For the Appellant; Mr. APP, For the State.

आदेश

अपीलार्थी के लिए कोई उपस्थित नहीं हुआ।

2. यह अपील सत्र विचारण सं॰ 303 वर्ष 2004 में अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए और उसको कठोर आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए अपर सत्र न्यायाधीश सं॰ 13, धनबाद द्वारा क्रमश: दिनांक 12 और 14 जून, 2007 को पारित दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंडादेश के विरूद्ध दाखिल की गयी है। उसे 1000/- रुपया जुर्माना का भुगतान करने के लिए भी दंडादेशित किया गया है जिसके व्यतिक्रम में दो माह का कारावास भुगतना था।

3. संक्षेप में, अभियोजन मामला यह है कि दिनांक 28.2.2004 को प्रात: लगभग 6.30 बजे सूचक राम प्रवेश दुसाध (चौकीदार) को पता चला कि अपीलार्थी ने पेट पर छड़ द्वारा प्रहार करके अपनी पत्नी की हत्या कर दी है। वह घटना स्थल पर गया और पेट में दो उपहतियों के साथ मृत शरीर को पाया। उसे पता चला कि अपीलार्थी अपने घर में है। घटना का कारण यह है कि मृतका शराब पीती थी और अनुचित व्यवहार करती थी।

4. इस मामले में केवल तीन अभियोजन गवाहों का परीक्षण किया गया है। अ॰ सा॰ 1 डॉक्टर है जिन्होंने मृतका का परीक्षण किया था और पेट पर सूजन के सिवाय कोई बाह्य उपहति नहीं पाया था। डॉक्टर के मुताबिक मृत्यु कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा आई उपहतियों के कारण कारित हुई थी। अ॰ सा॰ 2 अन्वेषण अधिकारी है। उसने कहा कि अपीलार्थी ने अभिकथित घटना के बाद अपने को अपने घर में बंद कर लिया और जब उसे निकाला गया था, उसने कहा कि चूँकि मृतका उसकी बात नहीं मान रही थी, उसके पास उस पर प्रहार करने के सिवाए विकल्प नहीं था। अ॰ सा॰ 3 अपीलार्थी की पुत्री है। उसने

कहा कि वह रात में अपनी माता के साथ सो रही थी किंतु नहीं जानती है कि उसकी मृत्यु किस प्रकार हो गयी। उसने आगे कहा कि उसके माता-पिता झगड़ा करते थे। अ॰ सा॰ 4 सूचक है। वह अनुश्रुत गवाह है।

5. इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि इस मामले का कोई चश्मदीद गवाह नहीं है। अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लायी गयी सामग्रियों के आधार पर दोषसिद्धि मान्य ठहराना सुरक्षित नहीं होगा। यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी लगभग साढ़े आठ वर्षों से कारा अभिरक्षा में है।

6. परिणामस्वरूप, यह अपील अनुज्ञात की जाती है और अपीलार्थी के विरूद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी सरयू बुइया, जो कारा में है को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

मोदीहोली अलप्पा

cuke

भारत संघ एवं अन्य

L.P.A. No. 162 of 2010. Decided on 1st May, 2012.

केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल अधिनियम, 1949—धारा 12 (1)—सेवा से बर्खास्तगी—सैन्य बल के व्यक्ति द्वारा नशे की हालत में उच्चतर अधिकारी के साथ गाली-गलौज गंभीर मामला है—अपीलार्थी को पूरा अवसर दिया गया जिसमें उसने कोई बचाव नहीं किया था—याची को अधिनिर्णीत दंड अननुपातिक नहीं था—नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन नहीं किया गया था—अपील खारिज। (पैराएँ 8 एवं 9)

निर्णयज विधि.—(1983) 2 SCC 442; (2011) 10 SCC 344—Referred.

अधिवक्तागण.—Mr. Sunil Kumar, For the Appellant; Mr. Faizur Rahman, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अभिवक्ता को सुना गया।

2. अपीलार्थी डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 3747 वर्ष 2003 में पारित दिनांक 24.2.2010 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा अपीलार्थी की रिट याचिका, जिसमें उसने सी॰ आर॰ पी॰ एफ॰ अधिनियम, 1949 की धारा 12(1) के अधीन पारित अपनी बर्खास्तगी के आदेश को चुनौती दिया था, खारिज कर दी गयी है।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, याची/अपीलार्थी के विरूद्ध लगाए गए आरोप गंभीर प्रकृति के नहीं थे और वर्ष 1949 के अधिनियम की धारा 9 के अंतर्गत नहीं आते थे और, इसलिए, जघन्य अपराध नहीं थे। यह निवेदन किया गया है कि दंड आदेश धारा 12(1) के अधीन पारित किया गया है जिसे केवल किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी पर ही पारित किया जा सकता है। यह निवेदन भी किया गया है कि अपीलार्थी/याची को सुनवाई का पूरा अवसर नहीं दिया गया था और न ही उसे सेवा से बर्खास्तगी का दंड देने के पहले द्वितीय कारण बताओ नोटिस दिया गया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने **भगत राम बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य एवं अन्य, (1983)2 SCC 442,** मामले में दिए गए माननीय सर्वोच्च

न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया जिसमें अभिनिर्धारित किया गया है कि ऐसे मामले में जहाँ नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन किया जाता है, वह विभागीय कार्यवाही को दूषित करता है। उस मामले में यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि दंड अवचार की गंभीरता के अनुपात में होना चाहिए। विद्वान अधिवक्ता ने **आर॰ इंद्र सरतचंद्र बनाम तमिलनाडु राज्य एवं अन्य, (2011)10 SCC 344,** में दिए गए एक अन्य निर्णय पर भी विश्वास किया है। इस मामले में दिए गए निर्णय की मदद से अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वैसे मामले में भी रिट याचिका पोषणीय है जहाँ विभागीय अपील दाखिल नहीं की गयी है।

4. उक्त कारणों की दृष्टि में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी/याची की रिट याचिका खारिज करने में विधि की गलती की।

5. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि रिट याची को अपने वरीय अधिकारी को गाली देते पाया गया था और उसे चिकित्सीय जाँच के लिए अस्पताल ले जाया गया था जिस पर यह संपुष्ट किया गया था कि वह अत्यधिक नशे में था। विभागीय जाँच का आदेश दिया गया था और जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया था और विभागीय कार्यवाही में उपस्थित होने के लिए याची को पूरा अवसर दिया गया था और याची ने कोई बचाव नहीं किया था। साक्ष्य के अधिमूल्यन के बाद, जाँच अधिकारी ने आरोप सिद्ध पाया। तत्पश्चात, अनुशासनिक प्राधिकारी ने मामले पर विचार किया और आदेश पारित किया। इसलिए, यह पूरी तरह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का अनुपालन करते हुए रिट याची के अवचार का पूर्ण और समुचित विचारण का मामला था। यह निवेदन भी किया गया है कि सी॰ आर॰ पी॰ एफ॰ अधिनियम, 1949 की धारा 11(1) के मुताबिक लघु दंड के रूप में भी बर्खास्तगी का दंड पारित किया जा सकता था जिसे विधि के अनुरूप सैन्य बल में अनुशासन बनाए रखने, जिसके लिए जरूरत पड़ने पर कठोर कार्रवाई की आवश्यकता है, के विशेष कारण से 1949 के अधिनियम में प्रावधानित किया गया है।

6. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन पर विचार किया है और मामले के तथ्यों का परिशीलन किया है। याची के विरूद्ध नशे की हालत में उच्चतर अधिकारी को गाली देने का अभिकथन है। अब तथ्य के इस प्रश्न पर याची द्वारा इस तथ्य की दृष्टि में विवादित नहीं किया जा सकता है कि उसे पूरा अवसर दिया गया था और उसने विवाद नहीं किया था और याची को चिकित्सीय परीक्षण के अध्यधीन भी किया गया था। इसलिए अब प्रश्न नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन और विभागीय जाँच के पक्षपातपूर्ण होने और दंड की कठोरता और दंड की अननुपातिकता को लेकर है।

7. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने भगत राम मामले में दिए गए निर्णय की मदद से और मुख्यत: पैराग्राफ 15 पर विश्वास करते हुए निवेदन किया कि अधिरोपित दंड अवचार की गंभीरता के अनुरूप होना ही चाहिए और अवचार की गंभीरता के अननुपातिक दंड संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करेगा।

8. हमारा सुविचारित मत है कि उच्चतर अधिकारी को गाली देना, वह भी सैन्य बल के व्यक्ति द्वारा नशे की हालत में, गंभीर मामला है और इस मामले में चूँकि रिट याची को पूरा अवसर दिया गया था जिसमें उसने बचाव नहीं किया था और जब याची का चिकित्सीय परीक्षण किया गया था, उसे नशे की हालत में पाया गया था, अत: हमारा सुविचारित मत है कि याची को सही प्रकार से 1949 के अधिनियम की धारा 11(1) के अधीन शक्ति का प्रयोग करके सही प्रकार से दंडित किया गया है।

इस मोड़ पर, यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि 1949 के अधिनियम की धारा 10 कम जघन्य अपराधों का उदाहरण देता है और चेतावनी के बाद मात्र नशे की हालत में रहना कम जघन्य अपराध है किंतु याची का मामला मात्र नशे की हालत में रहना नहीं है बल्कि याची ने नशे की हालत में अपने उच्चतर अधिकारी को गाली दिया। इन तथ्यों तथा परिस्थितियों में, हम अभिनिर्धारित नहीं कर सकते हैं कि याची को अधिनिर्णीत दंड अननुपातिक था।

9. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद कि उसे द्वितीय कारण बताओ नोटिस नहीं दिया गया था जबकि वस्तुत: उसने स्वयं विभागीय कार्यवाही में भाग नहीं लिया था एक स्वीकृत तथ्य है और उसने एक आवेदन भी दिया था जिस तथ्य पर गौर किया गया है, अत:, ऐसी परिस्थितियों में यह नहीं कहा जा सकता है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन किया गया है।

गुणागुण रहित होने के कारण यह एल॰पी॰ए॰ खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

रमेश कुमार जायसवाल

cuke

कपूर चंद जैन एवं अन्य

WPC No. 3943 of 2011. Decided on 27th June, 2012.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 47—डिक्री के निष्पादन के प्रति आपत्ति—धारा 47 के अधीन दाखिल आवेदन अस्वीकार—अवर न्यायालय धारा 47 के विस्तार पर विचार करने में विफल रहा—महत्वपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों के आलोक में अवर न्यायालय को अपने समक्ष प्रस्तुत विवाद्यक पर विचार करने और इसे विनिश्चित करने की आवश्यकता है—आक्षेपित आदेश अभिखंडित—नए सिरे से विचार करने के लिए मामला अवर न्यायालय भेजा गया। (पैराएँ 7 एवं 8)

निर्णयज विधि.—AIR 1993 (3) SC 644—Relied on.

अधिवक्तागण.—M/s Amar Kumar Sinha, Kundan Kr. Anmbastha, Md. Abdul Wahab, For the Petitioners; Mr. A. N. Sinha, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता को सुना गया।

2. भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान रिट याचिका निष्पादन केस सं॰ 1/1968 में विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश-I, चतरा द्वारा पारित दिनांक 30.6.2011 के आदेश (परिशिष्ट-6)को अभिखंडित करने के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान अवर न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के अधीन दाखिल याची के आवेदन को अस्वीकार कर दिया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने अपने समक्ष किए गए निवेदनों पर और विशेषत: सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के विस्तार पर और **जगदीश दत्त एवं एक अन्य बनाम धरम पाल एवं अन्य, (1999) SCC 644,** मामले में दिए गए निर्णय पर समुचित रूप से विचार नहीं किया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि निर्णीत ऋणी की याचिका निष्पादन न्यायालय के समक्ष दाखिल की गयी थी किंतु उक्त आवेदन पर अवर न्यायालय द्वारा समुचित रूप से

विचार नहीं किया गया है और इसलिए इस मामले को वाद पर नए सिरे से विचार करने के लिए अवर न्यायालय को वापस भेजने की आवश्यकता है।

4. इसके विरूद्ध, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने समुचित रूप से संपूर्ण विवाद्यक पर विचार किया है और सुतार्किक आदेश पारित किया है और इसलिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। आगे निवेदन किया गया है कि डिक्री वर्ष 1968 में दिया गया था और वर्तमान याची ने केवल इस आधार पर कि वर्तमान याची द्वारा दाखिल याचिकाओं को अस्वीकार कर दिया गया है, निष्पादन कार्यवाही में रूकावट डालने और विलंब करने का प्रयास किया है।

5. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि समरूप स्थिति में एक अन्य याचिका **डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4631 वर्ष 2010 (मनोहर कुमार जायसवाल एवं एक अन्य बनाम कपूर चंद जैन एवं अन्य)** इस न्यायालय के समक्ष दाखिल की गयी थी किंतु मामले में अंतर्ग्रस्त तथ्यों और परिस्थितियों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद दिनांक 14.12.2010 के आदेश के तहत उक्त याचिका खारिज कर दी गयी थी। आगे निवेदन किया गया है कि उक्त मामले में **जगदीश दत्त एवं एक अन्य बनाम धरम पाल एवं अन्य, AIR 1999 (3) SCC 644** में दिया गया निर्णय भी विनिश्चित किया गया था और अवर न्यायालय द्वारा मामले पर समुचित रूप से विचार किया गया था। आगे निवेदन किया गया है कि याची ने इस याचिका को दाखिल करके तुच्छ आधार पर मामले में विलंब करने का प्रयास किया है और इसलिए इस याचिका को खारिज किया जाय।

6. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश के परिशीलन से प्रतीत होता है कि निर्णीत ऋणी ने, डिक्रीधारकों से संपत्ति का हिस्सा खरीदा है जैसा याचिका के पैरा 9 में कथन किया गया है। यह भी प्रतीत होता है कि विक्रय विलेख के साथ दस्तावेजों की सूची निष्पादन न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गयी थी किंतु अवर न्यायालय ने अपने समक्ष किए गए निवेदनों पर विचार करते हुए सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के विस्तार पर और **जगदीश दत्त एवं एक अन्य बनाम धरम पाल एवं अन्य, AIR (1999) 3 SC 644** मामले में दिए गए निर्णय पर विचार करने में विफल रहा है। **(1999)3 SCC 644** में प्रकाशित निर्णय के पैरा 6 और 7 पर इस मामले को विनिश्चित करने के प्रयोजन से निर्दिष्ट और विश्वास किया गया है जो निम्नलिखित है:–

> *^^6. ge lifÙk vrj.k vfèkfu;e dh èkkjk 111(d) d foLrkj dk ijh{k.k dju dh vko';drk ugh g D;kfd çR;Fkh 2 dk vfrpkjh vkj u fd iVVkèkkjh vfHkfuèkkfjr fd;k x;k gA ge lifr] tk fu"iknu dk fo"k; oLr g] d lcèk e fMØhèkkjd d ifjokj e lgnkf;dk e l dN d vfoHkkftr fgr dh [kjhn d çHkko dk irk yxkuk gA*
>
> *7. tc fdlh l;Dr ifjokj d i{k e fMØh ikfjr fd;k tkrk g] bl l;Dr ifjokj d leLr lnL;k d i{k e fMØh d :i e ekuuk gkxk ft l fLFkfr e ;g l;Dr fMØh cu tkrk gA tgk vpy lifÙk d okLrfod dCtk d fy, l;Dr fMØh ikfjr fd;k tkrk g vkj lgnkf;dk e l ,d fu.khr _.kh d i{k e fMØh dh fo"k;oLr e viuk fgr leunf'kr vFkok vrfjr djrk g] fMØh bl çdkj leunf'kr gd dh lhek rd fuokfir gk tkrh g vkj doy fMØh d 'k"k Hkkx dh lhek rd fu"iknu fd;k tk ldrk gA tgk lgnkf;dk dk fgr vifjHkkf"kr] vfofuf'pr g vkj lifÙk d fdlh ,d v'k d lcèk e fofufn"Vr% dfFkr ugh fd;k tk ldrk g] cVokjk okn e lefpr fMØh }kjk i{kk d vfèkdkjk dk vfHkfuf'pr dju d igy fMØh dk çHkko ugh fn;k tk ldrk gA fu%lng ;g lR; g fd vpy lifÙk e lgnkf;d d vfoHkkftr fgr dk [kjhnnkj vU; leLr lgnkf;dk d lkFk ml lifÙk d l;Dr dCtk dk nkok ugh dj ldrk gA fdr] tgk og igy l gh lifÙk ij dkfct g] tc rd vfèkdjk dk lefpr :i l*

> *vfHkfuf'pr ugh fd;k tkrk g] mlI mld dCtk l ofpr ugh fd;k tk ldrk g D;kfd l;Dr fMØh èkkjd ij lifÙk e vkj u fd lifÙk d Hkkx e fMØh dk fu"iknu bfllr dj ldrk gA l;Dr fMØh dk li.k :i l gh fu"ikfnr fd;k tk ldrk g D;kfd ;g foHkkT; ugh g vkj bl v'k e doy rc fu"ikfnr fd;k tk ldrk g tgk fMØhèkkjdk dk fgLlk ifjHkkf"kr g vFkok mu fgLlk dh Hkfo";ok.kh dh tk ldrh g vFkok fgLlk fookn e ugh gA vU;Fkk fu"iknu U;k;ky; fMØhèkkjdk d fgLlk dk irk ugh yxk ldrk g vkj lhO ihO lhO dh èkkjk 47 d çkoèkku l;Dr fMØh èkkjdk d chp fookn d çfr vtuch gA lhO ihO lhO dk vkn'k XXI fu;e 15 l;Dr fMØhèkkjd dk fMØh dk bldh li.krk e fu"ikfnr dju e l{ke cukrk g] fdr ;fn i.k fMØh fu"ikfnr ugh dh tk ldrh g] bl çkoèkku dk ykHk ugh gkxkA mlI fLFkfr e Hkh] fMØhèkkjd dk cVokjk d fy, lefpr okn e viu vfèkdkjk dk irk djuk gkxk vkj vko';d vurk"k çklr djuk gkxkA nkuk i{kk }kjk m}r vudk fu.k;] ftudk geu fufn"V fd;k g] ge gekj }kjk iokDrkulkj dfFkr fl)kr l nj ugh y tkrh gA vr%] mud çfr foLrr fun'k dh vko';drk ugh gA***

7. डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 4631 वर्ष 2010 में पारित दिनांक 14.12.2010 के आदेश, जिसे प्रत्यर्थी द्वारा निर्दिष्ट किया गया है और इस पर विश्वास किया गया है, के परिशीलन से प्रतीत होता है कि **जगदीश दत्त एवं एक अन्य बनाम धरम पाल एवं अन्य (उपर)** के मामले में दिया गया सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय इस न्यायालय के समक्ष निर्दिष्ट किया गया था किंतु उक्त आदेश के परिशीलन से प्रतीत होता है कि उसमें अधिकथित निर्णयाधार पर उक्त याचिका विनिश्चित करते हुए इस न्यायालय द्वारा चर्चा और विचार नहीं किया गया है। यह भी प्रतीत होता है कि उक्त मामला निर्णीत कर्जदारों में से एक द्वारा दाखिल किया गया था किंतु उक्त निर्णीत कर्जदार के संबंध में दर्जा, कि क्या वे डिक्री धारक से प्रश्नगत संपत्ति के खरीददार थे या नहीं, स्वयं आदेश से स्पष्ट नहीं हो पा रहा है। इन परिस्थितियों के अधीन यह नहीं कहा जा सकता है कि उक्त याचिका में याची और वर्तमान याची समस्थित व्यक्ति हैं और मामले के तथ्य भी समरूप हैं, प्रत्येक मामले को मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर विनिश्चित करने की आवश्यकता होता है। उक्त तथ्य के अतिरिक्त, यह प्रतीत होता है कि **जगदीश दत्त एवं एक अन्य बनाम धरम पाल एवं अन्य (उपर)** के पूर्वोक्त निर्णय में अधिकथित निर्णयाधार पर और सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के विस्तार पर अवर न्यायालय द्वारा समुचित रूप से विचार नहीं किया गया है। विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश के परिशीलन से प्रतीत होता है कि इस मामले के कतिपय महत्वपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों के आलोक में अवर न्यायालय को अपने समक्ष उठाए गए विवाद्यक पर विचार और विनिश्चित करने की आवश्यकता है।

8. अत: मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखने पर इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि दिनांक 30.6.2011 के आदेश (इस याचिका का परिशिष्ट-6) को अभिखंडित और अपास्त करने की आवश्यकता है और निर्णीत कर्जदार (वर्तमान याची) द्वारा दाखिल याचिका/आवेदन (इस याचिका का परिशिष्ट 1 और 2) पर पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद नए सिरे से विचार करने के लिए मामला अवर न्यायालय को वापस भेजा जाता है। अवर न्यायालय इस आदेश की तिथि से छह माह के भीतर आपत्ति पर विचार और फैसला करेगा। चूँकि डिक्री वर्ष 1968 की है, पक्षों से उम्मीद की जाती है कि वे अवर न्यायालय की कार्यवाही में सहयोग करेंगे।

9. उक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

ज्ञानेंद्र मंडल एवं अन्य

cuke

भारत संघ एवं अन्य

Cont. (Civil) Case No. 506 of 2011. Decided on 8th May, 2012.

सेवा विधि—नियुक्ति—दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारी के रूप में याचीगण का काम करना उनको नियोजन का अधिकार प्रदान नहीं करता है—उसे उन पदों जो विभागेतर काम के लिए है, पर नियुक्ति देने में प्राथमिकता दी जा सकती है—याचिका खारिज।

(पैराएँ 7 से 9)

अधिवक्तागण.—M/s M.M. Pal, L. Mukherjee, R. Pandey, For the Petitioners; Mr. M. Khan, For the Opp. Parties.

न्यायालय द्वारा.—पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. इस अवमान याचिका को इसलिए दाखिल किया गया है क्योंकि याचीगण के अनुसार डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4451 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 27 जनवरी, 2009 के आदेश का अनुपालन नहीं किया गया है।

3. इस न्यायालय ने दिनांक 7 फरवरी, 2012 को प्रत्यर्थीगण को उस स्थिति को स्पष्ट करने का अवसर दिया जिसमें लाभ, यदि हो, याचीगण को दिनांक 27 जनवरी, 2009 के आदेश के फलस्वरूप उपलब्ध थे, को रिट याचीगण को नहीं दिया गया है। दिनांक 26 अप्रिल, 2012 को प्रत्यर्थीगण द्वारा पूरक शपथ पत्र दाखिल किया गया है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि इस न्यायालय की खंड पीठ ने स्पष्ट रूप से भारत संघ को प्राथमिकता देने का निर्देश दिया था यदि भारत संघ को विभागेतर काम सहित अन्य काम करने के लिए कुछ दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारियों की आवश्यकता है। यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थीगण के पास पर्याप्त पद और पर्याप्त काम है और, इसलिए, उन्होंने विभागेतर काम के पद पर नियुक्ति देने के लिए आवेदन आमंत्रित करके दिनांक 19 अगस्त, 2010 को विज्ञापन-परिशिष्ट-3 प्रकाशित किया। यह निवेदन किया गया है कि इस न्यायालय की खंड पीठ ने भारत संघ को रिट याचीगण को प्राथमिकता देने का स्पष्ट निर्देश दिया था किंतु रिट याचीगण को प्राथमिकता नहीं दी गयी थी और इसलिए वे नियुक्ति नहीं पा सके थे।

5. भारत संघ के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याचीगण कैजुअल मजदूर के रूप में कार्यरत थे और इस न्यायालय ने भारत संघ की दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारियों के रूप में केवल उन याचीगण को प्राथमिकता देने का निर्देश दिया जिन्होंने दस वर्षों से अधिक तक सेवा दिया था। निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थीगण ने किसी को दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारी के रूप में नियुक्ति नहीं दिया है। यह निवेदन भी किया गया है कि विभागेतर एजेन्ट के स्थायी पद पर नियुक्ति देने के मामले में प्राथमिकता नहीं देने का न्यायालय का आदेश है। निवेदन किया गया है कि किसी प्रयोजन से अथवा विभागेतर नाम के लिए प्रत्यर्थीगण द्वारा दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारी को काम पर नहीं लगाया गया है।

6. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने भारत संघ के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों का जोरदार खंडन यह कथन करते हुए किया कि स्वयं नियुक्ति का नियम प्रावधानित करता है कि दैनिक मजदूरी पर काम

करने वाले कर्मचारी और आंशिक दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारी भी विभागेतर काम के पद पर नियुक्ति के मामले में प्राथमिकता पाने के हकदार होंगे।

7. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन पर विचार किया है और डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4451 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 27 जनवरी, 2009 के आदेश का परिशीलन किया। तथ्य जो विवादित नहीं है से स्पष्ट है कि जब रिट याचिका सं॰ 4451 वर्ष 2008 विनिश्चित की गयी थी, याचीगण सेवा में नहीं थे। आदेश से स्पष्ट है कि खंडपीठ ने अभिनिर्धारित किया है कि दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारियों के रूप में याचीगण का काम करना उनको नियोजन का अधिकार प्रदान नहीं करता है। तब विनिर्दिष्टत: अभिनिर्धारित किया गया है कि ''अस्थायी दर्जा देने अथवा उनकी सेवा नियमित करने का प्रश्न उद्भूत ही नहीं होता है।'' तत्पश्चात, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि विभाग को दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारियों की आवश्यकता होगी, तब उन्हें प्राथमिकता दी जाए।

8. जहाँ तक दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारियों का संबंध है, विभाग का दृष्टिकोण है कि विभाग को दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारियों की आवश्यकता नहीं है। यह भी स्वीकृत मामला है कि विभाग विभागेतर काम के लिए किसी दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारियों को कोई काम देने के लिए अग्रसर नहीं हुआ था। नियम केवल यह प्रावधानित करता है कि यदि कोई व्यक्ति दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारी अथवा आंशिक दैनिक वेतन पर काम करने वाले कर्मचारी के रूप में कार्यरत है, तब उसे उन पदों पर, जो विभागेतर काम के लिए है, पर नियुक्ति देने में प्राथमिकता दी जा सकती है। चूँकि याचीगण तब से रोजगार में नहीं हैं और उनका दर्जा दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले कर्मचारी का था और यदि प्रत्यर्थीगण को दैनिक मजदूरों से काम लेने की आवश्यकता होती, केवल तब इन व्यक्तियों को आदेश का लाभ दिया जा सकता था।

9. उक्त की दृष्टि में, हम याचिका में गुणागुण नहीं पाते हैं। तद्नुसार, अवमान याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; ujUæ ukFk frokjh] U;k;efr

मेसर्स अशोक कुमार

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

WP(C) No. 1393 of 2011. Decided on 14th March, 2012.

सरकारी संविदा—निविदा—संकर्म आदेश का रद्दकरण और नयी निविदा जारी किया जाना—याची की बोली स्वीकार की गयी थी और याची को काम दिया गया था—याची द्वारा अग्रिम धन भी जमा किया गया था—जब एक बार विभागीय कमिटि/निविदा कमिटि ने बोलियों और अन्य प्रासंगिक पहलूओं पर विचार करने पर याची को काम आवंटित करने का निर्णय कर लिया, उक्त निर्णय को छेड़ने के लिए वैध और न्यायोचित कारण नहीं है—प्रत्यथी आवंटन रद्द और इसी काम के संबंध में नयी निविदा आमंत्रित नहीं कर सकता है—निविदा आमंत्रित करने वाला नोटिस अभिखंडित। (पैराएँ 10 से 16)

अधिवक्तागण.—Mr. Atanu Banerjee, For the Petitioners; M/s V.P. Singh, M.K. Roy, For the Respondents.

आदेश

इस रिट याचिका में, याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 3 अर्थात प्रबंध निदेशक, झारखण्ड राज्य कृषि विपणन बोर्ड, राँची द्वारा एन॰ आई॰ टी॰ सं॰ 4/2010-11, निविदा आमंत्रित करने वाले नोटिस के अभिखंडन के

लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन लातेहार, गढ़वा, पाकुड़, जामतारा और दुमका में विद्युतीकरण, पी० सी० सी० रोड और पार्किंग के साथ 6000 एम० टी० की क्षमता तक अनाज और खाद के लिए तीन गोदाम–भंडारण के निर्माण कार्य के लिए प्रत्यर्थीगण द्वारा निविदा आमंत्रित की गयी है।

2. यह कथन किया गया है कि इसी काम के लिए निविदा आमंत्रित करने वाला नोटिस (संक्षेप में एन० आई० टी०) पहले एन० आई० टी० सं० 3/2010-11 के रूप में जारी किया गया था जिसमें याची ने अन्य के साथ बोली लगाने में भाग लिया था।

3. सक्षम प्राधिकारी/निविदा समिति ने बोलियों के संवीक्षण के बाद याची की बोली को सर्वाधिक उपयुक्त पाया और गढ़वा में गोदाम के निर्माण के लिए याची को काम आवंटित करने का निर्णय किया। तत्पश्चात, दिनांक 27.1.2011 के पत्र द्वारा याची को उक्त निर्णय सूचित किया गया था। याची को करार करने के लिए आवश्यक औपचारिकता को पूरा करने कहा गया था।

4. तत्पश्चात, याची ने कार्यपालक अभियंता, कृषि विपणन बोर्ड, राँची डिविजन के कार्यालय के पत्र के मुताबिक दिनांक 1.3.2011 को अग्रिम धन जमा किया। याची ने बैंक गारन्टी के रूप में 8,38,700.00/- रुपया जमा किया। समस्त आवश्यक औपचारिकताओं को पूरा करने के बावजूद प्रत्यर्थी ने करार निष्पादित नहीं किया था।

5. याची ने करार हस्ताक्षरित और निष्पादित करने के लिए अनेक अनुरोध किया ताकि काम शुरू किया जा सके किंतु इसे नहीं किया गया था। अचानक, याची को लातेहार, गढ़वा, पाकुड़, जामतारा और दुमका जिलों में उसी काम के लिए निविदा आमंत्रित करने वाली नोटिस एन० आई० टी० सं० 4/2010-12 की जानकारी हुई।

6. याची ने उक्त पश्चातवर्ती निविदा आमंत्रित करने वाली नोटिस एन० आई० टी० सं० 4/2010-11 के अभिखंडन के लिए इस रिट याचिका को दाखिल किया है।

7. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थीगण की ओर से कार्रवाई बिल्कुल मनमानी, अवैध और अन्यायोचित है और पश्चातवर्ती निविदा आमंत्रित करने वाली नोटिस संपोषणीय नहीं है और अभिखंडित किए जाने का दायी है।

8. याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि लातेहार, गढ़वा, पाकुड़, जामतारा और दुमका जिलों के संबंध में पूर्वतर एन० आई० टी० में अन्य बोली लगाने वालों ने भी रिट याचिकाओं को दाखिल किया है। रिट याचिकाओं में से एक डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 1401/11 मेसर्स सेठ कुमार द्वारा दाखिल किया गया था। उक्त मामले में, न्यायालय ने पक्षों को सुनने के बाद, लातेहार जिला के संबंध में निविदा आमंत्रित करने वाली नोटिस एन० आई० टी० सं० 4/2010-11 अभिखंडित कर दिया है। इसी प्रकार से अन्य मामलों में अन्य स्थानों के संबंध में एन० आई० टी० अभिखंडित कर दिया गया था।

9. आगे निवेदन किया गया था कि जब एकबार सक्षम प्राधिकारी/निविदा कमिटि द्वारा याची के पक्ष में काम आवंटित करने का निर्णय लिया जा चुका था और उसको निर्णय संसूचित किया गया था, प्रत्यर्थीगण उक्त काम के लिए नयी निविदा आमंत्रित करने के ओट में इससे पीछे हट नहीं सकते हैं और इसे बातिल नहीं कर सकते हैं। इस प्रकार, आक्षेपित नोटिस पूर्णत: मनमानी, अन्यायोचित और अनुचित है और इस न्यायालय द्वारा अभिखंडित किए जाने योग्य है।

10. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यद्यपि अन्य स्थानों के संबंध में एन० आई० टी० सं० 4/2010-11 के संबंध में नोटिस को इस न्यायालय द्वारा अभिखंडित कर दिया गया था किंतु वर्तमान

मामला भिन्न है। इस मामले में, यद्यपि याची को काम आवंटित किया गया था, पर बाद में पाया गया था कि वर्ष 2008 में याची को आवंटित कामों में से एक को पूरा किया जाना अभी भी बाकी है। उसकी दृष्टि में, याची को आवंटित काम रद्द किया गया है। याची की बोली के रद्दकरण के बाद, पिछले कामों के संबंध में उसे ब्लैक लिस्ट भी किया गया है।

11. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है। यह विवादित नहीं है कि निविदा आमंत्रित करने वाला नोटिस एन० आई० टी० सं० 3/2010-11 जारी किया गया था। याची बोली लगाने वाले में से एक था और सक्षम प्राधिकारी/निविदा कमिटि द्वारा उसकी बोली पर विचार किया गया था। समस्त प्रासंगिक पहलूओं के सम्यक संवीक्षण के बाद याची की बोली स्वीकार की गयी थी और याची को काम आवंटित करने के लिए निर्णय लिया गया था। तत्पश्चात, याची ने अग्रिम धन जमा किया। यह भी स्वीकृत तथ्य है कि उक्त निर्णय याची को पहले से आवंटित लंबित काम की पूरी जानकारी के साथ विभागीय प्राधिकारी–सह–सक्षम प्राधिकारी द्वारा लिया गया था।

12. याची द्वारा निवेदन किया गया है कि पहले का कार्य स्थल दूरस्थ स्थान पर था और उग्रवादियों के उपद्रव के कारण इसे विहित समय के भीतर पूरा नहीं किया जा सका था। उस प्रभाव की सूचना प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण सहित समस्त संबंधितों को भी दी गयी थी। यह याची की ओर से उपेक्षा अथवा किसी जानबूझकर की गई चूक का मामला नहीं है। काम निष्पादित करने में विलंब इन परिस्थितियों के अधीन उसके नियंत्रण से बाहर था। निविदा कमिटि ने उन समस्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार किया था और याची को काम आवंटित करने का अंतिम निर्णय लिया था बोली स्वीकार करने और याची को काम आवंटित करने के बाद निर्णय के रद्दकरण के लिए नया मामला बनाने के लिए परिस्थितियों में परिवर्तन नहीं था। प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण ने पहले के काम के संबंध में याची को ब्लैक लिस्ट करने वाला आदेश जल्दबाजी में पारित किया था। उक्त अवैध आदेश को आच्छादित करने के लिए इसे किया गया है।

13. आगे निवेदन किया गया है कि वर्तमान काम शहरी क्षेत्र में है और याची ने यह वचन देते हुए कि वह दिए गए समय के भीतर काम पूरा करेगा, इस न्यायालय में शपथ पत्र दाखिल किया है।

14. उक्त की दृष्टि में और इन तथ्यों की दृष्टि में भी जब एक बार विभागीय कमिटि/निविदा कमिटि ने बोलियों और अन्य प्रासंगिक पहलूओं पर विचार करने पर याची को काम आवंटित करने का निर्णय लिया, मैं उक्त निर्णय को छोड़ने के लिए अभिलेख पर न्यायोचित और वैध कारण नहीं पाता हूँ।

15. उस निर्णय के आधार पर विधिसम्मत प्रत्याशा में, याची ने अग्रिम धन जमा करके और काम के निष्पादन की तैयारी करके अपनी अवस्था बदल ली। उस दृष्टि से भी प्रत्यर्थी अपने पहले के निर्णय से विपथन नहीं कर सकता है और आवंटन रद्द नहीं कर सकता है और गढ़वा के काम के संबंध में नयी निविदा आमंत्रित नहीं कर सकता है। एन० आई० टी० सं० 4/2011-11 जारी करने करने का कदम पूर्णत: मनमाना, अन्यायोचित है और दूषित है।

16. पूर्वोक्त कारणों से, गढ़वा के संबंध में निविदा आमंत्रित करने वाला नोटिस एन० आई० टी० सं० 4/2010-11 अभिखंडित की जाती है। इस रिट याचिका को अनुज्ञात किया जाता है। प्रत्यर्थीगण को काम पूरा करने का समय बढ़ाकर ताकि काम पूरा करने की पूर्ण विहित अवधि दी जा सके, पहले ही पूरा कर लिए गए चरण के बाद एन० आई० टी० सं० 3/2010-11 के निबंधनों के मुताबिक आवश्यक प्रक्रिया के साथ अग्रसर होने का निर्देश दिया जाता है।

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

विजय लाल

cuke

सेंट्रल कोलफील्ड्स लि॰ एवं अन्य

L.P.A. No. 69 of 2011. Decided on 1st May, 2012.

श्रम एवं औद्योगिक विधि—घर का अर्जन–याची ने लगभग 15 वर्षों तक अधिनिर्णय को चुनौती नहीं दिया था—वर्ष 1995 के अधिनिर्णय द्वारा याची का मुआवजा अंतिम रूप से विनिश्चित किया गया और वह उससे अधिक नहीं पा सकता है जो उसे अधिनिर्णीत किया गया है—मुआवजा की नयी नीति का लाभ लेने के लिए याची को सारवान विधिक अधिकार नहीं है—अपील खारिज। (पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–M/s H.S. Pandey, D.K. Dubey, For the Appellant; Mr. A.K. Das, For the Respondent.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. याची अपीलार्थी का मामला यह है कि उसका घर काफी पहले वर्ष 1989 में अर्जित किया गया था और याची के घर का मुआवजा 2,17,403.29/- रुपया विनिश्चित करते हुए वर्ष 1995 में अधिनिर्णय पारित किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि निर्धारण के बाद भी याची को मुआवजा का भुगतान नहीं किया गया था और तत्पश्चात दिनांक 19 मई, 2008 को मुआवजा की नयी नीति प्रभाव में आयी। याची को वर्ष 2010 में मुआवजा प्रस्तावित किया गया था। अतः, याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार याची को वर्ष 1995 के अधिनिर्णय द्वारा अर्जित भूमि के लिए दिनांक 19 मई, 2008 की नयी मुआवजा नीति के मुताबिक मुआवजा दिया जाना चाहिए था।

3. विद्वान एकल न्यायाधीश ने पाया कि उसके घर के अर्जन के बावजूद, याची ने घर खाली नहीं किया था और नयी नीति के मुताबिक मुआवजा पाने का वह हकदार नहीं है क्योंकि इसे पुराने विनिश्चित मामलों पर लागू नहीं किया जा सकता है जो पुराने मामलों को फिर से खोले अथवा वैसे मामलों में भी जहाँ पक्षों ने 15 वर्षों की लंबी अवधि के लिए मुआवजा नहीं लिया था पर भी लागू किया जा सकता है।

4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि इस एल॰ पी॰ ए॰ के बाद स्वयं प्रत्यर्थी कंपनी ने सिविल न्यायालय में निर्देश याचिका दाखिल किया है और इसलिए, नयी नीति के अनुसार याची के मामले पर विचार करने की आवश्यकता है। यह निवेदन भी किया गया है कि प्रत्यर्थी कंपनी ने अपने पास धन रखा और इसलिए यह ब्याज का भुगतान करने की दायी है।

5. प्रत्यर्थी कंपनी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि कथित तथ्य बिलकुल झूठे हैं और याची ने भूमि अर्जन के विरूद्ध मुआवजा प्राप्त किया है और प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा याची के पुत्र को रोजगार भी दिया गया है।

6. हमने अपीलार्थी और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया, एल॰ पी॰ ए॰ में कथित तथ्यों और आक्षेपित आदेश में दिए गए कारणों का परिशीलन किया।

7. स्वीकृत रूप से, भूमि अर्जन कार्यवाही वर्ष 1989 में आरंभ की गयी थी और वर्ष 1995 में पारित अधिनिर्णय में समाप्त हुई थी। याची ने 1995 से 2010 तक लगभग 15 वर्षों तक विधि के अनुरूप

अधिनिर्णय में विनिश्चित मुआवजा को चुनौती नहीं दिया था। अतः, वर्ष 1995 के अधिनिर्णय द्वारा याची का मुआवजा अंतिम रूप से विनिश्चित किया गया था और वह उससे अधिक नहीं पा सकता है जो उसे अधिनिर्णीत किया गया है। याची ने घर खाली भी नहीं किया था जैसा गौर किया गया है और इसे विवादित नहीं किया गया है। जब प्रत्यर्थी कंपनी ने याची के घर के निकट कैंप लगाया, याची को पुनः मुआवजा का प्रस्ताव दिया गया था जिसे उसने स्वीकार नहीं किया था, जबकि कुछ व्यक्तियों ने मुआवजा स्वीकार किया था। चूँकि याची ने मुआवजा स्वीकार नहीं किया था, अब राशि सिविल न्यायालय में जमा कर दी गयी है और वह भूमि अर्जन मामले को पुनर्जीवित नहीं करता है ताकि किसी नयी नीति को इस पर लागू किया जा सके। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निष्पक्षतः स्वीकार किया कि नयी नीति में पुराने मामलों को पुनर्जीवित करने का और इसे फिर से खोलने का प्रावधान नही है। यदि ऐसी अवस्था होती, यह अत्यंत अराजक अवस्था हो सकती है।

8. चाहे जो भी हो, मुआवजा की नयी नीति का लाभ जिसे प्रत्यर्थी-कंपनी द्वारा प्रदान किया जा सकता है, का लाभ लेने के लिए याची के पास सारवान विधिक अधिकार नहीं है। याची इस कारण से ब्याज राशि केवल तब, यदि कोई संविदा होती अथवा सांविधिक प्रावधान के अधीन, पा सकता था और याची के विद्वान अधिवक्ता किसी ऐसे प्रावधान को दर्शा नहीं सके थे जिसके अधीन प्रत्यर्थी कंपनी अधिनिर्णय की अवधि के परे ब्याज का भुगतान करने के लिए दायी थी।

उक्त कारणों की दृष्टि में, हम इस अपील में गुणागुण नहीं पाते हैं, जिसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjï dï ejkfB;k ,o Mhï ,uï mikè;k;] U;k;efrx.k

जितेन्द्र कुमार भगत

cuke

झारखण्ड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 369 of 2005. Decided on 3rd July, 2012.

सत्र विचारण सं॰ 368 वर्ष 2003/जी॰ आर॰ सं॰ 762 वर्ष 2003 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ IV, जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 24.2.2005 और 26.2.2005 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—हत्या—आजीवन कारावास—मृतक की माता और पत्नी की उपस्थिति के बारे में प्राथमिकी में उल्लेख नहीं था किंतु उन्हें चश्मदीद गवाहों के रूप में प्रक्षेपित किया गया है—अभियोजन साक्षियों ने स्वयं अपना मामला भंजित किया है—सूचक ने फर्दबयान में दिए गए अपने विवरण की तुलना में न्यायालय में अपने अभिसाक्ष्य में भिन्न कहानी दिया है—अभियोजन अपीलार्थी के विरूद्ध अपना मामला समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने में सक्षम नहीं रहा है—अपीलार्थी को संदेह का लाभ देते हुए दोषसिद्धि और दंडादेश अपास्त किया गया—अपीलार्थी को आरोपों से दोषमुक्त किया गया। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.—M/s Sri Krishna Murari, Rajan Raj, Rohit, For the Appellant; Mr. Shekhar Sinha, For the State.

न्यायालय द्वारा.—यह अपील सत्र विचारण सं॰ 368 वर्ष 2003/जी॰ आर॰ सं॰ 762 वर्ष 2003 में अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/34 के अधीन दोषसिद्ध करते और उसको कठोर आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ IV जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 24.2.2005 और 26.2.2005 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश से उद्भूत होती है।

2. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि मृतक अशोक गुप्ता के छोटे भाई सूचक संतोष गुप्ता (अ॰ सा॰ 6) ने दिनांक 5.5.2003 को मध्य रात्रि 00.30 बजे अस्पताल में पुलिस के समक्ष फर्दबयान दर्ज किया कि उसका परिवार अपने जीवन यापन के लिए टाटा 407 ट्रक का स्वामी है। पिछली रात अर्थात दिनांक 4.5.2003 को वह अपने भाई (मृतक) के साथ आंगन में बैठा था। प्रातः लगभग 10.30 बजे धर्मेन्द्र सिंह, जितेन्द्र भगत और कोई नेपाली 2-3 लड़कों के साथ उसके आंगन में आए। अपीलार्थी ने अशोक को धमकी दी जिसका वह उत्तर देना चाहता था किंतु अपीलार्थी ने उसकी हत्या करने के आशय से अपने हाथ में तलवार लिए उस पर प्रहार किया, किंतु अशोक को अपने बायें हाथ पर उपहति आई जब उसने ऐसे प्रहार से स्वयं को बचाने का प्रयास किया। सूचक ने भी अशोक को बचाने का प्रयास किया, किंतु अन्य व्यक्तियों द्वारा उसको पकड़ लिया गया था। इस बीच, धर्मेन्द्र और नेपाली ने अपने हाथ में लिए भुजाली से मृतक पर प्रहार किया और वे सब धमकी देकर चले गए। अशोक को खून बहने की उपहति प्राप्त हुई। हल्ला सुनकर पड़ोसी जमा हुए। अशोक को अस्पताल ले जाया गया था जहाँ उसकी मृत्यु हो गयी। आगे अभिकथित किया गया है कि मृतक ने सूचक से कहा कि अपीलार्थी ने उससे ट्रक मांगा था जिसे उसने नहीं दिया था और इस पर उनके बीच झगड़ा था।

3. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री कृष्ण मुरारी ने अनेक आधारों पर आक्षेपित निर्णय का विरोध किया और निम्नलिखित निवेदन किया: विचारण न्यायालय द्वारा अ॰ सा॰ 6 पर चश्मदीद गवाह के रूप में विश्वास नहीं किया गया है: अभियोजन द्वारा प्रक्षेपित अ॰ सा॰ 1 और 7 भी चश्मदीद गवाह नहीं हैं; इसके अलावा उनका विवरण कि मृतक ने हमलावरों का नाम प्रकट किया था, प्राथमिकी में उल्लिखित नहीं किया गया था; अन्य अभियुक्तगण, जिनके विरूद्ध भी भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 34 के अधीन आरोप था, को दोषमुक्त किए जाने पर अपीलार्थी को भी दोषमुक्त कर देना चाहिए था; उन्होंने आगे निवेदन किया कि अपीलार्थी को संदेह का लाभ देना चाहिए। अंत में उन्होंने निवेदन किया कि अपीलार्थी लगभग नौ वर्षों से कारा में है और वह एड्स से पीड़ित है।

4. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया।

5. हम श्री कृष्ण मुरारी के निवेदन में बल पाते हैं कि अभियोजन अपीलार्थी के विरूद्ध समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे अपना मामला सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुआ है। मृतक के भाई सूचक अ॰ सा॰ 6 पर भी चश्मदीद गवाह के रूप में विचारण न्यायालय द्वारा सही प्रकार से अविश्वास किया गया है। मृतक की माता (अ॰ सा॰ 1) और मृतक की पत्नी (अ॰ सा॰ 6) की उपस्थिति के बारे में प्राथमिकी में उल्लेख नहीं है किंतु उन्हें चश्मदीद गवाह के रूप में प्रक्षेपित किया गया है। प्राथमिकी में प्रकट नहीं किया गया है कि मृतक ने हमलावरों का नाम प्रकट किया था, किंतु अ॰ सा॰ 1 और 7 ने कहा कि उन्हें हमलावरों के नामों की जानकारी मृतक से हुई। अ॰ सा॰ 8, अन्वेषण अधिकारी ने कहा कि कुछ अन्य व्यक्तियों को किराया पर कमरे दिए गए थे, किंतु इस मामले में किसी स्वतंत्र गवाह का परीक्षण नहीं किया गया है। यह प्रतीत होता है कि अभियोजन पक्ष अ॰ सा॰ 1, 6 और 7 ने स्वयं को ज्ञात कारणों से स्वयं अपना मामला भंजित कर दिया है। सूचक अ॰ सा॰ 6 ने फर्दबयान में अपने द्वारा दिए गए विवरण

की तुलना में न्यायालय में अपने अभिसाक्ष्य में भिन्न विवरण दिया है। प्राथमिकी के मुताबिक, मृतक को अ॰ सा॰ 2 और 3 द्वारा अस्पताल ले जाया गया था, किंतु इन गवाहों ने नहीं कहा कि मृतक ने हमलावरों का नाम प्रकट किया जैसा अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 1, 6 और 7 द्वारा दिया गया है।

6. पक्षों को विस्तारपूर्वक सुनने और अभिलेख का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने के बाद, हम अपीलार्थी को संदेह का लाभ देने के इच्छुक हैं।

7. परिणामस्वरूप, यह अपील अनुज्ञात की जाती है। अपीलार्थी के विरूद्ध विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दंडादेश अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी को आरोप से दोषमुक्त किया जाता है। अपीलार्थी जितेन्द्र कुमार भगत कारा में है। उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

घनश्याम यादव एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 16 of 2010. Decided on 9th July, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 147, 148, 149, 307, 302 एवं 120B सह-पठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27 और सी॰ एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 17(1) (ii)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 227—हत्या–उन्मोचन आवेदन की अस्वीकृति–मामले का अन्वेषण किया गया था और अन्वेषण के बाद याचीगण के विरुद्ध भी आरोप-पत्र दाखिल किया गया था–गवाहों ने घटना स्थल पर उपस्थित याचीगण को भी नामित किया है–आरोप विरचित किए जाने के लिए याचीगण के विरुद्ध केस डायरी में पर्याप्त सामग्री है–इस प्रकार, पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Munna Lal Yadav, For the Petitioners; Mr. M.B. Lal, For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ को सुना गया।

2. याचीगण ने विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट III, चतरा द्वारा पारित दिनांक 16.12.2009 के आदेश को चुनौती दिया है जिसके द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 228 के अधीन दाखिल याचीगण को उन्मोचन आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है।

3. यह प्रतीत होता है कि याचीगण को चतरा सदर पी॰ एस॰ केस सं॰ 252 वर्ष 2006, जी॰ आर॰ सं॰ 859 वर्ष 2006 के तत्सम, में याचीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149, 307, 302, 120B, आयुध अधिनियम की धारा 27 और सी॰ एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 17(1) (ii) के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त बनाया गया है। मामला सूचक के पति की हत्या से संबंधित है जिसे उग्रवादी समूह के व्यक्तियों के विरुद्ध संस्थापित किया गया था। यद्यपि याचीगण को प्राथमिकी में नामित नहीं किया गया है, किंतु अभिकथित किया गया है कि उग्रवादी समूह के सदस्य एकत्रित हुए थे और किसी संतोष यादव जो एरिया कमांडर था ने मृतक पर उसकी मृत्यु कारित करते हुए अत्यन्त निकट से गोली चलाया

था। प्रतीत होता है कि मामले का अन्वेषण किया गया था और अन्वेषण के बाद याचीगण के विरुद्ध भी आरोप-पत्र दाखिल किया गया था। संज्ञान लेने के बाद, मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था। याचीगण ने उन्मोचन के लिए आवेदन दाखिल किया, जिसे यह अभिनिर्धारित करते हुए कि अन्वेषण के दौरान गवाहों ने अपराध में याचीगण की सह-अपराधिता के बारे में कथन किया है, दिनांक 16.12.2009 के आक्षेपित आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याचीगण को इस मामले में झूठा आलिप्त किया गया है और किसी संतोष यादव के विरुद्ध हत्या करने का प्रत्यक्ष अभिकथन है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह सुयोग्य मामला है जिसमें याचीगण को उन्मोचित कर देना चाहिए।

5. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है और इस न्यायालय का ध्यान केस डायरी में गवाहों में से कुछ के बयानों की ओर आकृष्ट किया है जिन्होंने कथन किया है कि याचीगण भी घटनास्थल पर उपस्थित थे और कुछ गवाहों ने भी कथन किया है कि उन्होंने याचीगण को घटनास्थल से भागते देखा था।

6. इस तथ्य की दृष्टि में कि गवाहों ने घटना स्थल पर उपस्थित इन याचीगण को नामित किया है, आरोप विरचित करने के लिए केस डायरी में भी इन याचीगण के विरुद्ध पर्याप्त सामग्री है। इस प्रकार, पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है। इस आवेदन में गुणागुण नहीं है जिसे तद्नुसार खारिज किया जाता है।

7. यह निवेदन किया गया है कि इस मामले में मूल केस डायरी प्राप्त की गयी है। इसे शीघ्रतापूर्वक संबंधित न्यायालय को वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

आकाश पत्नी एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 109 of 2011. Decided on 10th July, 2012.

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881—धाराएँ 138 एवं 137—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 320 एवं 482—चेक का अनादर–संज्ञान–संज्ञान के आदेश का अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया गया कि पक्षों ने अपना विवाद सुलझा लिया है और तद्द्वारा सुलह कर लिया है–राशि, जिसका भुगतान परिवादी को याचीगण द्वारा किए जाने के लिए देय था, का भुगतान पहले ही किया जा चुका है–चूँकि पक्षों ने सुलह कर लिया है, आक्षेपित आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जाती है–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 2 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Indrajit Sinha, For the Petitioners; A.P.P., For the State.

आदेश

दिनांक 14.12.2010 के आदेश जिसके अधीन परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया है, सहित परिवाद केस सं॰ 1333/2010 की संपूर्ण कार्यवाही का

अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया गया है कि पक्षों ने अपने विवाद का समाधान कर लिया है और तद्द्वारा उन्होंने सुलह कर लिया है।

2. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि विवाद का समाधान कर लिए जाने पर अवर न्यायालय के समक्ष परिवादी की ओर से इसे वापस लेने के लिए आवेदन दाखिल किया गया था किन्तु आदेश पारित नहीं किया गया था और इसलिए, इसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन इस आवेदन को दाखिल करने के लिए याचीगण को प्रोत्साहित किया।

3. विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि चूँकि पक्षों ने अपने विवाद का समाधान कर लिया है, इस न्यायालय के समक्ष शपथपत्र दाखिल किया गया है कि राशि, जिसका भुगतान याचीगण द्वारा परिवादी को किए जाने के लिए देय था, का भुगतान पहले ही कर दिया गया है।

4. चूँकि पक्षों ने मामले में सुलह कर लिया है, दिनांक 14.12.2010 के आदेश सहित परिवाद केस सं॰ 1333 वर्ष 2010 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

5. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

संपा सरदार एवं एक अन्य

cuke

सेन्टू सरदार

Cr. Revision No. 1085 of 2010. Decided on 9th July, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण–दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन याचीगण द्वारा भरण-पोषण के लिए दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा इस तथ्य की दृष्टि में अस्वीकार कर दिया गया कि याची पक्षों के बीच विवाह सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुई थी–याची ने अपने पूर्व पति के सात वर्षों से लापता होने के बाद मंदिर में वि॰ प॰ के साथ विवाह करने की कहानी बतायी–उसने स्वीकार किया था कि उसने पूर्व पति से अपनी पुत्री को जन्म दिया था–पक्षों के बीच विवाह और इस विवाह से पुत्री के जन्म के बारे में याची द्वारा दिए गए साक्ष्य में तात्विक विरोधाभास है–अवर न्यायालय सही प्रकार से इस निष्कर्ष पर आया कि याची विरोधी पक्षकार के साथ अपना विवाह सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुई थी–आवेदन खारिज।
(पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–M/s Md. Asadul Haque, Md. Sajid Yunus 'Warsi', For the Petitioner; None, For the Opp. Party.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया। इस मामले में विरोधी पक्षकार उपस्थित नहीं हुआ है यद्यपि उस पर वैध रूप से नोटिस तामील किया गया है।

2. याचीगण ने यह आवेदन दांडिक विविध केस सं॰ 95A वर्ष 2007 में विद्वान प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 19.5.2010 के आदेश को चुनौती देते हुए दाखिल किया है

जिसके द्वारा द॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन भरण–पोषण के लिए याचीगण द्वारा दाखिल आवेदन इस तथ्य की दृष्टि में अस्वीकार कर दिया गया है कि याची सं॰ 1 पक्षों के बीच विवाह सिद्ध करने में सफल नहीं हुई थी।

3. आक्षेपित आदेश से, यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी सं॰ 1 संपा सरदार ने अवर न्यायालय में द॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन आवेदन दाखिल किया था और स्वयं को विरोधी पक्षकार की विवाहित पत्नी होने का दावा किया और कथन किया कि उसका पूर्व पति सात वर्षों से लापता था और तत्पश्चात्, उन्होंने मंदिर में विवाह किया था जिससे उनको एक पुत्री हुई थी जो याची सं॰ 2 है।

4. विरोधी पक्षकार अवर न्यायालय में उपस्थित हुआ है और पक्षों के बीच विवाह से इनकार किया है। आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होता है कि याची सं॰ 1 ने अवर न्यायालय में अपना मामला सिद्ध करने के लिए पाँच गवाहों का परीक्षण किया। यद्यपि गवाहों में से कुछ ने कथन किया है कि उनकी उपस्थिति में पक्षों के बीच विवाह हुआ था, किंतु एक गवाह याची की माता है और ऐसा अन्य गवाह अ॰ सा॰ 2 दुलाल सरदार है जिसने प्रति परीक्षण पर याची सं॰ 1 के प्रथम पति के बारे में अपनी अनभिज्ञता दर्शाया। याची सं॰ 1 ने अवर न्यायालय में स्वयं का अ॰ सा॰ 5 के रूप में परीक्षण किया था और उसने भी अपने और विरोधी पक्षकार के बीच विवाह के बारे में कथन किया था, किंतु अपने प्रति परीक्षण में उसने स्वीकार किया था कि उसने अपने पूर्व पति से अपनी पुत्री को जन्म दिया था। उसने यह कथन भी किया था कि उसके पूर्व पति शंभु सरदार की मृत्यु हो गयी थी और उसकी मृत्यु के तीन वर्षों बाद उसने विरोधी पक्षकार के साथ विवाह किया था। अपने प्रति परीक्षण में, उसने यह भी स्वीकार किया है कि उसने विरोधी पक्षकार के विरुद्ध परिवाद मामला भी दर्ज किया था, जिसमें उसने उल्लिखित नहीं किया था कि उसका पूर्व पति जीवित था। परिवाद याचिका को प्रदर्श 'B' के रूप में सिद्ध किया गया था जो दर्शाता था कि उसका पूर्व पति जीवित था।

5. अवर न्यायालय उक्त साक्ष्य के आधार पर इस निष्कर्ष पर आया कि याची सं॰ 1 विरोधी पक्षकार के साथ अपना विवाह सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुई थी और तद्नुसार, आवेदन खारिज कर दिया है।

6. इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि पक्षों के बीच विवाह और इस विवाह से पुत्री के जन्म के बारे में याची सं॰ 1 द्वारा दिए गए साक्ष्य में तात्विक विरोधाभास है और अवर न्यायालय सही प्रकार से इस निष्कर्ष पर आया है कि याची सं॰ 1 विरोधी पक्षकार के साथ अपना विवाह सिद्ध करने में सफल नहीं हुई थी।

7. मैं पुनरीक्षण आवेदन में आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने लायक अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। आवेदन में गुणागुण नहीं है और तद्नुसार इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjň dň ejkfB;k ,o Mhň ,uň mikè;k;] U;k;efrx.k

झारखंड राज्य, उपायुक्त धनबाद के माध्यम से

cuke

सुनील पासवान

Acquittal Appeal No. 4 of 2012. Decided on 18th June, 2012.

एस॰ टी॰ सं॰ 290 वर्ष 2009 में श्री एस॰ के॰ सिंह, सत्र न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 23.9.2011 के दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302, 392 एवं 201 सह-पठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 378—डकैती एवं हत्या–दोषमुक्ति–अभियोजन विवरण अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं–अभियुक्त प्रत्यर्थी के विरुद्ध एकमात्र साक्ष्य यह है कि उसकी पत्नी ने उसे मृतक और दो अन्य के साथ अंतिम बार देखा किंतु ऐसा साक्ष्य किसी अन्य सामग्री द्वारा संपुष्ट नहीं किया गया है–भिन्न दृष्टिकोण अपनाने का कोई कारण नहीं है जो विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-प्रत्यर्थी के विरुद्ध दोषमुक्ति का निष्कर्ष दर्ज करने में लिया गया है और उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर दोषसिद्धि का अवसर नहीं है–अपील खारिज। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Amaresh Kumar, For the Appellant; None, For the Respondent.

आदेश

<u>आई॰ ए॰ सं॰ 235/2012</u>

यह आई॰ ए॰ इस अपील को दाखिल करने में हुए 15 दिनों के विलंब को माफ करने के लिए किया गया है।

आधारों पर संतुष्ट होने पर, इस अपील को दाखिल करने में हुए 15 दिनों के विलंब को माफ किया जाता है। आई॰ ए॰ निपटाया जाता है।

<u>दोषमुक्ति अपील सं॰ 04 वर्ष 2012</u>

न्यायालय द्वारा.–यह अपील एस॰ टी॰ सं॰ 290 वर्ष 2009 में अभियुक्त-प्रत्यर्थी सुनील पासवान को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 392 और 201 और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन आरोपों से दोषमुक्त करते हुए विद्वान सत्र न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 23.9.2011 के दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध दाखिल की गयी है।

2. राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अमरेश कुमार ने दोषमुक्ति के निर्णय का विरोध किया और निवेदन किया कि कम से कम अ॰ सा॰ 8 अंतिम बार देखे जाने के बिंदु पर गवाह था और इसलिए, दोषमुक्ति का आदेश पारित नहीं किया जा सकता था।

3. राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया और उनके द्वारा प्रस्तुत गवाहों के साक्ष्यों की प्रमाणित प्रतियों का परिशीलन किया गया।

4. प्रतीत होता है कि मृतक की पत्नी अ॰ सा॰ 8 संगीता देवी ने कहा था कि अपीलार्थी और दो अन्य लोग उसके पति उपेन्द्र कुमार को सूमो विक्टा से ले गए थे जिसे अपीलार्थी द्वारा चलाया जा रहा था, किंतु उसका पति नहीं लौटा था। और उसे बाद में जानकारी हुई कि उसकी हत्या कर दी गयी थी। अ॰ सा॰ 9 अनिल कुमार और अ॰ सा॰ 10 धर्मेन्द्र कुमार ने अन्वेषण के दौरान पुलिस के समक्ष कहा कि दिनांक 27.9.2008 की रात्रि को उनकी बातचीत मृतक उपेन्द्र कुमार के साथ हुई थी जब वह अपीलार्थी और दो अन्य के साथ होटल में रात का खाना खा रहा था। किंतु इन दोनों गवाहों अर्थात् अ॰ सा॰ 9 और 10 ने अभियोजन विवरण का समर्थन नहीं किया था कि उपेन्द्र कुमार ने उनको सूचित किया था कि वह अपीलार्थी और दो अन्य के साथ उक्त होटल में खाना खा रहा था। अ॰ सा॰ 10 ने केवल यह कहा कि मृतका ने उसे सूचित किया था और बताया था कि उसके साथ 2-3 लोग हैं और वह बंगाल

जा रहा था, किंतु उसने अभियुक्त प्रत्यर्थी को उन व्यक्तियों में से एक नहीं बताया था। इन परिस्थितियों में, अभियुक्त प्रत्यर्थी के विरुद्ध एकमात्र साक्ष्य यह है कि उसकी पत्नी (अ॰ सा॰ 8) ने उसे अंतिम बार मृतक और दो अन्य के साथ देखा था, किंतु ऐसे साक्ष्य को किसी अन्य सामग्री द्वारा संपुष्ट नहीं किया गया है।

5. यह प्रतीत होता है कि पक्षों के परस्पर मामलों और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों पर विचार करने के बाद विचारण न्यायालय के पास अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लाए गए सामग्रियों के आधार पर दोषमुक्ति का निष्कर्ष दर्ज करने के अतिरिक्त विकल्प नहीं था।

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और उनके द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों का परिशीलन करने के बाद, हमारे मत में, भिन्न दृष्टिकोण अपनाने का कारण नहीं है जो विद्वान विचारण न्यायालय ने अभियुक्त प्रत्यर्थी के विरुद्ध दोषसिद्धि का निष्कर्ष दर्ज करने में लिया है और उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर दोषसिद्धि का अवसर नहीं है।

7. इन परिस्थितियों में, हम इस अपील में गुणागुण नहीं पाते हैं जिसे तद्नुसार खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

राजेश चंद्र ओझा उर्फ राजेश ओझा एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (Cr.) No. 169 of 2012. Decided on 18th May, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 169 एवं 439—धाराओं 341, 323, 504, 506/34 एवं 304B के अधीन अपराधों का संज्ञान लिया गया–याचीगण पहले से ही पुलिस के जमानत पर हैं–अवर न्यायालय ने आरोप-पत्र दाखिल किए जाने पर, गिरफ्तारी वारंट जारी किया–यदि याचीगण अवर न्यायालय के समक्ष उपस्थित होते हैं, न्यायालय उन्हें जमानत पर निर्मुक्त करेगा। (पैराएँ 3 एवं 4)

अधिवक्तागण.–Mr. Vineet Kumar Vashistha, For the Petitioners; J.C. to S.C. II, For the Respondents.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ सुने गए।

2. याचीगण ने जामतारा (मिहिजाम) पी॰ एस॰ केस सं॰ 197 वर्ष 2010, जी॰ आर॰ सं॰ 549 वर्ष 2010 में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 17.10.2011 के आदेश के उस अंश के अभिखंडन के लिए इस याचिका को दाखिल किया है जिसके द्वारा गैर-जमानती अपराध के लिए संज्ञान लेने के बाद याचीगण के विरुद्ध गैर जमानती वारंट जारी किए जाने का आदेश दिया गया है।

3. यह प्रतीत होता है कि याचीगण पहले से ही पुलिस जमानत पर थे क्योंकि अन्वेषण पर पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 341, 323, 504, 506/34 के अधीन अपराधों के लिए केवल याचीगण को अलिप्त किया जाना पाया था। उक्त मामले में याचीगण जमानत पर बने हुए थे, किंतु आरोप-पत्र दाखिल किए जाने के बाद अवर न्यायालय ने भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304B के अधीन अपराध के लिए भी संज्ञान लिया है, और उनके विरुद्ध गैर जमानती वारन्ट जारी किया है।

4. इस तथ्य की दृष्टि में कि याचीगण पहले से ही जमानत पर हैं, मेरा सुविचारित मत है कि इस आवेदन को अवर न्यायालय को यह निर्देश देकर निपटाया जा सकता है कि यदि याचीगण अवर न्यायालय के समक्ष उपस्थित होते हैं, अवर न्यायालय ऐसा जमानत बंध पत्र और प्रतिभूति जिसे न्यायालय सुयोग्य और समुचित पाता है प्रस्तुत करने पर जमानत पर याचीगण को निर्मुक्त करेगा।

5. उक्त निर्देश/संप्रेक्षण के साथ यह रिट आवेदन निपटाया जाता है।

6. इस आदेश को याचीगण के व्यय पर फैक्स के माध्यम से संबंधित न्यायालय को संसूचित किया जाए।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

मेसर्स हेवी इंजीनियरिंग कॉरपोरेशन लि॰

cuke

एस्सेम ट्रांसपोर्टर एण्ड कॉंट्रैक्टर प्रा॰ लि॰ एवं एक अन्य

M.A. No. 72 of 2005. Decided on 15th September, 2012.

डब्ल्यू॰ सी॰ केस सं॰ 1 वर्ष 2002 में श्री असीम कुमार दत्ता, पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, राँची द्वारा पारित दिनांक 30 नवंबर, 2004 के आदेश के विरुद्ध।

कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923—धारा 3—नियोजन के क्रम में मृत्यु–अपीलार्थी पर मृतक का प्रमुख नियोक्ता होने के कारण मुआवजा का भुगतान करने का दायित्व डाला गया–तथ्यों और अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री के आकलन के आधार पर पीठासीन अधिकारी के निष्कर्ष दर्ज किए गए हैं और तार्किक कारणों से समर्थित है–आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप का आधार नहीं। (पैराए 12 से 17)

अधिवक्तागण.–Mr. Manish Mishra, For the Appellant; None, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–यह अपील डब्ल्यू॰ सी॰ केस सं॰ 1 वर्ष 2002 में विद्वान पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, राँची द्वारा पारित दिनांक 30 नवंबर, 2004 के आदेश के विरुद्ध है, जिसके द्वारा विद्वान श्रम न्यायालय ने कर्मकार प्रतिकर अधिनियम के प्रावधान के अधीन याची–प्रमुख नियोक्ता पर मुआवजा का भुगतान करने का दायित्व डाला है।

2. मामले का संक्षिप्त तथ्य यह है कि स्व॰ गुजा ओराँव की पत्नी सुखमनिया देवी ने दुर्घटना में अपने पति की मृत्यु के लिए मुआवजा का दावा करते हुए आवेदन दाखिल किया। कथन किया गया था कि गुजा ओराँव एस्सेम ट्रांसपोर्ट एण्ड कॉंट्रैक्टर प्रा॰ लि॰ का कर्मचारी था। दिनांक 4 दिसंबर, 2000 को कोयला यार्ड में काम में लगे रहने के दौरान वह दुर्घटनाग्रस्त हुआ। दुर्घटना तब हुई जब मेसर्स शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी का ट्रक लुढ़क गया और और स्व॰ गुजा ओराँव के शरीर पर विदीर्ण उपहतियों को कारित किया। उसे प्राथमिक उपचार के लिए तुरंत फाउंड्री फोर्ज्ड प्लान्ट ले जाया गया था। बाद में जब गुजा ओराँव को एच॰ ई॰ सी॰ प्लान्ट अस्पताल ले जाया जा रहा था, अस्पताल पहुँचने से पहले उसकी मृत्यु हो गयी। दावा किया गया था कि मेसर्स शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी और ऐस्सेम ट्रांसपोर्टर एण्ड कॉंट्रैक्टर एच॰ इ॰ सी॰ लि॰ के काम में लगे थे और इस प्रकार एच॰ ई॰ ई॰ सी॰ प्रमुख नियोक्ता होने के कारण मुआवजा भुगतान करने का दायी है।

3. अपीलार्थी एच॰ ई॰ सी॰ ने उक्त दावा आवेदन का प्रतिवाद अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए किया कि स्व॰ गुजा ओराँव को एच॰ ई॰ सी॰ के फाउंडरी फोर्ज संयंत्र में उनके संविदात्मक काम के लिए एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ द्वारा काम पर लगाया गया था। पूर्व में, विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 एच॰ ई॰ सी॰ के निर्देश पर कार्यवाही आरंभ की गयी थी। उक्त कार्यवाही में, विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 ने विपक्षी पक्षकार सं॰ 3 एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ को मृतक गुजा ओराँव के विधिक उत्तराधिकारियों को मुआवजा का भुगतान करने को कहा। अनुरोध का अनुपालन करने में एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एंड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ की विफलता पर, मेसर्स एच॰ ई॰ सी॰ ने गुजा ओराँव की मृत्यु में परिणत होने वाली दुर्घटना के बारे में कर्मकारी प्रतिकर अधिनियम के अधीन समुचित प्राधिकारी को सूचित करते हुए कर्मकार प्रतिकर अधिनियम के अधीन ई॰ ई॰ भरा। अपीलार्थी ने उनसे मृतक गुजा ओराँव की मजदूरी का भुगतान करने और मृतक के विधिक उत्तराधिकारियों को मुआवजा राशि का भी भुगतान करने के लिए अनुरोध करते हुए एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ को नोटिस भी भेजा था और यह भी कहा कि अन्यथा मेसर्स एच॰ ई॰ सी॰ समुचित प्राधिकारी के समक्ष मुआवजा राशि जमा करने के लिए और एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एंड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ के बिल के विरुद्ध मुआवजा की उक्त राशि को समायोजित करने के लिए मजबूर था।

4. बाद में, अपीलार्थी के अनुरोध का उत्तर देने में एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ की विफलता पर एच॰ ई॰ सी॰ ने मुआवजा राशि का संगणन किया और 1,39,435=08/- रुपयों की इस राशि को आयुक्त, कर्मकार मुआवजा के समक्ष जमा किया और एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स लि॰ के बिल के विरुद्ध उक्त राशि को समायोजित किया। भुगतान को न्यायालय के निर्णय के अध्यधीन किया गया है। कथन किया गया है कि एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ नियोक्ता होने के नाते मुआवजा राशि का भुगतान करने का दायी है।

5. एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ भी उपस्थित हुआ और लिखित कथन दाखिल किया। अन्य बातों के साथ कथन किया गया था कि मामला किसी दावा के लिए नहीं बल्कि 1,39,435=08/- रुपयों की राशि को न्यायोचित ठहराने के लिए दाखिल किया गया था जिसे एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ के बिल से एकपक्षीय रूप से काट लिया गया था और तात्पर्यित रूप से दावेदार सुखमनिया देवी जिसके पति गुजा ओराँव की मृत्यु दुर्घटना में हो गयी थी को भुगतान योग्य मुआवजा राशि के रूप में जमा किया गया था। उक्त राशि का काटा जाना एकपक्षीय था और अप्राधिकृत था और एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ के विरुद्ध कोई विधिक कदम उठाए गए बिना किया गया था। आगे कथन किया गया था कि गुजा ओराँव की मृत्यु एक अन्य परिवाहक अर्थात् शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी के ट्रक से कुचले जाने के कारण हुई थी। दुर्घटना उस समय हुई जब गुजा ओराँव न तो कर्तव्य पर था अथवा कर्तव्य के लिए आ रहा था अथवा कर्तव्य करके जा रहा था। दुर्घटना के समय गुजा ओराँव शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी के ट्रक से सामान उतार रहा था। वह कर्तव्य पर नहीं था और न ही एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ द्वारा काम पर लगाया गया था। इस प्रकार, उक्त शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी आवश्यक पक्ष है किंतु इसे पक्ष नहीं बनाया गया था। गुजा ओराँव के विधिक उत्तराधिकारियों के साथ दुरभिसंधि में एच॰ ई॰ सी॰ लि॰ के वरीय अधिकारियों द्वारा मामला तब दाखिल किया गया था जब एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ के बिल से पूर्वोक्त राशि काटी गयी थी।

6. उक्त अभिवचनों पर, विद्वान श्रम न्यायालय द्वारा अनेक बिंदुओं को निरुपित किया गया था। पक्षों ने अपना साक्ष्य दिया।

7. विद्वान श्रम न्यायालय ने विस्तार में पक्षों द्वारा दिए गए तथ्यों एवं साक्ष्यों पर विचार किया और विचार के बाद इस निष्कर्ष पर आया कि एच॰ ई॰ सी॰ लि॰ शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी और एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ के संबंध में प्रमुख नियोक्ता था और दुर्घटना के समय मृतक गुजा ओराँव एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ के निकटतम नियोजन में नहीं था।

अपीलार्थी एच॰ ई॰ सी॰ लि॰ कर्मकार प्रतिकर अधिनियम के प्रावधानों के अधीन दावेदार को मुआवजा का भुगतान करने का दायी है। विद्वान पीठासीन अधिकारी ने उप श्रम आयुक्त को एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ को जमा की गयी राशि वापस करने का मुआवजा की मात्रा की संगणना करने का और गुजा ओराँव की मृत्यु की तिथि से राशि की प्राप्ति की तिथि तक 9% वार्षिक ब्याज के साथ दावेदार सुखमनिया देवी को इसको संवितरित करने के लिए एच॰ ई॰ सी॰ लि॰ से इसको वसूल करने का निर्देश दिया।

8. विद्वान पीठासीन अधिकारी के उक्त आदेश से व्यथित होकर, अपीलार्थी ने इस अपील को मुख्यत: इस आधार पर दाखिल किया कि दुर्घटना के समय पर सायं 4 बजे के बाद मृतक मजदूर एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ द्वारा गिराए गए कोयले को तोड़ और अलग कर रहा था। ट्रक जिसने कोयला गिराया था वहाँ नहीं था। मृतक का एक अन्य कंपनी के एक अन्य ट्रक द्वारा धक्का दिया गया था। वह एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ का मजदूर था। विद्वान पीठासीन अधिकारी ने गलत रूप से अभिनिर्धारित किया कि स्व॰ गुजा ओराँव शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी के नियोजन के अधीन था। यह स्वीकृत तथ्य है कि गुजा ओराँव एस्सेम ट्रांसपोटर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ का कर्मचारी था। एच॰ ई॰ सी॰ नियोक्ता नहीं है।

9. मैंने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता को सुना है। प्रत्यर्थीगण की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ।

10. उक्त की दृष्टि में, इस अपील में निर्णय के लिए बिंदु ये हैं कि किसके तुरन्त नियोजन के अधीन मृतक गुजा ओरावँ की दुर्घटना हुई थी और क्या विद्वान अवर न्यायालय सही प्रकार से अपने निष्कर्ष पर आया था?

11. निष्कर्ष पर आने के लिए अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक साक्ष्यों का संवीक्षण करना आवश्यक है। अ॰ सा॰ 1 मो॰ युनूस अपीलार्थी के अधीन कार्यरत सहायक प्रबंधक (कार्मिक) था। अपने अभिसाक्ष्य के पैरा 3 में उसने कथन किया है कि मेसर्स शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी के ट्रक द्वारा मृतक गुजा ओराँव को धक्का दिया गया था। दुर्घटना के बाद, गुजा ओराँव को एच॰ ई॰ सी॰ प्लांट अस्पताल भेजा गया था जहाँ ईलाज के क्रम में उसकी मृत्यु हो गयी। पैरा 29 में उसने कथन किया है कि दुर्घटना के दिन सायं लगभग 4 बजे एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ का कोई ट्रक परिसर में प्रवेश नहीं किया था। पैरा 30 में उसने कथन किया है कि ट्रक जिसने दुर्घटना कारित किया था शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी का था। दुर्घटना के समय पर शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी के ट्रक से माल उतारा जा रहा था। इस प्रकार, वादी द्वारा दिए गए उक्त साक्ष्य से स्पष्ट है कि मृतक गुजा ओराँव दुर्घटना के समय पर मेसर्स शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी के नियोजन के अधीन था।

12. उक्त तर्कपूर्ण साक्ष्य और अपीलार्थी कंपनी की स्वीकृति की दृष्टि में और अन्य साक्ष्यों एवं तथ्यों तथा परिस्थितियों का पूरा आकलन करने के बाद विद्वान श्रम न्यायालय निष्कर्ष पर आया है कि दुर्घटना के समय पर स्व॰ गुजा ओराँव मेसर्स शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी के ट्रक के ढुलाई के काम में लगा हुआ था और वह उक्त मेसर्स शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी के तुरन्त नियोजन में था जिस एच॰ ई॰ सी॰ प्रमुख नियोक्ता था। विद्वान अवर न्यायालय ने आगे स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया है कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर साक्ष्य नहीं है कि प्रश्नगत दुर्घटना एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ के नियोजन के क्रम में हुई थी।

13. अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और साक्ष्यों से, यह भी स्पष्ट है कि अपीलार्थी मेसर्स शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी और एस्सेम ट्रांसपोर्टर्स एण्ड कॉंट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ के कर्मचारियों के संबंध में प्रमुख नियोक्ता

था। चूँकि यह अभिनिर्धारित किया गया है कि मृतक गुजा ओराँव दुर्घटना के समय पर एस्सेम ट्रांसपोर्टस एण्ड कॉट्रैक्टर्स प्रा॰ लि॰ के तुरन्त नियोजन के अधीन नहीं था और वह मेसर्स शंकर ट्रांसपोर्ट कंपनी के नियोजन के अधीन था, अपीलार्थी एच॰ ई॰ सी॰ कर्मकार प्रतिकर अधिनियम के अधीन मुआवजा का भुगतान करने का दायी है जैसा दावेदार ने दावा किया है।

14. उक्त चर्चा की दृष्टि में, विचार के लिए उक्त बिंदुओं का उत्तर अपीलार्थी के विरुद्ध दिया जाता है।

15. मैं पाता हूँ कि अभिलेख पर उपलब्ध समस्त तथ्यों और सामग्रियों पर विद्वान श्रम न्यायालय द्वारा विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। विद्वान पीठासीन अधिकारी के निष्कर्ष अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और सामग्रियों के आकलन के आधार पर दर्ज किए गए हैं और तार्किक कारणों द्वारा समर्थित हैं।

16. मैं विद्वान पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, राँची के आदेश में हस्तक्षेप करने का आधार नहीं पाता हूँ।

17. तद्नुसार यह अपील खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjî dî ejkfB;k ,o Mhî ,uî mikè;k;] U;k;efrx.k

मटलू सिंह एवं अन्य (1575 में)

किनु सिंह (117 में)

cuke

झारखंड राज्य (दोनों में)

Cr. Appeal No. 1575 of 2003 (DB) with 117 of 2008 (D.B.). Decided on 19th June, 2012.

एस॰ टी॰ सं॰ 273 वर्ष 2001/37 वर्ष 2003 में श्री अरुण कुमार दत्ता, प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, बेरमो, तेनूघाट द्वारा पारित दिनांक 4.9.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध और एस॰ टी॰ सं॰ 273 (A) वर्ष 2001 में श्री सी॰ तंती, प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, तेनूघाट, बेरमों द्वारा पारित दिनांक 30.11.2007 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—हत्या–आजीवन कारावास–प्राथमिकी अभिलेख पर नहीं लायी गयी–गवाहों के साक्ष्यों में तात्विक विरोधाभास–मृतक अभिकथित रूप से आपराधिक मामलों में अंतर्ग्रस्त–घटना स्थल पर उनकी उपस्थिति के संबंध में अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में तात्विक अंतर–अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य से भिन्न है–अपीलार्थीगण को संदेह का लाभ देते हुए आक्षेपित निर्णय अपास्त किए गए।

(पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajesh Kumar (in 1575), Mr. Atanu Banerjee (in 117), For the Appellants; A.P.P., For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.–ये दोनों अपीलें एक ही घटना से किंतु विभिन्न निर्णयों से उद्भूत होती हैं। दांडिक अपील सं॰ 1575/03 सत्र विचारण सं॰ 273 वर्ष 2001/37 वर्ष 2003 में अपीलार्थीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्ध करते और उनको आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, तेनूघाट, बेरमो द्वारा पारित दिनांक 4.9.2003 के निर्णय से उद्भूत होती है।

2. दांडिक अपील सं॰ 117 वर्ष 2008 एस॰ टी॰ सं॰ 273(A)/2001 में अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्ध करते और उसको आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, तेनुघाट, बेरमो द्वारा पारित दिनांक 30 नवंबर, 2007 के निर्णय से उद्‌भूत होती है।

3. संक्षेप में, अभियोजन मामला यह है कि अ॰ सा॰ 3 (मो॰ निजामुद्दीन अंसारी) ने दिनांक 7.6.2001 को प्रात: लगभग 9 बजे पुलिस के समक्ष अपना फर्दबयान दर्ज किया कि वह अपने पिता अहमद अंसारी (मृतक) और भाई अजीमुल अंसारी (अ॰ सा॰ 3) के साथ खेत जोतने जा रहा था। जब अहमद अंसारी ने खेत जोतना शुरू किया, अपीलार्थीगण ने अपने हाथों में टांगी लेकर उसको घेर लिया। अपीलार्थी मटलू सिंह ने अहमद अंसारी की गर्दन पर टांगी का वार किया जिस कारण वह दौड़ नहीं सका और गिर गया तब अन्य अपीलार्थीगण उस पर टांगी का वार करने लगे। सूचक भयभीत था और उसने हल्ला किया जिस पर गाँव वाले जमा हुए। गाँव वालों में से कुछ ने अपीलार्थीगण को उपहतियाँ कारित करते देखा था। अभिकथित घटना का हेतु यह था कि अपीलार्थीगण को संदेह था कि सूचक पक्ष पशुओं को भगा ले जाता था।

4. अभियोजन ने 5 गवाहों का परीक्षण किया। अ॰ सा॰ 1, 2 और 3 को चश्मदीद गवाह के रूप में प्रक्षेपित किया गया है किंतु अ॰ सा॰ 1 ने पैराग्राफ 17 में स्पष्टत: कहा कि उसने अ॰ सा॰ 2, 3 और 6 के साथ 100 गज की दूरी से अपीलार्थीगण को घटनास्थल से भागते देखा।

5. अभिलेख पर साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परीक्षण करने के बाद यह विश्वास करना संभव नहीं है कि अ॰ सा॰ 1, 2 और 3 अभिकथित घटना के चश्मदीद गवाह हैं। सूचक के अनुसार, अ॰ सा॰ 1 और 3 पुलिस थाना गए और प्राथमिकी दर्ज किया किंतु ऐसी प्राथमिकी को अभिलेख पर नहीं लाया गया है। गवाहों के साक्ष्य में भी अन्य तात्विक विरोधाभास हैं। अभिलेख पर यही भी आया है कि मृतक आपराधिक मामलों में अंतर्ग्रस्त था। घटनास्थल पर अपनी उपस्थिति के संबंध में अ॰ सा॰ 1, 2 और 3 के साक्ष्य में तात्विक अंतर हैं और ये साक्ष्य आई॰ ओ॰ (अ॰ सा॰ 4) के साक्ष्य के साथ भी अंतर रखते हैं।

6. पक्षों को विस्तारपूर्वक सुनने और सावधानीपूर्वक अभिलेख का परिशीलन करने पर हम अपीलार्थीगण को संदेह का लाभ देने के इच्छुक हैं। तद्‌नुसार, इन दोनों अपीलों में आक्षेपित निर्णयों को अपास्त किया जाता है।

7. अपीलार्थीगण को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उनकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

अंजू देवी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. Revision No. 830 of 2010. Decided on 10th July, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 323, 498A एवं 494—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 397 एवं 401—क्रूरता, उपहति एवं पुनर्विवाह–परिवाद मामले में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा

498A के अधीन अपराध के लिए समस्त नौ अभियुक्तगण के विरुद्ध अभिकथन था जिसे परिवादी-याची द्वारा सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान पर दर्ज उसके बयान में समर्थित किया गया था, किंतु फिर भी केवल भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 494 के अधीन समस्त अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला पाया गया है–आक्षेपित आदेश बिल्कुल कारणरहित आदेश है क्योंकि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर चर्चा किए बिना अवर न्यायालय ने पति और सास के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 323, 498A एवं 494 के अधीन प्रथम दृष्टया अपराध पाया है जबकि समस्त अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 494, के जो पति अथवा पत्नी के जीवनकाल के दौरान पुनर्विवाह करने से संबंधित है, के अधीन प्रथम दृष्टया अपराध पाया गया है–आक्षेपित आदेश न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना पारित किया गया क्योंकि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 494 के अधीन अपराध समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध नहीं बनाया जा सकता है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया और अवर न्यायालय को विधि के अनुरुप नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया था। (पैराएँ 3, 5, 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Ram Lakhan Yadav, For the Petitioner; A.P.P., For the State; M/s S.S. Kumar, Kumari Rashmi, For the O.P. Nos. 2 to 10.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता और प्राईवेट विपक्षी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची टी॰ आर॰ सं॰ 2044 वर्ष 2010 में श्री ए॰ के॰ तिवारी, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, गिरिडीह द्वारा पारित दिनांक 9.4.2010 के आदेश से व्यथित हैं जिसके द्वारा अभियुक्तगण देव नारायण यादव और बिंदा देवी, जो परिवादी के पति और सास हैं, के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 498A और 494 के अधीन अपराध के लिए प्रथम दृष्टया अपराध पाया गया है और जहाँ तक परिवाद याचिका में नामित अन्य अभियुक्तगण का संबंध है, भारतीय दंड संहिता की धारा 494 के अधीन उनके विरुद्ध प्रथम दृष्टया अपराध पाया गया है।

3. याची मामले में परिवादी है और यह निवेदन करते हुए आक्षेपित आदेश को चुनौती दिया है कि परिवादी मामले में भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन अपराध के लिए प्राईवेट ओ॰ पी॰ सहित समस्त नौ अभियुक्तगणों के विरुद्ध अभिकथन था जिसे सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान पर उसके बयान में परिवादी याची द्वारा समर्थित किया गया था किंतु फिर भी केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 494 के अधीन अन्य समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला पाया गया है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश बिल्कुल अवैध है और विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

4. दूसरी ओर, प्राईवेट विरोधी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है।

5. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और आक्षेपित आदेश का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि आक्षेपित आदेश बिल्कुल कारणरहित आदेश है क्योंकि अभिलेख पर उपलब्ध किसी सामग्री पर कोई चर्चा किए बिना अवर न्यायालय ने पति और सास के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 498A और 494 के अधीन प्रथम दृष्टया अपराध पाया है जबकि अन्य समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 494, जो पति अथवा पत्नी के जीवनकाल के दौरान पुनर्विवाह

से संबंधित है, के अधीन प्रथम दृष्टया अपराध पाया गया है। प्रकटत: आक्षेपित आदेश न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना पारित किया गया है क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 494 के अधीन अपराध समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध बनाया नहीं जा सकता है। केवल इस कारण से, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. पूर्वोल्लिखित चर्चा की दृष्टि में, टी॰ आर॰ सं॰ 2044 वर्ष 2010 में श्री ए॰ के॰ तिवारी, न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, गिरिडीह द्वारा पारित दिनांक 9.4.2010 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और अवर न्यायालय को अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर विधि के अनुरुप नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

7. तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

तुलसी दास कुंभकार

cuke

दंडी कुम्हारिन एवं एक अन्य

F.A. No. 45 of 2004. Decided on 3rd July, 2012.

कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19(1) के अधीन अपील।

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955—धाराएँ 13(1) (i) (i-a) (i-b)—तलाक याचिका की खारिजी–पत्नी द्वारा अभिकथित विश्वासघात–ऐसे मामले में किसी युक्तियुक्त कारण के बिना जारकर्म, क्रूरता और अभित्यजन के अभिकथनों को उस व्यक्ति के साक्ष्य द्वारा स्थापित करने की आवश्यकता है जिसने अभिकथन किया है–किंतु याची-अपीलार्थी अपने परीक्षण के दौरान जारकर्म, क्रूरता और अभित्यजन के आधारों में से किसी को सिद्ध करने में विफल रहा जैसा तलाक याचिका में किया गया है–चूँकि युक्तियुक्त कारण के बिना विवाह में जारकर्म, क्रूरता और अभित्यजन के अभिकथनों को स्थापित करने का भार पूरी तरह से उस व्यक्ति पर है जो इनका अभिकथन करता है, याची-अपीलार्थी अपनी ओर से तर्कपूर्ण साक्ष्य देकर इन आधारों में से किसी एक को स्थापित करने में बुरी तरह विफल रहा है–प्रत्यर्थी ने स्वेच्छापूर्वक अपीलार्थी का अभित्यजन नहीं किया था बल्कि स्वयं अपीलार्थी ने दूसरा विवाह किया था और प्रत्यर्थी को यातना और प्रहार के अध्यधीन कर दांपत्य गृह से उसको बाहर निकाला था–अपील खारिज। (पैराएँ 7, 11, 12 एवं 13)

अधिवक्तागण.–Mr. P.K. Mukhopadhyay, For the Petitioner; Mr. Shafique Rahman, For the Respondents.

अपरेश कुमार सिंह, न्यायमूर्ति.–यह प्रथम अपील याची-पति द्वारा अभिधान (वैवाहिक-तलाक) वाद सं॰ 99 वर्ष 1993-24 वर्ष 1995 में पारित दिनांक 19 जुलाई, 2004 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसका तलाक की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए हिंदु विवाह अधिनियम, 1955 की धाराओं 13(1) (i) (i-a) (i-b) के अधीन अपनी पत्नी प्रत्यर्थी सं॰ 1 दंडी कुम्हारिन के विरुद्ध वाद खारिज कर दिया गया है।

2. अपीलार्थी-पति के मामले के मुताबिक उसका विवाह प्रचलित प्रथानुसार ''संघ रूप'' में वर्ष 1969 में प्रत्यर्थी सं॰ 1 के साथ हुआ था और वह उसके साथ दांपत्य गृह में रहने लगा। अभिकथित किया

गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 दंडी कुम्हारिन ने पहले किसी मंसू कुंभकार, प्रत्यर्थी सं॰ 2, के साथ विवाह किया था जिस तथ्य को अपीलार्थी–पति के साथ विवाह करते हुए उसके द्वारा दबाया गया था और उसने अपीलार्थी के साथ विवाह के बाद भी प्रत्यर्थी सं॰ 2 के साथ अवैध संबंध बनाए रखा जिस पर अपीलार्थी को गंभीर आपत्ति थी। परिणामस्वरुप, उसने उसका घर छोड़ दिया और उक्त मंसू कुंभकार के साथ रहने लगी। कथन किया गया है कि वे अंतिम बार जून, 1973 में साथ–साथ रहे थे। अपीलार्थी की ओर से यह कथन भी किया गया है कि उसके द्वारा इस अपीलार्थी के विरुद्ध दाखिल एम॰ पी॰ केस सं॰ 40 वर्ष 1978 में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में प्रत्यर्थी सं॰ 1 को भरण–पोषण अनुज्ञात किया गया था और अपीलार्थी तब से प्रत्यर्थी सं॰ 1 को भरण–पोषण का भुगतान कर रहा था। किसी युक्तियुक्त कारण के बिना जून, 1973 से प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा जारकर्म, गंभीर मानसिक यातना के आधार पर और अपीलार्थी के अभित्यजन के आधार पर भी तलाक वाद दाखिल किया गया था।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 1 उपस्थित हुई थी और प्रत्यर्थी सं॰ 2 के साथ अपने विवाह से संबंधित अभिकथन को स्पष्ट रूप से इनकार करते हुए और यह कथन करते हुए कि वह हिंदू रीति–रिवाजों के अनुसार संपन्न याची–अपीलार्थी की विधित: ब्याहता पत्नी है, विचारण न्यायालय के समक्ष अपना लिखित कथन दाखिल किया। यह कथन भी किया गया है कि विवाह से उनकी दो संतानें हुई थी। प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने अभिकथित किया है कि अपीलार्थी–पति ने वर्ष 1997 में स्व॰ जानकी कुम्हारिन की पुत्री तुलिया कुम्हारिन के साथ चोरी–छिपे दूसरा विवाह किया था और वे दोनों प्रत्यर्थी सं॰ 1 को यातना देने लगे और अंतत: उसकी संतानों के साथ दाम्पत्य गृह से निकाल दिया गया था जिसके बाद वह तलियापुर में अपने मायके में रहने लगी थी। उसकी ओर से आगे कथन किया गया है कि अपीलार्थी का अपनी दूसरी पत्नी से तीन संतानें भी हैं। चूँकि प्रत्यर्थी सं॰ 1 को दांपत्य गृह से निकाल दिया गया था और उसे अपनी संतानों का भरण–पोषण करना था, उसने भरण–पोषण मामला एम॰ पी॰ केस सं॰ 40 वर्ष 1978 दाखिल किया जिसे दिनांक 24.1.1981 को अनुज्ञात किया गया था और याची को 125/- रुपयों की राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था जिसे बाद में 500/- रुपयों तक बढ़ा दिया गया था जिसका भुगतान वह आज की तिथि तक कर रहा था। उसने आगे निवेदन किया है कि उसकी पुत्री का विवाह हो गया है और उसका पुत्र उसके साथ रह रहा है और वह अपने पुत्र के साथ याची–पति के साथ दांपत्य गृह में रहने की इच्छुक है। प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने पूर्वोक्त तथ्यों के आधार पर वाद की खारिजी के लिए प्रार्थना किया है।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 2 मंसू कुंभकार ने अपने लिखित कथन के माध्यम से याची के मामले का जोरदार प्रतिवाद किया और अपने विरुद्ध किए गए समस्त अभिकथनों से इनकार किया और स्पष्ट रूप से खंडन किया कि उसने कभी दंडी कुम्हारिन, प्रत्यर्थी सं॰ 1 के साथ विवाह किया था और कथन किया कि उसका उसके साथ अवैध संबंध नहीं था। उसने स्पष्ट तौर पर कथन किया कि वह एक पल के लिए भी प्रत्यर्थी सं॰ 1 के साथ उसके घर में नहीं रूका था और निवास किया था और न ही वह कभी उसके घर गयी थी। अत: याची द्वारा किया गया जारकर्म का अभिकथन पूरी तरह झूठा है। उसकी ओर से कथन किया गया है कि वस्तुत: अभिकथन ने उसके परिवार की प्रतिष्ठा पर गंभीर नुकसान कारित किया है और यह मानहानि प्रकृति का है। तद्नुसार, उसने वादी की खारिजी के लिए प्रार्थना किया है।

5. अपना मामला सिद्ध करने के लिए याची ने दो गवाह दिया, AW1 के रूप में स्वयं और AWZ के रूप में निवारन सिंह को।

प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने भी स्वयं सहित चार गवाह दिया जो निम्नलिखित है : OPW1 नवनीकांत धीबर; OPW2 चंपा कुम्हारिन, प्रत्यर्थी सं॰ 1 की पुत्री; OPW3 पशुपति बौरी और OPW4 दंडी कुम्हारिन (प्रत्यर्थी सं॰ 1) इसके अतिरिक्त भरण-पोषण मामला सं॰ 40 वर्ष 1978 में निर्णय की प्रमाणित प्रति को प्रदर्श 1 के रूप में प्रदर्शित किया गया था।

6. याची-अपीलार्थी ने अपने परीक्षण और प्रति परीक्षण के दौरान स्वयं का गंभीर रूप से खंडन किया। उसने कथन किया कि चंपा कुम्हारिन दंडी कुम्हारिन प्रत्यर्थी सं॰ 1 से उत्पन्न उसकी पुत्री है। उसने आगे कथन किया है कि वर्ष 1962 में उसका विवाह तुलिया कुम्हारिन के साथ हुआ था जिससे उसको दो पुत्र और एक पुत्री है। उसने अपने प्रति-परीक्षण के पैरा 15 में स्वीकार भी किया है कि वर्ष 1969 में उसने ''संघ रूप'' के अनुसार दंडी कुम्हारिन से विवाह किया था।

7. यह सुनिश्चित सिद्धांत है कि ऐसे मामले में किसी युक्तियुक्त कारण के बिना जारकर्म, क्रूरता और अभित्यजन के अभिकथन को उस व्यक्ति के साक्ष्य द्वारा स्थापित किए जाने की आवश्यकता है जो इन अभिकथनों को करता है किंतु इस मामले में याची-अपीलार्थी अपने परीक्षण के दौरान जारकर्म, क्रूरता और अभित्यजन के आधारों, जैसा तलाक याचिका में लिया गया है, में से किसी को सिद्ध करने में पूरी तरह विफल रहा।

8. ए॰ डब्ल्यू॰ 2 निवारन सिंह, जिसने याची की ओर से अभिसाक्ष्य दिया, का साक्ष्य अपीलार्थी का प्रत्यर्थी सं॰ 1 के साथ विवाह से संबंधित विवाद्यक की सीमा तक तात्विक है और उसने प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा जारकर्म, क्रूरता और अभित्यजन के बारे में कुछ भी कथन नहीं किया है।

9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने चार गवाहों का परीक्षण किया जिसमें वि॰ प॰ सा॰ 1 नवनीकांत धीबर ने स्पष्टत: उसके मामले का समर्थन किया और इनकार किया कि उसने कभी भी दो बार विवाह किया था। वस्तुत: उसने प्राख्यान भी किया कि स्वयं याची-पति ने दूसरा विवाह किया और दंडी कुम्हारिन को दांपत्य गृह से निकाल दिया। उसने दंडी कुम्हारिन का किसी के साथ अवैध संबंध होने से भी इनकार किया। वि॰ प॰ सा॰ 2 चंपा कुम्हारिन, याची और प्रत्यर्थी सं॰ 1 की पुत्री, महत्वपूर्ण गवाह है जिसने अभिसाक्ष्य दिया कि उसकी माता दंडी कुम्हारिन उसके पिता की पहली पत्नी है जिसने दूसरा विवाह करने और उस पर प्रहार करने के बाद उसकी माता को निकाल दिया। उसने अपनी माता प्रत्यर्थी सं॰ 1 के दूसरे विवाह के तथ्य से और उसकी माता का किसी अन्य के साथ अवैध संबंध होने के तथ्य से भी इनकार किया। वि॰ प॰ सा॰ 3 पशुपति बौरी ने प्रत्यर्थी सं॰ 1 के मामले का समर्थन किया और कथन भी किया कि अपीलार्थी ने दूसरा विवाह किया था और तत्पश्चात प्रत्यर्थी सं॰ 1 का अभित्यजन कर दिया था। उसने इस अभिकथन का खंडन भी किया कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने कभी दो बार विवाह किया था अथवा वह अपने विवाह के पहले मूल रूप से मंसू कुभकार के साथ विवाहित थी। उसने इस सुझाव से भी इनकार किया कि दंडी कुम्हारिन ने स्वयं अपना दांपत्य गृह छोड़ दिया था। प्रत्यर्थी सं॰ 1, जिसने स्वयं का परीक्षण वि॰ प॰ सा॰ 4 के रूप में किया, ने अपने मामले का पूरा समर्थन किया है और स्पष्टत: निवेदन किया है कि उसके पति ने दूसरा विवाह किया और तत्पश्चात, उस पर प्रहार करने के बाद उसे उसकी संतानों के साथ बाहर निकाल दिया। उसने यह कथन भी किया है कि एक बार उसके पति द्वारा उसे अपने दांपत्य गृह में पुन: ले जाया गया था किंतु यातना दी गयी थी और अंतत: दांपत्य गृह से निकाल दिया गया था। उसने जारकर्म में रहने के अभिकथन से जोरदार इनकार किया और कथन किया कि वह अपने पति के साथ रहने के लिए अपने दांपत्यगृह में जाने को तैयार है।

10. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 2 मंसू कुंभकार, प्रत्यर्थी सं॰ 1 का अभिकथित प्रेमी, ने स्वयं का परीक्षण किया और आरंभ में ही अभिकथन का खंडन किया कि वह दंडी कुम्हारिन को जानता था अथवा कभी

उसको देखा था। उसने आगे कथन किया कि वर्ष 1962 में उसका विवाह किसी प्रमिला देवी के साथ हुआ था और उसका एक पुत्र भी है। उसने आगे कथन किया है कि याची के आधारहीन अभिकथन ने उसके परिवार की छवि को बिगाड़ा है और वस्तुत: उसे झूठे मामले में आलिप्त किया गया है क्योंकि याची ने उसको झूठे मामले में आलिप्त करने की धमकी दी थी जब उसके भाई के विवाह के समय पर उसके और याची के बीच झगड़ा हुआ था। उसने प्रत्यर्थी सं॰ 1 के साथ अवैध संबंध होने अथवा उसके साथ कभी विवाह करने से भी स्पष्टत: इनकार किया।

11. अभिलेख के परिशीलन से और विद्वान विचारण न्यायालय के निर्णय के परिशीलन पर और पक्षों को सुनने के बाद, यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है कि अपीलार्थी–पति प्रत्यर्थी सं॰ 1 के विरुद्ध तलाक की डिक्री द्वारा विवाह का विघटन प्राप्त करने के लिए किसी युक्तियुक्त कारण के बिना जारकर्म, क्रूरता और अभित्यजन के किसी आधार को स्थापित करने में बुरी तरह विफल रहा है। विचारण न्यायालय ने पक्षों के साक्ष्य पर विस्तारपूर्वक चर्चा किया है और पाया है कि याची ने यह स्वीकार करके कि वर्ष 1962 में उसने स्वयं तुलिया देवी के साथ विवाह किया था जिससे उसको दो पुत्र और एक पुत्री है, स्वयं अपना गंभीर रूप से खंडन किया है। उसे यह स्वीकार करता पाया गया है कि उसने वर्ष 1969 में प्रत्यर्थी सं॰ 1 के साथ विवाह किया। चूँकि युक्तियुक्त कारण के बिना विवाह में जारकर्म, क्रूरता और अभित्यजन के अभिकथनों को स्थापित करने का भार उस व्यक्ति पर है जो यह अभिकथन करता है, याची–अपीलार्थी अपनी ओर से तर्कपूर्ण साक्ष्य देकर इन आधारों में से किसी को स्थापित करने में बुरी तरह विफल रहा।

12. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 1 की ओर से परीक्षित गवाहों ने स्पष्टत: प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा विवाह में जारकर्म, क्रूरता और अभित्यजन के अभिकथन से इनकार किया है। वस्तुत: अपीलार्थी और प्रत्यर्थी सं॰ 1 की पुत्री चंपा कुम्हारिन ने स्वयं कथन किया है कि उसके पिता–अपीलार्थी ने दूसरा विवाह किया और इसके उपरांत, उसे एवं उसकी माता को प्रहार करने के बाद निकाल दिया। समस्त वि॰ प॰ सा॰ ने स्पष्टत: प्रत्यर्थी सं॰ 1 का किसी अन्य व्यक्ति के साथ अवैध संबंध होने से इनकार किया। दूसरी ओर, स्वयं याची के साक्ष्य से स्पष्ट है कि उसने किसी तुलिया देवी के साथ भी विवाह किया था और प्रत्यर्थी सं॰ 1 सहित वि॰ प॰ सा॰ के साक्ष्य से भी स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 को यातना और प्रहार के अध्यधीन किया गया था और अंतत: उसे दांपत्य गृह से निकाल दिया गया था। वस्तुत: एम॰ पी॰ केस सं॰ 40 वर्ष 1978 में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन याची–अपीलार्थी के विरुद्ध प्रत्यर्थी सं॰ 1 को भरण–पोषण अधिनिर्णीत किया गया था जिसका भुगतान याची–अपीलार्थी तत्पश्चात कर रहा है। पूर्वोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने स्वेच्छापूर्वक अपीलार्थी का अभित्यजन नहीं किया था बल्कि स्वयं अपीलार्थी ने दूसरा विवाह किया था और प्रत्यर्थी सं॰ 1 को यातना और प्रहार के अध्यधीन करके उसे दांपत्य गृह से बाहर निकाल दिया था। इस गणना पर भी प्रत्यर्थी सं॰ 1 के विरुद्ध अभित्यजन का अभिकथन संपोषणीय नहीं है।

13. पूर्वोक्त चर्चा की दृष्टि में और अवर न्यायालय के अभिलेख का परिशीलन करने पर और आक्षेपित निर्णय के परिशीलन के बाद हमारा सुविचारित दृष्टिकोण है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से याची–अपीलार्थी के वैवाहिक वाद को खारिज कर दिया और आक्षेपित निर्णय में कोई अवैधता अथवा ताथ्यिक दुर्बलता नहीं है जिसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता है। तद्नुसार, यह प्रथम अपील खारिज किया जाता है।

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

गुन्ना देवी उर्फ गुना देबी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (Cr.) No. 341 of 2010. Decided on 25th June, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 190—अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध संज्ञान लेने के लिए निर्देश इप्सित करते हुए आवेदन दाखिल–पुलिस ने केवल छह अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया है और अवर न्यायालय ने अपराधों जिसे पुलिस ने सत्य पाया है के लिए छह अभियुक्तगण के विरुद्ध संज्ञान लिया है–याची को विधि में अन्य उपचार उपलब्ध है–अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश मान्य ठहराया गया–आवेदन खारिज।

(पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Md. Sajid Yunus Warsi, For the Petitioner; J.C. to S.C. III, For the State-Respondent.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने इस रिट याचिका में सदर पी॰ एस॰ केस सं॰ 1177/2008 जी॰ आर॰ सं॰ 4361/2008 के तत्सम, से उद्‌भूत होनेवाले टी॰ आर॰ सं॰ 1216 वर्ष 2009 में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 25.5.2009 के आदेश को चुनौती दिया है जिसके द्वारा मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग ने भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 147/148/149/448/323/324/504 के अधीन अपराध के लिए केवल छह अभियुक्तगण के विरुद्ध संज्ञान लिया है और तीन अन्य अभियुक्तगण जिन्हें प्राथमिकी में नामित किया गया था के संबंध में कोई आदेश पारित नहीं किया है। यह प्रार्थना भी की गयी है कि समस्त नौ अभियुक्तगण के विरुद्ध संज्ञान लेने का निर्देश अवर न्यायालय को दिया जाए।

3. यह प्रतीत होता है कि याची भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 147/148/149/427/448/323/324/307/379/376 के अधीन अभिकथित अपराध के लिए जी॰ आर॰ सं॰ 4361 वर्ष 2008 के तत्सम हजारीबाग सदर पी॰ एस॰ केस सं॰ 1177/2008 में सूचक है जिसमें कुल मिलाकर नौ व्यक्तियों को अभियुक्त बनाया गया था। यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण के बाद पुलिस ने भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 147/148/149/448/323/324/504 के अधीन अपराध के लिए केवल छह अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल किया है जिनके विरुद्ध अवर न्यायालय द्वारा संज्ञान लिया गया है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पुलिस द्वारा समुचित अन्वेषण नहीं किया गया था और जानबूझकर अन्य तीन अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया था। तद्‌नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि इस तथ्य की दृष्टि में कि भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 307, 379, 376 के अधीन अपराध के लिए समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध सामग्री है, विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी को उन अपराधों के लिए भी और अन्य तीन अभियुक्तगण के विरुद्ध भी संज्ञान लेना चाहिए था।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने के बाद, मैं पाता हूँ कि अन्वेषण के बाद पुलिस ने केवल छह अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया है और अवर न्यायालय ने उन अपराधों जिन्हें पुलिस ने सत्य पाया है के लिए छह अभियुक्तगण के विरुद्ध संज्ञान

लिया है। याची को पुलिस द्वारा किए गए अन्वेषण से अथवा संज्ञान लेने वाले आक्षेपित आदेश से व्यथित होने पर विधि में अन्य उपचार उपलब्ध है।

6. इस प्रकार, मैं अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। मैं इस आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

गोबर्धन सिंह चौधरी

cuke

झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य

W.P. (S) No. 2648 of 2006. Decided on 10th July, 2012.

सेवा विधि–वसूली–यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं है कि याची ने अपना वेतन बिल पारित करवाने में धोखा, दुर्व्यपदेशन किया अथवा भूमिका निभायी–आक्षेपित निर्णय में भी कोई विनिर्दिष्ट निष्कर्ष नहीं है कि याची ने कभी भी अपने वेतन बिलों को पारित करवाने में कोई धोखा, दुर्व्यपदेशन किया अथवा भूमिका निभायी–आक्षेपित आदेश में किया गया एकमात्र संप्रेक्षण यह है कि याची, जो स्वयं सहायक लेखाकार है, को इस तथ्य से अवगत होना चाहिए था कि ऐसा भत्ता केवल उन कर्मचारियों को भुगतान योग्य है जिन्होंने हिंदी नोटिंग एवं ड्राफ्टिंग परीक्षा उत्तीर्ण किया है और याची को उस राशि को स्वीकार नहीं करना चाहिए था जो उसे भुगतान योग्य नहीं है–किंतु आक्षेपित आदेश में कोई संप्रेक्षण नहीं है कि याची इस तथ्य से अवगत था और उसने दुर्भाव से अधिक राशि प्राप्त किया था–याची वर्ष 2005 में सेवानिवृत्त हुआ–दस वर्षों तक अधिक राशि के भुगतान का पता क्यों नहीं लगाया जा सका था, इसे आक्षेपित आदेश में अथवा प्रतिशपथ पत्र में विभाग द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया है–इप्सित की गयी वसूली विधि में संपोषित नहीं की जा सकती है–रिट याचिका अनुज्ञात।

(पैराएँ 4, 8 से 12)

निर्णयज विधि.–2006 (4) JLJR 558; (2009) 3 SCC 475—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Santosh Kumar Gautam, For the Petitioner; M/s Rajan Raj, Rohit, For the J.S.E.B..

आदेश

याची सहायक लेखाकार के रूप में झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड में पदस्थापित था। याची को दिनांक 16.7.1979 से दिनांक 20.11.1994 की अवधि के दौरान हिंदी नोटिंग एवं ड्राफ्टिंग परीक्षा में उत्तीर्ण कर्मचारी के भुगतान योग्य भत्तों का भुगतान किया गया था। विद्युत बोर्ड ने दिनांक 16.7.1979 से दिनांक 20.11.1994 तक की अवधि के लिए याची को भुगतान की गयी अधिक राशि की वसूली के लिए दिनांक 12.5.2004 का आदेश (याचिका का परिशिष्ट-1) यह कहते हुए पारित किया है कि इस अवधि के दौरान याची केवल उन कर्मचारियों को भुगतान योग्य, जिन्होंने हिंदी नोटिंग एवं ड्राफ्टिंग परीक्षा उत्तीर्ण किया था, भत्तों का हकदार नहीं था। व्यथित होकर, याची ने इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 3413 वर्ष 2004 दाखिल किया जिसे दिनांक 22.7.2004 को इस न्यायालय द्वारा निपटाया गया था

और याची को महा-प्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ धनबाद के समक्ष नया अभ्यावेदन देने का निर्देश दिया गया था जिस पर प्रत्यर्थी सं॰ 2 विधि के अनुरुप नया आदेश पारित करेंगे।

2. दिनांक 22.7.2004 के आदेश के अनुसरण में याची ने महा-प्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰, धनबाद के समक्ष अभ्यावेदन (रिट याचिका का परिशिष्ट-4) दाखिल किया। महा-प्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰, धनबाद ने यह संप्रेक्षण करते हुए दिनांक 23.2.2006 के आक्षेपित आदेश के तहत अभ्यावेदन को अस्वीकार कर दिया है कि याची (कर्मचारी) उस अधिसूचना से अवगत था कि भत्ता केवल उन कर्मचारियों को भुगतान योग्य था जो हिंदी नोटिंग एवं ड्राफ्टिंग परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं। अत: याची जो ऐसी परीक्षा में केवल दिनांक 20.11.1994 को उत्तीर्ण हुआ था दिनांक 16.7.1979 से दिनांक 20.11.1994 तक के प्रभाव के मध्यक्षेपी अवधि के लिए भत्तों का हकदार नहीं था।

3. मैंने याची के विद्वान अधिवक्ता श्री संतोष कुमार गौतम और श्री रोहित द्वारा सहायित विद्युत बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता श्री राजन राज को सुना है।

4. संपूर्ण अभिलेख का परिशीलन करने पर, मेरा दृढ़ मत है कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं है कि याची ने अपने वेतन बिलों को पारित करवाने में कोई धोखा, दुर्व्यपदेशन किया है अथवा भूमिका निभायी है। आक्षेपित निर्णय में भी कोई विनिर्दिष्ट निष्कर्ष नहीं है कि याची ने अपने वेतन बिलों को पारित करवाने में कोई दुर्व्यपदेशन, धोखा किया है अथवा भूमिका निभायी है। आक्षेपित आदेश में किया गया एकमात्र संप्रेक्षण यह है कि याची जो स्वयं सहायक लेखाकार था, को इस तथ्य से अवगत होना चाहिए था कि ऐसे भत्ते केवल उन कर्मचारियों को भुगतान योग्य है जो हिंदी नोटिंग एवं ड्राफ्टिंग परीक्षा में उत्तीर्ण हुए है। अत:, याची को उस राशि को स्वीकार नहीं करना चाहिए था जो उसको भुगतान योग्य नहीं है।

5. दूसरी ओर, प्राधिकारीगण के समक्ष और इस न्यायालय के समक्ष भी याची का आधार यह रहा है कि वह अवगत नहीं था कि भत्ता केवल उनको भुगतान योग्य था जो हिंदी नोटिंग एवं ड्राफ्टिंग परीक्षा में उत्तीर्ण हुए थे। महा-प्रबंधक ने याची के इस आधार को यह कहते हुए ठुकरा दिया कि विधि से अनभिज्ञता कोई बचाब नहीं है। किंतु आक्षेपित आदेश में कोई संप्रेक्षण नहीं है कि याची इस तथ्य से अवगत था और उसने स्वयं दुर्भाव के साथ अधिक राशि प्राप्त किया है।

6. मुकदमें के पहले चक्र में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 22.7.2004 के आदेश का पैराग्राफ 3 का पठन निम्नलिखित है:-

> *^^çR;Fkhx.k d fy, mifLFkr fo}ku vfèkoDrk Jh lkjHk v#.k fuonu djr g fd çrhr gkrk g fd ;kph u ;g dgr g, vH;konu (ifjf'k"V&5) nkf[ky fd;k g fd ml o"k 1980 l o"k 1993 d chp fgnh ukfVx ,o Mkf¶Vx ijh{kk mÙkh.k dju dh vko';drk d ckj e dHkh ugh lfpr fd;k x;k FkkA bld vfrfjDr] ;kph dk ekeyk ;g g fd mlu mldk oruof) d Hkxrku d fy,] tk lekU; Øe e ml nh x;h Fkh] vH;konu ugh fn;k Fkk vFkok n0; in'ku ugh fd;k FkkA vr% mUgku fuonu fd;k fd lcfèkr çR;Fkh ekey ij fopkj djx vkj ;kph d vH;konu ij vko';d vkn'k ikfjr djxA***

7. विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा किए गए संप्रेक्षण की दृष्टि में महा-प्रबंधक-सह-मुख्य अभियंता, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ विनिर्दिष्ट निष्कर्ष दर्ज करने के लिए कर्तव्यबद्ध थे कि क्या याची ने कभी अपने वेतन बिलों को पारित करवाने में कोई सक्रिय भूमिका निभायी थी या धोखा अथवा दुर्व्यपदेशन किया था।

8. पूछे जाने पर, पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निष्पक्षत: निवेदन किया कि भुगतान किए जाने के पहले वेतन बिल अनेक मेजों से गुजरते हैं और कोई भी इस गलती का पता नहीं लगा सका था कि भत्ता गलत रूप से अनुमोदित किया गया था और याची को भुगतान किया गया था। इस गलती का पता पहली बार दस वर्षों बाद वर्ष 2004 में हुआ था।

9. इस न्यायालय की खंडपीठ ने **नंद किशोर पांडे बनाम झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य,** 2006 (4) JLJR 558, मामले में लगभग सदृश तथ्यों में इप्सित की गयी अधिक राशि की वसूली अभिखंडित कर दिया है।

10. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **सैयद अब्दुल कादिर एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (2009)3 SCC 475,** में निर्णय दिया है कि यदि प्राधिकारीगण ने अधिसूचना, नियमों या विनियमनों की गलत व्याख्या करके कर्मचारी का वेतन नियत किया है और कर्मचारी अधिक राशि पाने के लिए कोई धोखा अथवा दुर्व्यपदेशन करने का दोषी नहीं है और अधिक राशि के भुगतान की गलती पर्याप्त रूप से लंबी अवधि तक के लिए बनी रही है, इस प्रकार कर्मचारी को भुगतान की गयी राशि को कर्मचारी से उसकी गलती के बिना वसूला नहीं जाना चाहिए।

11. याची विद्युत बोर्ड की सेवा से वर्ष 2005 में सेवानिवृत्त हुआ। अधिक राशि के भुगतान की गलती का पता दस वर्षों तक क्यों नहीं लगाया जा सका था, इसे विभाग द्वारा न तो आक्षेपित आदेश और न ही प्रतिशपथपत्र में स्पष्ट किया गया है।

12. अत:, इप्सित वसूली को विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। परिणामस्वरुप, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। यह आदेश दिया जाता है कि आक्षेपित आदेश के अनुसरण में याची से कोई वसूल नहीं की जाएगी। आक्षेपित आदेश के अनुसरण में इस प्रकार वसूल की गयी राशि का भुगतान याची को सकारात्मक रूप से आज के दिन से 60 दिनों के भीतर कर दिया जाएगा जिनमें विफल रहने पर याची ऐसी वसूली की तिथि से याची को किए गए वास्तविक वापसी की तिथि तक 12% प्रतिवर्ष की दर पर ब्याज का हकदार होगा।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

संतोष किस्कू

cuke

मकलू हेम्ब्रम एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 1017 of 2010. Decided on 9th July, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण–अवर न्यायालय ने याची को अपनी अभित्यक्त पत्नी को भरण-पोषण के रूप में 1200/- रुपयों का भुगतान करने का निर्देश दिया–याची की ओर से परीक्षित गवाहों ने पक्षों के बीच विवाह से इनकार किया है–अवर न्यायालय ने कथन किया कि जब याची ने विवाह से इनकार किया, यह सिद्ध करने का भार उस पर था कि विपक्षी पक्षकारों का पति और पिता कौन था–अवर न्यायालय ने याची पर प्रमाण का भार डालने में स्वयं को अपनिर्देशित किया जबकि विपक्षी पक्षकारों की ओर से प्राख्यान यह था कि वि॰ प॰ सं॰ 1 याची की पत्नी है और वि॰ प॰ सं॰ 2 याची का पुत्र है–अभिलेख पर तर्कपूर्ण साक्ष्य लाकर गवाहों जिन्होंने पक्षों के बीच विवाह देखा था और/अथवा पुजारी

जिसने विवाह संपन्न करवाया था, का परीक्षण कर विवाह सिद्ध करने अथवा किसी तर्कपूर्ण दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा विवाह सिद्ध करने का भार वि॰ प॰ सं॰ 1 पर था–ऐसा नहीं किया गया था–गवाहों का तदवचन मात्र कि पक्षों का एक-दूसरे के साथ विवाह हुआ था और विवाह से पुत्र भी हुआ था, पक्षों के बीच विवाह का प्रमाण नहीं हो सकता है–आक्षेपित आदेश अपास्त–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Md. Asadul Haque, For the Petitioner; M/s Sant Kr. Jha, Ashok Kr. Sinha, For the Opp. Parties.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और विपक्षी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने दांडिक विविध केस सं॰ 24 वर्ष 2008 में विद्वान प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 15.7.2010 के निर्णय को चुनौती दिया है जिसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में अवर न्यायालय ने याची को अपनी अभित्यक्त पत्नी को भरण-पोषण के रूप में 1200/- रुपया प्रतिमाह का भुगतान करने का निर्देश दिया है।

3. आक्षेपित निर्णय के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन आवेदन वि॰ प॰ सं॰ 1 द्वारा स्वयं को याची की विधित: विवाहिता पत्नी का दावा करते हुए और यह कथन करते हुए दाखिल किया गया था कि विवाह लगभग 13 वर्ष पहले हुआ था और विवाह से उसे चार वर्षीय पुत्र भी हुआ था। अभिकथित किया गया है कि याची तत्पश्चात किसी अन्य लड़की से प्रेम करने लगा था जिससे उसने विवाह किया था और याची सं॰ 1 को उसके पुत्र के साथ उसके दांपत्य गृह से निकाल दिया था।

4. यह प्रतीत होता है कि याची ने अवर न्यायालय में अपना कारण पृच्छा दाखिल किया था जिसमें याची ने यह कथन करते हुए विवाह से इनकार किया था कि वि॰ प॰ उसके लिए पूरे अजनबी हैं और उनका वि॰ प॰ के साथ कोई संबंध नहीं था। उसने कथन किया है कि उसकी एक पत्नी है जिसके साथ वह रह रहा है और विरोधी पक्षकार ने केवल याची से धन ऐंठने के लिए इस मामले को दाखिल किया है। आक्षेपित निर्णय से आगे प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय में वि॰ प॰ सं॰ 1 जो अवर न्यायालय में याची थी, ने तीन गवाहों का परीक्षण किया था, किंतु गवाहों में से किसी ने पक्षों के बीच विवाह सिद्ध नहीं किया था। अ॰ सा॰ 1 और 2, जो वि॰ प॰ सं॰ 1 के गाँव वाले थे, ने केवल यह कथन किया कि वि॰ प॰ सं॰ 1 का विवाह याची के साथ हुआ था और उनका एक पुत्र था। अ॰ सा॰ 3 याची का अभिकथित पुत्र है जो सातवीं कक्षा का एक छात्र है एवं वह पक्षों के बीच विवाह का एक साक्षी नहीं हो सकता। अ॰ सा॰ 4 स्वयं याची है एवं उसने मात्र यह कथन किया है कि उसका विवाह संतोष किस्कू के साथ हुआ था और उनका एक पुत्र था। याची की ओर से परीक्षित गवाहों ने पक्षों के बीच विवाह से इनकार किया है।

5. अवर न्यायालय ने आदेश में कथन किया है कि जब विरोधी पक्षकार (वर्तमान याची) ने विवाह से इनकार किया, यह सिद्ध करने का भार उस पर था कि अवर न्यायालय में याचीगण का पति और पिता कौन था।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय पूर्णत: अवैध है और विधि की दृष्टि में से संपोषित नहीं किया जा सकता है क्योंकि अवर न्यायालय ने अवैध रूप से पक्षों के बीच विवाह सिद्ध करने का भार याची पर डाल दिया है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपना मामला सिद्ध करने का भार विपक्षी पक्षकारों पर था जो अवर न्यायालय में याचीगण थे और तद्नुसार आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपुष्ट नहीं किया जा सकता है।

7. दूसरी ओर, विपक्षी पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वि॰ प॰ सं॰ 1 ने अवर न्यायालय में विवाह सिद्ध किया था और इस प्रकार वे अवर न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत भरण-पोषण के हकदार थे। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है और इसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं अवर न्यायालय द्वारा पारित निर्णय से पाता हूँ कि इस मामले में याची द्वारा विवाह से इनकार किया गया है और उसने कथन किया था कि वि॰ प॰ उसके लिए पूरे अजनबी है और उसका उनसे कोई संबंध नहीं था। उसने कथन किया है कि उसकी एक पत्नी है जिसके साथ वह रह रहा है और विरोधी पक्षकार ने केवल याची से धन ऐंठने के लिए यह मामला दाखिल किया है। आक्षेपित निर्णय से आगे प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय में, वि॰ प॰ सं॰ 1, जो अवर न्यायालय में याची थी, ने तीन गवाहों का परीक्षण किया था किंतु गवाहों में से किसी ने पक्षों के बीच विवाह सिद्ध नहीं किया था। अ॰ सा॰ 1 और 2 जो वि॰ प॰ सं॰ 1 के गाँववाले थे, ने केवल यह कथन किया है कि वि॰ प॰ सं॰ 1 का विवाह याची के साथ हुआ था और उनका एक पुत्र था। यह प्रतीत होता है कि वे पक्षों के बीच हुए विवाह के गवाह नहीं थे। अ॰ सा॰ 3 याची का अभिकथित पुत्र है जो कक्षा सात का छात्र है और वह पक्षों के बीच विवाह का गवाह नहीं हो सकता है। अ॰ सा॰ 4 स्वयं वि॰ प॰ सं॰ 1 है और उसने केवल यह कथन किया है कि उसका विवाह संतोष किस्कू के साथ हुआ था और उनके विवाह से एक पुत्र भी था। याची की ओर से परीक्षित गवाहों ने पक्षों के बीच विवाह से इनकार किया है। अवर न्यायालय ने आदेश में कथन किया है कि जब याची ने विवाह से इनकार किया, यह सिद्ध करने का भार उस पर था कि विपक्षी पक्षकारों का पति और पिता कौन था। इस प्रकार यह प्रकट है कि अवर न्यायालय ने याची पर प्रमाण का भार डालने में स्वयं को पूरी तरह अपनिदेशित किया है जबकि विरोधी पक्षकारों की ओर से प्राख्यान था कि वि॰ प॰ सं॰ 1 याची की पत्नी है और वि॰ प॰ सं॰ 2 याची का पुत्र है। मामले के उस दृष्टिकोण में, पक्षों के बीच विवाह सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर तर्कपूर्ण साक्ष्य लाकर, गवाहों जिन्होंने पक्षों के बीच विवाह को देखा था और/अथवा पुजारी जिसने विवाह संपन्न करवाया था, का परीक्षण कर अथवा अन्य तर्कपूर्ण दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा विवाह सिद्ध करने का भार वि॰ प॰ सं॰ 1 पर था। गवाहों का तद्वचन मात्र कि दोनों पक्षों का एक-दूसरे के साथ विवाह हुआ था और विवाह से उनका एक पुत्र भी था, पक्षों के बीच विवाह का प्रमाण नहीं हो सकता है। ऐसा नहीं होने पर, याची पर यह सिद्ध करने का भार नहीं डाला जा सकता है कि वि॰ प॰ का पति और पिता कौन था। विवाह और याची से पुत्र उत्पन्न होने को सिद्ध करने का भार विरोधी पक्षकारों पर था जो अवर न्यायालय में याचीगण थे।

9. पूर्वोल्लिखित चर्चा की दृष्टि में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि विरोधी पक्षकार, जो अवर न्यायालय में याचीगण थे, पक्षों के बीच विवाह और इससे उत्पन्न पुत्र सिद्ध करने में विफल रहे और इस प्रकार याची पर विरोधी पक्षकारों ने भरण-पोषण के लिए धन देने की जिम्मेदारी नहीं डाली जा सकती है। इस प्रकार, आक्षेपित निर्णय बिल्कुल अवैध है और विधि की दृष्टि में इसे संपोषित नहीं किया जा सकता है। अत: दांडिक विविध केस सं॰ 24 वर्ष 2008 में विद्वान प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 15.7.2010 के आक्षेपित निर्णय को एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

पराग बुबना

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Criminal Misc. Petition No. 4735 of 2001. Decided on 14th June, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 420 एवं 120B सह-पठित परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल—आपूर्ति किए गए मालों के भुगतान की और जारी चेक का अनादर—संज्ञान—जब तक प्रवंचना नहीं है, छल का अपराध आकृष्ट कभी नहीं होता है—ऐसी प्रवंचना संविदा के आरंभ से ही होनी चाहिए—भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406 अथवा 420 के अधीन अपराध नहीं बनाया गया क्योंकि याची ने कभी नहीं अभिकथित किया है कि परिवादी को गैरईमानदार रूप से और कपटपूर्वक सामग्री से अलग होने के लिए उत्प्रेरित किया गया था जिसके लिए अभिकथित रूप से कोई भुगतान नहीं किया गया था—किंतु नोटिस की सांविधिक आवश्यकता के अभिकथित अननुपालन के संबंध में आवश्यक अभिवचन नहीं हैं—केवल आदेश का वह भाग जिसके द्वारा भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406 एवं 420 के अधीन अपराधों का संज्ञान लिया गया है, अपास्त किया गया।

(पैराएँ 10, 12, 16 से 27)

निर्णयज विधि.—(1992) Supp. (1) SCC 335; (2011) 1 SCC 74; (2006)6 SCC 736—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. S.D. Sanjay, For the Petitioner; APP, For the State; Mr. G.M. Mishra, For the TISCO.

न्यायालय द्वारा.—याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. यह आवेदन दिनांक 16.11.2000 के आदेश जिसके द्वारा और जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420 सह-पठित धारा 120B के अधीन और परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन भी दंडनीय अपराधों के लिए याची के विरूद्ध संज्ञान लिया गया है, सहित C-1 केस सं॰ 809 वर्ष 2000 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है।

3. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों पर आने से पहले परिवादी के मामले पर गौर करने की आवश्यकता है।

4. परिवादी वि॰ प॰ सं॰ 2 ने यह कथन करते हुए परिवाद दाखिल किया कि परिवादी मेसर्स टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी लि॰ एस॰ टी॰ पी॰ ट्यूब्स सहित आयरन एवं स्टील के उत्पादों के निर्माण और विक्रय में लगी हुई है।

5. आगे मामला है कि अपने उत्पाद के विपणन के प्रयोजन से परिवादी कंपनी ने मेसर्स सुप्रभात प्रा॰ लि॰, न्यू डाकबंगला रोड, पटना का परिवादी कंपनी के उत्पाद के वितरण के लिए अपने वितरक के रूप में नियुक्त किया जिसमें यह याची समय के प्रासंगिक बिंदु पर इसके निदेशकों में से एक था। तद्नुसार, परिवादी कंपनी अपने विक्रय कार्यालय के माध्यम से याची को उधार पर और भुगतान करने पर भी इसके विक्रय के लिए एस॰ टी॰ पी॰ ट्यूब प्रदान किया करती थी।

6. समय के क्रम में, अभियुक्त कंपनी द्वारा परिवादी कंपनी को भुगतान योग्य बकाया दिनांक 29.5.2000 को 1,28,17,126.13/- रुपया हो गया।

7. आगे मामला है कि आंशिक भुगतान करने के लिए अभियुक्त संदीप बुबना ने अपनी ओर से और याची सहित अन्य की ओर से भी बैंक ऑफ इंडिया, मुख्य शाखा, पटना का दिनांक 10.7.2000 को 1,27,27,126.13/- रुपयों का चेक परिवादी कंपनी को दिया गया था। जमा करने पर यह अपर्याप्त निधि के कारण बाउंस हो गया जिसकी सूचना बैंकर द्वारा दिनांक 17.7.2000 के मेमो के तहत परिवादी को दी गयी थी।

8. इस पर, दिनांक 24.7.2000 को दो रजिस्टर्ड पोस्ट के अधीन दिनांक 22 जुलाई, 2000 का मांग नोटिस भेजा गया था किंतु यह तामील हुए बिना लौट गया था। किंतु, अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तगण को मांग की जानकारी थी और इसके बावजूद अभियुक्तगण परिवादी कंपनी को 1,27,27,126.13/- रुपयों की राशि का भुगतान करने में विफल रहे।

9. ऐसे अभिकथन पर, परिवाद दर्ज किया गया था जिसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420 सह-पठित धारा 120B के अधीन और परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन भी C-1 केस सं॰ 809 वर्ष 2000 के रूप में रजिस्टर्ड किया गया था। जाँच करने पर, न्यायालय ने प्रथम दृष्ट्या मामला बनता देखकर पूर्वोक्त धाराओं के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया। वह आदेश चुनौती के अधीन है।

10. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एस॰ डी॰ संजय निवेदन करते हैं कि परिवाद में किए गए संपूर्ण अभिकथन को सत्य मानते हुए भी भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406 अथवा 420 के अधीन अपराध नहीं बनता है क्योंकि याची ने परिवादी को सामग्री, जिसके लिए अभिकथित रूप से भुगतान नहीं किया गया था, से अलग होने के लिए गैरईमानदार रूप से और कपटपूर्वक उत्प्रेरित कभी नहीं किया था और तद्द्वारा भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 अथवा 420 के अधीन अपराध नहीं बनता है।

11. मैं याची की ओर से किए गए निवेदन में सार पाता हूँ।

12. कथन किया जाए कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल, (1992) Supp(1) SCC 335** के मामले में उदाहरण के रूप में मामलों की कतिपय कोटियों को अधिकथित किया है जिसमें किसी संहिता की प्रक्रिया का दुरूपयोग रोकने के लिए अथवा अन्यथा न्याय का उद्देश्य सुरक्षित करने के लिए संहिता की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है। ऐसी कोटियों में से एक निम्नलिखित है:–

> *^^tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, vfHkdFku] Hky gh mUg mud idV&eY; ij fy;k tkrk g vkj mudh lI.krk e Lohdkj fd;k tkrk g] çFke n"V;k dkb vijkèk xfBr ugh djr g vFkok vfHk;Dr d fo:) ekeyk ugh cukr gA**

13. अधिकथित सिद्धांत के संदर्भ में, यह विचार करने की आवश्यकता है कि क्या परिवाद में किए गए अभिकथन छल का अपराध गठित करते हैं या नहीं?

14. भारतीय दंड संहिता की धारा 415 के अधीन छल का अपराध परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> ***^^Ny-***&*tk dkb fdlh 0;fDr l çopuk dj ml 0;fDr dk] ftl bl çdkj çofpr fd;k x;k g] diVio d ;k cbekuh l mRçfjr djrk g fd og dkb lifÙk fdlh 0;fDr dk ifjnÙk dj n] ;k ;g lEefr n n fd dkb 0;fDr fdlh lifÙk dk j[k ;k lk'k; ml*

*0;fDr dk] ft l bl çdkj çofpr fd;k x;k g] mRçfjr djrk g fd og , l dkb dk; dj] ;k dju dk yki dj] ft l og ;fn ml gj çdkj çofpr u fd;k x;k gkrk rk] u djrk ;k dju dk yki u djrk] vkj ft l dk; ;k yki l ml 0;fDr dk 'kkjhfjd] ekufld] [;kfr lcèkh ;k lkifÙkd udlku ;k vigkfu dkfjr gkrh g] ;k dkfjr gkuh lHkk0; g] og ^^Ny** djrk g] ;g dgk tkrk gA**

15. इसके पठन से यह प्रतीत होता है कि छल का अपराध गठित करने के लिए निम्नलिखित अवयव आवश्यकत: होने चाहिए:–

(1) fdlh 0;fDr dk çofpr djd diVi.k vFkok xjbekunkjh iod mRifjr fd;k x;k gkuk pkfg,A

(2)(a) bl çdkj çofpr 0;fDr dk fdlh lifÙk dk fdlh 0;fDr dk nu d fy, mRçfjr fd;k tkuk pkfg, vFkok fdlh 0;fDr dk dkb lifÙk viu ikl j[ku dh lgefr nuh pkfg, vFkok

(b) bl çdkj çofpr 0;fDr dk vk'k;iod fdlh pht dk dju vFkok ugh dju d fy, mRçfjr fd;k tkuk pkfg, tk og djrk vFkok ugh djrk ;fn ml bl çdkj çofpr ugh fd;k x;k gkrkA

(3) 2(b) }kjk vkPNkfnr ekeyk e ÑR; vFkok yki , l gkuk pkfg, tk mRçfjr fd, x, 0;fDr d 'kjhj] çfr"Bk vFkok lifÙk dk udlku vFkok gkfu dkfjr djrk g vFkok dkfjr dju dh lHkkouk gA

16. इस प्रकार, छल का अपराध गठित करने के लिए प्रथम आवश्यक तत्व अभियुक्त द्वारा परिवादी की प्रवंचना है। जब तक प्रवंचना नहीं है, छल का अपराध आकृष्ट नहीं होता है। प्रवंचित किए जाने के बाद प्रवंचित व्यक्ति को कुछ करने अथवा नहीं करने के लिए उत्प्रेरित होना चाहिए। साथ ही, अनेक मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रवंचना संविदा के आरंभ से होनी चाहिए।

17. अभिकथन के संदर्भ में सिद्धांत लागू करते हुए प्रतीत होता है कि छल का अपराध गठित करने वाले प्रवंचना के प्रथम तत्व की कमी है क्योंकि परिवाद में किए गए अभिकथन कहीं नहीं उपदर्शित करते हैं कि याची द्वारा किसी तरीके से परिवादी को प्रवंचित किया गया था।

18. इरिडियम इंडिया टेलीकॉम लि॰ बनाम मोटोरोला इन कॉरपोरेटेड एवं अन्य, (2011)1 SCC 74, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 415 को ध्यान में लेते हुए अभिनिर्धारित किया है कि धारा के दोनों भागों के अधीन छल के अपराध के लिए प्रवंचना आवश्यक अवयव है।

19. भारतीय तेल निगम बनाम एन॰ ई॰ पी॰ सी॰ इंडिया लिमिटेड एवं अन्य, (2006)6 SCC 736, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विधि की समरूप प्रतिपादना अधिकथित की गयी है। इसी समय पर, उक्त मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह भी संप्रेक्षित किया गया है कि शुद्धत: सिविल मामलों को दांडिक मामलों में संपरिवर्तित करने की प्रवृति व्यावसायिक समुदाय में बढ़ती जा रही है। ऐसा स्पष्टत: प्रचलित धारण के कारण है कि सिविल विधि के अधीन उपचारों में समय लगता है और वे पर्याप्त रूप से देनदारों/उधार देने वालों की सुरक्षा नहीं करते हैं। ऐसी प्रवृति अनेक पारिवारिक विवादों में भी देखी जाती है जो परिवार/विवाह को असाध्य रूप से तोड़ने की ओर ले जाती है। यह धारण भी है कि यदि किसी व्यक्ति को किसी तरह से दांडिक अभियोजन में फँसा दिया जाता है, तुरन्त समझौते की संभावना बढ़ जाती है। उक्त निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जोर देकर कहा गया है कि सिविल विवादों और दावों, जो कोई दांडिक अपराध अंतर्ग्रस्त नहीं करते हैं, को दांडिक अभियोजन के माध्यम से सुलझाने के प्रयास की निंदा की जानी चाहिए और इन्हें हतोत्साहित करना चाहिए।

20. इस प्रकार, जैसा मैंने पहले संप्रेक्षित किया है कि संपूर्ण परिवाद में यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं है कि याची ने गैरईमानदार रूप से और कपटपूर्वक परिवादी को सामग्री से अलग होने के लिए उत्प्रेरित किया, अत: छल का अपराध नहीं बनता है।

21. जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धारा 406 के अधीन अपराध का संबंध है, वह भी याची के विरूद्ध बनता प्रतीत नहीं होता है।

22. भारतीय दंड संहिता की धारा 405 में न्यास के दांडिक भंग के प्रावधान को परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"405. **vkijkf/kd U;kl Hkx-**&tks dksbZ lEifÙk ;k lEifÙk ij dksbZ Hkh v[kR;kj fdlh izdkj viuk dks U;Lr fd, tkus ij mls lEifÙk dk cbZekuh ls nfofu;kx djrk g ;k mls viu mi;kx e lifjofrZr djrk g ;k ftl izdkj ,slk U;kl fuogu fd;k tkuk g] mldk fofgr djus okyh fof/k ls fdlh fun'k dk] ;k ,sl U;kl d fuogu d ckj e mld }kjk dh xbZ fdlh vfHkO;Dr ;k foof{kr oS/k lfonk dk vfrØe.k djd cbZekuh ls mls lEifÙk dk mi;kx ;k O;;u djrk g] ;k tkucw>dj fdlh vU; O;fDr dk ,slk djus nsrk g] og ^vkijkf/kd U;klHkx** djrk gA**"*

23. भारतीय दंड संहिता की धारा 405 के अधीन अपराध गठित करने के लिए आवश्यक अवयवों में से कोई भी आकृष्ट नहीं होता है भले ही संपूर्ण अभिकथन को सत्य स्वीकार किया जाता है। तद्नुसार, अभिनिर्धारित किया जाता है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 405 के अधीन अपराध निर्मित नहीं हुआ है।

24. याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यद्यपि याची के विरूद्ध परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया है किंतु परिवाद में किए गए अभिकथन पर परिवादी एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अभियोजन इस कारण से बनाए नही रख सकता है कि नोटिस की सांविधिक आवश्यकता का अनुपालन नहीं किया गया है और इस प्रकार, एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन भी दांडिक अभियोजन संपोषणीय नहीं है।

25. वि॰ प॰ सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री मिश्रा निवेदन करते हैं कि पूर्वोक्त निवेदन के संबंध में आधारपूर्ण तथ्य को प्रस्तुत नहीं किया गया है और इसलिए अस्वीकार करने के लिए उक्त निवेदन को ध्यान में लेना होगा।

26. स्वीकृत रूप से, पूर्वोक्त निवेदन के संबंध में आवश्यक अभिवचन नहीं है और इसलिए उठाए गए प्रश्न को संबोधित करना अपेक्षणीय नहीं है बल्कि यह विवाद्यक और अन्य विवाद्यक, जो याची को उपलब्ध होंगे, को समुचित चरण पर अवर न्यायालय के समक्ष उठाए जाए।

27. तद्नुसार, आदेश का केवल वह भाग, जिसके द्वारा याची के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 और 420 के अधीन अपराधों का संज्ञान लिया गया है, एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है।

28. परिणामस्वरूप, यह आवेदन अंशत: अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

उदय शंकर चौधरी

cuke

झारखण्ड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (Cr.) No. 63 of 2004. Decided on 20th June, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 120B एवं 34—भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—छल एवं षडयंत्र–गिरफ्तारी वारन्ट—विद्यालय के प्रबंधन कमिटि के सदस्यों ने विद्यालय के धन के संबंध में अभिकथित रूप से न्यास का दांडिक भंग किया—याची पेशे से वकील है और विद्यालय की प्रबंधन कमिटि का सदस्य नहीं था—याची ने केवल पेशेवर काम का पालन दर्शाने वाले बिलों को प्रस्तुत किया था और विद्यालय की प्रबंधन कमिटि का सदस्य नहीं था—याची ने केवल पेशेवर काम का पालन दर्शाने वाले बिलों को प्रस्तुत किया था और विद्यालय के सचिव द्वारा याची को पेशागत फीस का भुगतान किया गया था—याची को कोई संपत्ति न्यस्त करने के बारे में अभिकथन नहीं है जिसे याची ने अभिकथित रूप से गैरईमानदारी से दुविर्निंयोग कर लिया अथवा स्वयं अपने उपयोग के लिए संपरिवर्तित कर लिया—याची के विरूद्ध कोई अपराध नहीं बनता—गिरफ्तारी वारन्ट अभिखंडित। (पैराएँ 8 से 10)

अधिवक्तागण.–M/s Jitendra S. Singh, Vinay Kr. Tiwary, For the Petitioner; Mr. J.C. to G.P. II, For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने दिनांक 28.1.2004 के आदेश, जिसके द्वारा धुर्वा पी॰ एस॰ केस सं॰ 8 वर्ष 2004 से उद्भूत जी॰ आर॰ केस सं॰ 151 वर्ष 2004 में भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406, 120B और 34 के अधीन अभिकथित अपराधों के लिए याची के विरूद्ध गैरजमानती गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने का आदेश दिया गया था, सहित उसके विरूद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने के लिए समुचित रिट अथवा आदेश जारी करने के लिए यह आवेदन दाखिल किया है।

3. याची को धुर्वा पी॰ एस॰ केस सं॰ 8 वर्ष 2004, जी॰ आर॰ केस सं॰ 151 वर्ष 2004 के तत्सम, में अभियुक्त बनाया गया है जिसे जिला शिक्षा अधिकारी–सह–रिसीवर, डी॰ ए॰ वी॰ पब्लिक स्कूल, धुर्वा, राँची द्वारा प्रस्तुत लिखित रिपोर्ट के आधार पर संस्थापित किया गया था। प्राथमिकी में उक्त विद्यालय के धन के संबंध में न्यास का दांडिक भंग करने के लिए डी॰ ए॰ वी॰ पब्लिक स्कूल, धुर्वा के प्रबंधन कमिटि के सदस्यों के विरूद्ध अभिकथन है। याची पेशेवर वकील है और वह उक्त विद्यालय की प्रबंधन कमिटि का सदस्य नहीं था। जहाँ तक इस याची का संबंध है, केवल यह अभिकथित किया गया है कि याची वकील था जिसे क्रमश: दिनांक 5.12.2003, 27.11.2003 और 9.12.2003 को 37,500/-, 34,400/- और 74,500/- रुपयों का भुगतान उसके पेशागत फीस के रूप में विद्यालय के तत्कालीन सचिव द्वारा किया गया था किंतु अभिकथित किया गया है कि विद्यालय के विरूद्ध कोई मामला नहीं है। केवल उक्त अभिकथन के आधार पर याची को धुर्वा पी॰ एस॰ केस सं॰ 8 वर्ष 2004 में अभियुक्त बनाया गया था और प्रतीत होता है कि दिनांक 28.1.2004 के आदेश द्वारा अभियोजन की प्रार्थना पर याची के विरूद्ध गैरजमानती वारन्ट जारी करने का आदेश दिया गया था जिसे भी इस रिट आवेदन में चुनौती दी गयी है।

4. आगे प्रतीत होता है कि राज्य प्रत्यर्थी ने इस मामले में प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है जिसके पैराग्राफ 32 में निम्नलिखित कथन किया गया है:–

*^^32. fd fouerkiod fuonu fd;k tkrk g fd ;kph u viu ijke'k vkj vU; Qhl d fy, mld }kjk çLrr fcy d lcèk e Hkxrku d fy, fcy çLrr fd;k x;k Fkk tk ifjf'k"V&5 e vrfo"V g fdr bl dkxtkr d ifj'khyu l Li"V g fd ;g fcydy ckxl g vkj bld ijh{k.k dh vko';drk gA***

प्रतीत होता है कि यद्यपि प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ 32 में कथन किया गया था कि याची द्वारा प्रस्तुत बिल बिलकुल बोगस था और इसके परीक्षण की आवश्यकता थी किंतु प्राथमिकी में संपूर्ण अभिकथन के परिशीलन से यह प्रकट है कि कहीं पर भी यह अभिकथन नहीं किया गया था कि याची ने उसके द्वारा दी गयी पेशागत सेवा के संबंध में बोगस बिल प्रस्तुत किया था। प्राथमिकी के परिशीलन से यह भी प्रकट है कि याची के विरूद्ध कोई अभिकथन नहीं है कि उसको कोई धन न्यस्त किया गया था जिसके संबंध में उसने न्यास का दांडिक भंग किया था बल्कि याची के विरूद्ध अभिकथन यह है कि विद्यालय के सचिव द्वारा उसके पेशागत फीस का भुगतान किया गया था।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची के विरूद्ध मामले का संस्थापन और उसमें अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश जिसके द्वारा याची के विरूद्ध गैर जमानती वारन्ट जारी किया किया गया है, बिलकुल अवैध है, क्योंकि याची को कोई धन न्यस्त किए जाने के संबंध में संपूर्ण प्राथमिकी में अभिकथन नही है। याची के विरूद्ध जो भी अभिकथन है, वह यह है विद्यालय के सचिव द्वारा याची को उसके पेशागत फीस के भुगतान के संबंध में है।

6. आगे निवेदन किया गया है कि यद्यपि अभिकथित किया गया है कि विद्यालय के विरूद्ध कोई मामला लंबित नहीं था, किंतु याची ने विशेष न्यायाधीश, निगरानी, राँची के न्यायालय के समक्ष लंबित परिवाद केस सं॰ 1 वर्ष 2003 के आर्डरशीट को अभिलेख पर लाया है जो दर्शाता है कि विद्यालय के सचिव ने सरकारी पदधारियों के विरूद्ध परिवाद मामला दाखिल किया था जिसमें याची वकील होने के नाते उपस्थित हुआ था और मामला विद्यालय के सचिव से सरकारी पदधारियों द्वारा अवैध परितोषण की मांग से संबंधित था। इसी प्रकार से, परिशिष्ट-4 भी अभिलेख पर लाया गया है, जो डी॰ ए॰ वी॰ पब्लिक स्कूल, धुर्वा के परिसर में प्रत्यर्थीगण को प्रवेश करने से निर्बंधित करने की प्रार्थना करते हुए विद्यालय के प्रबंधन द्वारा दाखिल रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (दांडिक) सं॰ 265 वर्ष 2003 की प्रति है जिसमें याची वकील होने के नाते उपस्थित हुआ था। इस प्रकार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची के विरूद्ध अभिकथन बिल्कुल आधारहीन है और यदि प्राथमिकी में किए गए संपूर्ण अभिकथन को स्वीकार किया भी जाता है, याची के विरूद्ध अपराध नहीं बनता है, विशेषत: इस तथ्य की दृष्टि में कि याची को संपति न्यस्त करने का अभिकथन नहीं है जिसे याची ने गैरईमानदारी से दुर्विनियोग कर लिया था और तद्नुसार भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 406 के अधीन अपराध नहीं बनता है। इस प्रकार, उक्त धुर्वा पी॰ एस॰ केस सं॰ 8 वर्ष 2004 में याची के विरूद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित किए जाने योग्य है।

7. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि प्राथमिकी में किए गए अभिकथन के आधार पर प्रतिशपथ पत्र में कथित तथ्य की दृष्टि में कि याची द्वारा बोगस बिल प्रस्तुत किया गया था, याची के विरूद्ध स्पष्टत: मामला बनता है। विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि अभिकथन की दृष्टि में कि याची द्वारा बिल प्रस्तुत किया गया था हाँलाकि विद्यालय के विरूद्ध कोई मामला लंबित नहीं था, याची के विरूद्ध स्पष्टत: मामला बनता है और मामले के उस दृष्टिकोण में इस चरण पर भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण अधिकारिता के प्रयोग ने याची के विरूद्ध दांडिक कार्यवाही अभिखंडित नहीं की जा सकती है।

8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि याची के विरूद्ध एकमात्र अभिकथन यह है कि याची ने पेशागत काम का पालन दर्शाते हुए बिल

जमा किया था और विद्यालय के सचिव द्वारा याची को पेशागत फीस का भुगतान किया गया था। यद्यपि अभिकथित किया गया है कि विद्यालय के विरूद्ध किसी न्यायालय में कोई मामला लंबित नहीं था, किंतु अभिलेख पर लाया गया परिशिष्ट–3 दर्शाता है कि विद्यालय के सचिव द्वारा सरकारी पदधारियों के विरूद्ध अवैध परितोषण की मांग करने का अभिकथन करते हुए परिवाद मामला दाखिल किया गया था, जिसे विशेष न्यायाधीश, निगरानी, राँची के न्यायालय में परिवाद मामला सं॰ 1 वर्ष 2003 के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें याची विद्यालय के सचिव के लिए उपस्थित हुआ था। इसी प्रकार से, अभिलेख पर परिशिष्ट 4 लाया गया है जो डी॰ ए॰ वी॰ पब्लिक स्कूल, धुर्वा के परिसर में प्रत्यर्थीगण को प्रवेश करने से निर्बंधित करने की प्रार्थना करते हुए दाखिल रिट याचिका की प्रति है जिसमें याची अधिवक्ता होने के नाते उपस्थित हुआ।

9. पूर्वोक्त चर्चा की दृष्टि में, यह प्रकट है कि उसके द्वारा दी गयी पेशागत सेवा के संबंध में याची को विद्यालय के सचिव द्वारा पेशागत फीस का भुगतान किया गया था। इसके अतिरिक्त, भले ही मामला भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 406 के अधीन अभिकथित अपराध से संबंधित है, याची को कोई संपति न्यस्त किए जाने के बारे में कोई अभिकथन नहीं है जिसका याची ने गैर ईमानदार रूप से दुर्विनियोग किया अथवा अपने उपयोग के लिए संपरिवर्तित कर दिया। मामले के उस दृष्टिकोण में, मैं पाता हूँ कि यदि प्राथमिकी में याची के विरूद्ध किए गए संपूर्ण अभिकथन को स्वीकार किया जाता है, तो भी याची के विरूद्ध अपराध बनता नहीं कहा जा सकता है।

10. तद्नुसार, केवल याची के संबंध में, मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची के न्यायालय में लंबित धुर्वा पी॰ एस॰ केस सं॰ 8 वर्ष 2004, जी॰ आर॰ सं॰ 151 वर्ष 2004 के तत्सम में संपूर्ण दांडिक कार्यवाही और उसमें पारित दिनांक 28.1.2004 का आदेश, जैसा इस रिट आवेदन के परिशिष्ट 2 में अंतर्विष्ट है, जिसके द्वारा याची के विरूद्ध गैर जमानती वारन्ट जारी करने का आदेश दिया गया था, एतद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है। तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy] U;k;efr

उदय कुमार सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2925 of 2009. Decided on 2nd July, 2012.

भारत का संविधान—अनुच्छेद 14 एवं 16—नियुक्ति—मनमानापन—कांस्टेबल पुलिस चालक का पद—दो स्थानों से आवेदन देने पर उम्मीदवारी का रद्दकरण—याची समस्त परीक्षाओं में उतीर्ण हुआ है—याची के साथ भेदभाव करते हुए कम अंक पाने वाले अन्य उम्मीदवारों को नियुक्त किया गया—आवेदन मात्र देकर कोई भी व्यक्ति पद नहीं पाता है—समस्थित अन्य उम्मीदवारों के साथ स्पर्धा करनी होगी—प्रत्यर्थीण पर कोई प्रतिकूलता कारित नहीं होने जा रही है भले ही याची ने दो भिन्न जिलों से आवेदन दिया है, विशेषतः जब किसी उम्मीदवार द्वारा इस प्रकार का आवेदन प्रतिषिद्ध करने वाला नियम नहीं है—लोक विज्ञापन में

तद्वचनतः शर्त अधिरोपित नहीं की जा सकती है अन्यथा यह मनमाने शर्त के तुल्य होता है—नियमों, विनियमों, अथवा कार्यपालिका अनुदेशों में ऐसी वर्जना, निःशक्तता अथवा निर्बंधन को उल्लिखित किया जाना चाहिए था—विज्ञापन में शर्त अंतःस्थापित करके याची से अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 16 द्वारा गारंन्टीकृत अधिकारों को छीन लिया गया है जो किसी नियम अथवा विनियम अथवा कार्यपालिका अनुदेश द्वारा समर्थित नहीं है अथवा इसकी पृष्ठभूमि में नहीं है—विज्ञापन में अधिरोपित शर्त कि यदि कोई उम्मीदवार एक से अधिक जिलों के लिए आवेदन देता है, उसे अनर्हित कर दिया जाएगा, अपास्त किया गया—याची कांस्टेबल के पद पर नियुक्ति के योग्य है–याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 3 से 5)

निर्णयज विधि.–AIR 1952 SC 75—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s. Arbind Kumar, A.K. Das, For the Petitioner; J.C. to Sr. S.C.I, For the Respondents.

आदेश

वर्तमान रिट याचिका मुख्यतः इस कारण से दाखिल की गयी है कि याची ने लोक विज्ञापन के अनुसरण में पुलिस कांस्टेबल-चालक के पद के लिए आवेदन दिया है और सफल घोषित किया गया है किंतु उसे नियुक्ति नहीं दी गयी है और समस्थित अन्य उम्मीदवारों को नियुक्ति दी गयी है जो मनमानेपन के तुल्य है और भारत के संविधान के अनुच्छेदों 14 और 16 के उल्लंघन में है और इसलिए झारखण्ड राज्य के साथ लोक नियोजन पाने के लिए वर्तमान याचिका दाखिल की गयी है।

2. मैंने प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि याची ने दो भिन्न जिलों के लिए पुलिस कांस्टेबल-चालक के पद के लिए आवेदन दिया है और इसलिए यद्यपि उसने उच्चतर अंक प्राप्त किया है, उसे नियुक्त नहीं किया जा सकता है। याची ने गिरिडीह जिला और हजारीबाग जिला के लिए पुलिस कांस्टेबल-चालक के लिए आवेदन दिया था और इसलिए उसकी उम्मीदवारी रद्द कर दी गयी है और उसका चयन नहीं किया गया है यद्यपि उसने उच्चतर अंक प्राप्त किया है इसलिए, दिनांक 26 मई, 2011 को इस आधार पर आदेश पारित किया गया है कि याची ने दो जिलों के लिए आवेदन दिया है और, इसलिए, उसे अनर्हित और नियुक्ति के लिए आयोग्य घोषित किया गया है।

3. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखने पर प्रतीत होता है कि:–

(i) ;kph u çR;Fkhx.k }kjk tkjh foKkiu d vulj.k e ifyl dkLVcy&pkyd d in ij ykd fu;ktu d fy, vkonu fn;k gA

(ii) ;kph fxfjMhg ftyk e iokDr in d fy, 'kkjhfjd ijh{kk lfgr leLr vko';d ijh{kkvk e mifLFkr gvk g vkj ;|fi mlu ftyk gtkjhckx d fy, Hkh vkonu fn;k g] og gtkjhckx e yh x;h ijh{kk e mifLFkr ugh gvk FkkA

(iii) ekey d rF;k l vkx çrhr gkrk g fd ;kph ifyl dkLVcy&pkyd d in d fy, leLr ijh{kkvk e mÙkh.k gvkA

(iv) ekey d rF;k l vkx çrhr gkrk g fd fxjhMhg ftyk d fy, vU; mEehnokjk] ftUg de vd fey Fk dk ;kph d fo:) HknHkko djr g, ifyl dkLVcy&pkyd d :i e fu;Dr fd;k x;k gA

(v) vkx çrhr gkrk g fd ;kph dk fu;fDr d fy, vufgr doy bl vkèkkj ij ?kkf"kr fd;k x;k g D;kfd mlu nk fHkUu ftyk d fy, vkonu fn;k gA ;g fofèk dh nf"V e e[;r% bl dkj.k l oèk dkj.k ugh g D;kfd dkb fu;e ugh g tk fdlh mEehnokj dk dkLVcy d in ij fu;fDr d fy, nk fHkUu ftyk e vkonu nu l çfrf"k) djrk gA , l fu;ek dh vuifLFkfr e ykd foKkiu e dkb 'kr lyXu ugh dh tk ldrh Fkh vkj] bl çdkj] Lo; foKkiu e , l 'kr dk lfEefyr djuk voèk gA çR;Fkhx.k jkT; ljdkj }kjk tkjh , l fu;e] fofu;e] vFkok dk;ikfydk vun'k dk vfLrRo bfxr ugh dj ld FkA

(vi) ekey d rF;k l vkx çrhr gkrk g fd ;kph u nk ftyk d fy, vkonu fn;k gA vkonu ek= ndj dkb in çkIr ugh djrk gA vU; lefLFkr mEehnokjk d lkFk çfr;kfxrk djuh gh gkxhA ;kph vU; mEehnokjk d lkFk Lièkk dju d fy, r;kj vkj bPNd gA ;kph u fxjhMhg ftyk d fy, ifyl dkLVcy&pkyd d in d fy, p;fur mEehnokjk dh ryuk e vfèkd vd çkIr fd;k gA çR;Fkhx.k ij dkb çfrdyrk dkfjr gku ugh tk jgh g ;fn ;kph u nk fHkUu ftyk d fy, vkonu fn;k g] fo'k"kr% tc fdlh mEehnokj }kjk bl çdkj dk vkonu nu d fy, çfrf"k) dju okyk fu;e ugh gA ykd foKkiu e rnopur% , lh 'kr vfèkjkfir ugh dh tk ldrh g] vU;Fkk] ;g eueku 'kr d rY; gkrk gA oreku ekey d rF;k e] ykd foKkiu e vfèkjkfir 'kr fdlh fu;e] fofu;e vFkok vfèkIpuk ij vkèkkfjr ugh gA fofèk d vèkhu ,d l vfèkd ftyk e vkonu nu l fdlh mEehnokj ij lkfofèkd otuk ugh gA çR;d ftyk e mUg vU; lefLFkr mEehnokjk d lkFk ijh{kk vkj Lièkk dk lkeuk djuk gkxkA lkfofèkd otuk dh vuifLFkfr e ykd foKkiu e , l 'kr dk vfèkjki.k voèk gA e dkb dkj.k ugh n[krk g fd D;k bl ;kfpdk dk vuKkr ugh djuk pkfg, vkj e dkb dkj.k ugh n[krk g fd D;k bl ;kph dk fu;fDr ugh nh tkuh pkfg,A bld vfrfjDr] ;g mEehnokj doy fxjhMhg ftyk d fy, 'kkjhfjd ,o vU; ijh{kkvk e mifLFkr gvk g vkj og ykrgkj gtkjhckx e mifLFkr ugh gvk g vkj blfy, fnukd 26 eb] 2011 d vkn'k e ;kph dk ifyl dkLVcy&pkyd d :i e fu;fDr d fy, vufgr vFkok v;kX; ?kkf"kr dju okyk dkj.k fofèk dh nf"V e oèk dkj.k ugh gA vr% e fnukd 26 eb] 2011 dk ikfjr vkn'k vfHk[kfMr vkj vikLr djrk g ft ld }kjk oreku ;kph dk fu;fDr d fy, v;kX; ?kkf"kr fd;k x;k gA

(vii) ;fn fdlh dkj.k l fdlh mEehnokj dk ykd fu;ktu iku l oftr fd;k tkrk g vFkok fu%'kDr cuk;k tkrk g] bl çdkj dh 'kr d ihN dkb lkfofèkd cy gkuk pkfg, vkj , lh otuk vFkok fu%'kDrrk dk vFkok fucèku dk fu;e] fofu;e vFkok dk;ikfydk vun'k] vkfn e mfYyf[kr fd;k tkuk pkfg,A oreku ekey d rF;k e] ifyl dkLVcy&pkyd d in ij fu;fDr d fy, çR;Fkhx.k }kjk dkb fu;e vfèkfu;fer ugh fd;k x;k gA Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 16 d erkfcd çR;d mEehnokj dk ykd fu;ktu e leku volj dk vfèkdkj gA Hkkjr dk lfoèkku xkjVh nrk g fd ykd fu;ktu e çR;d 0;fDr d fy, leku volj gkxkA ;fn fdlh dk Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 14 dh ç;kT;rk l ckgj fudkyk tkrk g vFkok Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 16 }kjk bl çdkj xkjVhÑr fdlh mEehnokj d vfèkdkj dk okil fy;k tkuk g vFkok lf{kIr fd;k tkrk g] rc bl doy fu;e vFkok fofu;e }kjk fd;k tk ldrk gA ;g

foKkiu e 'kr d : i e ugh gk ldrk gA bl çdkj] foKkiu e 'kr vr% LFkkfir djd ;kph l vuPNn 14 vkj vuPNn 16 }kjk xkjUVhÑr cgeY; vfèkdkjk dk okil fy;k x;k g tk fdlh fu;e vFkok fofu;e }kjk lefFkr ugh g vFkok bldh i"BHkfe e ugh g vkj u gh Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 162 d vèkhu tkjh fdlh dk; ikfydk vun'k dk çfr'kiFk i= e bfxr fd;k x;k gA , l çkoèkkuk dh vuifLFkfr e ykd fu;ktu e vfèkjkfir 'kr fd fdlh mEehnokj dk dkLVcy d in ij fu;fDr iku d fy, v;kX; vFkok vufgr ?kkf"kr fd;k tk,xk ;fn og ,d l vfèkd ftyk e vkonu nrk g] i.kr% euekuk vkj voèk g vkj Hkkjr d lfoèkku d vuPNnk 14 vkj 16 dk mYy?ku djrk gA

(viii) Hky gh fdlh mEehnokj u nk vFkok vfèkd ftyk e vkonu fn;k gkA nkuk vFkok vfèkd ftyk e ijh{kk e mifLFkr gvk gk vkj bu ftyk e p;fur Hkh fd;k x;k gk] ;g jkT; ij çfrdyrk dkfjr ugh djxk D;kfd mEehnokjk dk fu;ktu d fy, fdlh ,d ftyk dk gh puuk gkxkA jkT; cgrj mEehnokj dk ykd fu;ktu iku d vfèkdkj l ofpr ugh dj ldrk gA ;fn fdlh mEehnokj dk ,d l vfèkd ftyk e puk tkrk g] og doy ,d ftyk e lok xg.k djxk tcfd vU; ftyk d fy,] ;fn p;fur mEehnokj u in xg.k ugh fd;k g] çrh{kk lph çofrr dh tk,xh vkj çrh{kk lph d mEehnokjk dk fu;Dr fd;k tk,xkA ykd fu;ktu e p;u dk xyr rjhdk viuk dj (vFkkr foKkiu e euekuk 'kr vfèkjkfir djd fd mEehnokj tk ,d l vfèkd ftyk e vkonu nrk g] vufgr dj fn;k tk,xk), jkT; vU; dh ryuk e cgrj mEehnokj puu l ofpr gk tkrk gA

(xi) Lohdkj fd, fcuk ;g mièkkfjr djr g, fd jkT; }kjk tkjh dk; ikfydk vkn'k g (oLrr% bl U;k;ky; dk dHkh ugh bfxr fd;k x;k g)] rc Hkh ;g Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 14 }kjk xkjUVhÑr lekurk d vfèkdkj d mYy?ku d rY; gA jkT; }kjk nk oxk dk lftr fd;k x;k g vFkkr&

(a) ^^ftUgku ,d ftyk d fy, vkonu fn;k g** vkj

(b) ^^ftUgku ,d l vfèkd ftyk d fy, vkonu fn;k gA**

ykd foKkiu e fucèku d vfèkjki.k }kjk lftr mEehnokjk d nk oxk dk çkIr fd, tku d fy, bfllr mí'; d lkFk dkb lcèk ugh g ;fn çkIr fd, tku d fy, bfllr mí'; lokÙke] mi;Dr vkj eèkkoh mEehnokj dk p;u djuk gA mEehnokjk d ,d vU; ox dk fu"dkf"kr dju dk oèk dkj.k ugh gA jkT; dh ç'kkIfud ef'dy mEehnokjk d ,d vU; ox dk v;kX; vFkok vufgr ?kkf"kr dju d fy, fofèk dh nf"V e dkj.k ugh gA jkT; vkn'k fu;kDrk gA ykd foKkiu] fyf[kr ,o ekf[kd ijh{kk vkj ych p;u çfØ;k dk y{; lokÙke mEehnokjk dk puuk gA ;fn ç'kkIfud ef'dy dk çkFkfedrk nh tkrh g] rc ;kph dh rjg cgrj mEehnokj fu"dkf"kr gk tk,xA lokÙke mEehnokjk d p;u d fy, vkj Hkkjr d lfoèkku d vuPNnk 14 vkj 16 d vèkhu xkjVhÑr mEehnokjk d ey vfèkdkjk d lj{k.k d fy, jkT; dk ç'kkIfud ef'dy l t>uk gkxkA

Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 14 d vèkhu oèk oxhdj.k dh ijh{kk çFke okj if'pe cxky jkT; cuke vuoj vyh ljdkj ,o ,d vU;] AIR 1952 SC 75, e mn?kkf"kr dh x;h Fkh vkj ckn e vud ekeyk e bldk vulj.k fd;k x;k g vkj ;g ijh{kk fuEufyf[kr g%

(a) oxhdj.k ckèkxE; vrj ij vkèkkfjr gkuh gkxh tk0;fDr vFkok phtk dk lfHkUu djrh g ftudk ,d lkFk leg cuk;k x;k g vkj leg l vU;k dk NkM fn;k x;k g(vkj

(b) vrj dk çkIr fd, tku d fy, bfllr mí'; d lkFk rdi.k lcèk gkuk gkxkA

bu nkuk 'krk dk lkFk&lkFk ijk fd;k tkuk gkxkA oreku ekey d rF;k e] ;g mièkkfjr djr g, fd ç'kklfud vun'k g] ;|fi bl bl U;k;ky; d le{k dHkh çLrr ugh fd;k x;k g] vkj foKkiu e iokDr vugrk vr%LFkkfir dh x;h Fkh] rc Hkh dkbZ oèk oxhdj.k ugh g D;kfd oèk oxhdj.k d fy, nljh 'kr ijh ugh dh x;h g tlk ;gk mij dfFkr fd;k x;k g] vkj blfy, Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 14 dk mYy?ku fd;k x;k gA

4. पूर्वोक्त तथ्यों और कारणों की दृष्टि में, मैं विज्ञापन में अधिरोपित शर्त अभिखंडित और अपास्त करता हूँ कि यदि कोई उम्मीदवार एक से अधिक जिलों में आवेदन देता है, उसे अनर्हित कर दिया जाएगा। याची कांस्टेबल के पद पर नियुक्ति के योग्य है। अत: मैं प्रत्यर्थी राज्य को पुलिस कांस्टेबल चालक के पद पर नियुक्ति के लिए गिरिडीह जिला के लिए उसके द्वारा प्राप्त अंक के आधार पर वर्तमान याची की उम्मीदवारी पर विचार करने का निर्देश देता हूँ और उसे मात्र इसलिए अनर्हित अथवा अयोग्य घोषित नहीं किया जा सकता है क्योंकि उसने दो भिन्न जिलों में आवेदन दिया है।

5. यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और निपटायी जाती है। पुलिस कांस्टेबल चालक के पद पर याची की नियुक्ति पर राज्य द्वारा विचार किया जाएगा। अत: मैं सचिव गृह विभाग को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से तीन सप्ताह के भीतर पुलिस कांस्टेबल चालक के पद के लिए गिरीडीह जिला के लिए अंक के आधार पर वर्तमान याची के मामले पर विचार करने का निर्देश देता हूँ।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

राथू राम महतो

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(S) No. 4170 of 2003. Decided on 2nd July, 2012.

बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000—धाराएँ 2(g) एवं 85—विधि की परिभाषा विधि का बल रखने वाली विधि, नियम, योजना, अधिसूचना अथवा लिखत द्वारा बनाये गये अधिनियम, अध्यादेश, विनियम, आदेश सम्मिलित करती है–किसी पश्चातवर्ती अधिसूचना द्वारा कनीय अभियंता के पद पर प्रोन्नति के लिए विचार करने वाला दिनांक 31.5.1976 की अधिसूचना अधिक्रमित नहीं की गयी है, अत: इसमें विधि का बल है और यह झारखंड राज्य में प्रयोज्य होगी। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Pradip Gangopadhyay, For the Petitioner; Mr. Tejo Mistri, For Respondent No. 5; Mr. Rajesh Kumar, For the State.

आदेश

निर्विवादत: याची को दिनांक 6.9.1980 को अविभाजित बिहार राज्य में लोक संकर्म विभाग में 'अनुरेखक' के रूप में नियुक्त किया गया था, याची को दिनांक 25.8.1995 के प्रभाव से ड्राफ्ट्समैन

ग्रेड II के पद पर प्रोन्नत किया गया था, याची ने वर्ष 1988 में प्राधिकारियों की अनुमति से सिविल इंजीनियरिंग के चार वर्षों के अखंडित डिप्लोमा पाठ्यक्रम के सायंकालीन पाठ्यक्रम में प्रवेश लिया; याची ने सरकारी पोलीटेकनिक, राँची से वर्ष 1995 में सिविल इंजीनियरिंग डिप्लोमा पूरा किया; तत्कालीन बिहार राज्य ने दिनांक मई 31, 1976 का परिपत्र जारी किया है तद्द्वारा उन ड्राफ्ट्समैन या लैब असिस्टेंट को प्रोन्नति करने के लिए प्रावधान बनाते हुए जिन्होंने कनीय अभियंता के रूप में कनीय अभियंता के पद के लिए अध्यपेक्षित अर्हता अर्जित कर लिया है और जो पिछले छह वर्षों से सरकारी सेवा में हैं। याची ने डिप्लोमा जो कनीय अभियंता के पद के लिए अध्यपेक्षित अर्हता प्राप्त कर लेने पर दिनांक 31मई, 1976 के सरकारी परिपत्र के मुताबिक कनीय अभियन्ता के प्रोन्नति वाले पद के लिए आवेदन दिया। कनीय अभियंता के पद पर प्रोन्नति के लिए याची के मामला को मुख्य अभियंता द्वारा दिनांक 2.5.2002 के पत्र रिट याचिका का परिशिष्ट-4, के तहत अग्रसारित किया गया था। किंतु, बार-बार अनुरोध करने और बिहार लोक सेवा आयोग की अनुशंसा के बावजूद याची को दिनांक 31 मई, 1976 के परिपत्र के मुताबिक प्रोन्नति नहीं दी गयी थी। अत:, याची भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय के पास आने के लिए मजबूर हुआ।

2. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और सावधानीपूर्वक अभिलेख का परिशीलन किया है।

3. राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजेश कुमार ने जोरदार तर्क दिया है कि सरकारी अधिसूचना (प्रतिशपथ पत्र का परिशिष्ट-A) जारी किए जाने के बाद वर्ष 1976 की पूर्विक अधिसूचना को अधिक्रमित कर दिया समझा जाएगा। उन्होंने आगे तर्क किया है कि राज्य के विभाजन के पहले बिहार लोक सेवा आयोग द्वारा की गयी कोई अनुशंसा झारखंड राज्य पर बाध्यकारी नहीं है। किंतु ताथ्यिक पहलूओं जैसा निर्णय के आरंभ में वर्णित किया गया है के बारे में पूछे जाने पर उन्होंने निष्पक्षत: कथन किया है कि ताथ्यिक पहलूओं जैसी याची की नियुक्ति तिथि, प्रोन्नति तिथि और सिविल इंजीनियरिंग में डिप्लोमा प्राप्त करने की तिथि के बारे में विवाद नहीं है।

4. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने पर इस न्यायालय का सुविचारित मत है कि किसी पश्चातवर्ती अधिसूचना द्वारा दिनांक 31 मई, 1976 का परिपत्र अधिक्रमित नहीं की गयी है। वर्ष 1987 की अधिसूचना (प्रतिशपथ पत्र का परिशिष्ट-A) प्रत्यक्ष भर्ती के बारे में कहता है और प्रक्रिया प्रावधानित करता है कि किस प्रकार कनीय अभियंता के पद पर प्रत्यक्ष भर्ती की जाएगी। किंतु यह ड्राफ्ट्समैन अथवा लैब सहायक से कनीय अभियंता के पद पर प्रोन्नति के बारे में कुछ नहीं कहता है जैसा वर्ष 1976 के पूर्विक परिपत्र में प्रावधानित किया गया है। इसके अलावा, वर्ष 1987 का परिपत्र यह नहीं सुझाता है कि ड्राफ्ट्समैन अथवा लैब सहायक से कनीय अभियंता के पद पर प्रोन्नति नहीं की जाएगी।

5. बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 2(g) के मुताबिक विधि की परिभाषा विधि का बल रखने वाले विधि, नियम, योजना, अधिसूचना अथवा लिखत द्वारा बनाये गये अधिनियमन, अध्यादेश, विनियम, आदेश सम्मिलित करती है। अत: विधि का बल रखने वाली दिनांक 31.5.1976 की अधिसूचना विधि होगी। तद्नुसार, अधिनियम की धारा 85 की दृष्टि में यह झारखंड राज्य में तब तक प्रयोज्य रहेगी जब तक इसे निरसित अथवा अधिक्रमित नहीं कर दिया जाता है।

6. वर्ष 1976 का परिपत्र कहीं पर भी यह नहीं सुझाता है कि पदधारी के पास कनीय अभियंता के प्रोन्नति वाले पद के लिए ड्राफ्ट्समैन के रूप में छह वर्षों का अनुभव होना चाहिए बल्कि रिट याचिका के परिशिष्ट-1 अर्थात् वर्ष 1976 के परिपत्र का सावधानीपूर्वक पठन प्रकट करेगा कि एकमात्र आवश्यकता यह है कि पदधारी ने छह वर्षों की सरकारी सेवा पूरा कर लिया हो और कनीय अभियन्ता के पद पर प्रोन्नत किए जाने के लिए विचार किए जाने के लिए अध्यपेक्षित अर्हता अर्जित कर लिया हो।

7. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, दिनांक 31 मई, 1976 के परिपत्र के मुताबिक याची कनीय अभियंता के पद पर प्रोन्नति पाने का हकदार है।

8. तद्नुसार यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है और प्रत्यर्थी को याची को कनीय अभियंता के पद पर मई, 2002 के प्रभाव से अर्थात् उस तिथि से जिस पर रिट याचिका के परिशिष्ट-4 के तहत मुख्य अभियंता द्वारा उसका मामला अग्रसरित किया गया था, प्रोन्नत करने और आज के दिन से 90 दिनों के भीतर उसको समस्त धनीय लाभ देने का निर्देश दिया जाता है। व्यय को लेकर आदेश नहीं है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t;k jk;] U;k;efr

अजित कुमार मोदी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1106 of 2007. Decided on 3rd July, 2012.

झारखंड सेवा संहिता, 2000—नियम 74 (b) (ii)—अनिवार्य सेवानिवृत्ति–स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिए आवेदन की अस्वीकृति–उच्च न्यायालय द्वारा की गयी अनुशंसा पर राज्य सरकार ने याची को अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश जारी किया–अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश में अवैधता नहीं है–स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिए याची का अनुरोध भी सही प्रकार से अस्वीकार ाकिया गया–याचिका खारिज। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. P. C. Tripathy, For the Appellant; Ms. A. R. Choudhary, For the Respondent-High Court; Mr. S. Prasad, For the Respondent-State.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रासंगिक समय पर याची सिविल न्यायाधीश, जूनियर डिविजन का पद धारण कर रहा था और उसे सरायकेला में न्यायिक दंडाधिकारी के रूप में पदस्थापित किया गया था और उसने दिनांक 31 अगस्त, 2006 के प्रभाव से दिनांक 1 अगस्त, 2006 को स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति इप्सित करते हुए आवेदन दिया। स्वैच्छिक सेवानिवृति के लिए याची का आवेदन दिनांक 11.8.2006 को अस्वीकार कर दिया गया था और तत्पश्चात झारखंड सेवा संहिता के नियम 74(b)(ii) के अधीन शक्तियों का अवलंब लेकर दिनांक 24.8.2006 के आदेश द्वारा याची को अनिवार्यत: सेवानिवृत्त कर दिया गया था। अत: याची ने दोनों आदेशों अर्थात् स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिए उसकी प्रार्थना को अस्वीकार करने वाले दिनांक 11.8.2006 के आदेश और दिनांक 24.8.2006 के आदेश को चुनौती दिया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा हमारे समक्ष प्रस्तुत एकमात्र बिंदु यह है कि दिनांक 24 अगस्त, 2006 का अनिवार्य सेवानिवृत्ति आदेश पारित करने के पहले याची को सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया था। निवेदन किया गया है कि सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति इप्सित करने वाला याची का आवेदन भी अस्वीकार कर दिया गया था।

4. उच्च न्यायालय द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र के मुताबिक प्रतीत होता है कि स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति इप्सित करने वाला याची का आवेदन दिनांक 11 अगस्त, 2006 को अस्वीकार किया गया था और याची द्वारा प्रस्तुत स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति इप्सित करने वाले आवेदन पर विचार करने के पहले याची को विभागीय जाँचों में से एक में दोषी पाया गया था और उसके विरुद्ध निंदा आदेश पारित किया गया था; तत्पश्चात

कुछ शिकायतें प्राप्त की गयी थी जिस पर याची के सेवा अभिलेख पर विचार किया गया था और दिनांक 28 जुलाई 2006, को झारखंड सेवा संहिता, 2001 के नियम 74 (b)(ii) के अधीन शक्तियों का अवलंब लेते हुए याची को सेवानिवृत्त करने का आक्षेपित निर्णय लिया गया था। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए कार्यवाही के मामले में किसी व्यक्तिगत सुनवाई अथवा अन्यथा भी किसी सुनवाई की आवश्यकता नहीं है। आगे निवेदन किया गया है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश कलंक नहीं है और इसलिए भी सुनवाई की आवश्यकता नहीं है और इस बिंदु पर विधि सुनिश्चित है। चूँकि दिनांक 24.8.2006 से याची सेवानिवृत्त हो गया था, अत: स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति इप्सित करने वाले याची के आवेदन को भी इस तथ्य की दृष्टि में अनुज्ञात नहीं किया जा सकता था कि याची ने दिनांक 31.8.2006 से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति इप्सित किया; उस दिन के पहले याची को विधिपूर्ण आदेश द्वारा सेवानिवृत किया जा चुका था।

5. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों और तर्कों पर विचार किया है और प्रासंगिक आदेशों का परिशीलन किया है।

6. स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति इप्सित करने पर याची अपने आवेदन पर विचार किया जाना इप्सित कर सकता है और उस पर विचार किया गया है और तत्पश्चात उसका आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था। और मामले के तथ्यों में, ऊपर उल्लिखित तथ्यों से स्पष्ट है कि स्वैच्छिक सेवानिवृति के लिए याची का आवेदन इस न्यायालय के समक्ष विचाराधीन होने के पहले ही इस न्यायालय ने याची को अनिवार्यत: सेवानिवृत करने का निर्णय लिया और अनिवार्य सेवानिवृत्ति के मामले में सुनवाई के अवसर की आवश्यकता नहीं है और इस न्यायालय को आदेश पारित करने के लिए अच्छी तथा बुरी प्रविष्टियों सहित संपूर्ण सेवा अभिलेख और प्रासंगिक परिस्थितियों पर विचार करने की आवश्यकता है। सुनवाई का अवसर नहीं दिए जाने के एकमात्र आधार की दृष्टि में हमारा सुविचारित मत है कि उच्च न्यायालय द्वारा की गयी अनुशंसा पर राज्य सरकार द्वारा याची को जारी अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश न्यायालय द्वारा लिए गए निर्णय के अनुकूल है और अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश में अवैधता नहीं है और स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिए याची के अनुरोध को भी सही प्रकार से अस्वीकार किया गया था।

7. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची को अपनी अनिवार्य सेवानिवृत्ति के बाद भी पारिणामिक लाभों जिसका वह हकदार हो सकता है को नहीं दिया जा सकता है। इसके लिए याची अपना अभ्यावेदन प्रस्तुत करने के लिए स्वतंत्र है जिस पर उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया जा सकता है।

इस रिट याचिका में गुणागुण नहीं है और इसलिए इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

संजीव टापे

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 3 of 2007. Decided on 18th July, 2012.

सेवा विधि–वेतन–वेतन से भरण-पोषण राशि की कटौती–याची के वेतन से 3000/- रुपए काटने और महिला को इसे देने का निर्देश एस॰ एस॰ पी॰ द्वारा जारी किया गया–याची द्वारा विवाह के तथ्य पर गंभीर रूप से विवाद किया गया है–आक्षेपित आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए था और पक्षों को न्यायालय जाने का निर्देश देना चाहिए था–आक्षेपित आदेश स्थगित। (पैराएँ 2, 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. K.S. Nanda, For the Petitioners; Mr. A. Allam, For the Respondents.

आदेश

याची वरीय आरक्षी अधीक्षक द्वारा दिनांक 9.9.2004 को पारित आदेश का विरोध कर रहा है जिसके द्वारा याची के वेतन से 3000/- रुपया प्रतिमाह काटने और भरण–पोषण के रूप में श्रीमती ज्योति देवगन को इसका भुगतान करने का निर्देश जारी किया गया था।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार तर्क किया है कि श्रीमती ज्योति देवगण याची की पत्नी नहीं है। उन्होंने आगे कथन किया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन अथवा हिंदु दत्तक एवं भरण–पोषण अधिनियम के प्रावधानों के अधीन आवेदन देकर श्रीमती ज्योति देवगन द्वारा भरण–पोषण का दावा किया जा सकता है जिसमें न्यायालय विवाह के तथ्य और श्रीमती ज्योति देवगन की भरण–पोषण की हकदारी को विनिश्चित करने की अवस्था में होगा। उन्होंने आगे तर्क किया है कि वरीय आरक्षी अधीक्षक को विवादित विवाद्यक विनिश्चित करने का अधिकार नहीं है कि क्या श्रीमती ज्योति देवगन याची की पत्नी है अथवा वह भरण–पोषण की हकदार है।

3. राज्य के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री ए॰ आलम ने निष्पक्षत: निवेदन किया है कि आक्षेपित आदेश पारित करने के पहले वरीय आरक्षी अधीक्षक ने यह पता लगाने के लिए जाँच करने का निर्देश दिया है कि क्या श्रीमती ज्योति देवगन याची की पहली पत्नी है। यह पाने पर कि श्रीमती ज्योति देवगन पहली पत्नी हैं, मानवीय आधार पर आक्षेपित आदेश पारित किया गया था ताकि याची की पत्नी भूखों नहीं मरे।

4. यह पूछे जाने पर कि क्या पुलिस निर्देशिका के अधीन वरीय आरक्षी अधीक्षक को विवाह के विवाद्यक का न्याय निर्णय करने और भरण–पोषण का आदेश पारित करने के लिए प्राधिकृत करने का कोई प्रावधान है। पक्षों के विद्वान अधिवक्ता ऐसी कोई विधि दर्शा नहीं सके थे।

5. इस तथ्य की दृष्टि में कि विवाह के तथ्य पर याची द्वारा गंभीर रूप से विवाद किया गया है, प्रतीत होता है कि आक्षेपित आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए था और अपना विवाद विनिश्चित करवाने के लिए पक्षों को सक्षम न्यायालय के पास जाने का निर्देश देना चाहिए था।

6. विचित्र तथ्यों और परिस्थितियों में वर्तमान मामला इस निर्देश के साथ निपटाया जाता है कि आक्षेपित आदेश को प्रभाव नहीं दिया जाएगा और विवाह के तथ्य पर और भरण–पोषण की हकदारी पर सक्षम न्यायालय द्वारा अपना विवाद विनिश्चित करवाने के लिए पक्ष स्वतंत्र रहेंगे।

---

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

हरेन्द्र नारायण सिंह उर्फ हरेन्द्र सिंह उर्फ हरेन्द्र नाथ सिंह

cuke

भारत कोकिंग कोल लि॰ एवं अन्य

L.P.A. No. 192 of 2008. Decided on 3rd July, 2012.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–वेतन–जन्मतिथि के संबंध में विवाद–अपीलार्थी मध्यक्षेपी अवधि के वेतन का हकदार नहीं है क्योंकि उसने स्वयं 10 वर्षों के विलंब के बाद विवाद किया है–अपील खारिज। (पैराएँ 3 से 5)

निर्णयज विधि.–2007(3) JLJR 726—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s M. M. Pal, Mahua Palit, Ruby Pandey, For the Appellant; Mr. Anoop Kumar Mehta, For the Respondent.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. अपीलार्थी उस अवधि के लिए वेतन के लाभ से इनकार किए जाने के विरुद्ध व्यथित है जिसके लिए याची ने स्वीकृत रूप से काम नहीं किया था। किंतु जन्म तिथि, जिसे सेवा अभिलेख में गलत रूप से प्रविष्ट किया गया पाया गया था और याची की जन्मतिथि दिनांक 10.7.1950 घोषित की गयी थी जिसे मैट्रिकुलेशन प्रमाण पत्र में दर्ज किया गया था, के संबंध में अपीलार्थी द्वारा किए गए विवाद की दृष्टि में विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रत्यर्थी द्वारा पारित अधिवर्षिता का आदेश अपास्त कर दिया था।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि याची–अपीलार्थी को गलत रूप से उस लाभ से इनकार किया गया था। निवेदन किया गया है कि जब याची को सेवा अभिलेख में अपनी जन्मतिथि की गलत प्रविष्टि के बारे में पता चला और आपत्ति आमंत्रित की गयी थी, याची ने प्रबंधन को वर्ष 1987 में अपनी सही जन्मतिथि के बारे में सूचित किया। याची–अपीलार्थी ने मैट्रिकुलेशन प्रमाण पत्र की प्रतिलिपि प्रस्तुत किया और तब भी याची को उसका दावा अस्वीकार किए जाने के बारे में संसूचित नहीं किया गया था, अत: याची वर्ष 2003 में न्यायालय गया। मामले के इस दृष्टिकोण में, मैट्रिकुलेशन प्रमाण पत्र में दर्ज जन्म तिथि के अनुसार जन्म तिथि सही करना नियोक्ता का कर्तव्य था और नियोक्ता **कामता पांडे बनाम मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰,** (2007)3 JLJR 726, मामले में दिए गए निर्णयाधार का अनुपालन करने मे विफल रहा, जो पूर्ण पीठ का निर्णय है जिसमें भी ऐसे मामले में पूरा वेतन अधिनिर्णीत किया गया था जहाँ प्रबंधन द्वारा जन्मतिथि सही नहीं किया गया था।

4. हमने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया है और प्रासंगिक अवधि के वेतन से इनकार करने के लिए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए कारणों का परिशीलन किया है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने विवाद्यक से संबंधित समस्त तथ्यों पर विस्तारपूर्वक विचार किया है और तत्पश्चात इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि याची–अपीलार्थी मध्यक्षेपी अवधि के लिए वेतन का हकदार नहीं है क्योंकि उसने स्वयं दस वर्ष बाद विवाद किया है।

5. उक्त कारणों की दृष्टि में हमारा मत है कि आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है। अत: एल॰ पी॰ ए॰ खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

तनूजा मिश्रा

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (S) No. 5760 of 2002. Decided on 3rd July, 2012.

सेवा विधि–दंड–निलंबन अवधि के लिए वेतन का दावा–कठोर चेतावनी के दंड के अतिरिक्त निलंबन अवधि के लिए वेतन रोका जाना पश्चातवर्ती दंड था–जब एक बार निलंबन

आदेश प्रतिसंहृत कर दिया जाता है, निलंबन अवधि के लिए वेतन के भुगतान से इनकार करने का औचित्य नहीं है–नोटिस भी जारी नहीं किया गया–आक्षेपित आदेश अभिखंडित।

(पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–M/s V. Shivanath, Niraj Kishore, For the Petitioner; Mr. Ram Prakash Singh, For Respondents.

आदेश

याची इंदिरा गाँधी बालिका विद्यालय में वरीय शिक्षक के रूप में कार्यरत थी। दिनांक 22.1.1992 को आवासीय विद्यालय की छात्रा देवप्रिया अचानक बीमार हो गयी और उसकी मृत्यु हो गयी। मृत्यु का कारण हृदयाघात था। किंतु, जाँच के दौरान पाया गया था कि शिक्षकों और कर्मचारियों के बीच समन्वय की कमी थी और छात्रा को तुरन्त अस्पताल ले जाने के लिए वाहन उपलब्ध नहीं कराया गया था। किंतु, कोई विनिर्दिष्ट निष्कर्ष दर्ज नहीं किया गया था कि याची आवासीय छात्रा की मृत्यु में परिणत होने वाली घोर उपेक्षा की दोषी थी। अंतत:, जाँच के बाद दिनांक 13.12.2001 का आदेश (परिशिष्ट–4) पारित किया गया था और तद्द्वारा याची का निलंबन प्रतिसंहृत किया गया था और कठोर चेतावनी का दंड अधिरोपित किया गया था।

2. तत्पश्चात् याची ने उस अवधि, जब वह निलंबन के अधीन रही, के लिए संपूर्ण वेतन के भुगतान के लिए आवेदन दिया है। अवधि जिसके दौरान वह निलंबित बनी रही के लिए संपूर्ण वेतन के भुगतान के लिए याची के आवेदन पर दिनांक 8.7.2002 का आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–6) यह कहते हुए पारित किया गया था कि याची को उस अवधि जब वह निलंबन के अधीन रही के लिए वेतन का भुगतान नहीं किया जाएगा। किंतु, पेंशन के प्रयोजन से निलंबन अवधि को कर्तव्य अवधि के रूप में माना जाएगा।

3. याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री वी॰ शिवनाथ ने जोरदार तर्क किया है कि जब एक बार दिनांक 13.12.2001 के आदेश (परिशिष्ट–4) के तहत कठोर चेतावनी का दंड अधिरोपित किया गया था, तत्पश्चात दिनांक 8.7.2002 के आदेश (परिशिष्ट–6) के तहत द्वितीय दंड का अधिरोपण बिल्कुल मनमाना और औचित्यहीन है। यह एक ही आरोप के लिए दो दंडों के अधिरोपण के तुल्य होगा जिसे स्वयं याची के विरुद्ध विनिर्दिष्टत: सिद्ध किया गया नहीं पाया गया था।

4. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राम प्रकाश सिंह ने जोरदार तर्क किया है कि चूँकि दिनांक 13.12.2001 के आदेश (परिशिष्ट–4) के तहत केवल निलंबन प्रतिसंहृत किया गया था, अत:, समुचित समय पर प्रासंगिक दंड अधिरोपित करने की छूट प्राधिकारियों को थी। आगे तर्क किया गया है कि मामले के विचित्र तथ्यों और परिस्थितियों में याची उस अवधि के लिए वेतन की हकदार नहीं है जब वह निलंबन के अधीन रही क्योंकि वस्तुत: उसे विमुक्त कभी नहीं किया गया था।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं संतुष्ट हूँ कि जब एक बार परिशिष्ट–4 के तहत निलंबन आदेश प्रतिसंहृत कर दिया गया है, याची को अवधि जिस दौरान वह निलंबन के अधीन रही के लिए वेतन के भुगतान से इनकार करने का औचित्य नहीं है। निलंबन अवधि के लिए वेतन रोका जाना अन्यथा भी कठोर चेतावनी के दंड के अतिरिक्त पश्चातवर्ती दंड प्रतीत होती है। मामले के विचित्र तथ्यों और परिस्थितियों में जब याची को अपने ओर से जाँच अधिकारी द्वारा गंभीर गलती का दोषी अभिनिर्धारित नहीं किया गया था, तो अवधि जब वह निलंबन के अधीन रही के लिए वेतन का रोका जाना अनपेक्षित परेशानी प्रतीत होती है। इसके अतिरिक्त, दिनांक 8.7.2002 का

आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–2) पारित करने के पहले याची को नोटिस नहीं दिया गया था। अतः, दिनांक 8.7.2002 के आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–6) को विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. तद्नुसार, वर्तमान रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और दिनांक 8.7.2002 का आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–6) अभिखंडित किया जाता है। व्यय को लेकर आदेश नहीं है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

प्रदीप कुमार जायसवाल एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 4769 of 2005. Decided on 3rd July, 2012.

बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914—धारा 7—प्रमाण पत्र मामला–अतिरिक्त स्टांप ड्यूटी की मांग–सर्टिफिकेट कार्यवाही दस्तावेजों के रजिस्ट्रेशन पर आवश्यक स्टांप ड्यूटी के गैर भुगतान के कारण राजस्व की हानि से संबंधित है–याचीगण ने धारा 7 के अधीन नोटिस तामील किया है और राशि तुच्छ है–नोटिस में हस्तक्षेप करने का कारण नहीं–आवेदन खारिज। (पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.–None, For the Petitioner; JC to GP-I, For the Respondent no. 4.

आदेश

दुबारा बुलाए जाने पर मामला सुनवाई के लिए लिया गया था, पर याची की ओर से कोई नहीं उपस्थित हुआ।

2. यह रिट याचिका यह धारित करते हुए कि दिनांक 24.10.1996 और दिनांक 28.11.1996 को याचीगण के पक्ष में निष्पादित विलेख पर अतिरिक्त स्टांप ड्यूटी की मांग अवैध है और अधिकारितावहीन है, प्रत्यर्थीगण को समुचित निर्देश जारी किया जाना और 3453/- रुपयों और 8149/- रुपयों के भुगतान के लिए बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 की धारा 7 के अधीन सर्टिफिकेट मामला सं॰ 202 वर्ष 2005 और 182 वर्ष 2005 में दिनांक 19.2.2005 के नोटिस का अभिखंडन इप्सित करते हुए दाखिल की गयी है।

3. दिनांक 4.1.2006 के आदेश से प्रतीत होता है कि याची को पूरक शपथ पत्र दाखिल करने के लिए चार सप्ताह के समय की अनुमति दी गयी थी। किंतु, याची की ओर से पूरक शपथपत्र दाखिल नहीं किया गया है। दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण उपस्थित हुए हैं और अपना प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है जिसके पैरा 15 में विनिर्दिष्टतः कथन किया गया है कि अंतरित संपत्तियों के संबंध में विक्रय विलेखों पर कम मूल्य के स्टांप का पता चलने पर भारतीय स्टांप अधिनियम, 1899 की धारा 47 (A) (I) के अधीन उपायुक्त द्वारा रेफरेंस केस सं॰ 331 वर्ष 1996 में याची के विरुद्ध कार्यवाही आरंभ की गयी थी। तत्पश्चात् उपायुक्त ने एक पखवारे के भीतर डेफिसिट स्टांप जमा करने का निर्देश दिया और यदि वे एक पखवारे के भीतर डेफिसिट स्टांप जमा करने में विफल रहे तो बिहार/झारखंड (अपनाया गया) एवं ओड़िसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 के अधीन प्रमाण पत्र मामला आरंभ किया जाए और अंततः दोनों याचीगण को 3463/- रुपया और 8149/- रुपया का स्टांप फीस जमा करने का निर्देश दिनांक 16.8.2004 के पत्र सं॰ 1577 और दिनांक 3.3.2004 के पत्र सं॰ 1579 के तहत दिया गया था। याचीगण डेफिसिट स्टांप ड्यूटी जमा करने में विफल रहे और सर्टिफिकेट कार्यवाही में उन्हें नोटिस जारी किया गया था जिसके विरुद्ध वे इस न्यायालय के पास आए हैं।

4. याची ने प्रत्यर्थीगण की ओर से दाखिल उक्त प्रतिशपथ पत्र का कोई प्रत्युत्तर दाखिल नहीं किया है और प्रत्यर्थीगण की ओर से किए गए प्रकथनों का खंडन करने के लिए याची की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ है।

5. यह प्रतीत होता है कि सर्टिफिकेट कार्यवाही समुचित तरीके से आरंभ की गयी है जो विधि में स्थापित प्रक्रिया का अनुसरण में प्रश्नगत दस्तावेजों के रजिस्ट्रेशन पर अपेक्षित स्टांप ड्यूटी के गैर भुगतान के कारण राजस्व की हानि से संबंधित है। बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 की धारा 7 के अधीन याचीगण पर नोटिस तामील की गयी है और राशि तुच्छ है।

6. पूर्वोक्त कारणों से यह न्यायालय पूर्वोक्त नोटिस जारी करने में हस्तक्षेप करने का कारण नहीं पाता है और इस रिट आवेदन में गुणागुण नहीं है। तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

इंद्रदेव विश्वकर्मा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1097 of 2006. Decided on 3rd July, 2012.

सेवा विधि–वसूली–यदि कर्मचारी ने अधिक राशि पाने में दुर्व्यपदेशन अथवा कपट नहीं किया है और अधिक राशि का भुगतान नियोक्ता द्वारा गलत व्याख्या किए जाने के कारण अथवा गलत प्रावधानों का अवलंब लेकर किया गया था और गलती का पता आरंभ में ही नहीं लगा था, तो वसूली की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए–याची की ओर से कपट अथवा दुर्व्यपदेशन के प्रमाण की अनुपस्थिति में याची से वसूली का आदेश नहीं दिया जा सकता है–याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 2 से 6)

निर्णयज विधि.–(2009)3 SCC 475—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Ravi Prakash, For the Petitioner; Mr. Altaf Hussain, For the State.

आदेश

याची वन विभाग में जीप चालक के रूप में कार्यरत था। दिनांक 21.12.2004 के आक्षेपित आदेश के तहत उसे यह कहते हुए कि वेतन को उच्चतर पक्ष पर गलत रूप से नियत करने का कारण उसे इसका गलत रूप से भुगतान किया गया था, उसे 1,40, 387/- रुपया वापस लौटाने के लिए कहा गया था। आक्षेपित आदेश में आगे प्रावधानित किया गया था कि यदि याची राशि का भुगतान एक बार करने में विफल रहता है, इसे उसके वेतन से वसूल किया जाएगा।

2. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं अभिलेख पर उपलब्ध कोई सामग्री नहीं पाता हूँ अथवा आक्षेपित आदेश में इस प्रभाव का उल्लेख नहीं पाता हूँ कि याची ने कभी भी उच्चतर पक्ष पर अपना वेतन नियत करवाने के लिए जिसका वह हकदार नहीं था कोई कपट अथवा दुर्व्यपदेशन किया अथवा भूमिका निभायी थी।

3. यह पूछे जाने पर कि क्या याची ने अधिक राशि पाने में कोई कपट अथवा दुर्व्यपदेशन किया अथवा भूमिका निभायी थी, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने स्पष्टत: कथन किया है कि याची द्वारा कभी भी कपट अथवा दुर्व्यपदेशन नहीं किया गया था और वर्षों से याची को अधिक राशि का भुगतान गलती के कारण किया जा रहा था, उच्चतर वेतन विभाग ने नियत किया था।

4. सैयद अब्दुल कादिर एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (2009)3 SCC 475, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्टत: आदेश दिया है कि यदि कर्मचारी ने अधिक राशि पाने में कोई दुर्व्यपदेशन अथवा कपट नहीं किया है और नियोक्ता द्वारा गलत व्याख्या किए जाने से अथवा गलत प्रावधानों का अवलंब लेकर अधिक राशि का भुगतान किया गया था और आरंभ में ही गलती का पता नहीं लगा था, कर्मचारी से वसूली करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

5. विधि की उक्त सुनिश्चित अवस्था की दृष्टि में, याची की ओर से कपट अथवा दुर्व्यपदेशन के किसी प्रमाण की अनुपस्थिति में याची से वसूली करने का आदेश नहीं दिया जा सकता है।

6. अत:, वर्तमान रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है। व्यय को लेकर आदेश नहीं है।

---

ekuuh;k t ;k jk;] U;k;efr

कृष्णकांत रजक उर्फ कृष्णा पद्मेश

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

A.B.A. No. 1578 of 2012. Decided on 5th July, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 438—अग्रिम जमानत–दहेज अपराधों के लिए अभियोजन–विवाहोपरांत 50,000/- रुपयों की अभिकथित मांग–दहेज की मांग और यातना के संबंध में याची और सह-अभियुक्तगण के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन है–याची को साधारण मानसिक विकलांगता है और उसमें समझने की क्षमता है–आवेदन अस्वीकार। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Prabhas Chandra Jha, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Shekhar Prasad Singh, For the Opp. Party No. 2.

जया रॉय, न्यायमूर्ति.–याची के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 341/323/379 और 498A/34 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन दर्ज मामले में अभियुक्त है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 विवाहोपरांत केवल कुछ दिन के लिए अपने दांपत्यगृह में रही और दिनांक 19.3.2009 को उसने अपने पति (याची) को भी सूचना दिए बिना अपने समस्त गहनों, वस्त्रों और अन्य वस्तुओं को लेते हुए अपना दांपत्य गृह छोड़ दिया। यह निवेदन भी किया गया है कि एस॰ पी॰ धनबाद ने पुलिस इंस्पेक्टर, तोपचांची द्वारा मामले की जाँच करवाया था और उक्त इंस्पेक्टर द्वारा दाखिल रिपोर्ट दर्शाता है कि प्राथमिकी में किए गए संपूर्ण अभिकथन झूठे हैं। यह प्रतिवाद भी किया गया है कि याची मानसिक रूप से विकलांग है और वर्ष 2008 से उसका इलाज चल रहा है। यह प्रतिवाद भी किया गया है कि वर्तमान याची का पिता सदैव विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को अपने साथ रखने को तैयार था और उसने अनेक बार विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को वापस आने के लिए कहा किंतु वह वापस आने को तैयार नहीं हुई।

4. विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विवाहोपरांत याची और अन्य सह-अभियुक्तगण ने 50,000/- रुपया नगद मांगा था और इसे नहीं देने पर याची सहित उन लोगों ने विरोधी पक्षकार सं॰ 2 पर प्रहार करना शुरू किया और क्रूरता से उसके साथ बर्ताव किया। यह निवेदन भी किया गया है कि याची ने पुनः दिनांक 15.3.2009 को पूर्वोक्त राशि का मांग किया और जब सूचक ने इनकार किया, याची और अन्य सह-अभियुक्तगण द्वारा उस पर क्रूरता से प्रहार किया गया था। दिनांक 19.3.2009 को सूचक की माता विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के पास आयी और विवाद सुलझाने का प्रयास किया किंतु चूँकि मामला सुलझ नहीं पाया, वह सूचक को स्वयं अपने घर ले गयी। यह कथन भी किया गया है कि मोबाइल फोन पर भी याची और उसके माता-पिता ने सूचक को धमकी दी और कहा कि वे याची का विवाह किसी अन्य महिला के साथ कर देंगे यदि सूचक अथवा उसके परिवार द्वारा मांग परिपूर्ण नहीं किया जाता है।

5. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित आदेश में आया है कि एस॰ पी॰ धनबाद को प्रस्तुत इंस्पेक्टर की रिपोर्ट दर्शाती है कि उसने विरोधी पक्षकार सं॰ 2 (सूचक) का बयान दर्ज किया था जिसमें उसने कहा था कि उसके ससुराल वाले उसके दांपत्य गृह में उसको प्रताड़ित करते थे और उसका पति (याची) मानसिक रोगी है। राज्य के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि सी॰ एम॰ ओ॰ इलाहाबाद का प्रमाण पत्र दर्शाता है कि यह साधारण मानसिक विकलांगता का मामला है।

6. पक्षों द्वारा किए गए निवेदनों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर सामग्रियों का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि दहेज की मांग और यातना के संबंध में याची और सह-अभियुक्तगण के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन हैं। इसके अतिरिक्त, यद्यपि यह तर्क किया गया है कि याची मानसिक रोगी है किंतु सी॰ एम॰ ओ॰ का रिपोर्ट दर्शाता है कि यह साधारण मानसिक विकलांगता का मामला है और इसलिए उसके पास कम से कम समझने की क्षमता है। इन समस्त पहलूओं पर विचार करते हुए मैं याची को अग्रिम जमानत देने का इच्छुक नहीं हूँ। तद्नुसार, याची की अग्रिम जमानत की प्रार्थना एतद् द्वारा अस्वीकार की जाती है।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

मो॰ सजो रहमान खान

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 6028 of 2004. Decided on 2nd July, 2012.

झारखंड पुलिस निर्देशिका–नियम 826—कर्तव्य से अनधिकृत अनुपस्थिति के लिए सेवा से बर्खास्तगी–2726 दिनों की अनधिकृत अनुपस्थिति सेवा से बर्खास्तगी न्यायोचित ठहराती है–पुलिस बल को कांस्टेबल की दीर्घकालिक अनधिकृत अनुपस्थिति को सहन नहीं करना चाहिए–याचिका खारिज। (पैराएँ 5 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Rohit Roy, For the Petitioner; Mrs. Rakhi Rani, For the State.

आदेश

याची (भूतपूर्व कांस्टेबल) को दिनांक 16.4.2001 को तीन आधारों पर आरोप-पत्रित किया गया थाः–

(i) ;kph fnukd 21.12.92 l fnukd 19.5.2000 rd 2726 fnuk d fy, fdlh vodk'k vFkok lpuk d fcuk vuifLFkr cuk jgkA

(ii) ;kph fnukd 29.9.2000 l fnukd 14.10.2000 rd 16 fnuk d fy, vkfèkÑr :i l vuifLFkr cuk jgkA

(iii) ;kph fnukd 3.1.2001 l fnukd 14.2.2001 rd 42 fnuk d fy, vkfèkÑr :i l vuifLFkr cuk jgkA

2. विधि के अनुरुप जाँच संचालित की गयी थी। याची को पर्याप्त अवसर दिया गया था। याची को सुनने पर और जाँच अधिकारी के समक्ष उपलब्ध समस्त सामग्री पर विचार करने पर जाँच अधिकारी ने पाया है कि तीन भिन्न अवसरों पर याची की आधिकृत अनुपस्थिति, जैसा आरोप-पत्र में उल्लिखित किया गया है, सिद्ध की गयी है। याची के उत्तर और जाँच अधिकारी के निष्कर्षों पर विचार करने पर आरक्षी अधीक्षक ने दिनांक 7.8.2002 को याची को सेवा से बर्खास्त करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया। किंतु, यहाँ यह उल्लेख करना महत्व पूर्ण है कि आक्षेपित आदेश में पूर्व अवसरों पर भी याची की आधिकृत अनुपस्थिति को प्रदीप्त किया गया है।

3. प्राधिकारियों द्वारा सांविधिक अपील और पुनरीक्षण भी खारिज कर दिया गया है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार तर्क किया है कि झारखंड पुलिस निर्देशिका के नियम 826 के मुताबिक सेवा के पूर्व अभिलेख, जिन्हें कार्यवाही के आरोप में सम्मिलित नहीं किया गया है, को बर्खास्तगी का मुख्य दंड अधिरोपित करते हुए विचार में नहीं लिया जाना चाहिए। उन्होंने आगे तर्क किया है कि विद्वान आरक्षी अधीक्षक ने अपने आक्षेपित आदेश में याची की पूर्विक आधिकृत अनुपस्थिति का उल्लेख किया है जो झारखंड पुलिस निर्देशिका के नियम 826 का उल्लंघन है। याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार आरक्षी अधीक्षक ने विगत सेवा अभिलेख के कारण बर्खास्तगी का आदेश पारित करने का मन बनाया है।

5. निर्विवादत याची के विरुद्ध तीनों आरोप सिद्ध किए गए हैं। यदि विभिन्न पूर्विक अवसरों पर याची की पूर्व अनुपस्थिति, जिन्हें आरोप-पत्र में सम्मिलित नहीं किया गया है, को अनदेखा किया भी जाता है, तब भी 2726 दिनों की अधिकृत अनुपस्थिति सेवा से बर्खास्तगी न्यायोचित ठहराती है।

6. इस न्यायालय के दृढ़ मत में, पुलिस बल को कांस्टेबल की दीर्घकालिक आधिकृत अनुपस्थिति को सहन नहीं करना चाहिए और सही प्रकार से प्राधिकारियों द्वारा इसे सहन नहीं किया गया था और याची की बर्खास्तगी पूर्णत: न्यायोचित प्रतीत होती है।

7. अंत में याची के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया है कि यह न्यायालय याची द्वारा दी गयी लंबी सेवा की दृष्टि में बर्खास्तगी के दंड को अनिवार्य सेवानिवृत्ति में संपरिवर्तित करने पर विचार कर सकता है।

8. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किया गया निवेदन इस सरल कारण से स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि याची 2726 दिनों तक अपने कर्तव्य से अनुपस्थित बना रहा और उस अवधि की अनुपस्थिति को पेंशन के नियतिकरण के प्रयोजन से गिने जाने की अनुमति अप्रत्यक्ष रूप से नहीं दी जानी चाहिए और इसलिए, तथ्यों और परिस्थितियों में अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश बिल्कुल अन्यायोचित प्रतीत होता है और बर्खास्तगी का दंड पूर्णत: न्यायोचित है।

9. परिणामस्वरुप, रिट याचिका खारिज की जाती है।

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

रामू सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1764 of 2006. Decided on 3rd July, 2012.

(क) सेवा विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–दिनांक 15.5.1989 की सरकारी अधिसूचना सं॰ 3/C1–2030/88/Ka—सरकारी कर्मचारी की मृत्यु की तिथि से पाँच वर्ष बाद अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित करने वाले आवेदन पर विचार नहीं किया जा सकता है–याचिका खारिज। (पैराएँ 3 एवं 4)

(ख) बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000—धाराएँ 2(f) एवं 85—झारखंड राज्य द्वारा निरसित अथवा संशोधित किए जाने तक बिहार राज्य में प्रयोज्य समस्त विधियाँ झारखंड राज्य में प्रयोज्य होंगी। (पैरा 3)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajesh Kumar, For the Petitioner; M/s. R. N. Roy, Ashok Kumar, For the State.

आदेश

निर्विवादत: याची का पिता स्व॰ बिंदु सिंह दुमका जिला के मसलिया प्रखंड में 'कर्मचारी' के रूप में कार्यरत था और दिनांक 16.2.1986 को सेवारत रहते हुए उसकी मृत्यु हो गयी; याची की माता मृतक की विधवा ने दिनांक 17.4.1986 को उपायुक्त, दुमका को एक पत्र (रिट याचिका का परिशिष्ट-2) यह कहते हुए लिखा है कि वह सेवा नहीं चाहती है। किंतु, उसके पति अपने पीछे तीन अवयस्क पुत्रों को छोड़ गए हैं और उनमें से किसी को भी वयस्कता की आयु प्राप्त करने पर अनुकंपा के आधार पर नियुक्त किया जा सकता है। दिनांक 26.5.2003 के परिशिष्ट-1 के तहत याची ने अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए आवेदन दिया है यह कहते हुए कि सरकारी अधिसूचना सं॰ 3/C1-2030/88Ka दिनांक 15.5.1989 (प्रति शपथ पत्र का परिशिष्ट-A) के मुताबिक सरकारी कर्मचारी की मृत्यु के पाँच वर्षों के भीतर अनुकंपा पर नियुक्ति की जा सकती है और किसी भी मामले में इस परिसीमा को बढ़ाया नहीं जाएगा, सरकारी नियमावली के अधीन याची को नियुक्ति पत्र नहीं दिया गया था। चूँकि, आवेदन पहली बार बिंदु सिंह की मृत्यु के 19 वर्ष बाद दिनांक 26.5.2005 को दिया गया था, अत: दिनांक 15.6.1989 की अधिसूचना की दृष्टि में अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित करने वाले याची के आवेदन को अनुज्ञात नहीं किया गया था।

2. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया है कि दिनांक 15.5.1989 की अधिसूचना को अधिक्रमित करते हुए झारखंड राज्य द्वारा कोई अन्य अधिसूचना जारी नहीं की गयी थी, अत:, इसका झारखंड राज्य पर बाध्यकारी प्रभाव है।

3. बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 की धारा 2(f) के अधीन ''विधि'' की परिभाषा के मुताबिक विधि का बल रखने वाली समस्त सरकारी अधिसूचनाएँ ''विधि'' समझी जाएगी और अधिनियम की धारा 85 के मुताबिक बिहार राज्य में प्रयोज्य समस्त विधियाँ झारखंड राज्य द्वारा निरसित अथवा संशोधित किए जाने तक प्रयोज्य होंगी। अत:, वर्ष 1989 की अधिसूचना (प्रतिशपथ पत्र का परिशिष्ट-A) झारखंड राज्य में पूर्णत: प्रयोज्य है और अधिसूचना के अनुसार सरकारी कर्मचारी की मृत्यु की तिथि से पाँच वर्ष बाद अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित करने वाले आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा। अत:, याची को अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता है।

4. तद्नुसार, रिट याचिका खारिज की जाती है।

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

मदन प्रसाद सिंह

cuke

झारखंड राज्य, परिवहन एवं नागरिक उड्डयन विभाग, राँची के सचिव के माध्यम से एवं अन्य

W.P. (S) No. 6085 of 2004. Decided on 2nd July, 2012

सेवा विधि–बर्खास्तगी–याची टाइमकीपर के रूप पदस्थापित था–याची ने बस कंडक्टर के साथ अभिकथित दुरभिसंधि करके यात्रियों को बिना टिकट यात्रा करने की अनुमति दी–यात्रियों को चेक करना और टिकट जारी करना कंडक्टर का कर्तव्य था–सारी जवाबदेही कंडक्टर की थी–तर्कपूर्ण साक्ष्य के बिना याची बर्खास्त किया गया था–आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–M/s Delip Jerath, Abhinash Kumar, Vineet Kumar Vashistha, For the Petitioner; Mr. Sunil Singh, For Respondent Nos. 2 to 4; M/s Ram Nivas Roy, Ashok Kumar, For the State.

आदेश

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन याची वर्तमान याचिका के जरिए दिनांक 31 अगस्त, 2004 के आदेश का विरोध कर रहा है जिसके द्वारा याची को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था।

2. वर्तमान मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची टाइमकीपर के रूप में पदस्थापित था। दिनांक 20 अप्रिल, 1988 को लिट्रिपाड़ा, जिला पाकुड़ में केन्द्रीय उड़न दस्ते ने दुमका पाकुड़ रुट पर बस सं॰ BRL7627 को चेक किया जिसमें आठ यात्रियों को बेटिकट पाया गया था। यह कहते हुए कि प्रतीत होता है कि याची ने बस कंडक्टर के साथ दुरभिसंधि करके यात्रियों को बेटिकट यात्रा करने की अनुमति दी थी, याची को आरोप-पत्र जारी किया गया था विभागीय जाँच के बाद याची के विरुद्ध आरोप सिद्ध पाया गया था और अंततः याची को सेवा से बर्खास्त करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया गया था।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री दिलीप जेरथ ने जोरदार तर्क किया है कि जब उड़नदस्ते द्वारा बस को चेक किया गया था, यह दुमका-पाकुड़ रुट पर थी और कंडक्टर भी बस में सवार था। उन्होंने आगे तर्क किया है कि यात्रियों के बस में सवार होने के स्थान से दो किलोमीटर के भीतर यात्रियों को टिकट जारी करना कंडक्टर का कर्तव्य था। उन्होंने आगे तर्क किया है कि बस स्टैंड पर पदस्थापित टाइमकीपर को चलती बस में कंडक्टर द्वारा टिकट नहीं जारी करने के लिए दोषी नहीं कहा जा सकता है।

4. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सुनील सिंह ने जोरदार तर्क किया है कि बस के प्रस्थान करने के पहले टिकट खिड़की से टिकट जारी करना याची का मुख्य कर्तव्य था। अतः, यह नहीं कहा जा सकता है कि यात्रियों को टिकट जारी करना केवल कंडक्टर का कर्तव्य था।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि निर्विवादतः उड़नदस्ते द्वारा बस को चेक किया गया था जब बस दुमका-पाकुड़ रुट पर थी। यह सुझाने के लिए कुछ नहीं है, कि समस्त आठ बेटिकट यात्री बस अड्डा पर बस में सवार हुए थे। यदि यह उपधारित भी किया जाता है कि समस्त आठ यात्रीगण बस अड्डा से बेटिकट बस पर सवार हुए थे तब भी यात्रियों

को चेक करना और बेटिकट पाए गए यात्रियों को टिकट जारी करना कंडक्टर का कर्तव्य था। अत:, सारी जवाबदेही कंडक्टर की प्रतीत होती है और किसी तर्कपूर्ण साक्ष्य के बिना याची को सेवा से बर्खास्त किया गया है। मात्र संदेह, चाहे यह कितना भी पक्का क्यों न हो, सेवा से बर्खास्त करने के मुख्य दंड के लिए आधार नहीं बनाया जाना चाहिए। अत:, आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. परिणामस्वरुप, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया जाता है और याची को उस अवधि जिसके लिए उसने काम नहीं किया है के सिवाए समस्त पारिणामिक लाभों के साथ सेवा में पुनर्बहाल करने का निर्देश दिया जाता है। किंतु, याची को उस अवधि जिसके लिए उसने काम नहीं किया है, के लिए मुआवजा के रूप में एकमुश्त 50,000/- रुपयों का भुगतान किया जाएगा।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मेसर्स भारत कोकिंग कोल लि॰

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 2570 of 2006. Decided on 22nd June, 2012.

खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957—धारा 9(2-A)—रॉयल्टी–कोलियरी में काम पर लगाए गए कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए कोयले के संबंध में रॉयल्टी की मांग–खनन पट्टाधारी कोलियरी में काम पर लगाए गए कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए कोयले के संबंध में किसी रॉयल्टी का भुगतान करने का दायी नहीं है परन्तु यह कि ऐसा उपभोग प्रतिमाह एक टन के तिहाई से अधिक न हो–किसी अन्य कंपनी द्वारा गलत रूप से किया गया कोई भुगतान याची को बाध्य नहीं कर सकता है–मांग नोटिस अभिखंडित।

(पैराएँ 11 से 13)

निर्णयज विधि.–(1998)6 SCC 476; 480—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Anoop Kumar Mehta, For the Petitioner; M/s M. S. Akhtar, S.C. Mines, Arvind Kumar Mehta, For the Respondents.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता सुने गए। याची बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ ने दिनांक 24.2.2006 के मेमो सं॰ 235 (परिशिष्ट–4) में अंतर्विष्ट प्रत्यर्थी सं॰ 2, सचिव, खान एवं भूगर्भ विभाग, झारखंड सरकार के पत्र का अभिखंडन इप्सित किया है जिसके द्वारा जिला खनन अधिकारियों को कोलियरी में काम पर लगाए गए कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए कोयले के संबंध में रॉयल्टी की मांग करने का निर्देश दिया गया है। याची ने दिनांक 13.3.2006 के परिशिष्ट–5, दिनांक 18.3.2006 के परिशिष्ट–6 दिनांक 21.3.2006 के परिशिष्ट–8 और दिनांक 25.3.2006 के परिशिष्ट–9 में अंतर्विष्ट पारिणामिक मांगों का अभिखंडन भी इप्सित किया है।

2. आक्षेपित आदेश का विरोध करने के निम्नलिखित आधार हैं:–

(i) खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 (एम॰ एम॰ डी॰ आर॰ अधिनियम) में वर्ष 1972 के संशोधन द्वारा अंत:स्थापित धारा 9 (2A) के अधीन खनन पट्टाधारक, चाहे इन्हें खान

एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) संशोधन अधिनियम, 1972 के पहले अथवा बाद में प्रदान किया गया हो, कोलियरी में काम पर लगाए गए कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए कोयले के संबंध में किसी रॉयल्टी का भुगतान करने के दायी नहीं होंगे परन्तु यह कि कर्मकारों का ऐसा उपभोग प्रतिमाह एक टन की तिहाई से अधिक न हो।

(ii) कि मेसर्स सी॰ सी॰ एल॰ बनाम झारखंड राज्य मामले में सिविल अपील सं॰ 8395 वर्ष 2001 में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए दिनांक 24.9.2003 का निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर प्रयोज्य नहीं है क्योंकि वर्ष 1957 के अधिनियम की धारा 9 (2A) के प्रासंगिक प्रावधान, जैसा वर्ष 1972 में संशोधित किया गया था, प्रश्नगत नहीं थे बल्कि अभिव्यक्ति 'हटाए जाने योग्य' के मुताबिक रॉयल्टी के भुगतान से संबंधित विवाद्यक की व्याख्या उक्त मामले में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की जा रही थी।

3. याची का मामला यह है कि आक्षेपित निर्देश और मांग के पारिणामिक नोटिसों द्वारा राज्य के प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने याची बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के अधीन नियोजित प्रश्नगत कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए कोयले के संबंध में रॉयल्टी मांगना चुना है।

4. प्रत्यर्थी राज्य उपस्थित हुआ है और सिविल अपील सं॰ 8395 वर्ष 2001 में दिनांक 24.9.2003 को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के आधार पर मुख्यत: इसके कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए कोयले के लिए याची बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ पर रॉयल्टी की अपनी मांग को न्यायोचित ठहराते हुए अन्य बातों के साथ अपना प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है। उन्होंने यह भी कथन किया है कि सी॰ सी॰ एल॰ अपने कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए कोयले के रॉयल्टी का भुगतान कर रहा है और उसके समर्थन में वर्ष 2005-06 में सी॰ सी॰ एल॰ के 'चूरी' क्षेत्र द्वारा किए गए भुगतान को प्रतिशपथ पत्र में परिशिष्ट–A के रूप में संलग्न किया है।

5. यहाँ ऊपर उठाए गए विवाद्यक के विनिश्चयकरण के लिए एम॰ एम॰ डी॰ आर॰ अधिनियम, 1957 की धारा 9(2A) को उद्धृत करना समुचित है:–

> *^^[kuu iVVk èkkjd] pkg ;g [kku ,o [kfut (fodkl ,o fofu;eu) l'kkèku vfèkfu;e] 1972 d vkjHk gku d igy vFkok ckn e çnku fd;k x;k gk] dkfy;h e dke ij yxk, x, dedkj }kjk miHkkx fd, x, dk;y d lcèk e fdlh jk;YVh dk Hkxrku dju dk nk;h ugh gkxk ijUr ;g fd dedkj }kjk ,lk miHkkx çfrekg ,d Vu l vfèkd u gkA**

6. रिट याचिका के परिशिष्ट 1 में अंतर्विष्ट आदेश के परिशीलन से, **राष्ट्रीय कोयला विकास निगम लि॰ बनाम उड़ीसा राज्य, 1998 (6) SCC 480** मामले में दिनांक 5.12.1991 को दिए गए निर्णय, जिसे याची के विद्वान अधिवक्ता ने निर्दिष्ट किया है, से प्रतीत होता है कि खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 की धारा 9, जैसी यह वर्ष 1972 के पहले विद्यमान थी, की व्याख्या करते हुए भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि अपीलार्थी–कंपनी धारा 9 के संशोधन के पहले उपभोग के लिए अपने कर्मकार को आपूर्ति किए गए कोयले के लिए रॉयल्टी का भुगतान करने की दायी है, उड़ीसा उच्च न्यायालय के दिनांक 22.1.1977 के निर्णय और आदेश को मान्य ठहराया। उक्त निर्णय के प्रासंगिक पैरा 12 को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *^^i{kk d fo}ku vfèkoDrk dk luu d ckn] ge vihy e x.kkx.k ugh ikr g D;kfd ge [kku ,o [kfut (fofu;eu ,o fodkl) vfèkfu;e] 1957 dh èkkjk 9, tlh ;g o"k 1972 e l'kkèku d igy fo|eku Fkh] dh mPp U;k;ky; dh 0;k[;k e dkb xyrh ugh ikr gA vr% vihykFkh èkkjk 9 d l'kkèku d igy miHkkx d fy, viu dedkjk dk vkifr fd, x, dk;y d fy, jk;YVh dk Hkxrku dju dk nk;h gA**

7. उड़ीसा राज्य एवं अन्य बनाम भारतीय इस्पात प्राधिकरण लि॰, 1998 (6) SCC 476, मामले में अभिव्यक्ति हटाया जाना, जैसा 1957 के अधिनियम की धारा 9(1) में प्रयुक्त किया गया है, के अर्थ के विवाद्यक से संबंधित माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए एक अन्य निर्णय में, जो रिट याचिका के परिशिष्ट 2 में अंतर्विष्ट है, **राष्ट्रीय कोयला विकास (ऊपर)** मामले में दिए गए निर्णय को उसके पैरा 12 में निर्दिष्ट किया गया था जो नीचे उद्धृत किया जा रहा है:–

*"mMh lk mPp U;k;ky; dh ,d vU; [kMihB u jk"Vh; dk;yk fodkl fuxe ekey e bl ç'u ij fopkj djr g, fd D;k Lo; viu ?kjy miHkkx d fy, dedkjk }kjk fudkyk x;k dk;yk jk;YVh d mnxg.k d fy, rjUr n; g] jktLo d çfrokn dk Lohdkj djr g,] vfHkfuèkkfjr fd;k fd ^^[kku d lhe l gVk;k tkuk vkj fiV d e[k d ekè;e l lrg rd bldk fudkyk tkuk jk;YVh d nkf;Ro dk mnHkr dju d fy, èkkjk 9 dh vko';drk lr"V djrk gA** mPp U;k;ky; dk ;g nf"Vdk.k jk"Vh; dk;yk ekey e bl U;k;ky; dk vueknu ik;k g vkj bl U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k fd iVVkèkkjh ml ekey e miHkkx d fy, viu dedkjk dk vkifr fd, x, dk;y d fy, jk;YVh dk Hkxrku dju dk nk;h FkkA***

8. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थी राज्य प्राधिकारियों द्वारा विश्वास किए गए निर्णय में अर्थात् सिविल अपील सं॰ 8395 वर्ष 2001 में जिसे परिशिष्ट 3 के रूप में संलग्न किया गया है, **उड़ीसा राज्य बनाम सेल (ऊपर)** मामले में निर्णय के प्रासंगिक भाग को उद्धृत किया गया है जिसे यहाँ ऊपर उद्धृत किया गया है।

9. याची के अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि सिविल अपील सं॰ 8395 वर्ष 2001 में उद्धृत पूर्वोक्त निर्णय को प्रत्यर्थीगण द्वारा संदर्भ से बाहर निकाला गया है क्योंकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिव्यक्ति 'हटाया जाना', जैसा 1957 के अधिनियम की धारा 9(1) में प्रयुक्त किया गया है, की व्याख्या के लिए इसे उद्धृत किया था जो निम्नलिखित है:–

*"mMh lk mPp U;k;ky; dh ,d vU; [kMihB u jk"Vh; dk;yk fodkl fuxe ekey e bl ç'u ij fopkj djr g, fd D;k Lo; viu ?kjy miHkkx d fy, dedkjk }kjk fudkyk x;k dk;yk jk;YVh d mnxg.k d fy, rjUr n; g] jktLo d çfrokn dk Lohdkj djr g,] vfHkfuèkkfjr fd;k fd ^^[kku d lhe l gVk;k tkuk vkj fiV d e[k d ekè;e l lrg rd bldk fudkyk tkuk jk;YVh d nkf;Ro dk mnHkr dju d fy, èkkjk 9 dh vko';drk lr"V djrk gA** mPp U;k;ky; dk ;g nf"Vdk.k jk"Vh; dk;yk ekey 5.12.1991 dk fofuf'pr lh0 ,0 l0 807 o"k 1976 e bl U;k;ky; dk vueknu ik;k g vkj bl U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k fd iVVkèkkjh ml ekey e miHkkx d fy, viu dedkjk dk vkifr fd, x, dk;y d fy, jk;YVh dk Hkxrku dju dk nk;h FkkA***

10. ऊपर उद्धृत उद्धरण में दिनांक 5 दिसंबर, 1991 को विनिश्चित सिविल अपील सं॰ 807 वर्ष 1976 में सिविल अपील सं॰ 807 वर्ष 1976 के प्रति निर्देश राष्ट्रीय कोयला विकास निगम उड़ीसा राज्य मामले में दिए गए उसी निर्णय, जो परिशिष्ट 1 के रूप में संलग्न है, से लिया गया है जिसमें वर्ष 1972 में धारा 9 के संशोधन के पहले अपने कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए कोयला के रॉयल्टी के भुगतान के लिए कोयला कंपनी का दायित्व प्रश्नगत था।

11. पूर्वोक्त निवेदनों से याची के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार तर्क किया कि यहाँ ऊपर उद्धृत धारा 9(2A) के प्रावधान के प्रभाव में आने के बाद कोयला कंपनी में याची खनन पट्टाधारी कोलियरी में काम पर लगाए गए कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए किसी कोयला के संबंध में किसी रॉयल्टी का

भुगतान करने का दायी नहीं है परन्तु यह कि कर्मकारों का ऐसा उपभोग प्रतिमाह एक टन की तिहाई से अधिक न हो। आगे निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारी ने सिविल अपील सं॰ 8395 वर्ष 2001 (रिट याचिका का परिशिष्ट 3) में दिए गए निर्णय पर गलत रूप से विश्वास किया है और संदर्भ से बाहर इसका पठन किया है।

12. ऊपर की गयी चर्चा से स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी-प्राधिकारीगण ने एम॰ एम॰ डी॰ आर॰ अधिनियम की धारा 9(2A) के प्रावधान को विचार में नहीं लिया है जिसमें खनन पट्टा धारक कोलियरी में काम पर लगाए गए कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए कोयला के संबंध में किसी रॉयल्टी का भुगतान करने का दायी नहीं है परन्तु यह कि ऐसा उपभोग प्रतिमाह एक टन के तिहाई से अधिक न हो। इसके अतिरिक्त, प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण ने संदर्भ से बाहर जाकर सिविल अपील सं॰ 8395 वर्ष 2001 में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है क्योंकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उक्त निर्णय में राष्ट्रीय कोयला विकास निगम मामले में सिविल अपील सं॰ 807 वर्ष 1976 में किया गया निर्देश स्पष्टत: धारा 9 के संशोधन के पहले के मामले पर विचार करता है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थी के प्रतिवाद कि अन्य कोयला कंपनी सी॰ सी॰ एल॰ रॉयल्टी का भुगतान कर रही है, का उत्तर देते हुए निवेदन किया विधि का आदेश अत्यन्त स्पष्ट है और प्रत्यर्थीगण ने बिल्कुल संदर्भ से बाहर जाकर निर्णय पर विश्वास किया है जो याची के वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है, अत: किसी अन्य कंपनी द्वारा गलत रूप से किया गया कोई भुगतान याची को बांध नहीं सकता है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रतिवाद भी किया है कि वर्ष 2006 के बाद भी शायद प्रत्यर्थीगण को अपनी गलती का अहसास हो गया है और, इसलिए, उन्होंने कोलियरी में काम पर लगाए गए कर्मकारों द्वारा उपभोग किए गए कोयला के संबंध में ऐसी रॉयल्टी की मांग नोटिस को नहीं भेजा है।

13. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं याची के अधिवक्ता के तर्क और प्रतिवाद में सार पाता हूँ और तद्नुसार परिशिष्ट 4 में अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश और परिशिष्टों 5, 6, 8 और 9 में अंतर्विष्ट मांग की पारिणामिक नोटिस विधि में संपोषित नहीं किए जा सकते हैं और तद्नुसार अभिखंडित किए जाते हैं।

14. रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

उमाशंकर गुप्ता एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 915 of 2003. Decided on 27th June, 2012.

कॉपीराइट अधिनियम, 1957—धाराएँ 52A एवं 68A—बिहार सिनेमा अधिनियम, 1954—धारा 7(1) (2)—विडियो हॉल में फीचर फिल्म का प्रदर्शन-दोषसिद्धि-जुर्माना अधिरोपित-विडियो हॉल चलाने के लिए याचीगण के पास वैध लाइसेंस था और वे कर का भुगतान कर रहे थे-याचीगण के विरुद्ध एकमात्र अभिकथन यह है कि वे घर में देखने के लिए निर्मित कैसेट का प्रदर्शन कर रहे थे-यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं लाया गया है कि याचीगण धारा 52A के उल्लंघन में विडियो फिल्म प्रदर्शित कर रहे थे-याचीगण दोषमुक्त।

(पैराएँ 8 से 12)

अधिवक्तागण.–Mr. A. K. Sahani, For the Petitioners; Mr. Shashank Shekhar Prasad, For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए। उसके ऊपर नोटिस का वैध तामील किए जाने के बावजूद विरोधी पक्षकार सं॰ 2 इस मामले में उपस्थित नहीं हुआ है।

2. याचीगण दांडिक अपील सं॰ 5 वर्ष 2001 और दांडिक अपील सं॰ 10 वर्ष 2001 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट III, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 6 अगस्त, 2003 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा अवर न्यायालय ने कॉपी राइट अधिनियम, 1957 की धारा 68A के अधीन याचीगण की दोषसिद्धि को मान्य ठहराया है और प्रत्येक को 10,000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया था और उसके व्यतिक्रम में प्रत्येक को तीन माह का सामान्य कारावास भुगतना था। ये अपीलें जी॰ आर॰ सं॰ 7 वर्ष 1996/टी॰ आर॰ सं॰ 61 वर्ष 2000 में पारित दिनांक 20.12.2000 के निर्णय और जी॰ आर॰ सं॰ 7 वर्ष 1996/टी॰ आर॰ सं॰ 207 वर्ष 2000 में पारित दिनांक 27.1.2001 के विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, चक्रधरपुर, चाईबासा के विरुद्ध दाखिल की गयी हैं। कथन किया जा सकता है कि अपीलीय अवर न्यायालय ने याचीगण को सिनेमाटोग्राफ अधिनियम की धारा 7 (1) (a) के अधीन अपराध के लिए याचीगण को दोषी नहीं पाया था जिसके लिए भी विचारण न्यायालय द्वारा याचीगण को दोषसिद्ध किया गया था।

3. आक्षेपित निर्णय के परिशीलन से प्रतीत होता है कि याचीगण चक्रधरपुर में विडियो हॉल के स्वामी और कर्मचारी हैं और उन्हें भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420, बिहार सिनेमा अधिनियम, 1954 की धारा 7(1)(2) और कॉपीराइट अधिनियम, 1957 की धारा 52A के अधीन अपराध के लिए चक्रधरपुर पी॰ एस॰ सं॰ 5 वर्ष 1996 में अभियुक्त बनाया गया है जिसे मेसर्स प्रभात टॉकीज, चक्रधरपुर के स्वत्वधारी सूचक आर॰ सी॰ कुमार द्वारा दिए गए लिखित रिपोर्ट के आधार पर संस्थापित किया गया था जिसमें उन्होंने अभिकथित किया कि दिनांक 6.1.1996 को याचीगण चक्रधरपुर में अपने विडियो हॉल में फीचर फिल्म 'करण-अर्जुन' को प्रदर्शित कर रहे थे। व्यापक प्रचार करने और आम जनता से धन प्राप्त करने के बाद उक्त फिल्म चार शो में दिखायी जा रही थी और विडियो हॉल में 175 लोगों को बिठाने की क्षमता थी। लिखित रिपोर्ट में आगे अभिकथित किया गया था कि फिल्म 'करण-अर्जुन' के प्रदर्शन के लिए वितरक और मेसर्स प्रभाव टॉकीज के बीच करार था। इस बीच उक्त विडियो हॉल के स्वामी ने उक्त फिल्म दिखाना शुरू कर दिया था। अभिकथित किया गया था कि उक्त फिल्म का कॉपीराइट किसी मेसर्स सी॰ वाई॰ इंटरनेशनल, पटना के साथ आरक्षित था और उनकी सहमति के बिना उक्त फिल्म विडियो हॉल में प्रदर्शित नहीं की जा सकती थी और यदि इसे प्रदर्शित किया गया था, यह कॉपीराइट अधिनियम का उल्लंघन होगा। वितरक ने 'लोक प्रदर्शन' के लिए उक्त फिल्म का विडियो कैसेट निर्मुक्त नहीं किया था। मेसर्स सी॰ वाई॰ इंटरनेशनल, पटना से मुख्तारनामा पाने का दावा करते हुए सूचक ने पूर्वोल्लिखित प्रभाव का लिखित कथन दाखिल किया था जिसके आधार पर चक्रधरपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 5 वर्ष 1996 जी॰ आर॰ सं॰ 7 वर्ष 1996 के तत्सम, संस्थापित किया गया था।

4. याचीगण का विचारण किया गया था और विचारण न्यायालय द्वारा उनको सिनेमाटोग्राफ अधिनियम की धारा 7 (1) (a) के अधीन और कॉपीराइट अधिनियम की धारा 51 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध तथा कॉपीराइट अधिनियम की धारा 63 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दंडनीय किया गया था और तद्नुसार विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, चक्रधरपुर, चाईबासा द्वारा जी॰ आर॰ सं॰ 7 वर्ष 1996/टी॰ आर॰ सं॰ 61 वर्ष 2000 में पारित दिनांक 20.12.2000 के निर्णय द्वारा और जी॰ आर॰ सं॰ 7 वर्ष 1996/टी॰ आर॰ सं॰ 207 वर्ष 2001 में पारित दिनांक 27.1.2001 के निर्णय द्वारा इसके लिए दंडादेशित किया गया था। दोषसिद्धि के उक्त निर्णयों और दंडादेश के आदेशों से व्यथित होकर

याचीगण ने सत्र न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील सं॰ 5 वर्ष 2001 और दांडिक अपील सं॰ 10 वर्ष 2001 दाखिल किया था जिसे विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ III, चाईबासा द्वारा दिनांक 6.8.2003 के एक ही निर्णय द्वारा निपटाया गया था जिसके द्वारा याचीगण को सिनेमाटोग्राफ अधिनियम की धारा 7 (1) (a) के अधीन दोषसिद्धि से दोषमुक्त किया गया था किंतु कॉपीराइट अधिनियम की धारा 68A के अधीन अपराध के लिए विद्वान अपीलीय न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किया गया था और पूर्वोक्तानुसार जुर्माना का दंडादेश दिया गया था।

5. अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय से प्रकट है कि याचीगण को उक्त अधिनियम की धारा 52-A के प्रावधानों के उल्लंघन के लिए कॉपीराइट अधिनियम की धारा 68A के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया था।

6. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय पूर्णत: अवैध हैं क्योंकि अधिनियम की धारा 52A के किसी उल्लंघन के लिए कॉपीराइट अधिनियम की धारा 68A के अधीन याचीगण के विरुद्ध कोई अपराध बनता नहीं कहा जा सकता है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित निर्णय विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किए जा सकते हैं।

7. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय में अवैधता नहीं है और पुनरीक्षण अधिकारिता में इनमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय में यह आया है कि याचीगण के पास विडियो हॉल चलाने के लिए वैध लाइसेंस था और वे कर का भुगतान भी कर रहे थे। एकमात्र अपराध, जिसके लिए याचीगण को दोषी पाया गया है, कॉपीराइट अधिनियम की धारा 52A के अधीन अपराध है जिसके लिए उन्हें उक्त अधिनियम की धारा 68A के अधीन दंडादेशित किया गया है। कॉपीराइट अधिनियम की धारा 52(A) (2) का पठन निम्नलिखित है:–

"52A. ***lkmM fjdkfMx ,o fofM;k fQYek e lfEefyr dh tkuokyh fof'kf"V;k-&***

*(1) *** *** ****

(2) dkb 0;fDr fdlh ckr d lcèk e fofM;k fQYe çdkf'kr ugh djxk tc rd çnf'kr dju ij fofM;k fQYe e vkj fofM;k dlV vFkok mld vU; dVuj ij fuEufyf[kr fof'kf"V;k dk çnf'kr ugh fd;k tkrk g(

(a) ;fn ,lh Ñfr fluekVkxkQ fQYe g ftl çn'ku d fy, fluekVkxkQ vfèkfu;e] 1952 (1952 dk 37) d çkoèkkuk d vèkhu çekf.kr dju dh vko';drk g] ,lh Ñfr d lcèk e ml vfèkfu;e dh èkkjk 5A d vèkhu ckM vkQ fQYe lfVfQd'ku }kjk çnÙk çek.ki= dh ,d çfr(

(b) ml 0;fDr dk uke vkj irk ftlu fofM;k fQYe cuk;k g vkj mld }kjk ?kk"k.kk fd;k g fd mlu ,lh fofM;k fQYe cuku d fy, ,lh Ñfr d dkihjkbV d Lokeh l lgefr vFkok vko';d ykbll çklr dj fy;k g(,o

(c) ,lh Ñfr e dkihjkbV d Lokeh dk uke vkj irkA

इस प्रकार, कॉपीराइट अधिनियम की धारा 52A के कोरे परिशीलन से प्रकट है कि किसी व्यक्ति

को इस धारा के अधीन अपराध के लिए दोषी पाया जा सकता है यदि उसे विडियो फिल्म में निम्नलिखित विशिष्टियों को प्रदर्शित किए बिना विडियो फिल्म प्रकाशित करता पाया गया है अर्थात्:–

(a) ;fn ,slh Ñfr fluekVkxkQ fQYe g ftl çn'ku d fy, fluekVkxkQ vfèkfu;e d çkoèkkuk d vèkhu çn'ku d fy, ckM vkQ fQYe lfVfQd'ku }kjk çnÙk çek.ki= dh çfr }kjk çekf.kr dju dh vko';drk g]

(b) ml 0;fDr dk uke vkj irk ftle fofM;k fQYe cuk;k g vkj ?kk"k.kk fd;k g fd mlu ,slk fofM;k fQYe cuku d fy, ,slh Ñfr e dkihjkbV d Lokeh l lgefr vFkok vko';d ykbl l çkIr dj fy;k g(,o

*(c) ,slh Ñfr e dkihjkbV d Lokeh dk uke vkj irkA***

9. याचीगण के विरुद्ध संपूर्ण सामग्रियों जैसा आक्षेपित निर्णय में चर्चा की गयी है, से प्रकट है कि याचीगण के विरुद्ध एकमात्र अभिकथन यह है कि वे विडियो हॉल में फिल्म 'करण–अर्जुन' का प्रदर्शन कर रहे थे और कैसेट 'लोक प्रदर्शन' के लिए नहीं था बल्कि कैसेट 'घर में देखने' के लिए था।

10. आक्षेपित निर्णय से आगे प्रतीत होता है कि अवर न्यायालय में छह गवाहों का परीक्षण किया गया था जिसमें से अ॰ सा॰ 1 राम चंद्र कुमार, जो सूचक था, ने केवल यह कथन किया है कि याचीगण अपने विडियो हॉल में फीचर फिल्म 'करण–अर्जुन' प्रदर्शित कर रहे थे। आक्षेपित निर्णय में अ॰ सा॰ 1 के साक्ष्य के चर्चा से प्रकट है कि उसने पूर्वोल्लिखित तीन विशिष्टियों को प्रदर्शित किए बिना विडियो फिल्म के प्रदर्शन के संबंध में अपने साक्ष्य में कुछ भी कथन नहीं किया था जैसा अधिनियम की धारा 52-A (2) के खंडों (a), (b) और (c) के अधीन आवश्यक है। अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 6, क्रमशः पुलिस थाना के प्रभारी–अधिकारी और मामले के आई॰ ओ॰ हैं जिन्होंने भी पूर्वोक्त तीन विशिष्टियों के बारे में कुछ भी कथन नहीं किया है। अ॰ सा॰ 3 ने केवल न्यायालय में कैसेट प्रस्तुत किया है जिसे तात्विक प्रदर्श के रूप में चिन्हित किया गया है। अ॰ सा॰ 4 और अ॰ सा॰ 5 अभिग्रहण सूची गवाह थे जो पक्षद्रोही हो गए थे। इस प्रकार, आक्षेपित निर्णय में चर्चा किए गए साक्ष्य से प्रकट है कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं लाया गया है कि याचीगण ऊपर उल्लिखित तीन विशिष्टियों को प्रदर्शित किए बिना विडियो फिल्म प्रदर्शित कर रहे थे।

11. मामले के उस दृष्टिकोण में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याचीगण द्वारा कॉपीराइट अधिनियम की धारा 52A के अधीन अपराध किया गया कहा नहीं जा सकता है और उक्त अधिनियम की धारा 52A के उल्लंघन के लिए उक्त अधिनियम की धारा 68A के अधीन याचीगण की दोषसिद्धि पोषित नहीं की जा सकती है। तद्नुसार, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण यह है कि अवर न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णयों को विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

12. तद्नुसार, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, चक्रधरपुर, चाईबासा द्वारा जी॰ आर॰ सं॰ 7 वर्ष 1996/टी॰ आर॰ सं॰ 61 वर्ष 2000 में पारित दिनांक 20.12.2000 का और जी॰ आर॰ सं॰ 7 वर्ष 1996/टी॰ आर॰ सं॰ 207 वर्ष 2001 में पारित दिनांक 27.1.2001 के दोषसिद्धि के निर्णयों और दंडादेश के आदेशों को और दांडिक अपील सं॰ 5 वर्ष 2001 और दांडिक अपील सं॰ 10 वर्ष 2001 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट III, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 6 अगस्त, 2003 का निर्णय भी एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। तद्नुसार, याचीगण आरोप से दोषमुक्त किए जाते हैं और इस प्रकार यह पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

फूलचन्द

cuke

सेंट्रल कोलफील्ड लि॰ एवं अन्य

W.P. (S) No. 1288 of 2005. Decided on 2nd July, 2012.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–ऐसे मामले में जहाँ परिवार का एक अन्य सदस्य पहले से ही नियोजन में है, परिवार के दूसरे सदस्य को नियुक्ति नहीं दी जा सकती है–याचिका खारिज। (पैराएँ 6 से 8)

निर्णयज विधि.–2000 (1) LLJ 163—Followed; W.P. (S) No. 5017 of 2003—No more good law.

अधिवक्तागण.–M/s. N. K. Sahani, For the Petitioner; Mr. Amit Kumar Das, For the Respondents.

आदेश

यह रिट याचिका एकल पीठों के दो संघर्षरत निर्णयों की दृष्टि में एक **सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2918 वर्ष 2000 (रमसाई ओराँव बनाम अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, सी॰ सी॰ एल॰ एवं अन्य)** में जिसमें अभिनिर्धारित किया गया है कि जब एक बार परिवार का एक सदस्य उसी नियोक्ता के नियोजन में पहले से ही है, परिवार के एक अन्य सदस्य को अनुकंपा पर नियुक्ति नहीं दी जा सकती है और दूसरा **सकलदीप मुंडा बनाम सेंट्रल कोल फील्ड्स लि॰ एवं अन्य, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5017 वर्ष 2003,** में इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा विपरीत दृष्टिकोण लिया गया है और अभिनिर्धारित किया गया है कि मृतक के परिवार का दूसरा सदस्य भी नियोजन पा सकता है भले ही उसके परिवार का एक सदस्य उसी नियोक्ता के साथ पहले से ही नियोजन में है–दिनांक 21.4.2011 के आदेश के तहत इस न्यायालय की एकल पीठ द्वारा किए गए निर्देश पर सुनवाई के लिए आयी है।

2. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान **सेल बनाम अवधेश सिंह एवं एक अन्य, 2000 (1) LLJ 163,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय की ओर आकृष्ट किया है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि योजना का उद्देश्य ही कार्यरत व्यक्ति को नियुक्ति देना है और द्वितीय नियुक्ति मृतक के आश्रित को नियुक्ति देने की योजना को विफल करेगी। अत:, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में विवाद्यक, जैसा इस न्यायालय को निर्दिष्ट किया गया है, शेष नहीं रहता है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि मृतक के परिवार के दूसरे सदस्य को नियुक्ति देने के लिए प्रत्यर्थीगण ने दिनांक 16.4.2008 को नीतिगत निर्णय लिया।

4. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया है। याची ने इस आधार पर अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित किया कि उसकी माता जो सेंट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड में नियोजित थी की मृत्यु हो गयी है, अत: वह अनुकंपा पर नियुक्ति का हकदार है। प्रत्यर्थीगण का प्रतिवाद है कि याची की माता की मृत्यु हुई है किंतु, याची का पिता पहले से ही प्रत्यर्थी कंपनी की सेवा में है, अत: वह नियुक्ति का हकदार नहीं है।

5. सेल बनाम अवधेश सिंह एवं एक अन्य (ऊपर) मामले में दिए गए माननीय सर्वोच्च

न्यायालय के निर्णय का पैराग्राफ–6 इस विवाद का पूर्ण उत्तर है क्योंकि **सेल (ऊपर)** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उन आश्रितों को नियुक्ति देने की नीति को स्वीकार नहीं किया है जिनके परिवार के सदस्य पहले से ही नियोजन में हैं। उक्त निर्णय का पैरा 6 नीचे उद्धृत किया जाता है:–

*"6. nkuk i{kk d fo}ku vfèkoDrk }kjk fd, x, fuonuk dk è;ku e yr g, gekj le{k fopkjkFk mnHkr ,dek= ç'u ;g g fd D;k djkj Kkiu d vèkhu vudik d vkèkkj ij fu;fDr dk nkok djuk erd d vkfJr dk vuK; g tc erd dk dkb vU; vkfJr igy l gh lok e gA ;g dgk tk, fd ç'uxr djkj Kkiu lkfofèkd ;ktuk ugh g vkj blfy, Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 226 d vèkhu vçoruh; gkxhA vudik d vkèkkj ij fu;fDr d fy, djkj Kkiu fu;kDrk }kjk fodflr fd;k x;k Fkk rkfd fdlh depkjh dh vpkud eR; ij mld vkfJr clgkjk dh rjg lMd ij u vk tk, vkj viuk thou ;kiu dj ld ;fn erd d vkfJrk e l fdlh dk fu;fDr nh tkrh gA ,lh ;ktuk ifjdfYir ugh dh tk ldrh g ;fn erd dk dkb vU; vkfJr igy l gh lok e gA ogh mí'; fo'k"k ft ld fy, ,lh ;ktuk fodflr dh x;h Fkh] foQy gk tk,xh ;fn bl rF; d ckotn fd erd dk vU; vkfJr igy l gh lok e g] erd d vkfJr }kjk çkFkfedrk vkèkkj ij nkok fd;k tkrk gA ekey d bl nf"Vdk.k e ge vk{kfir fu.k;k e iVuk mPp U;k;ky; d fu.k; dk lkf"kr dju e v{ke gA ;g dgk tk ldrk g fd bl U;k;ky; dh ihB u ,l0 ekgu cuke rfeyukM ljdkj e igy gh le#i nf"Vdk.k viuk;k g ftld lkFk ge lEekuiod lger gA***

6. उक्त कारणों से, अभिनिर्धारित किया जाता है कि ऐसे मामले में जहाँ परिवार का एक अन्य सदस्य पहले से ही नियोजन में है, प्रत्यर्थीगण द्वारा परिवार के दूसरे सदस्य को नियुक्ति नहीं दी जा सकती है। अत:, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उक्त निर्णय की दृष्टि में **सकलदीप मुंडा** में दिए गए निर्णय में अधिकथित विधि अच्छी विधि नहीं है।

7. याची के विद्वान अधिवक्ता की प्रार्थना के संबंध में कि दिनांक 16.4.2008 के नीतिगत निर्णय के अधीन उसके मामले पर विचार करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को दिया जा सकता है, हमारा सुविचारित मत है कि मामले के तथ्यों में प्रत्यर्थी–प्राधिकारी को ऐसा निर्देश नहीं दिया जा सकता है क्योंकि कर्मचारी की मृत्यु वर्ष 2002 में हुई थी और यह नीतिगत निर्णय दिनांक 16.4.2008 को अस्तित्व में आया। अत: हम निर्दिष्ट विवाद्यक का उत्तर देते हुए हम याची की रिट याचिका खारिज करते हैं क्योंकि उक्त निर्दिष्ट प्रश्न 7 का उत्तर देने के बाद विद्वान एकल न्यायाधीश को मामला वापस भेजने से कोई लाभदायी प्रयोजन पूरा नहीं होगा।

8. तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; ,p lh feJk] U;k;efr

गोविन्द यादव एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

W.P. (Cr.) No. 442 of 2010. Decided on 3rd July, 2012.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 311—गवाह का परीक्षण–आक्षेपित आदेश द्वारा अवर न्यायालय ने ऐसे गवाहों जिन्हें आरोप-पत्र में नामित नहीं किया गया है के परीक्षण का निर्देश दिया–अन्वेषण के दौरान उनके बयानों को पुलिस द्वारा दर्ज नहीं किया गया था–अभियोजन साक्ष्य बंद करने के बाद भी अभियोजन को गवाहों का परीक्षण करने के लिए पर्याप्त अवसर दिया गया था किंतु अभियोजन ने अवसर का लाभ नहीं लिया था और अभियोजन को पर्याप्त अवसर देने के बाद अभियोजन साक्ष्य पुनः बन्द कर दिया गया था–गवाहों का परीक्षण जिन्हें आरोप-पत्र में नामित नहीं किया गया था और जिनके बयानों को अन्वेषण के दौरान पुलिस द्वारा दर्ज नहीं किया गया था और उनमें से एक अभियोजन द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया था यद्यपि न्यायालय ने अभियोजन को पर्याप्त अवसर दिया था, निश्चय ही अभियोजन को कमी पूरा करने की अनुमति देने के अतिरिक्त याचीगण के बचाव के प्रतिकूल जाएगा–आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–M. K. P. Choudhary, For the Petitioner; APP, For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याचीगण ने इस रिट आवेदन में एस॰ टी॰ सं॰ 216 वर्ष 2003 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ II, तेनुघाट द्वारा पारित दिनांक 7.10.2010 के आदेश को चुनौती दी है, जिसके द्वारा गवाह अर्थात् भुवनेश्वर गोप का परीक्षण करने के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन अभियोजन द्वारा दाखिल आवेदन अनुज्ञात किया गया था और इसी आदेश द्वारा अवर न्यायालय ने गवाह भुवनेश्वर गोप के अस्पताल में इलाज के संबंध में न्यूरोसर्जरी के डॉक्टर, आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ विभाग, राँची से परीक्षण करने का निर्देश भी दिया है।

3. अवर न्यायालय द्वारा दिनांक 7.10.2010 के आदेश को पारित करने का अवसर देने वाले तथ्य ये हैं कि याचीगण गोमियो पी॰ एस॰ केस सं॰ 80 वर्ष 2002, जी॰ आर॰ सं॰ 667 वर्ष 2002 के तत्सम, से उद्भूत होने वाले एस॰ टी॰ सं॰ 216 वर्ष 2003 में भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 323/34, 341/34, 324/34 और 308/34 के अधीन अपराध के लिए विचारण का सामना कर रहे हैं। यह प्रतीत होता है कि उक्त विचारण में अभियोजन साक्ष्य दिनांक 12.12.2006 को बन्द कर दिया गया था तथा अभियुक्तगण के बयानों को दर्ज करने के लिए तिथि नियत की गयी थी जिसे दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दिनांक 8.1.2007 को दर्ज किया गया था और बचाव के साक्ष्य के लिए मामला रखा गया था। बचाव द्वारा साक्ष्य दिए जाने के बाद दिनांक 19.1.2007 को बचाव साक्ष्य भी बन्द कर दिया गया था और अंतिम तर्क के लिए मामला नियत किया गया था। तर्क के चरण पर, अभियोजन द्वारा पाँच गवाहों अर्थात् भुवनेश्वर गोप, छोटवा देवी, यदुनंदन यादव और दो डॉक्टरों का परीक्षण करने के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन याचिका दाखिल की गयी थी। इस तथ्य कि भुवनेश्वर गोप घटना में घायल हुआ था और आर॰ एम॰ सी॰ एच॰, राँची और केंद्रीय अस्पताल, सी॰ सी॰ एल॰, गांधीनगर में इलाज करवाया था, को विचार में लेते हुए न्यायालय द्वारा दिनांक 17.2.2007 के आदेश द्वारा उक्त आवेदन अनुज्ञात किया गया था। किंतु, उक्त आदेश द्वारा, न्यायालय ने यह स्पष्ट करते हुए कि इसके लिए अतिरिक्त समय की अनुमति नहीं दी जाएगी, चार क्रमिक तिथियों के भीतर समस्त गवाहों का परीक्षण करने का निर्देश भी दिया था। यह प्रतीत होता है कि तत्पश्चात् दो गवाहों का परीक्षण किया गया था किंतु भुवनेश्वर गोप का परीक्षण नहीं किया जा सका था क्योंकि वह दो तिथियों पर अपने साक्ष्य के लिए उपस्थित हुआ किंतु उसका परीक्षण इस तथ्य

के कारण नहीं किया जा सका था क्योंकि एक तिथि पर पीठासीन अधिकारी अवकाश पर था जबकि दूसरी तिथि पर पीठासीन अधिकारी स्थानांतरित कर दिया गया था। चूँकि बाद की तिथियों पर अभियोजन द्वारा गवाह प्रस्तुत नहीं किया गया था, दिनांक 29.11.2007 को अभियोजन साक्ष्य पुनः बंद कर दिया गया था। दिनांक 19.11.2008 को अभियोजन ने गवाह के रूप में भुवनेश्वर गोप का परीक्षण करने की अनुमति के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन याचिका दाखिल किया। किंतु अवर न्यायालय द्वारा यह कथन करते हुए कि भुवनेश्वर गोप और अन्य गवाहों का परीक्षण करने के लिए अभियोजन को पर्याप्त समय दिया गया था, दिनांक 18.12.2008 के विस्तृत आदेश द्वारा उक्त आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था। किंतु प्रतीत होता था कि अभियोजन गवाहों को प्रस्तुत करने से हिचक रहा था। न्यायालय का मत यह भी था कि उक्त गवाह का परीक्षण करने की अनुमति देना अपने पूर्व आदेश के पुनर्विलोकन के तुल्य होगा। पुनः दिनांक 23.9.2010 को अभियोजन ने भुवनेश्वर गोप और उक्त मामले के आई॰ ओ॰ के साक्ष्य के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन आवेदन दाखिल किया। बचाव पक्ष ने आई॰ ओ॰ के परीक्षण पर आपत्ति नहीं किया और तद्नुसार, आई॰ ओ॰ का परीक्षण और प्रतिपरीक्षण किया गया था। किंतु जहाँ तक गवाह भुवनेश्वर गोप का संबंध था, बचाव पक्ष ने इस पर आपत्ति किया किंतु दिनांक 7.10.2010 के आक्षेपित आदेश द्वारा अवर न्यायालय ने गवाह के रूप में भुवनेश्वर गोप का परीक्षण करने की अनुमति अभियोजन को दिया और उस डॉक्टर के परीक्षण का भी आदेश दिया जिसने उक्त भुवनेश्वर गोप का इलाज किया था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन करते हुए आक्षेपित आदेश को चुनौती दिया है कि भुवनेश्वर गोप आरोप पत्रित गवाह नहीं है और उसका बयान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 161 के अधीन पुलिस द्वारा दर्ज नहीं किया गया था। यद्यपि अभियोजन उक्त गवाह का परीक्षण करना चाहता था और गवाह का परीक्षण करने के लिए अभियोजन को पर्याप्त अवसर दिया गया था किंतु उसके बावजूद गवाह प्रस्तुत नहीं किया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि स्वयं दिनांक 14.10.2003 को विचारण में आरोप विरचित किए गए थे, जबकि अभियोजन साक्ष्य बंद करने के बाद भी भुवनेश्वर गोप का परीक्षण करने के लिए अभियोजन को पर्याप्त समय दिया गया था किंतु उक्त गवाह का परीक्षण नहीं किया गया था। दिनांक 7.10.2010 के आदेश द्वारा अवर न्यायालय ने भुवनेश्वर गोप के परीक्षण के लिए आवेदन अनुज्ञात किया है जो कमी पूरा करने के तुल्य है और याचीगण के बचाव के प्रतिकूल जाएगा। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

5. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है और इंगित किया है कि आक्षेपित आदेश से प्रतीत होगा कि उक्त भुवनेश्वर गोप घायल गवाह है और तद्नुसार, न्याय के उद्देश्य के लिए भुवनेश्वर गोप का परीक्षण आवश्यक है। इंगित किया गया है कि आक्षेपित आदेश दर्शाएगा कि भुवनेश्वर गोप परीक्षण के लिए अवर न्यायालय में दो तिथियों पर उपस्थित था, किंतु पीठासीन अधिकारी की अनुपस्थिति के कारण उसका बयान दर्ज नहीं किया जा सका था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि भुवनेश्वर गोप घायल गवाह होने के नाते अभियोजन के लिए महत्वपूर्ण गवाह था और न्याय के उद्देश्य के लिए विचारण में उसका परीक्षण जरूरी है और इस प्रकार, अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है।

6. दोनों पक्षों के अधिवक्ताओं को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि आक्षेपित आदेश द्वारा अवर न्यायालय ने ऐसे गवाहों जिन्हें आरोप पत्र में नामित नहीं किया गया है के परीक्षण का निर्देश दिया है। पुलिस द्वारा अन्वेषण के दौरान उनके बयानों को दर्ज नहीं किया गया था।

इसके अतिरिक्त, अभियोजन साक्ष्य बन्द करने के बाद भी गवाहों का परीक्षण करने के लिए अभियोजन को पर्याप्त अवसर दिया गया था, किंतु अभियोजन ने अवसर का लाभ नहीं लिया था और अभियोजन को पर्याप्त अवसर देने के बाद पुनः अभियोजन साक्ष्य बंद कर दिया गया था। मामले के इस दृष्टिकोण में मेरे सुविचारित मत में गवाहों, जिन्हें आरोपपत्र में नामित नहीं किया गया था और जिनके बयानों को पुलिस द्वारा अन्वेषण के दौरान दर्ज नहीं किया गया था और उनमें से एक को अभियोजन द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया था यद्यपि न्यायालय ने अभियोजन को पर्याप्त अवसर दिया था, का परीक्षण अभियोजन को कमी पूरा करने की अनुमति देने के अतिरिक्त याचीगण को बचाव के प्रतिकूल जाएगा। तद्नुसार, आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

7. पूर्वोक्त कारणों से, एस॰ टी॰ सं॰ 216 वर्ष 2003 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ II, तेनूघाट द्वारा पारित दिनांक 7.10.2010 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है और अवर न्यायालय को शीघ्रातिशीघ्र मामला निपटाने का निर्देश दिया जाता है। तद्नुसार, यह रिट आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

संजय चमरिया एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1357 of 2011. Decided on 24th July, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 420 एवं 468—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग, छल एवं कूटरचना–संज्ञान–इसके पहले याचीगण ने एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन परिवादी के विरुद्ध परिवाद दर्ज किया था–वर्तमान परिवाद प्रतिशोध लेने के लिए दाखिल किया गया है क्योंकि स्वयं परिवादी ने स्वीकार किया है कि उसे धमकाया गया था कि माध्यस्थ द्वारा पारित अधिनिर्णय निष्पादित किया जाएगा और आगे इस तथ्य के कारण कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन परिवादी के विरुद्ध परिवाद दर्ज किया गया था–संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 8 से 12)

निर्णयज विधि.–(1992) Supp. (1) SCC 335—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Bibhash Sinha, For the Petitioners; A.P.P., For the State; Mr. P. K. Choudhary, For the Complainant.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और परिवादी के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन दिनांक 4.6.2011 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन तत्कालीन न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर ने याचीगण और अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420, 468 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए संज्ञान लिया था, सहित परिवाद मामला C/1 सं॰ 1329 वर्ष 2011 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

3. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि मैगमा फिनकॉर्प लिमिटेड, जिसके याचीगण प्रबंध निदेशक और प्राधिकृत प्रतिनिधि हैं, द्वारा वित्त प्रदान किए जाने पर परिवादी ने रजिस्ट्रेशन सं॰ JH-05W-4410 वाला ट्रक खरीदा। जब परिवादी इसके प्रीमियम का भुगतान करने में विफल रहा, दिनांक 30.7.2009 को वित्त कंपनी की ओर से वाहन को पुनः कब्जे में ले लिया गया था। इस प्रकार कब्जा लेने पर, परिवाद मामला सं॰ 1329 वर्ष 2011 दाखिल किया गया था। उस पर मामला मध्यस्थता के लिए निर्दिष्ट किया गया था और मध्यस्थ ने दिनांक 31.3.2010 को वित्तदाता के पक्ष में अधिनिर्णय दिया। वित्तदाता कंपनी के पक्ष में अधिनिर्णय पारित किए जाने के बावजूद जब भुगतान नहीं किया गया था, वित्त कंपनी परिवाद मामला सं॰ 34471 वर्ष 20910 दिनांक 22.11.2010 को परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 के अधीन अपराध किए जाने के लिए दाखिल किया। केवल तब, इस परिवादी ने दिनांक 21.4.2011 को परिवाद मामला दर्ज किया और उन समस्त अभिकथनों को किया जो परिवाद मामला सं॰ 4041 वर्ष 2009 में किए गए थे और इसमें कतिपय जोड़ा जिसमें यह अभिकथित किया गया था कि वाहन की खरीद के समय दिए गए चार ब्लैंक चेकों पर राशि भर कर इनका उपयोग कर लिया गया था, यद्यपि परिवादी ने इनको वापस लौटाने का अनुरोध किया था। ऐसे अभिकथन पर, इन याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420, 468 के अधीन अपराध का संज्ञान दिनांक 4.6.2011 के आदेश के तहत लिया गया था। वह आदेश चुनौती के अधीन है।

4. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उक्त कथित तथ्य से स्पष्ट है कि परिवाद याचिका में जो भी अभिकथन किए गए हैं, वे समस्त अभिकथन द्वेषपूर्ण हैं क्योंकि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध करने के लिए परिवादी के विरुद्ध कंपनी द्वारा परिवाद दर्ज किया गया था जिस तथ्य को परिवादी ने स्वयं अपनी परिवाद याचिका में स्वीकार किया है।

5. आगे, परिवाद में अभिकथित किया गया है कि याचीगण परिवादी को धमकी दे रहे हैं कि वे अपने पक्ष में पारित अधिनिर्णय को निष्पादित करेंगे जो स्पष्ट करता है कि वर्तमान अभियोजन द्वेषपूर्ण अभियोजन है।

6. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याचीगण के पक्ष में अधिनिर्णय पारित किए जाने के संबंध में जो भी बयान दिया गया है, वह गलत है कि, वस्तुतः, परिवादी ने वाहन की खरीद के समय वित्तदाता के पास चार ब्लैंक चेकों को जमा किया था और जब वित्तदाता ने वाहन को पुनः अपने कब्जा में ले लिया था, परिवादी ने उन समस्त चेकों को लौटाने का अनुरोध किया था किंतु याचीगण ने उन समस्त चेकों को लौटाने के बजाए दो चेकों का उपयोग किया, कि याचीगण ने ब्लैंक चेकों में राशि भरा और इसे बैंक में जमा करवाया जिसने इसका अनादर कर दिया।

7. ऐसी स्थिति में, न्यायालय ने अपराधों का संज्ञान लिया है और इस प्रकार, संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन अपेक्षणीय नहीं है।

8. इस चरण पर, न्यायालय अभिकथन की सत्यता की जाँच नहीं कर सकता है और इस प्रकार, इस चरण पर विनिश्चित नहीं किया जा सकता है कि क्या याचीगण द्वारा दर्ज परिवाद सच है या झूठ किंतु तथ्य यह है कि याचीगण ने वस्तुतः परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध करने के लिए परिवाद दर्ज किया था जिसे परिवादी भी अपने परिवाद में स्वीकार करता है और इसके अतिरिक्त, यह प्रकथन भी किया गया है कि परिवादी को धमकाया गया था कि याचीगण मध्यस्थ द्वारा पारित अधिनिर्णय निष्पादित करेंगे।

इस प्रकार, स्वयं तथ्य सुझाता है कि वर्तमान परिवाद मामला द्वेषपूर्वक दर्ज किया गया था।

9. इस चरण पर, मैं **हरियाणा राज्य बनाम भजनलाल, (1992) Supp (1) SCC 335,** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसमें अभिनिर्धारित किया गया है कि जहाँ दांडिक कार्यवाही स्पष्टत: असद्भावपूर्ण है और/अथवा जहाँ कार्यवाही अभियुक्त से प्रतिशोध लेने के अंतरस्थ हेतु के साथ और निजी दुश्मनी के कारण उसको अपमानित करने की दृष्टि से द्वेषपूर्वक संस्थापित की गयी है, परिवाद अथवा प्राथमिकी अभिखंडित किए जाने की दायी है।

10. उक्त सिद्धांत लागू करते हुए, उक्त कथित तथ्यों और परिस्थितियों के अधीन प्रकट है कि वर्तमान परिवाद प्रतिशोध लेने के लिए दाखिल किया गया था क्योंकि स्वयं परिवादी ने स्वीकार किया है कि उसको धमकाया गया था कि मध्यस्थ द्वारा पारित अधिनिर्णय निष्पादित किया जाएगा और आगे इस तथ्य के कारण कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन परिवादी के विरुद्ध परिवाद दर्ज किया गया था।

11. तद्नुसार, दिनांक 4.6.2011 के आदेश सहित परिवाद केस C/1 सं॰ 1329 वर्ष 2011 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

12. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkykd flg] U;k;efr

सविता लोहरीवाल एवं एक अन्य (22 में)

पंकज लोहरीवाल (24 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य (दोनों में)

W.P. (Cr.) Nos. 22, 24 of 2012. Decided on 3rd August, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420/406/120B—भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—न्यास का दांडिक भंग, छल एवं षडयंत्र–संज्ञान–मात्र इसलिए कि अभियुक्तगण परिवादी द्वारा आपूर्ति किए गए सामग्रियों के लिए परिवादी को भुगतान नहीं कर रहे हैं, आरंभ से ही आपराधिक मन:स्थिति के अभाव में छल का अपराध गठित नहीं करेगा–न्यास के दांडिक भंग का अपराध आकृष्ट करने के लिए खरीद-बिक्री वार्ता के अधीन आपूर्ति की गयी सामग्री खरीदार को संपत्ति सौंपे जाने के तुल्य नहीं होगी–वर्तमान मामला वाणिज्यिक वादा के भंग का मामला है किंतु छल अथवा न्यास के दांडिक भंग का मामला नहीं बनाता है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित–याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 6 से 9)

अधिवक्तागण.–M/s Sumeet Gadodia, Rajesh Kumar, For the Petitioners; M/s Rajeeva Sharma, Manoj Kumar, For Opp. Party No. 2.

आदेश

वर्तमान याचिका के रूप में, याचीगण सी॰ पी॰ केस सं॰ 287 वर्ष 2010 में सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 23.9.2010 के आदेश और संपूर्ण दांडिक कार्यवाही का विरोध कर रहे हैं।

2. अन्य बातों के साथ संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि परिवादी प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने दं॰ दं॰ सं॰ की धारा 200 के अधीन सी॰ जे॰ एम॰, धनबाद के न्यायालय में इस अभिकथन के साथ दांडिक परिवाद दाखिल किया है कि मेसर्स वी॰ एस॰ एस॰ इलेक्ट्रो कास्ट प्रा॰ लि॰, 23 नेताजी सुभाष रोड द्वितीय मंजिल, कोलकात्ता–1, जिसके अभियुक्त सं॰ 1 से 4 निदेशक थे, ने परिवादी प्रत्यर्थी सं॰ 2 को विभिन्न तिथियों पर ईंट की आपूर्ति करने के लिए तैयार किया। अभियुक्त सं॰ 1 से 4, निदेशकगण मेसर्स वी॰ एस॰ एस॰ इलेक्ट्रो कास्ट प्रा॰ लि॰, के आश्वासन कि भुगतान किया जाएगा, पर विभिन्न तिथियों पर ईंटों की आपूर्ति की गयी थी। दिनांक 9.4.2007 को अंतिम आपूर्ति की गयी थी। परिवाद में आगे अभिकथित किया गया है कि तत्पश्चात् मेसर्स एस॰ आर॰ सी॰ मेटैलिक प्रा॰ लि॰ गठित किया गया था और मेसर्स एस॰ आर॰ सी॰ मेटैलिक प्रा॰ लि॰ ने मेसर्स वी॰ एस॰ एस॰ इलेक्ट्रो कास्ट प्रा॰ लि॰ के समस्त दायित्वों को स्वीकार किया है और अभियुक्त सं॰ 1, 2 और 3 मेसर्स एस॰ आर॰ सी॰ मेटैलिक प्रा॰ लि॰ के नए निदेशक बन गए हैं। परिवाद में आगे प्रतिवाद किया गया है कि यद्यपि अभियुक्तगण को परिवादी द्वारा आपूर्ति की गयी सामग्री के विरुद्ध बकाया राशि के भुगतान के लिए परिवादी और अभियुक्तगण के बीच पत्र व्यवहार किया गया था। किंतु, अभियुक्तगण ने परिवादी की बातों पर ध्यान नहीं दिया था। परिवाद में आगे प्रतिवाद किया गया है कि अभियुक्तगण को दिनांक 23.12.2009 को नोटिस दिए जाने के बावजूद अभियुक्तगण ने झूठे एवं तुच्छ कारणों से परिवादी को धन का भुगतान नहीं किया है।

3. विद्वान दंडाधिकारी ने दिनांक 23.9.2010 के आदेश के तहत अभियुक्तगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420/406/120B के अधीन दंडनीय अपराध के लिए विचारण का सामना करने के लिए समन करने का निर्देश दिया है।

4. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख का परिशीलन किया है।

5. परिवादी के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री राजीव शर्मा ने जोरदार तर्क किया कि आरंभ में, नोटिस के जवाब में अभियुक्तगण ने यह कहते हुए कि भुगतान कर दिया गया है अपने दायित्व से इनकार किया है, किंतु आयकर विभाग द्वारा संवीक्षण में पूछे जाने पर उन्होंने स्वीकार किया है कि राशि परिवादी को भुगतान किए जाने के लिए बकाया है, अत: अभियुक्तगण की ओर से गैरईमानदारी सिद्ध है।

6. निर्विवादत: अभियुक्त सं॰ 2 और 3 न तो मेसर्स वी॰ एस॰ एस॰ इलेक्ट्रोकास्ट प्रा॰ लि॰ के निदेशक थे और न ही उस समय उपस्थित थे जब सामग्रियों की आपूर्ति के लिए बातचीत की गयी थी, अत:, यह नहीं कहा जा सकता है कि उन्होंने कभी भी परिवादी को प्रवंचित किया। अत:, मात्र इसलिए कि वे प्रथम कंपनी के दायित्वों का स्वामित्व लेने वाली द्वितीय कंपनी के निदेशक बन गए, भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420/406/120B के अधीन उनके विरुद्ध अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता है।

7. मात्र इसलिए कि अभियुक्तगण परिवादी द्वारा आपूर्ति किए गए सामग्रियों के लिए परिवादी को भुगतान नहीं कर रहे हैं, आरंभ से ही आपराधिक मन: स्थिति की अनुपस्थिति में छल का अपराध गठित नहीं करेगा। इसके अतिरिक्त, न्यास के दांडिक भंग का अपराध आकृष्ट करने के लिए खरीद–बिक्री बातचीत के अधीन आपूर्ति की गयी सामग्री खरीदार को संपत्ति सौंपे जाने के तुल्य नहीं होगी। वर्तमान मामला वाणिज्यिक वादा के भंग का मामला प्रतीत होता है, किंतु न्यास के दांडिक भंग का मामला नहीं बनाता है।

8. निर्विवादत: अभियुक्त सं॰ 4 अजय कुमार गुप्ता उर्फ अजय गुप्ता ने इस न्यायालय के समक्ष दां॰ वि॰ या॰ सं॰ 76 वर्ष 2012 में समन आदेश और दांडिक कार्यवाही को चुनौती दिया है। अभियुक्त सं॰ 4 अजय कुमार गुप्ता की याचिका पर इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने दिनांक 10.4.2012 के

निर्णय के तहत समन के आदेश को अभिखंडित कर दिया है। मैं विपरीत दृष्टिकोण अपनाने का कोई वैध कारण नहीं पाता हूँ।

9. तद्नुसार, वर्तमान याचिका अनुज्ञात की जाती है। आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ dñ ejkfB;k ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

शनिचरिया देवी एवं एक अन्य (1570 में)

गणेश राय एवं एक अन्य (1199 में)

cuke

झारखंड राज्य (दोनों में)

Criminal Appeal (D.B.) Nos. 1570, 1199 of 2003. Decided on 1st August, 2012

सत्र केस सं॰ 189 वर्ष 1997 में श्री अभय शंकर मिश्रा, द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, दुमका द्वारा पारित दिनांक 21.6.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 23.6.2003 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—हत्या–सामान्य आशय–आजीवन कारावास–दोषसिद्धि अपीलार्थी द्वारा गवाहों के समक्ष की गयी संस्वीकृति कि उसने सूचक के पिता की हत्या की, पर आधारित–ऐसी संस्वीकृति के बारे में गवाहों में से किसी ने अन्वेषण अधिकारी के समक्ष प्रकट नहीं किया–अपीलार्थीगण के विरुद्ध विनिर्दिष्ट तौर पर कुछ नहीं आया है–अभियोजन साक्षियों में से कोई भी वास्तविक घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है–अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे वास्तविक घटना का तरीका सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुआ है–अपीलार्थीगण को संदेह का लाभ देते हुए आक्षेपित निर्णय अपास्त।

(पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–None, For the Appellants; Mr. D. K. Chakraverty, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.–अपीलार्थीगण के लिए कोई उपस्थित नहीं हुआ।

2. विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री राजीव शर्मा ने निवेदन किया कि अपीलार्थीगण उनसे फाइल ले लिए हैं।

3. ये अपीलें सत्र केस सं॰ 189 वर्ष 1997 में अपीलार्थीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए और उनको कठोर आजीवन कारावास का दंडादेश देते हुए द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, दुमका द्वारा पारित दिनांक 21.6.2003 के दोषसिद्धि के एक ही निर्णय और दिनांक 23.6.2003 के दंडादेश के एक ही आदेश से उद्भूत होती हैं।

4. संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि जीरु राम (अ॰ सा॰ 5) ने दिनांक 1.8.1996 को प्रातः 7.30 बजे अपने 65 वर्षीय पिता के मृत शरीर के साथ फर्दबयान दर्ज किया कि अपीलार्थी शनिचरिया देवी ने दिनांक 29.7.1996 की रात्रि में लगभग 3 बजे यह कहते हुए उसके पिता को बुलाया कि उसके घर में ''झाड़-फूक'' किया जा रहा था और इस पर सूचक का पिता वहाँ गया। लगभग एक घंटा बाद शनिचरिया देवी द्वारा हल्ला किए जाने पर सूचक अपीलार्थीगण के घर गया और उनको वहाँ उपस्थित देखा। उसने सुना कि उसका पिता चीख रहा था। सूचक ने अन्य के साथ घर घेर लिया, घर में घुसा और अपीलार्थी शनिचर राय को पकड़ लिया जिसने अपना दोष संस्वीकार किया। अन्य अभियुक्तगण भाग गए। सूचक ने खून बहने की उपहति के साथ अपने पिता के बेहोश पड़ा पाया। जब उसे इलाज के लिए

ले जाया जा रहा था, उसकी मृत्यु हो गयी। आगे अभिकथित किया गया है कि लगभग 6-7 वर्ष पहले सूर्य राय ने सूचक के पिता को डायन घोषित किया था जिस कारण वह अपने ससुराल में रहने लगा था।

5. अभियोजन ने 9 गवाहों का परीक्षण किया। अ॰ सा॰ 9 अन्वेषण अधिकारी है और अ॰ सा॰ 8 डॉक्टर है जिन्होंने मृतक का शव परीक्षण किया और उसके मस्तक पर कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित एक विदीर्ण घाव पाया जो मृत्यु का कारण था। अ॰ सा॰ 1 से 7 तक में कोई भी वास्तविक घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है। दोषसिद्धि अपीलार्थी शनिचर राय द्वारा गवाहों के समक्ष की गयी बतायी गयी संस्वीकृति कि उसने सूचक के पिता की हत्या की पर आधारित है। किंतु अन्वेषण अधिकारी के साक्ष्य से प्रतीत होता है कि गवाहों में से किसी ने उसके समक्ष ऐसी संस्वीकृति के बारे में प्रकट नहीं किया था। शनिचरिया देवी के विरुद्ध मामला यह है कि उसने मृतक को बुलाया था किंतु प्राथमिकी में यह कथन भी किया गया है कि उसके शोर करने पर सूचक उसके घर घटना स्थल गया था। अपीलार्थीगण गणेश राय और सहदेव राय के विरुद्ध विनिर्दिष्ट कुछ नहीं आया है। अतः, अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे वास्तविक घटना का तरीका सिद्ध करने में सक्षम नहीं हुआ है।

6. इन परिस्थितियों में, हम अपीलार्थीगण को संदेह का लाभ देने के इच्छुक हैं। तद्नुसार, आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। अपीलार्थीगण गणेश राय, सहदेव राय और शनिचरिया देवी को उनके जमानत बंधपत्रों से उन्मोचित किया जाता है। प्रतीत होता है कि अपीलार्थी शनिचर राय लगभग 14 वर्षों से कारा में है। उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य दांडिक मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

इस प्रकार, दोनों अपीलें अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

डॉ॰ डी॰ मोहन एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (Cr.) No. 172 of 2004. Decided on 2nd July, 2012.

(क) भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 304, 420 एवं 364—अनाशयित मृत्यु कारित करना और उद्यापन–आरोप विरचित–अपराध जिसे अन्य व्यक्ति द्वारा किया जा सकता था, के लिए प्रधिनिधिक दायित्व की विधिक कल्पना के रूप में किसी दायित्व का प्रावधान नहीं है–याचीगण के विरुद्ध किसी विनिर्दिष्ट अभिकथन की अनुपस्थिति में और विधिक कल्पना द्वारा प्रतिनिधिक दायित्व सृजित करती इन धाराओं में किसी प्रावधान की अनुपस्थिति में याचीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420 एवं 384 के अधीन अपराध के लिए प्रतिनिधिक रूप से दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है। (पैराएँ 12 से 15)

(ख) भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 304, 420 एवं 384—भारत का संविधान-अनुच्छेद 226—चिकित्सीय उपेक्षा–बालक मरीज की मृत्यु–यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है कि डॉक्टर द्वारा अपनाया गया रास्ता ऐसा था जिसे किसी भी चिकित्सा पेशेवर ने अपनाया होता यदि उसने सामान्य सावधानी भी बरता होता और न ही यह दर्शाने के लिए कुछ है कि याची ने कुछ किया था अथवा कुछ करने में विफल रहा था जो दी गयी तथ्यों और परिस्थितियों में

किसी भी चिकित्सा पेशेवर ने अपने सामान्य बोध और विवेक में नहीं किया होता अथवा करने में विफल रहा होता–याची ब्लड कैंसर से पीड़ित था और वह उस अंतिम चरण पर शायद पहुँच चुका था जहाँ समस्त इलाज और सुश्रुषा के बाद भी उसे बचाया नहीं जा सकता था–मृत्यु का कारण स्थापित करने के लिए अथवा अभियुक्त का इलाज करने में याची की ओर से उपेक्षा स्थापित करने के लिए मृतक का शव परीक्षण नहीं किया गया था–दांडिक अभियोजन अभिखंडित। (पैराएँ 12 से 15)

निर्णयज विधि.–(1999)1 SCC 188; (2010)7 SCC 578; (2004) 6 SCC 422; (2005) 6 SCC 1; (2009) 6 SCC 475—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Pandey Neeraj Rai, For the Petitioners; Mr. Vijayant Verma, For the State.

एच॰ सी॰ मिश्रा, न्यायमूर्ति.–याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए। बार–बार बुलाए जाने के बावजूद परिवादी प्रत्यर्थी सं॰ 2 के लिए कोई उपस्थित नहीं हुआ, यद्यपि प्रत्यर्थी सं॰ 2 अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित हुआ है। मामले को पहले दिनांक 18.6.2012 को सुना गया था, किंतु चूँकि बार–बार बुलाए जाने पर भी प्रत्यर्थी सं॰ 2 के लिए कोई उपस्थित नहीं हुआ था, मामला स्थगित कर दिया गया था। दिनांक 19.6.2012 को भी बार–बार बुलाए जाने के बावजूद प्रत्यर्थी सं॰ 2 के लिए कोई उपस्थित नहीं हुआ और तद्नुसार मामला सुना गया था।

2. याची सं॰ 1 डॉ॰ डी॰ मोहन और याची सं॰ 2 जोगेश गंभीर जो राज अस्पताल, राँची का निदेशक है ने इस रिट याचिका को एस॰ टी॰ सं॰ 564 वर्ष 2003 में दिनांक 6.1.2004 को उनके विरुद्ध विरचित आरोपों के अभिखंडन सहित उक्त एस॰ टी॰ सं॰ 564 वर्ष 2003 में उनके विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 304, 420 और 384 के अधीन अपराधों के लिए आरोप विरचित करते हुए श्री आर॰ एन॰ तिवारी, विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त, राँची द्वारा पारित दिनांक 6.1.2004 के आदेश के अभिखंडन के लिए और उक्त सत्र विचारण में याचीगण के विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए भी दाखिल किया है।

3. परिवाद मामला प्रत्यर्थी सं॰ 2 प्रेमचंद सिंह द्वारा विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची के न्यायालय में दाखिल किया गया था जिसमें राज अस्पताल का निदेशक होने के नाते याची सं॰ 2 जोगेश गंभीर और मुख्य चिकित्सा अधिकारी होने के नाते याची सं॰ 1 डॉ॰ डी॰ मोहन को इस अभिकथन पर अभियुक्त बनाया गया था कि दिनांक 17.12.1998 को परिवादी के पुत्र अर्थात् साकेत, जो वर्ष 1997 से ब्लड कैंसर से पीड़ित था और उक्त बीमारी के लिए टाटा मेमोरियल अस्पताल, मुंबई में इलाज करवा रहा था, को राज अस्पताल ले जाया गया था क्योंकि उसे साँस लेने में तकलीफ थी और नब्ज धीमी थी। परिवादी ने अस्पताल के प्राधिकारियों को सूचित किया कि उसका पुत्र ब्लड कैंसर का मरीज था और भरती किए जाने के समय पर टाटा मेमोरियल अस्पताल में उसके पुत्र के इलाज से संबंधित सारे कागजातों को सौंप दिया और उसने साँस फूलना कम करने के लिए अपने पुत्र को रक्त चढ़ाने के लिए अस्पताल के प्राधिकारियों को बार–बार कहा। यह अभिकथित किया गया है कि अस्पताल के डॉक्टरों ने सावधानी नहीं बरती और उन्होंने 1000/- रुपया जमा करने पर जोर दिया और केवल तत्पश्चात, इलाज प्रारम्भ किया जाना था जिसमें कुछ वक्त लगा। अंततः, लड़के को कमरा सं॰ 105 में भरती किया गया था जहाँ डॉक्टर मरीज देखने आया और बाद में याची डॉ॰ डी॰ मोहन ने भी उसे देखा। मरीज के इलाज से संबंधित तमाम कागजातों को याची डॉ॰ डी॰ मोहन को दिया गया था और परिवादी ने अपने विगत अनुभव के कारण डॉक्टर से तुरन्त रक्ताधान करने का अनुरोध किया, किंतु डॉक्टर ने दोपहर 2 बजे तक कोई दवा

नहीं दिया था। परिवाद के प्रतिवाद को सही पाया गया था जब ब्लड रिपोर्ट ने दर्शाया कि हेमोग्लोबिन अत्यन्त कम था। परिवादी याचिका में कथन किया गया है कि यद्यपि परिवादी डॉक्टर नहीं है किंतु वह इस तथ्य से अवगत था कि ब्लड कैंसर से एनीमिया होता है और गंभीर एनीमिया के दौरान व्यक्ति साँस फूलने की शिकायत करता है। साकेत सौरभ भी साँस फूलने की और धीमी नब्ज गति की शिकायत कर रहा था, अत: डॉक्टर को तुरन्त हेमोग्लोबिन की परीक्षा करवानी चाहिए थी और रक्ताधान तुरन्त किया जाना चाहिए था। आगे अभिकथित किया गया है कि डॉक्टर को सूचित भी किया गया था कि लड़के ने विगत 24 घंटे में कुछ भी खाया-पिया नहीं था अत:, डॉक्टर को एन॰ एस॰ अथवा डेक्सट्रोज चढ़ाना चाहिए था। किंतु, दोपहर 2 बजे लड़के को क्लेरिबिड और RezQ 300 का एक टेबलेट दिया गया था जो मलेरिया रोधक और कुनैन डेराइबेटिव है जिसे ब्लड कैंसर के मरीज को नहीं दिया जाना चाहिए था क्योंकि कुनैन डेराइवेटिव का सर्वाधिक पार्श्व प्रभाव यह है कि यह ब्लड डिसक्रेसिस, हेपेटाइटिस और एनीमिया कारित कर सकता है। चूँकि मरीज साकेत सौरभ को पहले से ही एनीमिया था, साकेत सौरभ को उक्त दवा कभी नहीं देनी चाहिए थी। सायं लगभग 6 बजे रक्ताधान शुरू किया गया था और उसी निड्ल से जेंटामाइसिम और एमप्लॉस 500 वायल दिए गए थे। परिवादी ने परिवाद याचिका में जेंटामाइसिन के पार्श्व प्रभावों का उल्लेख किया है और कथन किया है कि इसे किसी अन्य दवा के साथ कभी नहीं मिलाना चाहिए था। इन दवाओं को दिए जाने के कारण रक्ताधान वस्तुत: सायं 7 बजे शुरू किया गया था और लगभग 7.35 बजे मरीज साकेत सौरभ की मृत्यु हो गयी। यह अभिकथित करते हुए कि इलाज तुरन्त शुरू नहीं किया गया था क्योंकि अभियुक्तगण तुरन्त इलाज शुरू करने के लिए परिवादी को 1000/- रुपया जमा करने के लिए कपट पूर्वक और गैरईमानदार रूप से उत्प्रेरित कर रहे थे, अभियुक्तगण ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 304, 420 और 384 के अधीन अपराध किया था। इन अभिकथनों के साथ, विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची के समक्ष परिवाद मामला दाखिल किया गया था जिसे परिवाद मामला 31 वर्ष 1999 के रूप में दर्ज किया गया था।

4. यह कथन किया जा सकता है कि उक्त परिवाद मामले में जाँच के चरण पर परिवादी का बयान एस॰ ए॰ पर दर्ज किया गया था और विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, राँची द्वारा पाँच गवाहों के बयान दर्ज किए गए थे और संज्ञान लेने के बाद, मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द कर दिया गया था। दांडिक विविध सं॰ 3303 वर्ष 2001 में याचीगण द्वारा इस न्यायालय के समक्ष संज्ञान लेने वाले आदेश को चुनौती दिया गया था जिसे दिनांक 28.6.2001 द्वारा खारिज कर दिया गया था। बाद में, सत्र न्यायालय में आरोप विरचित करने के बिंदु पर अभियोजन और अभियुक्तगण को सुना गया था और दिनांक 6.1.2004 के आदेश द्वारा भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 304, 420, 384 के अधीन अपराधों के लिए याचीगण के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए थे जिसे उक्त एस॰ टी॰ सं॰ 564 वर्ष 2003 में याचीगण के विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही और उसमें पारित आरोप विरचित करने वाले दिनांक 6.1.2004 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना करते हुए इस रिट आवेदन में चुनौती दिया गया है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि मरीज पहले से ही ब्लड कैंसर से पीड़ित था और टाटा मेमोरियल अस्पताल, मुंबई में पहले से ही इलाज करवा रहा था। निवेदन किया गया है कि जब मरीज को अस्पताल लाया गया था, यह पिछले दो दिनों से कंप-कंपी और कफ के साथ अकड़न और उच्चताप से पीड़ित था जिसने युक्तियुक्त रूप से मलेरिया की अधिसंभाव्यता को उपदर्शित किया। मरीज के शारीरिक परीक्षण पर, ब्लड कैंसर द्वारा कारित प्रतिरोधक क्षमता की कमी के कारण निमोनिया के प्रथम दृष्टया मौके से इनकार नहीं किया जा सकता था और तद्नुसार, मरीज को डेक्सट्रोज अथवा

नार्मल सेलाइन नहीं दिया जा सकता था क्योंकि यह फेफड़ों में अत्यन्त कंजेशन कारित कर सकता था। चूँकि कंपकंपी के साथ बुखार ने युक्तियुक्त रूप से मलेरिया की अधिसंभाव्यता की ओर उपदर्शित किया, इसके लिए समुचित दवा दी गयी थी और हेमोग्लोबिन परीक्षा के रिपोर्ट के बाद रक्ताधान भी किया गया था।

6. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि मरीज के इलाज का क्रम किसी मेडिकल पेशेवर द्वारा मना किया गया इलाज का क्रम नहीं था और तद्नुसार यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता था कि याची डॉ॰ डी॰ मोहन की ओर से घोर उपेक्षा थी जिसने मरीज का मृत्यु कारित किया। विद्वान अधिवक्ता ने मेडिकल जर्नलों के उद्धरणों को यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर लाया है कि मरीज का किया गया इलाज इलाज का मना किया गया क्रम नहीं था और अभिलेख पर यह भी लाया गया है कि ल्यूकेमिया के मामले में जीवीत बच जाने की दर अति अल्प है। विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि याची सं॰ 2 जोगेश गंभीर जो राज अस्पताल का निदेशक है के विरुद्ध संपूर्ण परिवाद याचिका में कोई भी अभिकथन नहीं है और धन की मांग करने का जो भी अभिकथन वहाँ है, वह अस्पताल के स्टाफ के विरुद्ध है जिसके लिए याची सं॰ 2 को केवल निदेशक होने के कारण प्रतिनिधिक रूप से दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है क्योंकि भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 304, 420, 384 के अधीन अपराधों में किसी प्रतिनिधिक दायित्व का प्रावधान नहीं है।

7. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि इस मामले में याचीगण के विरुद्ध लिया गया संज्ञान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 202 (2) से भी बाधित होता है जो आज्ञा देती है कि परिवाद मामलों में यदि परिवाद किया गया अपराध अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है, परिवादी को आज्ञापक रूप से अपने गवाहों को प्रस्तुत करने और शपथ पर उनका परीक्षण करने की आवश्यकता है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिवाद याचिका में नामित सात गवाहों में से केवल पाँच गवाहों का दंडाधिकारी द्वारा परीक्षण किया गया था और इस प्रकार इस आधार पर भी याचीगण के विरुद्ध लिया गया संज्ञान पूर्णतः अवैध है। मैं विद्वान अधिवक्ता के इस निवेदन में सार नहीं पाता हूँ क्योंकि यह सुनिश्चित विधि है कि उक्त प्रावधान का अननुपालन कार्यवाही को दूषित नहीं करेगा जब तक अभियुक्त को कारित हुई प्रतिकूलता स्थापित नहीं की जाती है। (ऑथोरिटी **: शिवजी सिंह बनाम नागेन्द्र तिवारी एवं अन्य (2010) 7 SCC 578).** इसके अतिरिक्त, तथ्य बना रहता है कि संज्ञान लेने वाले आदेश को दांडिक विविध सं॰ 3303 वर्ष 2001 में इस न्यायालय में याचीगण द्वारा चुनौती दी गयी थी जिसे पहले ही न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है।

8. विद्वान अधिवक्ता ने **डॉ॰ सुरेश गुप्ता बनाम दिल्ली की एन॰ सी॰ टी॰ की सरकार एवं एक अन्य, (2004)6 SCC 422,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें चिकित्सक अथवा शल्य चिकित्सक पर दांडिक दायित्व नियत करने के लिए सिद्ध करने के लिए आवश्यक उपेक्षा के मानक पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विचार किया गया था। उक्त मामले में, नाक की विरुपता को हटाने के लिए मरीज का ऑपरेशन किया गया था और ऑपरेशन इतना हल्का था कि मरीज के साथ कोई नहीं, उसकी पत्नी तक नहीं आयी थी किंतु मरीज की मृत्यु हो गयी थी। मरीज के शव परीक्षण रिपोर्ट से प्रकट था कि नासल सेण्टम के सर्जिकली इनसाइज्ड मार्जिन के परिणामस्वरुप एसपायरेटेड ब्लड द्वारा रेसपिरेटरी पैसेज के ब्लॉकेज से परिणत होते एसफीक्जिया के कारण मृत्यु हुई थी जिसने उपदर्शित किया कि रेसपिरेटरी पैसेज तक ब्लड का सीपेज रोकने के लिए पर्याप्त सावधानी बरती नहीं गयी थी। इस पृष्ठभूमि में, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित रूप से विधि अधिकथित की गयी है:–

*"21. bl çdkj] tc ejht fpfdRlh; bykt vFkok 'kY; fpfdRlk d fy, lger gkrk g] fpfdRlkdeh d çR;d vlkoèkkuh Hkj ÑR; dk ^^nkfMd** ugh dgk tk ldrk gA bl ^^vkijkfèkd** doy rc rd dgk tk ldrk g tc fpfdRlkdeh viu ejht dh lj{kk d çfr d'kyrk dh ?kkj deh vFkok fuf"Ø;rk vkj ?kkj mnklhurk çnf'kr djrk g vkj ftl ?kkj vufHkKrk vFkok ?kkj mi{kk l mnHkkr gkrk ik;k x;k gA tc ejht dh eR; ek= fu.k; dh xyrh vFkok n?kVuk dk ifj.kke gkrh g] dkb nkfMd nkf;Ro bld lkFk lc) ugh fd;k tkuk pkfg,A vuoèkkuh ek= vFkok i;kIr n[kHkky vkj lrdrk dh deh dh dN fMxh flfoy nkf;Ro lftr dj ldrh Fkh fdr ml nkfMd :i l nk;h vfHkfuèkkfjr dju d fy, i;kIr ugh gkxhA*

x x x x x x x x

23. fpfdRlh; bykt d nkjku çR;d n?kVuk vFkok eR; d fy, nM nu d fy, fpfdRlkdeh d fo#) vxlj ugh gvk tk ldrk gA mud nk"k dh vkj bfxr dju oky i;kIr fpfdRlh; er d fcuk MkDVjk dk nkfMd vfHk;ktu bl 0;kid lenk; dh xyr lok dju tlk gkxk D;kfd ;fn U;k;ky; çR;d ml pht d fy, tk xyr gk tkrh g vLirkyk vkj MkDVjk ij nkfMd nkf;Ro vfèkjkfir dju yx rk MkDVj viu ejhtk dk lokfèkd lokÙke bykt dju d ctk, Lo; viuh lj{kk d ckj e vfèkd fpfrr jgxA ;g MkDVj vkj ejht d chp ijLij fo'okl dk Mxexku dh vkj y tk,xkA lg&vijkfèkd mi{kk d vijkèk d fy, ml dk fopkj.k dju d fy, vLirky e vFkok MkDVj d fDyfud e çR;d n?kVuk vFkok nHkkX; mi{kk dk ?kkj ÑR; ugh gA

xx xx xx

25. viu ejht dh eR; dkfjr dju oky MkDVj d flfoy vkj nkfMd nkf;Ro d chp] U;k;ky; d ikl MkDVj dh vkj l vfHkdfFkr vlkoèkkuh vkj mi{kk dh fMxh dk rkyu dk ef'dy VkLd gA vfHkdfFkr nkfMd vijkèk d fy,] MkDVj dh nk"kflf) d fy, ekud n%lkgl vkj tkuc> dj xyrh vFkkr ufrd :i l nk"kkjki.kh; vkpj.k dh mPprj fMxh gkuk pkfg,A

xx xx xx xx xx

*26. vr%] MkDVj dk nk"kfl) dju d fy, MkDVj dh vkj l mi{kk d mPp fMxh d ekey d lkFk vfHk;ktu dk vkuk gkxkA lefpr n[kHkky] lkoèkkuh vkj è;ku dh deh vFkok vukoèkkuh ek= flfoy nkf;Ro lftr dj ldrh g fdr nkfMd nkf;Ro ughA vr%] bykt d nkjku viu ejht dh eR; dkfjr dju oky MkDVj d fo#) vfHkdfFkr nkfMd vijkèk d ekey e U;k;ky;k u lno tkj fn;k g fd MkDVj d fo#) ifjokfnr ÑR; dk ,lh mPprj fMxh dh mi{kk vFkok mrkoykiu n'kkuk gkxk tk ml ekufld voLFkk dk minf'kr dj ftl doy ejht dh vkj i.k mnklhurk d :i e of.kr fd;k tk ldrk gA doy ,lh ?kkj mi{kk nMuh; gA** (tkj fn;k x;k)*

9. यह प्रश्न एक अन्य मामले में भी, **जैकब मैथ्यू बनाम पंजाब राज्य एवं एक अन्य, 2005 (6) SCC 1** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पुन: विनिश्चित किया गया था जिसमें भी उपेक्षा के कारण मरीज की मृत्यु के मामले में इस प्रश्न पर विचार करने का अवसर सर्वोच्च न्यायालय के पास था। इस मामले में, चूँकि **सुरेश गुप्ता मामले (ऊपर)** में अधिकथित विधि की शुद्धता पर संदेह किया गया था, मामला विचारार्थ तीन न्यायाधीशों की वृहतपीठ के पास निर्दिष्ट किया गया था। उपेक्षा के विभिन्न पहलूओं अर्थात् अपकृत्य के रूप में उपेक्षा; अपकृत्य के रूप में और अपराध के रूप में उपेक्षा; पेशेवरों द्वारा उपेक्षा,

और दांडिक विधि में मेडिकल पेशेवर को विचार में लेते हुए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पुनः विस्तारपूर्वक मामले पर विचार किया गया था और विभिन्न कोणों से विस्तारपूर्वक मामले पर चर्चा की गयी थी और उक्त निर्णय के पैराग्राफ 48 में निष्कर्ष वर्णित किए गए थे जो निम्नलिखित है:–

"48. ge viu fu"d"kk dk fuEufyf[kr :i l {kfir djr g%&

2. fpfdRlk i'kk d lnHk e mi{kk vko';dr% fHkUurk d lkFk fopkj dju d fy, dgrh gA i'koj] fo'k"kr% MkDVj d vkj l mrkoykiu vFkok mi{kk fu"df"kr dju d fy, vfrfjDr vufpru ykx gkxA vkthfodktU; mi{kk dk ekeyk i'koj mi{kk d ekey l fHkUu gA n[kHkky dh deh ek=] fu.k; vFkok n?kVuk dh xyrh fpfdRlh; i'koj d vkj l mi{kk dk çek.k ugh gA tc rd MkDVj efMdy i'kk dk Lohdk; ml le; çpfyr çFkk dk vulj.k djrk g] ml ek=k blfy, mi{kk dk nk;h vfHkfuèkkfjr ugh fd;k tk ldrk g fd cgrj fodYi vFkok bykt dk rjhdk miyCèk Fkk vFkok ek= blfy, fd ,d vfèkd n{k MkDVj u ml çFkk vFkok çfØ;k dk vulj.k djuk vFkok lgkjk yuk ugh puk gkrk ft ldk vulj.k@lgkjk vfHk;Dr u fy;k Fkk-------

3. i'koj dk nk fu"d"kk e l fdlh ,d ij mi{kk d fy, nk;h vfHkfuèkkfjr fd;k tk ldrk g] ;k rk mld ikl vè;if{kr n{krk ugh Fkk ft ld gku dk og nkok djrk Fkk vFkok mlu fn, x, ekey e ;fDr;Dr d'kyrk d lkFk ml n{krk dk ç;kx ugh fd;k Fkk tk og j[krk FkkA ;g fu.k; dju d fy, fd D;k vkjkfir 0;fDr mi{kkoku g ;k ugh] ykx fd;k tku okyk ekud ml i'kk e lkekU; n{krk dk ç;kx dju okyk lkèkkj.k n{k 0;fDr dh n{krk gkxhA çR;d i'koj d fy, ml 'kk[kk e ft le og i'kk djrk g d fy, mPpre Lrj dh fo'k"kKrk vFkok n{krk j[kuk lHko ugh gA ,d vR;Ur n{k i'koj d ikl cgrj x.k gk ldr g fdr ml mi{kk d vH;kjki.k ij vfHk;kftr fd, tk jg i'koj d dk;ikyu dk ij[ku dk vkèkkj vFkok ekinM ugh cuk;k tk ldrk gA

4. ... ...

5. mi{kk dh fofèk'kkL=h; voèkkj.kk flfoy vkj nkfMd fofèk e fHkUu gA tk flfoy fofèk e mi{kk gk ldrh g] og nkfMd fofèk e vko';dr% mi{kk ugh gk ldrh gA vijkèk dh dkfV e mi{kk dk yku d fy, vkijkfèkd eu%fLFkfr d rRo dk n'kkuk gh gkxkA fdlh dR; dk nkfMd mi{kk d rY; gku d fy, mi{kk dh fMxh dk T;knk mPprj vFkkr ?kkj vFkok vR;Ur mPp fMxh dk gkuk pkfg,A mi{kk tk u rk ?kkj g vkj u gh mPprj fMxh dh] flfoy fofèk e dkjokb dk vkèkkj çnku dj ldrh g fdr vfHk;ktu dk vkèkkj fufer ugh dj ldrh gA

*6. HkkO n0 l0 dh èkkjk 304A e 'kCn ^^?kkj** ç;Dr ugh fd;k x;k g] fQj Hkh ;g lfuf'pr g fd nkfMd fofèk e] mi{kk vFkok ykijokgh] ,l vfHkfuèkkfjr fd, tku d fy,] ,lh mPp fMxh dh gkuh pkfg, tk ^?kkj* gkA HkkO n0 l0 dh èkkjk 304A e vku okyh vfHk0;fDr ^^ykijokg vFkok mi{kk i.k Ñ%** dk 'kCn ^^?kkj :i l** }kjk vfgr fd, x, d :i e i<uk gkxkA*

7. nkfMd fofèk d vèkhu mi{kk d fy, fpfdRlh; i'koj dk vfHk;kftr dju d fy, ;g n'kkuk gh gkxk fd vfHk;Dr u dN fd;k Fkk vFkok dN dju e foQy jgk Fkk ft l nh x;h rF;k vkj ifjfLFkfr;k e dkb fpfdRlh; i'koj viu lkekU;

*ckèk vkj food e ugh fd;k gkrk vFkok dju e foQy jgk gkrkA vfHk;Dr MkDVj }kjk fy;k x;k tkf[ke , lh çÑfr dk gkuk pkfg, fd migfr] tk ifj.kkfer gb] d gku dh çcy lHkkouk FkhA*** *(tkj fn;k x;k)*

इस प्रकार, **जैकब मैथ्यू मामले (ऊपर)** में **सुरेश गुप्ता मामले (ऊपर)** का निर्णयाधार सर्वोच्च न्यायालय की वृहत पीठ द्वारा मान्य ठहराया गया था।

10. विद्वान अधिवक्ता ने आगे **राकेश रंजन गुप्ता बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं एक अन्य, 1999(1) SCC 188,** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें प्रत्यर्थी का अभिकथन था कि जब उसका पति गंभीर हालत में था, उसे अस्पताल ले जाया गया था जहाँ अपीलार्थी डॉक्टर चिकित्सीय पेशेवर के रूप में कार्यरत था और अपीलार्थी ने तुरन्त मरीज का देखभाल नहीं किया था और उसके द्वारा जोर दिए जाने पर अपीलार्थी गुस्सा हो गया था और उनके बीच बहस हुई थी और अंततः, मरीज को सूई दी गयी थी जिसके बाद मरीज की मृत्यु हो गयी थी। अभिनिर्धारित किया गया था कि उक्त अभिकथन ने प्रथम दृष्टया अपीलार्थी की ओर से लापरवाही अथवा उपेक्षा का मामला प्रकट नहीं किया था ताकि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304A के अधीन दांडिक प्रावधान को आकृष्ट किया जा सके। उक्त मामले में आगे अभिनिर्धारित किया गया था कि यदि मरीज का इलाज करने में डॉक्टर की ओर से विलंब था, वह अधिकाधिक भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304A के अधीन, सिविल उपेक्षा का मामला और न कि सह-अपराधिक उपेक्षा का मामला हो सकता है। इन निर्णयों पर विश्वास करते हुए, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि सत्र विचारण सं॰ 564 वर्ष 2003 में याचीगण के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं की जा सकती है और अभिखंडित किए जाने योग्य है।

11. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि परिवाद याचिका में परिवादी द्वारा किए गए अभिकथन स्पष्टतः याचीगण के विरुद्ध उपेक्षा और उद्यापन का मामला बनाते हैं और जाँच के चरण पर परीक्षित किया गया एक गवाह चिकित्साकर्मी था जिसने अभिसाक्ष्य दिया था कि याची ने इलाज का गलत रास्ता अपनाया था जिसे अपनाया नहीं जाना चाहिए था। अभिलेख से मैं पाता हूँ कि उक्त गवाह डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद चौधरी का साक्ष्य दर्शाता है कि उक्त गवाह की अर्हता केवल एम॰ बी॰ बी॰ एस॰ थी और उसने स्वीकार किया था कि वह उक्त बीमारी का विशेषज्ञ नहीं था और इस प्रकार इस गवाह के साक्ष्य पर अधिक विश्वास नहीं किया जा सकता है।

12. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि याचीगण पहले ही संज्ञान लेने वाले आदेश के विरुद्ध इस न्यायालय के समक्ष आए थे जिसे इस न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था और इस प्रकार यह याचीगण द्वारा दाखिल दूसरा आवेदन है जो पोषणीय नहीं है।

13. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि जहाँ तक भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420 अथवा 384 के अधीन अपराधों का संबंध है, परिवाद में किए गए अभिकथन के आधार पर याची डॉ॰ डी॰ मोहन के विरुद्ध आरोप विरचित नहीं किया जा सकता था क्योंकि डॉ॰ डी॰ मोहन के विरुद्ध केवल परिवादी के पुत्र का इलाज करने में उपेक्षा का अभिकथन है जिसके लिए भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित किया गया है। इसी प्रकार, याची जोगेश गंभीर, जो केवल राज अस्पताल का निदेशक है, के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 के अधीन अपराध के लिए आरोप विरचित नहीं किया जा सकता था जिसके विरुद्ध मरीज का इलाज करने का अभिकथन नहीं है और इस प्रकार उसके विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304

के अधीन अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता था। इस प्रकार, अपर न्यायालय का आरोप विरचित करने वाला आदेश न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना पूर्णत: यांत्रिक तरीके से पारित आदेश प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त, याचीगण के विरुद्ध अभिकथन नहीं है कि उन्होंने धन मांगा था अथवा कोई कूट रचना अथवा उद्यापन किया था। तथ्य बना रहता है कि राज अस्पताल निजी अस्पताल है और मरीज की भरती तथा इलाज के लिए विहित फीस प्रभारित करने का हकदार है। मामले के उस दृष्टिकोण में फीस की मांग करने में कोई अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता है। विहित फीस जमा नहीं करने पर मरीज को भरती नहीं करने का अभिकथन इन याचीगण के विरुद्ध विनिर्दिष्ट नहीं है।

14. भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 304, 420 और 384 के प्रावधानों के सादे पठन से प्रकट है कि अपराध, जिसे अन्य व्यक्ति द्वारा किया जा सकता था, के लिए प्रतिनिधिक दायित्व की विधिक कल्पना के रूप में किसी दायित्व के लिए कोई प्रावधान नहीं है। याचीगण के विरुद्ध किसी विनिर्दिष्ट अभिकथन की अनुपस्थिति में और विधिक कल्पना द्वारा प्रतिनिधिक दायित्व सृजित करने वाले इन धाराओं में किसी प्रावधान की अनुपस्थिति में याचीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420 और 384 के अधीन अपराध के लिए प्रतिनिधिक रूप से दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है। **केकी होरमुसजी घर्दा बनाम मेहरबान रुस्तम इरानी, (2009)6 SCC 475,** में सर्वोच्च न्यायालय के प्रति निर्देश किया जा सकता है जिसमें निम्नलिखित रूप से विधि अधिकथित की गयी है:–

> *"17. nM lfgrk] 1860, dN ekeyk e NkMdj] fdlh 0;fDr dh l ij fdlh çfèkfufèkd nkf;Ro dk vuè;kr ugh djrh gA fofèkd dYiuk mBkdj vFkok lfofèk d çkoèkkuk d fucèkuku lkj çfrfufèkd nkf;Ro lftr djd vijkèk dk fd;k tkuk vfHk0;Dr :i l dfFkr djuk gkxkA bl çdkj] diuh d ççèk fun'kd vFkok fun'kdk dk doy blfy, vijkèk djrk gvk dgk ugh tk ldrk g D;kfd o diuh d in èkkjd gA vr%] gekj er e] fo}ku vij e[; eVkikfyVu nMkfèkdkjh ekey d bl igy dk fopkj e fy, fcuk leu tkjh dju e lgh ugh FkA diuh d ççèk fun'kd vkj fun'kdk dk doy blfy, leu ugh fd;k tkuk pkfg, Fkk D;kfd diuh d fo#) vfHkdFku FkA** (tkj fn;k x;k)*

15. याची डॉ॰ डी॰ मोहन के विरुद्ध पेशेवर उपेक्षा का अभिकथन केवल यह दर्शाता है कि उसे इलाज का वह रास्ता नहीं अपनाना चाहिए था जो उसने वास्तव में अपनाया था। यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि डॉ॰ डी॰ मोहन द्वारा वस्तुत: अपनाया गया रास्ता वह रास्ता था जिसे किसी चिकित्सीय पेशेवर ने नहीं अपनाया होता यदि वह सामान्य सतर्कता के साथ काम कर रहा होता और न ही यह दर्शाने के लिए कुछ है कि इस याची ने कुछ किया था अथवा कुछ करने में विफल रहा था जिसे दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में सामान्य बोध और विवेक रखने वाला चिकित्सीय पेशेवर ने किया होता अथवा करने में विफल होता।

16. मेरे सुविचारित दृष्टिकोण में, याची डॉ॰ डी॰ मोहन का मामला **सुरेश गुप्ता मामले (ऊपर)** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय द्वारा पूर्णत: आच्छादित है जो स्पष्टत: अधिकथित करता है कि डॉक्टर के विरुद्ध परिवादित कृत्य को ऐसी उच्चतर डिग्री की उपेक्षा अथवा उतावलापन दर्शाना होगा जो उस मानसिक अवस्था को उपदर्शित कर सके जिसको मरीज की ओर से पूर्णत: उदासीन के रूप में वर्णित किया जा सके और ऐसी केवल 'घोर' उपेक्षा दंडनीय है जिस निर्णयाधार को **जैकब मैथ्यू मामले (ऊपर)** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पूर्णत: अनुमोदित किया गया है। हमें इस तथ्य को नजर अंदाज नहीं करना चाहिए कि स्वीकृत रूप से मरीज ब्लड कैंसर से पीड़ित था और वह शायद अंतिम चरण पर पहुँच गया था जहाँ समस्त इलाज और देखभाल के बावजूद उसे बचाया नहीं जा सकता था। वर्तमान मामले में तथ्य

बना रहता है कि मृतक का शव परीक्षण नहीं किया गया था ताकि मृत्यु का कारण अथवा अभियुक्त का इलाज करने में याची के ओर से उपेक्षा स्थापित किया जा सके। याची का मामला **राजेश रंजन गुप्ता मामले (ऊपर)** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय द्वारा भी आच्छादित है जिसमें अभिनिर्धारित किया गया है कि मरीज का इलाज करने में डॉक्टर की ओर से विलंब भी भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 के अधीन अपराध के अंतर्गत आने वाला सह आपराधिक उपेक्षा का मामला नहीं है यद्यपि यह सिविल उपेक्षा का मामला हो सकता है।

17. पूर्वोक्त कारणों से, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याचीगण के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही जारी रखना पूर्णत: अवैध है और इसे विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। तद्नुसार, परिवाद मामला सं॰ 31 वर्ष 1999 से उद्भूत होने वाले सत्र विचारण सं॰ 564 वर्ष 2003 में याचीगण के विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही जो श्री आर॰ एन॰ तिवारी, विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त, राँची के न्यायालय में तब लंबित थी, सहित उसमें पारित दिनांक 6.1.2004 के आदेश को एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t;k jk;] U;k;efr

स्टील ऑथोरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (T) No. 3801 of 2012. Decided on 13th July, 2012.

मोटर यान अधिनियम, 1988—धारा 2(28)—मोटर यान—खानों में अनन्य रूप से प्रयुक्त होने के नाते ''ऑफ हाइवे वाहनों और उपकरणों'' के रजिस्ट्रेशन की आवश्यकता–जिला परिवहन अधिकारी को यह परीक्षण करने का अधिकार है कि रजिस्टर्ड किए जाने के लिए इप्सित वाहन मोटर यान है या नहीं–याची को जिला परिवहन अधिकारी के पास जाने की स्वतंत्र दी गयी–जिला परिवहन अधिकारी द्वारा मामला विनिश्चित किए जाने तक प्रपीड़क कदम नहीं उठाए जाएं। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Indrajit Sinha, For the Petitioner; Mr. A.K. Sinha, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. इस रिट याचिका में अंतर्ग्रस्त संक्षिप्त बिंदु यह है कि क्या प्रश्नगत वाहनों, जो रिट याची के अनुसार, ''ऑफ हाइवे वाहन और उपकरण'' हैं और याची द्वारा अनन्य रूप से अपने खानों के भीतर उपयोग किए जाते हैं, को मोटर यान अधिनियम, 1988 और झारखंड राज्य में प्रयोज्य नियमावली जो बिहार मोटर यान नियमावली, 1992 है के प्रावधानों के अधीन मोटर यानों के रूप में रजिस्ट्रेशन की आवश्यकता है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार याची के इन वाहनों का उपयोग अनन्य रूप से याची के खान परिसर के भीतर किया जाता है और वे आम सड़क पर नहीं चलते हैं और न केवल यह, बल्कि

याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, ये वाहन सड़क पर चलाने के लिए उपयुक्त नहीं है। निवेदन किया गया है कि वाहनों के ऐसे प्रकार मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 2 की उपधारा 28 के अधीन दिए गए परिभाषा के मुताबिक मोटर यान नहीं है। इसके बावजूद, निबंधन प्राधिकारी अर्थात् जिला परिवहन अधिकारी ऐसे उपकरणों को जब्त करने का आशय रखता है जिसके लिए याची ने उक्त प्राधिकारी को दिनांक 28.6.2012 को पत्र दिया। यह निवेदन भी किया गया है कि खानों में से एक से उपकरण जब्त किए गए थे और याची को दावा किए गए 1 करोड़ रुपए का कर और दंड राशि का भुगतान करना पड़ा था। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि चूँकि याची इस विवाद्यक कि क्या उपकरण, याची जिनके मोटर यान नहीं होने का दावा कर रहा है, मोटरयान है या नहीं का न्यायनिर्णयन नहीं करवा सका है, अत: वह इस न्यायालय के पास आया है।

4. विद्वान महाधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि यह शुद्धत: तथ्य का प्रश्न है जिसे आरंभ में प्राधिकारी द्वारा विनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है जो रजिस्ट्रेशन का प्रमाण पत्र जारी करने के लिए सशक्त है। आगे निवेदन किया गया है कि बिहार मोटर यान नियमावली, 1992 का नियम 40 स्पष्टत: प्रावधानित करता है कि जिला परिवहन अधिकारी निबंधन प्राधिकारी होगा।

5. चूँकि प्रश्नगत वस्तु की प्रकृति विवादित है और याची दावा कर रहा है कि ये वस्तुएँ उपकरण हैं और न कि 1988 के अधिनियम की धारा 2(28) की परिभाषा के अंतर्गत आने वाले मोटरयान और किसी वाहन के रजिस्ट्रेशन के लिए आवेदन स्वीकार करना जिला परिवहन अधिकारी का कर्तव्य है, स्पष्टत: तब उसे यह परीक्षण करने का अधिकार है कि रजिस्ट्रेशन के लिए इप्सित वाहन अथवा जिस वाहन को वह रजिस्टर करने का आशय रखता है, मोटरयान है या नहीं।

6. उक्त मामले की दृष्टि में, यह समुचित होगा कि याची को मामले के तथ्यों का और अभिकथित उपकरणों का मोटर यान नहीं होने के कारणों का स्पष्टत: कथन करते हुए याचिका दाखिल करके संबंधित जिला परिवहन अधिकारी के पास जाना चाहिए। यदि याची आज के दिन से एक सप्ताह की अवधि के भीतर संबंधित जिला परिवहन अधिकारी के समक्ष अपनी याचिका दाखिल करता है, संबंधित जिला परिवहन अधिकारी द्वारा तीन सप्ताह की अवधि के भीतर याची की याचिका विनिश्चित की जाए और जब तक जिला परिवहन अधिकारी मामले को विनिश्चित नहीं करता है, याची से कर राशि की वसूली के लिए प्रपीड़क कदम इस तथ्य की दृष्टि में नहीं उठाये जाएं क्योंकि याची वर्षों से पहले से ही इन वाहनों का प्रयोग कर रहा है और चूँकि याची लोक उपक्रम है, यह जिला परिवहन अधिकारी के निर्णय के तुरन्त बाद राशि का भुगतान कर सकता है, अत: जिला परिवहन अधिकारी द्वारा मामला विनिश्चित किए जाने तक कोई प्रपीड़क कदम नहीं उठाया जाए।

इन संप्रेक्षणों के साथ, यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

झारखंड राज्य

cuke

मो॰ आसिफ मुदैया

Criminal Revision No. 1061 of 2010. Decided on 13th June, 2012.

एस॰ टी॰ सं॰ 102 वर्ष 2010 में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट III, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 15.7.2010 के आदेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 376 एवं 417 सह-पठित धारा 90—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 277—बलात्कार–अवर न्यायालय द्वारा अभियुक्त उन्मोचित–विवाह के झूठे वादे पर यौन संबंध जारी रखने का अभिकथन–क्या अभियोक्त्री द्वारा दी गयी सहमति अभियुक्त के उसके साथ विवाह करने के आशय के प्रति उसके दिमाग में सृजित भ्रम का परिणाम थी, ऐसा प्रश्न है जिसे साक्ष्य के विश्लेषण के आधार पर विनिश्चित करना होगा–अभियोजन द्वारा साक्ष्य देने का चरण अभी तक नहीं पहुँचा गया था–अवर न्यायालय केवल प्राथमिकी में किए गए अभिकथनों और केस डायरी में सामग्रियों के आधार पर इस निर्णय पर आया कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 376 एवं 417 के अधीन अपराधों के लिए कार्यवाही का आधार नहीं है–क्या अभियोक्त्री की सहमति भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 90 के निबंधनानुसार वैध सहमति थी अथवा इसे उसके दिमाग में सृजित किए गए भ्रम के अधीन दिया गया था, भी तथ्य का प्रश्न है जिसे विचारण के दौरान विनिश्चित किया जाएगा–आक्षेपित आदेश अपास्त। (पैराएँ 8 से 11)

निर्णयज विधि.–(2005)1 SCC 88; 2002 (1) East Cr. C 358(Jhr); 2000 (2) BLJR 1581; 1984 Cr.L.J. 1535; (2003)4 SCC 46—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. T.N. Verma, For the State; Mr. A.K. Das, For the Opp. Party.

एच॰ सी॰ मिश्रा, न्यायमूर्ति.–याची राज्य के विद्वान अधिवक्ता और अभियुक्त विरोधी पक्षकार के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची एस॰ टी॰ सं॰ 102 वर्ष 2010 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट III, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 15.7.2010 के आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा अभियुक्त-विरोधी पक्षकार मो॰ आसिफ मुदैया की ओर से दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 227 के अधीन दाखिल आवेदन में अवर न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 376 और 417 के अधीन अपराधों के लिए अभियुक्त आसिफ मुदैया के विरुद्ध कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार उपलब्ध नहीं है, और तद्नुसार, अभियुक्त को अवर न्यायालय द्वारा उन्मोचित कर दिया गया था। उक्त आदेश से व्यथित होकर, राज्य वर्तमान दांडिक पुनरीक्षण में इस न्यायालय के समक्ष आया है।

3. प्राथमिकी में दिए गए अभियोजन विवरण के अनुसार, मानगो पी॰ एस॰ केस सं॰ 414 वर्ष 2009, जी॰ आर॰ सं॰ 2936 वर्ष 2009 के तत्सम, जिसे पीड़ित महिला रकिया खातुन द्वारा दिए गए लिखित आवेदन के आधार पर दर्ज किया गया था, में अभिकथित किया गया है कि विरोधी पक्षकार आसिफ मुदैया विगत पाँच वर्षों से किसी नैयर असमानी के घर में किराएदार था और विगत चार वर्षों से अभियुक्त पीड़ित महिला से मुलाकात करता था। इस अवधि के दौरान, अभियुक्त ने किसी काम के बहाने पीड़ित महिला को अपने घर बुलाया था और उसको चाय-बिस्किट दिया था। चाय पीने के बाद, पीड़िता बेहोश हो गयी, जिस पर अभियुक्त ने उस पर यौन प्रहार किया। जब पीड़िता को होश आया, अभियुक्त ने उसके साथ विवाह करने का वादा किया और उस वादा पर अभियुक्त और पीड़ित शारीरिक संबंध बनाए रखे जिसके दौरान पीड़िता गर्भवती भी हो गयी किंतु अभियुक्त द्वारा उसका गर्भपात करा दिया गया था। आगे प्राथमिकी में अभिकथित किया गया है कि बाद में अभियुक्त ने पीड़िता के साथ विवाह करने से इनकार कर दिया और दूसरी महिला के साथ विवाह करने जा रहा था।

4. आरक्षी अधीक्षक, जमशेदपुर को पूर्वोल्लिखित प्रभाव के लिखित आवेदन के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 313, 328 और 376 के अधीन अपराध के लिए मानगो पी॰ एस॰ केस सं॰ 414 वर्ष 2009 संस्थापित किया गया था और अन्वेषण किया गया था। अन्वेषण के बाद, पुलिस ने भारतीय

दंड संहिता की धाराओं 376 और 417 के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त विरोधी पक्षकार के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया और उक्त अपराधों के लिए अभियुक्त के विरुद्ध संज्ञान लिया गया था। मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और अंततः, विचारण के लिए इसे अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट III, जमशेदपुर को अंतरित किया गया था जहाँ अभियुक्त विरोधी पक्षकार ने उन्मोचन के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 227 के अधीन आवेदन दाखिल किया, जिसे विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 15.7.2010 के आक्षेपित आदेश द्वारा अनुज्ञात किया गया था।

5. आक्षेपित आदेश के परिशीलन से प्रकट है कि अवर न्यायालय ने इस तथ्य को विचार में लिया है कि यदि प्राथमिकी में किए गए संपूर्ण अभिकथन और केस डायरी में उपलब्ध सामग्री को सत्य माना भी जाता है, उस तिथि अथवा समय का उल्लेख नहीं है जब बलात्कार का पहला अपराध किया गया था। अवर न्यायालय ने यह भी पाया है कि घटना पश्चात पीड़िता का आचरण दर्शाता था कि वह अभिकथित रूप से उसके साथ विवाह के वादा के आधार पर अभियुक्त के साथ नियमित यौन अंतरंगता बनाए रखी थी। यह उल्लेख नहीं किया गया था कि पीड़िता कब गर्भवती हुई और कब उसका गर्भपात कराया गया था और मेडिकल रिपोर्ट भी गर्भपात नहीं सुझाता था। अवर न्यायालय ने यह भी पाया कि प्राथमिकी से स्पष्ट था कि सूचक की मुख्य शिकायत यह नहीं थी कि उसका बलात्कार किया गया था और अभियुक्त को दंडित करना होगा बल्कि, उसकी शिकायत यह थी कि अभियुक्त ने उसके साथ विवाह करने से इनकार किया। इन तथ्यों की पृष्ठभूमि में अवर न्यायालय ने **दिलीप सिंह उर्फ दिलीप कुमार बनाम बिहार राज्य, (2005)1 SCC 88** में दिए गए निर्णय सहित इस न्यायालय और भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों को विचार में लिया है और अभिनिर्धारित किया है कि चूँकि अभियोक्त्री स्वीकृत रूप से वयस्क महिला थी, उस पर प्रथम यौन प्रहार के बाद भी चार वर्षों से अभियुक्त के साथ यौन संबंध जारी रखने में अभियोक्त्री का आचरण दर्शाता था कि वह निश्चय ही यौनकृत्य का सहमत पक्ष थी और तद्नुसार भारतीय दंड संहिता की धाराओं 376 और 417 के अधीन अभियुक्त के विरुद्ध अपराध नहीं बनता था। आक्षेपित आदेश दर्शाता है कि अवर न्यायालय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि से अवगत था कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 227 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करते हुए न्यायालय मात्र डाकखाना अथवा अभियोजन के प्रवक्ता के रूप में कृत्य नहीं कर सकता है बल्कि इसे मामले की व्यापक अधिसंभाव्यताओं और न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य और दस्तावेजों के पूर्ण प्रभाव पर विचार करना होगा, किंतु इसे मामले के पक्ष-विपक्ष में अधूरी जाँच नहीं करनी चाहिए और साक्ष्य को इस तरह तौलना नहीं चाहिए मानो यह विचारण कर रहा हो। इस चरण पर, केवल यह देखना था कि क्या अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री अभियुक्त के विरुद्ध दोषसिद्धि सुरक्षित करने के लिए पर्याप्त हैं या नहीं।

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश पूर्णतः अवैध है, क्योंकि पीड़ित महिला पर यौन प्रहार का पहला कृत्य स्वीकृत रूप से उसकी सहमति के बिना हुआ था और तद्नुसार, अभियुक्त विरोधी पक्षकार के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध स्पष्टतः बनता था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अभियुक्त और पीड़िता के बीच शारीरिक संबंध के अन्य कृत्य भी पीड़िता के साथ विवाह करने के झूठे वादे पर थे और तद्नुसार, ऐसे यौन संबंध के लिए अभियोक्त्री द्वारा दी गयी सहमति, यदि हो, को वैध सहमति नहीं कहा जा सकता

है। तद्नुसार, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध स्पष्टत: बनता है। आगे निवेदन किया गया था कि इस तथ्य की दृष्टि में कि पीड़ित महिला की सहमति उसके साथ विवाह करने के झूठे बहाने पर प्राप्त की गयी थी, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 417 के अधीन अपराध अभियुक्त के विरुद्ध स्पष्टत: बनता है। तद्नुसार, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह सुयोग्य मामला है जिसमें अभियुक्त का विचारण किया जाना चाहिए और उसे इस चरण पर दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 227 के अधीन शक्ति के प्रयोग में उन्मोचित नहीं किया जा सकता था।

7. दूसरी ओर, अभियुक्त विरोधी पक्षकार के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता नहीं है और तद्नुसार यह आवेदन खारिज किए जाने योग्य है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित आदेश स्पष्टत: दर्शाता है कि अवर न्यायालय इस तथ्य के प्रति जागरूक था कि यौन प्रहार की पहली घटना अभियोक्त्री की सहमति से नहीं हुई थी, किंतु अवर न्यायालय द्वारा विश्वास किए गए पूर्व निर्णय स्पष्टत: दर्शाते थे कि ऐसे मामलों में भी, जहाँ पहला कृत्य अभियोक्त्री की सहमति से नहीं था किंतु अभियुक्त उसके साथ विवाह करने के वादे पर अभियोक्त्री के साथ यौन संबंध बनाए रखा, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध नहीं बनता है। विद्वान अधिवक्ता ने इंगित किया है कि अवर न्यायालय ने सही प्रकार से **सहदेव पंडित एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2002 (1) East Cr. C. 358 (Jhr)** में इस न्यायालय के निर्णय पर और **बलधारी ओहदार बनाम बिहार राज्य, 2000 (2) BLJR 1581,** में पटना उच्च न्यायालय, राँची पीठ के निर्णय पर और **दिलीप सिंह मामले (ऊपर)** सहित भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर विश्वास किया जो इस मामले के तथ्यों पर पूर्णत: प्रयोज्य थे जिनमें समरुप परिस्थितियों में अभिनिर्धारित किया गया था कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध बनता नहीं कहा जा सकता है और तद्नुसार, अभियुक्त विरोधी पक्षकार को उन्मोचित कर दिया। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश विधि के तर्कपूर्ण सिद्धांतों पर आधारित अच्छी तरह से परिचर्चित आदेश है और पुनरीक्षण अधिकारिता के प्रयोग में इसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अभिलेख पर मौजूद सामग्री का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि यद्यपि अवर न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर आने के लिए अनेक पूर्व निर्णयों को विचार में लिया है और **दिलीप सिंह (ऊपर)** में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को भी ध्यान में लिया है कि इस मामले के तथ्यों में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध नहीं बनता था, किंतु मैं पाता हूँ कि अवर न्यायालय ने स्पष्टत: स्वयं को अपनिदेशित किया है और **दिलीप सिंह (ऊपर)** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि को समुचित रूप से विचार में नहीं लिया है। यद्यपि यह एक तथ्य है कि वर्तमान मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विचारण के दौरान अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य को विचार में लेते हुए अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया है, किंतु तथ्य बना रहता है कि वर्तमान मामले में साक्ष्य को दर्ज करने के चरण पर अभी तक पहुँचा नहीं गया था। अवर न्यायालय के समक्ष प्राथमिकी और केस डायरी के सिवाए कुछ नहीं था और अवर न्यायालय केवल इन सामग्रियों के आधार पर निष्कर्ष पर आता प्रतीत होता है। **दिलीप सिंह (ऊपर)** मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने न्यायालय के अनेक पूर्व

निर्णयों को विचार में लिया है और विशेषत: **जयंती रानी पांडा बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, 1984 Cr. LJ. 1535,** में कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर विश्वास किया है जिसे **उदय बनाम कर्नाटक राज्य, (2003) 4 SCC 46,** मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुमोदन करते हुए उद्धृत किया गया है और निम्नलिखित रूप से विधि पर चर्चा किया है:–

"27. xx xx xx xx

mDr m) j.k d ckn gb ppk egRoi.k g vkj ;gk uhp m) r dh tkrh g (Cri LJ 1538 ijk 7)

*^^vR;Ur vLi"V dkj.kk l Hkkoh vfuf'pr frfFk ij oknk ijk dju dh foQyrk lk{; ij lno Lo; ÑR; d vkjHk e rF; d Hke d rY; ugh gkrk gA rF; d Hke d vFk d vrxr vku d fy, rF; dh rjUr çklfxdrk gkuh gh pkfg,A ekeyk fHkUu gkrk ;fn ;g fo'okl lftr djd fd o igy l gh fookfgr g] lgefr çkIr dh x;h FkhA , l ekey e lgefr dk rF; d Hke l ifj.kr gkrk dgk tk ldrk FkkA fdr ;gk vfHkdfFkr rF; fookg dk oknk g tk ge ugh tkur g dc fd;k tk,xkA ;fn dkb o;Ld yMdh fookg d oknk ij ;ku lHkkx d ÑR; dh lgefr nrh g vkj , lh xfrfofèk e rc rd fyIr jgrh g tc rd og xHkorh ugh gk tkrh g] ;g mldh vkj l LoPNn lHkkx dk ÑR; g vkj u fd rF; d Hke l mRçfjr ÑR;A yMdh d ÑR; dk ekQ dju d fy, vkj nlj ij nkfMd nkf;Ro Mkyu d fy, , l ekey e HkkO n0 l0 dh èkkjk 90 dh enn ugh yh tk ldrh g tc rd U;k;ky; dk vk'oklu ugh fn;k tkrk g fd vkjHk l gh vfHk;Dr mld lkFk fookg dju d fy, oLrr% vk'kf;r dHkh ugh Fkk***

(tkj fn;k x;k)

fo}ku U;k;kèkh'kk u ,fMxVu cuke fQRtekfjl e pkljh dkV d fu.k; dk fufn"V fd;k vkj fuEufyf[kr lçf{kr fd;k% (Cri LJ P. 1538 Para 8)

*^^;g fu.k; vfèkdfFkr djrk g fd fdlh ÑR; fo'k"k dk dju e çfroknh d vk'k; dh xyr c;kuh rF; dh xyr c;kuh gk ldrh g vkj ;fn oknh bld }kjk Hkfer fd;k x;k Fkk] çopuk dh dkjokb bl ij vkèkkfjr dh tk ldrh gA i"B 483 ij lç{k.k fo'k"k fuEufyf[kr çHkko dk g%** fdlh fo|eku rF; dh xyrc;kuh gkuh gh gkxh**A vr%] rF; dh xyrc;kuh d rY; gku d fy, fo|eku voLFkk vkj mld çfr xyr c;kuh çklfxd gk tkrh gA , l lk{; dh vuifLFkfr e bl çfrokn fd ifjoknh dh lgefr rF; d Hke ij çkIr dh x;h Fkh] d leFku e èkkjk 90 enn d fy, ugh cyk;h tk ldrh gA***

fo"k; ij fu.k; t fofèk dk fufn"V dju d ckn] mn; e (SCC PP 56-57) ijk 21 e lçf{kr fd;k x;k FkkA

"21. bl çdkj çrhr gkrk g fd U;kf;d er dh lolEefr bl nf"Vdk.k d i{k e g fd bl okn ij fd og mld lkFk ckn dh frfFk ij fookg djxk] ml 0;fDr ft ld lkFk og çe djrh g d lkFk ;ku lHkkx dju d fy, vfHk;kD=h dh lgefr rF; d Hke d vèkhu nh x;h lgefr ugh dgh tk ldrh gA >Bk oknk lfgrk d vFk d vrxr rF; ugh gA ge bl nf"Vdk.k d lkFk lger gku d bPNd g fdr ge tkMuk gh gkxk fd ;g fofuf'pr dju d fy, dkb loekU; Qkeyk ugh g fd ;ku lHkkx d fy, vfHk;kD=h }kjk nh x;h lgefr LofPNd g

vFkok D;k ;g rF; d Hke d vèkhu nh x;h gA vfre fo'y"k.k e] U;k;ky;k }kjk vfèkdfFkr ijh{kk, lgefr d ç'u ij fopkj djr g, U;kf;d food dk vfèkdkfèkd ekxn'ku çnku djrh g] fdr U;k;ky; dk çR;d ekey e fdl h fu"d"k ij igpu d igy viu le{k iLrr lk{; vkj bn&fxn dh ifjfLFkfr;k ij fopkj djuk gh gkxk] D;kfd çR;d ekey d Lo; viu fofp= rF; gkr g ftudk bl ç'u ij çHkko gk ldrk g fd D;k lgefr LofPNd Fkh vFkok rF; d Hke d vèkhu nh x;h FkhA bl bl rF; fd vijkèk d çR;d vo;o fd lgefr dh vuifLFkfr mue l ,d g] dk fl) dju dk Hkkj vfHk;ktu ij g] dk è;ku e j[kr g, lk{; dk rkyuk gh gkxkA**

28. mDr m)j.k e nk okD;k dk Li"Vhdj.k dju dh vko';drk gA ;|fi ge nkgjkr g fd èkkjk 90 d vFk d vrxr fdl h vfèkd pht d fcuk fookg dk oknk ^^rF; dk Hke** mnHkkr ugh djxk] bl Li"V dju dh vko';drk g fd ml d lkFk fookg dju dk vk'k; vFkok çofÙk j[k fcuk ihfMrk dh lgefr çkIr dju dh nf"V l vfHk;Dr }kjk tkuc> dj fd;k x;k 0;in'ku lgefr dk nf"kr djxkA ;fn rF;k ij LFkkfir fd;k tkrk g fd oknk dju d vkjHk e gh vfHk;Dr ml d lkFk fookg dju dk vk'k; ugh j[krk Fkk vkj ml d }kjk fd;k x;k fookg dk oknk èkk[kk ek= Fkk] ihfMrk }kjk çdVr% gk x;h lgefr èkkjk 375 [kM f}rh; dh ifjfèk l ml dk ckgj dju d fy, vfHk;Dr dk ykHk ugh igpk,xhA ;gh og ckr g ftl ij oLrr% t;rh jkuh ikMk ekey e dydÙkk mPp U;k;ky; dh [kMihB }kjk tkj fn;k x;k Fkk ftl mn; ekey e vuekfnr djr g, fufn"V fd;k x;k FkkA dydÙkk mPp U;k;ky; u lgh çdkj l ml ifriknuk dk vfgr fd;k ftl bl u vr e bl vgrk dk tkMdj igy dfFkr fd;k] Fkk (Cri LJ p. 1538 Para 7)– ^^tc rd U;k;ky; dk vk'oklu ugh fn;k tkrk g fd vkjHk l gh vfHk;Dr ml d lkFk fookg dju dk vk'k; dHkh ugh j[krk Fkk** (tkj fn;k x;k) vxy ijk e mPp U;k;ky; u pkljh dkV d foVt e fn, x, fu.k; dk fufn"V fd;k] ftl vfèkdfFkr fd;k Fkk fd fdl h ÑR; fo'k"k dk dju e çfroknh d vk'k; dh xyrc;kuh rF; dh xyr c;kuh d rY; gkxh vkj bl ij çopuk dh dkjokb vkèkkfjr dh tk ldrh gA tykM ekey (Åij m)r m)j.k d rgr) e enkl mPp U;k;ky; dh [kMihB u Hkh ;gh nf"Vdk.k viuk;k gA ,dkdh lç{k.k djd fd ^^>Bk oknk lfgrk d vFk d vrxr rF; ugh g]** ;g ugh dgk tk ldrk g fd bl U;k;ky; u fHkUu çdkj l fofèk vfèkdfFkr fd;k FkkA iokDr okD; d ckn fd, x, lç{k.k Hkh leku :i l egRoi.k gA U;k;ky; ;g vgrk tkMu e i;kIr :i l ltx Fkk fd ;g fofuf'pr dju d fy, dkb loekU; Qkeyk fodfl r ugh fd;k tk ldrk Fkk fd D;k lgefr rF; d Hke d vèkhu nh x;h FkhA mn; ekey e fu.k; dk li.krk e iBu dju ij ge ugh le>r g fd U;k;ky; u dkb 0;kid çfriknuk vfèkdfFkr fd;k g fd fookg dk oknk dHkh rF; d Hke d rY; ugh gkxkA gekj le> e og fu.k; dk fu.k;èkkj ugh gA oLrr%] ml ekey e fofufn"V fu"d"k ;g Fkk fd vkjHk e fookg dju d vfHk;Dr d vk'k; l budkj ugh fd;k tk ldrk gA

29. HkkO n0 l0 dh èkkjk 90 d çfr fo'k"k fun'k e vfHk0;fDr ^^lgefr** dh 0;k[;k ij çHkko j[ku oky fofèkd igyvk ij ppk dju ij] vc ge viuk è;ku lgefr l lcfèkr ekey d rkfF;d igyvk dh vkj y tkr gA

30. D;k ;g vfHk;Dr }kjk Mky x, ekufld ncko vFkok fn, x, çykHku dh nf"V e eku lei.k dk ekeyk g vFkok D;k ;g vfHk;kD=h dh vkj l ÑR;] ftle ml fylr gku d fy, dgk tk jgk Fkk dh çÑfr vkj ifj.kke l i.krk voxr gkr g, prU; fu.k; Fkk\ D;k vfHk;kD=h }kjk nh x;h vudgh lgefr mld lkFk fookg dju d vfHk;Dr d vk'k; d çfr mld fnekx e lftr Hke dk ifj.kke Fkh\ bu ç'uk dk mÙkj lk{; d fo'y"k.k ij nuk gkxkA vfre ç'u lg&ç'uk dk tUe nrk g fd D;k fookg dk oknk] ;fn vfHk;Dr u bl fd;k Fkk] vkjHk l gh mldh tkudkjh vkj fo'okl e >Bk Fkk vkj ;g mld }kjk dHkh ugh ijk fd, tku d fy, vk'kf;r FkkA tl k mn; ekey e bl U;k;ky; }kjk bfxr fd;k x;k g fd lgefr dh vuifLFkfr fl) dju dk Hkkj vfHk;k tu ij gA fu'p; gh] voLFkk fHkUu gkrh g ;fn ekeyk lk{; vfèkfu;e dh èkkjk 114A }kjk vkPNkfnr gA vku"kfxd ifjfLFkfr;k l lgefr vFkok bldh vuifLFkfr ,df=r dh tk ldrh gA ifod vFkok ledkyhu ÑR; vFkok i'pkrorh vkpj.k oèk ekx n'kd gk ldr gA

*31. D;k vfHk;k tu }kjk fn, x, lk{; d vkèkkj ij vfHk;kD=h dh vkj l lgefr dh deh fu"df"kr djuk ;fDr;Dr : i l lHko g] ;g fofuf'pr fd;k tku okyk vfre fcn gA** (tkj fn;k x;k)*

9. इस प्रकार, **दिलीप सिंह मामले (ऊपर)** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि से प्रकट है कि क्या इस मामले के तथ्यों में अभियोक्त्री द्वारा दी गयी सहमति उसके साथ विवाह करने के अभियुक्त के आशय के प्रति उसके दिमाग में सृजित भ्रम का परिणाम थी, वह प्रश्न है जिसे साक्ष्य के विश्लेषण के आधार पर विनिश्चित किया जाना था। वर्तमान मामले में, अभियोजन द्वारा साक्ष्य देने का चरण अभी तक पहुँचा नहीं गया था, क्योंकि विचारण अभी आरंभ नहीं हुआ था। अवर न्यायालय केवल प्राथमिकी में किए गए अभिकथन और केस डायरी में सामग्रियों के आधार पर इस निष्कर्ष पर आया कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 और 417 के अधीन अपराधों के लिए कार्यवाही का आधार नहीं था। मेरे सुविचारित दृष्टिकोण में, साक्ष्य जो विचारण के दौरान आ सकते है, का परिशीलन किए बिना इस मामले के तथ्यों में यह निष्कर्षित नहीं किया जा सकता था कि विवाह के वादा पर अभियुक्त द्वारा पीड़िता के साथ यौन संबंध जारी रखना स्पष्टत: दर्शाता था कि वह यौन कृत्य की सहमत पक्ष थी। यह प्रश्न कि क्या अभियुक्त के पास वस्तुत: उसके साथ विवाह करने का आशय था जब वह ऐसा वादा कर रहा था अथवा उसके द्वारा किया गया वादा दिखावा मात्र था, साक्ष्य जिन्हें विचारण के दौरान दिया जा सकता है का परिशीलन किए बिना इस चरण पर विनिश्चित नहीं किया जा सकता है। इसी प्रकार, से, क्या अभियोक्त्री की सहमति भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 90 के निबंधनानुसार वैध सहमति थी अथवा यह उसके साथ विवाह करने के अभियुक्त के आशय के प्रति उसके दिमाग में सृजित भ्रम के अधीन दी गयी थी, भी विचारण के दौरान दिए गए साक्ष्य के आधार पर विनिश्चित किया जाने वाला प्रश्न है और केवल प्राथमिकी में किए गए अभिकथन और पुलिस द्वारा अन्वेषण के दौरान संग्रहित सामग्री के आधार पर इस चरण पर इसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है। यद्यपि अवर न्यायालय विधि के प्रति जागरूक था कि इस चरण पर केवल यह देखना था कि क्या अभियुक्त की दोषसिद्धि सुरक्षित करने के लिए अभिलेख पर सामग्री पर्याप्त है या नहीं, किंतु अवर न्यायालय ने मामले के पक्ष-विपक्ष में अधूरी जाँच करके और अन्वेषण के दौरान संग्रहित सामग्रियों को तौल करके, मानो यह विचारण कर रहा हो, स्वयं को स्पष्टत: अपनिदेशित किया है।

10. पूर्वोक्त कारणों से, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि अवर न्यायालय ने इस चरण पर अभियुक्त को उन्मोचित करने में तात्विक अवैधता और अनियमितता किया है। यह सुयोग्य मामला है जिसमें

अभियुक्त विरोधी पक्षकार के विरुद्ध आरोप विरचित किया जाना चाहिए था और उसका विचारण किया जाना चाहिए था। इस प्रकार, आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

11. तद्नुसार, एस॰ टी॰ सं॰ 102 वर्ष 2010 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट III, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 15.7.2010 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और अवर न्यायालय को विधि के अनुरुप अभियुक्त के विरुद्ध अग्रसर होने का निर्देश दिया जाता है जैसी चर्चा ऊपर की गयी है। इस आदेश को तुरन्त संबंधित न्यायालय को संसूचित किया जाए जो अभियुक्त विरोधी पक्षकार की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए समस्त समुचित कदम उठाएगा और यथा संभव शीघ्रातिशीघ्र विधि के अनुरुप उसके विरुद्ध अग्रसर होगा। तद्नुसार, यह दांडिक पुनरीक्षण उक्त निर्देशों के साथ अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

स्वपन भौमिक

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 3070 of 2006. Decided on 13th July, 2012.

झारखंड लघु खनिज रियायत नियमावली, 2004—नियम 27(1)—पत्थर खनन पट्टा का रद्दकरण–पट्टा के रद्दकरण के पहले याची को तीन माह का पूर्व नोटिस जारी नहीं किया गया–आक्षेपित आदेश अभिखंडित–मामला तर्कपूर्ण आदेश के लिए वापस भेजा गया।

(पैराएँ 7 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Saurav Arun, For the Petitioners; JC to SC (Mines), For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह रिट याचिका मेमो सं॰ 1936 (परिशिष्ट–6) के तहत दिनांक 24.12.2005 के पत्र के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा याची को प्रदान किया गया पत्थर खनन पट्टा रद्द कर दिया गया है।

3. याची के अनुसार, दिनांक 11.8.1983 को याची और प्रत्यर्थीगण के बीच 15 वर्षों की अवधि के लिए पत्थर खनन करने के लिए करार किया गया था। तत्पश्चात् दिनांक 26.4.2005 को 10 वर्षों की अवधि के लिए याची का पत्थर खनन पट्टा नवीकृत किया गया था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिशिष्ट–6 के तहत दिनांक 24.12.2005 का आदेश जारी किया गया है जिसके द्वारा जिला खनन अधिकारी, राँची द्वारा पट्टा इस कारण से रद्द कर दिया गया है कि शेष अवधि के लिए प्राकृतिक सौंदर्य और पर्यावरण संतुलन बनाए रखने के लिए पट्टा बढ़ाया नहीं जाना चाहिए।

5. याची का मामला है कि झारखंड लघु खनिज रियायत नियमावली, 2004 के नियम 27(1) की आवश्यकता का अनुसरण नहीं किया गया है जिसके अनुसार पट्टा के रद्दकरण के पहले पट्टाधारी को तीन माह का पूर्व नोटिस जारी किए जाने की आवश्यकता है। आगे निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थीगण को बारबार स्थगन प्रदान किया गया था जिसके बाद उनके द्वारा तीन प्रति शपथपत्रों को दाखिल किया

गया है जिसमें इससे इनकार नहीं किया गया है कि तीन माह की पूर्व नोटिस, जैसा झारखंड लघु खनिज रियायत नियमावली, 2004 की धारा 27 (1) के अधीन अनुबंधित है, याची को दी गयी है।

6. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने पूरक शपथ पत्र के परिशिष्टों D और E को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि दिनांक 15.9.2005 को याची को नोटिसें जारी की गयी थी जिसके बाद याची उपायुक्त के समक्ष उपस्थित हुआ किंतु उसने कुछ भी दाखिल नहीं किया है और तत्पश्चात् आक्षेपित आदेश पारित किया गया था।

7. किंतु, याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन करते हुए प्रत्यर्थीगण के प्रतिवाद का खंडन किया है कि प्रत्यर्थीगण की ओर से जारी नोटिस सुनवाई का नोटिस थी और न कि प्रश्नगत तीन माह का नोटिस जो झारखंड लघु खनिज रियायत नियमावली, 2004 के नियम 27 (1) के अधीन आवश्यक है जो आज्ञापक प्रकृति की है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने समस्थित व्यक्ति के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें उक्त याची अमर प्रसाद शर्मा के अस्तित्वयुक्त पट्टे जिसका अवसान वर्ष 2015 में होना था, को कोई नोटिस तामील किए बिना और याची को सुनवाई का अवसर दिए बिना समरुप आधार पर रद्द कर दिया गया था। उक्त रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3069 वर्ष 2006 में दिनांक 28.8.2006 के निर्णय के तहत इस ने प्रत्यर्थीगण को तर्कपूर्ण आदेश पारित करके पट्टा के रद्दकरण की किसी कार्रवाई को करने के पहले याची को सुनवाई का अवसर देने का निर्देश दिया था। याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि वर्तमान याची का मामला अमर प्रसाद शर्मा के मामले के समरुप है क्योंकि इस मामले में प्रत्यर्थीगण ने तीन माह का पूर्व नोटिस नहीं दिया है जैसा झारखंड लघु खनिज रियायत नियमावली, 2004 के नियम 27 (1) के अधीन अनुबंधित है।

8. पक्षों को सुनने के बाद और अभिलेखों एवं आक्षेपित आदेश का परिशीलन करने पर प्रतीत होता है कि दिनांक 24.12.2005 का आदेश प्रत्यर्थीगण द्वारा झारखंड लघु खनिज रियायत नियमावली, 2004 के नियम 27 (1) का अनुपालन किए बिना और याची को प्रदत्त पट्टे के रद्दकरण के पहले तीन माह का पूर्व नोटिस दिए बिना पारित किया गया है। इसके अतिरिक्त, समरुप परिस्थितियों में, इस न्यायालय ने मामले को सुनवाई का समुचित अवसर देने के बाद नया सकारण और तर्कपूर्ण आदेश पारित करने के लिए प्रत्यर्थीगण के पास वापस भेज दिया है।

9. पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों की दृष्टि में और याची द्वारा विश्वास किए गए डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3069 वर्ष 2006 में निर्णय पर विचार करने पर दिनांक 24.12.2005 का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया जाता है और उसके पट्टे के रद्दकरण का आधार देते हुए अनुबंधित अवधि के भीतर याची पर आवश्यक नोटिस का तामील करने की स्वतंत्रता के साथ और याची को सुनवाई का समुचित अवसर देने के बाद तर्कपूर्ण आदेश पारित करने के लिए मामला प्रत्यर्थीगण को वापस भेजा जाता है।

10. तद्नुसार, पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t;k jk;] U;k;efr

भोला चौहान

cuke

अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, सेंट्रल कोलफील्ड्स लि॰ एवं अन्य

L.P.A. No. 109 of 2012. Decided on 17th July, 20112.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–वयस्क होने के बाद याची ने अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए आवेदन दिया–याची वर्ष 1995 में अपने पिता की मृत्यु के कारण अनुकंपा पर नियुक्ति का दावा कर रहा है–हस्तक्षेप का मामला नहीं बनता है–अपील खारिज।

(पैराएँ 5 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Ms. Raj Kumar Sinha, For the Appellant; M/s. Ananda Sen, Ranjan Kumar, For the Respondents.

आदेश

त्रुटियाँ अनदेखी की गयी।

आई॰ ए॰ सं॰ 574 वर्ष 2012

2. विलंब के लिए माफी के आवेदन पर पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

3. आवेदन में कथित कारणों की दृष्टि में आई॰ ए॰ सं॰ 574 वर्ष 2012 अनुज्ञात किया जाता है और विलंब माफ किया जाता है।

एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 109 वर्ष 2012

4. गुणागुण पर पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

5. स्वीकृत रूप से, दिनांक 20.6.1995 को कर्मचारी की मृत्यु हो गयी और याची के अनुसार, उस समय पर वह अवयस्क था किंतु दिनांक 5.7.1997 को वयस्क होने के बाद उसने अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए आवेदन दिया जिसे इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया था कि दिनांक 5.7.1997 को वयस्क होने के बाद उसने अनुकंपा नियुक्ति के लिए आवेदन दिया जिसे इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया था कि दिनांक 5.7.1997 को आवेदन दाखिल करने की तिथि पर याची 11 वर्ष की आयु का था।

6. याची ने आयु के विनिश्चयकरण के निष्कर्ष को चुनौती दिया और याची के अनुसार मेडिकल बोर्ड गठित किया जाना चाहिए था और वर्ष 2006 में इस प्रभाव की रिट याचिका दाखिल की गयी थी।

7. ऊपर उल्लिखित तथ्यों से, हमारा सुविचारित मत है कि ऐसे मामले में, जहाँ याची अनुकंपा पर नियुक्ति का दावा कर रहा है और वह भी वर्ष 1995 में अपने पिता की मृत्यु के कारण, इस न्यायालय के हस्तक्षेप का मामला नहीं बनता है। अत: एल॰ पी॰ ए॰ खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

आदित्य कुमार मिश्रा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 1062 of 2012. Decided on 2nd July, 2012.

झारखंड व्यापारिक वस्तु (लाइसेंस एकीकरण) आदेश, 1984—खंड 11 (2)—उचित मूल्य की दुकान के लाइसेंस का रद्दकरण–विधि द्वारा विहित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना और सुनवाई का समुचित अवसर दिए बिना व्यक्ति के बहुमूल्य अधिकार को वापस नहीं लिया जा सकता है–लाइसेंसिंग प्राधिकारी ने उत्तर दाखिल करने के लिए केवल तीन दिन का समय दिया था जब याची बीमार था–इस आधार पर कि याची द्वारा उत्तर दाखिल नहीं किया जाना

अभिकथनों को स्वीकार करने के तुल्य है, याची के लाइसेंस को रद्द करने वाला आक्षेपित आदेश विधि के विपरीत है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 10 से 13)

अधिवक्तागण.–Mrs. Nivedita Kundu, For the Petitioner; S.C. (L & C), For the State.

आदेश

याची ने अनुमंडलाधिकारी, खूँटी द्वारा पारित दिनांक 11.9.2008 के आदेश जिसके द्वारा उन्होंने याची की उचित मूल्य की दुकान के लाइसेंस को रद्द कर दिया है और याची की अपील को खारिज करते हुए उपायुक्त, खूँटी द्वारा पारित दिनांक 16.1.2012 के आदेश (परिशिष्ट-7) को भी चुनौती दिया है।

2. याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश यांत्रिक, अवैध और पूर्णत: अधिकारिताहीन हैं। विधि के आज्ञापक प्रावधान का अनुपालन किए बिना उक्त आदेशों को पारित किया गया है।

3. निवेदन किया गया है कि बिहार/झारखंड व्यापारिक वस्तु (लाइसेंस एकीकरण) आदेश, 1984 प्रस्तावित रद्दकरण के विरुद्ध अपना उत्तर दाखिल करने के लिए लाइसेंसी को युक्तियुक्त अवसर देना प्रावधानित करता है। किंतु कारण बताओ का उत्तर दाखिल करने के लिए याची को केवल तीन दिन का समय दिया था। केवल तीन दिनों का समय देना स्वयं में विधि के विपरीत है और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का घोर उल्लंघन है क्योंकि लाइसेंसिंग प्राधिकारी ने अवैध रूप से अभिनिर्धारित किया है कि चूँकि उत्तर तीन दिनों के भीतर प्राप्त नहीं किया गया है, यह समझा जाता है कि याची ने अभिकथन को स्वीकार किया है। उक्त उपधारणा पर याची के बहुमूल्य अधिकार से वंचित किया गया है और संक्षिप्त आदेश द्वारा लाइसेंस रद्द कर दिया गया है।

4. याची ने अनेक आधारों पर उपायुक्त, खूँटी के समक्ष अपील दाखिल किया किंतु विद्वान उपायुक्त, खूँटी ने भी लाइसेंसिंग प्राधिकारी का आदेश दोहराया और न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना अपील खारिज कर दिया।

5. आगे निवेदन किया गया है कि लाइसेंसिंग प्राधिकारी का आदेश और अपीलीय प्राधिकारी का आदेश विहित नियमों के उल्लंघन में और विवेक का इस्तेमाल किए बिना और कारणों को दर्ज किए बिना पारित किए जाने के कारण नास्ति है और इस न्यायालय द्वारा अभिखंडित किए जाने के दायी है।

6. प्रत्यर्थीगण ने प्रति शपथ पत्र दाखिल करके रिट याचिका का प्रतिवाद किया है। किंतु, प्रति शपथ पत्र में प्रत्यर्थीगण ने याची द्वारा दिए गए विधि और नैसर्गिक न्याय के उल्लंघन के आधारों का खंडन किए बिना आक्षेपित आदेशों का समर्थन किया है।

7. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर तथ्यों एवं सामग्रियों पर विचार किया है।

8. दिनांक 11.9.2008 के लाइसेंसिंग प्राधिकारी के आदेश (परिशिष्ट-5) के परिशीलन पर मैं पाता हूँ कि याची को अपना उत्तर दाखिल करने के लिए केवल तीन दिनों का समय दिया गया था और तत्पश्चात केवल इस आधार पर कि याची द्वारा उत्तर दाखिल नहीं किया जाना अभिकथन को स्वीकार करने के तुल्य है, रद्दकरण का आदेश पारित किया गया है। रिट याचिका में याची द्वारा कथन किया गया है कि उसके विरुद्ध लगाया गया मुख्य अभिकथन यह है कि जब निरीक्षण किया गया था, दुकान बंद थी। कथन किया

गया है कि तिथि जिस पर दुकान का निरीक्षण किया गया था, याची गंभीर रूप से बीमार था और उस कारण से वह दुकान खोल नहीं सका था। याची को तथ्य और साक्ष्य प्रस्तुत करने का सम्यक अवसर नहीं दिया गया था और उसका अपना उत्तर दाखिल करने और सुनवाई का अवसर दिए बिना याची के लाइसेंस को रद्द करने वाले उक्त यांत्रिक आदेश अनुमंडलाधिकारी द्वारा पारित किया गया है।

9. आगे, अपीलीय प्राधिकारी के आदेश (परिशिष्ट–7) का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि याची द्वारा लिए गए आधारों को अनदेखा कर दिया गया है और उपायुक्त ने केवल लाइसेंसिंग प्राधिकारी के लगभग उसी आदेश को दोहराया है और अपील खारिज कर दिया है।

10. यह सुनिश्चित है कि विधि द्वारा विहित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना और अभ्यावेदन/सुनवाई का समुचित अवसर दिए बिना किसी व्यक्ति के बहुमूल्य अधिकार को वापस नहीं लिया जा सकता है।

11. वर्तमान मामले में, लाइसेंसिंग प्राधिकारी ने उत्तर दाखिल करने के लिए केवल तीन दिन का समय दिया है जब याची बीमार था। विहित नियम लाइसेंस के प्रस्तावित रद्दकरण के लिए नोटिस के विरुद्ध उत्तर दाखिल करने के लिए युक्तियुक्त अवसर देना स्पष्टत: प्रावधानित करता है। वर्तमान मामले में, उत्तर दाखिल करने के लिए तीन दिनों का नोटिस बिल्कुल अयुक्तियुक्त और मनमाना है। इस आधार पर कि याची द्वारा उत्तर दाखिल नहीं करना अभिकथन स्वीकार करने के तुल्य है, याची के लाइसेंस को रद्द करने वाला आक्षेपित आदेश (परिशिष्ट–5) विधि के विपरीत भी है।

12. इस प्रकार, परिशिष्ट–5 में अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश पूर्णत: अवैध है और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघनकारी है और विधि में संपोषणीय नहीं है। लाइसेंसिंग प्राधिकारी के आदेश को मान्य ठहराते हुए विवेक का इस्तेमाल किए बिना अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश कारण रहित, संक्षिप्त एवं यांत्रिक होने के नाते अवैध और असंपोषणीय है।

13. पूर्वोक्त कारणों से, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। अनुमंडलाधिकारी, खूँटी द्वारा पारित दिनांक 11.9.2008 का आदेश (परिशिष्ट–5) और उपायुक्त, खूँटी द्वारा पारित दिनांक 16.1.2012 का आदेश (परिशिष्ट–7) अभिखंडित किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

उषा मार्टिन लिमिटेड (उषा इसमल डिविजन) राँची

cuke

दशरथ उपाध्याय

L.P.A. No. 308 of 2011. Decided on 16th July, 2012.

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947—धारा 17B—मनीआर्डर का भुगतान–समय पर धन नहीं पाने की शिकायत–याची धारा 17-B के अधीन अपने घर में भुगतान पा रहा है जो, लाभदायी नियोजन में रहते हुए न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है–आवेदन अस्वीकार।

(पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.–Mr. Satish Bakshi, For the Appellant; In person, For the Respondent.

आदेश

<u>आई॰ ए॰ सं॰ 1749 वर्ष 2012</u>

प्रत्यर्थी–कर्मचारी ने स्वयं विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष मामले पर तर्क किया और इस एल॰ पी॰ ए॰ में उसने निवेदन किया कि चूँकि वह अंग्रेजी भाषा नहीं समझता है, वह अपील के मेमो के तामील से बच रहा था। इसे ध्यान में लेने के बाद दिनांक 26.3.2012 को जब मामला इस न्यायालय के समक्ष आया, इस न्यायालय ने अपीलार्थी को औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 17B के प्रावधानों का अनुपालन करते रहने का निर्देश दिया।

2. प्रत्यर्थी–कर्मचारी ने न्यायालय में मामला सूचीबद्ध कराने के लिए अनुमति इप्सित किया। अतः, इसे आज आई॰ ए॰ सं॰ 1749 वर्ष 2012 पर सूचीबद्ध किया गया है। इस अंतर्वर्ती आवेदन में, प्रत्यर्थी–कर्मचारी ने कथन किया कि कुछ महीनों से वह 440/- रुपयों का मनीआर्डर प्राप्त कर रहा है किंतु इसका भुगतान प्राधिकारी द्वारा नहीं बल्कि किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किया गया था और इस प्रकार, अधिनियम की धारा 17-B का अननुपालन हुआ है। किंतु, स्वीकृत रूप से, प्रत्यर्थी–कर्मचारी मनीआर्डर के माध्यम से भुगतान प्राप्त कर रहा है जो अपीलार्थी–प्राधिकारी के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार इस न्यायालय के दिनांक 26.3.2012 के आदेश के अनुपालन में है।

3. प्रत्यर्थी–कर्मचारी स्वीकार करता है कि वह मनीआर्डर के माध्यम से धन प्राप्त कर रहा है किंतु उसकी शिकायत है कि वह समय पर धन नहीं प्राप्त कर रहा है। पूछे जाने पर कि क्या उसने पूछताछ किया था कि किसने इस न्यायालय के आदेश के अनुपालन में धन भेजा था, उसने कहा कि उसने पूछताछ नहीं किया था।

4. प्रतीत होता है कि याची औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 17B के प्रावधान के अधीन अपने घर पर भुगतान पा रहा है जो अपीलार्थी के मुताबिक, लाभदायी नियोजन में होने के नाते न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है।

अतः, आई॰ ए॰ सं॰ 1749 वर्ष 2012 अस्वीकार किया जाता है।

5. इसकी पारी आने पर इस मामले को सूचीबद्ध किया जाए।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

अशोक सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 488 of 2012. Decided on 16th July, 2012.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420, 468 एवं 471—छल एवं कूटरचना–उन्मोचन के लिए याचिका की अस्वीकृति–अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल–सी॰ जे॰ एम॰ ने केवल याची के विरुद्ध अभिकथन का वर्णन किया है–यह दर्शाने के लिए कि याची के विरुद्ध कोई अपराध बनता है, सी॰ जे॰ एम॰ द्वारा कोई कारण नहीं दिया गया है अथवा केस डायरी से किसी सामग्री पर चर्चा नहीं की गयी है–आक्षेपित आदेश अपास्त। (पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Ajay Kumar Sah, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने जी॰ आर॰ केस सं॰ 2128 वर्ष 2011 में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची द्वारा पारित दिनांक 16.6.2012 के आदेश को चुनौती दिया है, जिसके द्वारा याची की उन्मोचन की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया गया है।

3. प्रतीत होता है कि याची को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420, 468, 471 के अधीन अपराध के लिए कोतवाली पी॰ एस॰ केस सं॰ 377 वर्ष 2011, जी॰ आर॰ सं॰ 2128 वर्ष 2011 के तत्सम, में अभियुक्त बनाया गया है, जिसे किसी श्रवण कुमार जालान द्वारा दिए गए लिखित आवेदन के आधार पर संस्थापित किया गया था, जिसने कथन किया था कि अन्य अभियुक्तगण (जिन्हें प्राथमिकी में वर्मा परिवार के रूप में वर्णित किया गया है) सूचक के पिता के जीवन काल से सूचक की भूमि पर निवास कर रहे थे। सूचक के पिता की मृत्यु के बाद यह पता चला कि उनके पास उस भूमि जिस पर वह निवास कर रहे थे, के संबंध में हक विलेख भी था। बाद में, प्राथमिकी से प्रतीत होता है कि सूचक ने भूमि का रिक्त कब्जा पाने का प्रयास किया और सूचक द्वारा वर्मा परिवार के सदस्यों के विरुद्ध वाद भी दाखिल किया गया था और इस बीच, सूचक ने मामले को सुलझाने के लिए कदम उठाया जहाँ याची का नाम प्राथमिकी में आया। अभिकथित किया गया है कि याची ने सूचक को सूचित किया कि वर्मा परिवार से आने वाले व्यक्तियों को बसाने के लिए उपयुक्त भूमि का टुकड़ा उपलब्ध था और तद्नुसार सूचक ने उक्त भूमि खरीदा और वर्मा परिवार से आने वाले सह-अभियुक्तगण के पक्ष में इसे अंतरित किया। प्राथमिकी से प्रतीत होता है कि तत्पश्चात भी सह अभियुक्तगण द्वारा भूमि खाली नहीं की गयी थी और इस बीच सूचक द्वारा दाखिल अभिधान वाद भी व्यतिक्रम के कारण खारिज कर दिया गया था।

4. याची के विरुद्ध आगे अभिकथित किया गया है कि वाद में सूचक को पता चला कि भूमि, जिसे सूचक द्वारा सह-अभियुक्तगण के लिए खरीदा गया था, को उनके द्वारा याची को बेच दिया गया था और याची उक्त भूमि पर निवास कर रहा था। याची ने भूमि खाली करने से इनकार किया और सूचक को धमकाया। इन अभिकथनों के साथ, प्राथमिकी दर्ज की गयी थी जिसमें वर्मा परिवार से आने वाले व्यक्तियों और याची को अभियुक्त बनाया गया था।

5. प्रतीत होता है कि अन्वेषण के बाद, पुलिस ने भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420, 468, 471, 477, 120B के अधीन अपराध के लिए अभियुक्तगण के विरुद्ध इस मामले में आरोप-पत्र दाखिल किया और तद्नुसार, याची सहित समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध संज्ञान लिया गया था। बाद में, याची ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 239 के अधीन यह कथन करते हुए आवेदन दाखिल किया कि याची के विरुद्ध अपराध नहीं बनता था क्योंकि याची भूमि पर काबिज था, जो उसे सह-अभियुक्तगण द्वारा बेची गयी थी, जिनकी यह भूमि थी और तद्नुसार, याची के विरुद्ध अपराध बनता नहीं कहा जा सकता है। अवर न्यायालय ने प्राथमिकी में दिए गए सूचक के मामले पर चर्चा करने के बाद और दं॰ प्र॰ सं॰ की धाराओं 239, 240 और 211 और भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420, 468, 471, 477 तथा 120B के प्रावधानों को उद्धृत करने के बाद अभिनिर्धारित किया है कि याची के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य है और याची द्वारा दाखिल उन्मोचन आवेदन अस्वीकार कर दिया है।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश बिल्कुल कारण रहित आदेश है क्योंकि कोई भी कारण नहीं दिया गया है और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 239 के अधीन याची द्वारा दाखिल आवेदन खारिज करने के लिए याची के विरुद्ध सामग्री पर चर्चा नहीं की गयी है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यदि इस मामले के तथ्यों को स्वीकार किया भी जाता है, मामला केवल

सिविल प्रकृति का है और भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420, 468, 471 और 477 के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध अपराध नहीं बनता है।

7. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है।

8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और आक्षेपित आदेश का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि विद्वान सी॰ जे॰ एम॰ ने केवल याची के विरुद्ध अभिकथन को वर्णित किया है और दं॰ प्र॰ सं॰ एवं भा॰ दं॰ सं॰ की पूर्वोक्त धाराओं को उद्धृत किया है और केवल इतना कथन किया है कि ऊपर की गयी चर्चा के आधार पर भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420, 468, 471, 477 और 120B के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य है और याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया है। विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा कोई भी कारण नहीं दिया गया है और न ही यह दर्शाने के लिए केस डायरी से किसी सामग्री पर चर्चा की गयी है कि याची के विरुद्ध ऐसा कोई अपराध बनता है। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि आक्षेपित आदेश बिल्कुल कारण रहित आदेश है और विधि की दृष्टि में इसे संपोषित नहीं किया जा सकता है।

9. पूर्वोक्त चर्चा की दृष्टि में, कोतवाली पी॰ एस॰ केस सं॰ 377 वर्ष 2011 से उद्भूत जी॰ आर॰ केस सं॰ 2128 वर्ष 2011 में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची द्वारा पारित दिनांक 16.6.2012 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और अवर न्यायालय को याची के विरुद्ध मौजूद सामग्री पर चर्चा करके और यह चर्चा भी करके कि क्या याची के विरुद्ध अभिकथनों और अन्वेषण के दौरान संग्रहित सामग्री के आधार पर अपराध, जिनके लिए याची के विरुद्ध संज्ञान लिया गया है, वस्तुतः याची के विरुद्ध बनते हैं या नहीं, विधि के अनुरूप नया तार्किक आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है। इन निर्देशों के साथ, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

बार एसोसिएशन, झारखंड उच्च न्यायालय, राँची

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (PIL) No. 2347 of 2012. Decided on 16th July, 2012.

भूमि अर्जन अधिनियम, 1894—धाराएँ 4, 6 एवं 16—भूमि का अर्जन–सरकार के निर्णय के बाद भूमि अर्जन के लोक प्रयोजन को चुनौती नहीं दी जा सकती है जिसे किसी न्यायालय द्वारा अपास्त नहीं किया गया है और जो लोक प्रयोजन का निश्चयात्मक प्रमाण है–राज्य भूमि अर्जित करने के लिए नीति विरचित करने के लिए स्वतंत्र है–जब एक बार कब्जा ले लिया गया है, सरकार को अर्जन वापस लेने का अधिकार नहीं है। (पैराएँ 7, 12 एवं 14)

अधिवक्तागण.–Mr. Sohail Anwar, For the Petitioner; Mr. Anil Kumar Sinha, For the Respondents.

आदेश

आवेदकगण, जो तीन सम्मानजनक संस्थानों जैसे राष्ट्रीय विधि अध्ययन एवं शोध विश्वविद्यालय, भारतीय प्रबंधन संस्थान और बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के भवनों के निर्माण का विरोध कर रहे है, के

आवेदन जिसके द्वारा उन्होंने वर्ष 2012 में वर्ष 1956-58 में भूमि के अर्जन और उक्त तीन संस्थानों को स्थापित करने में राज्य सरकार की कार्रवाई का विरोध करने का प्रयास किया, की अस्वीकृति और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा एस॰ एल॰ पी॰ की खारिजी के तथ्य के बावजूद इस न्यायालय ने स्थल पर विरोध से बचने के लिए दिनांक 10.7.2012 का आदेश पारित किया क्योंकि कुछ लोगों ने प्रस्तावित निर्माण के विरुद्ध निर्दोष लोगों को उकसाने का प्रयास किया।

2. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने राज्य की ओर से शपथ पत्र दाखिल किया जिसमें कथन किया गया है कि दिनांक 10.7.2012 के इस न्यायालय के आदेश के बाद झारखंड राज्य ने दिनांक 11.7.2012 को बातचीत और विवाद्यकों को सुलझाने के लिए कमिटि गठित किया और उक्त कमिटि ने दिनांक 14.7.2012 को बातचीत और विवाद्यकों को सुलझाने के लिए कमिटि गठित किया और उक्त कमिटि ने दिनांक 14.7.2012 को बैठक में भाग लेने के लिए संबंधित व्यक्तियों को आमंत्रित करते हुए आम नोटिस जारी किया। व्यक्तिगत नोटिसों को भी जारी किया गया था किंतु दावेदारों में से कोई भी मामले पर चर्चा के लिए नहीं आया। अब, बैठक दिनांक 16.7.2012 के लिए स्थगित कर दी गयी है और आज दोपहर 12.30 बजे इसके होने की संभावना है।

3. हमने प्रत्यर्थी–राज्य की ओर से इस शपथ पत्र के साथ संलग्न दस्तावेजों का परिशीलन किया है।

4. प्रतीत होता है कि निहित स्वार्थ रखने वाले व्यक्तियों द्वारा सब कुछ अननुपातिक रूप से प्रक्षेपित किया गया है जो दावा करते हैं कि वे देश में लोक प्रतिनिधि हैं और कुछ निर्वाचित प्रतिनिधि नहीं हैं जहाँ विधि राज्य में राज्य विधान सभा अथवा संसद में सांसदों द्वारा विरचित की गयी है और ये व्यक्ति वर्ष 2012 में आधी सदी बाद अपने आप को नेता के रूप में प्रक्षेपित करते हुए उस समय पर भूमि अर्जन को चुनौती दे रहे हैं जब भूमि पर निर्माण शुरू हो गया और अब वे बुद्धिमान हो गए हैं क्योंकि सभी को ज्ञात है कि झारखंड राज्य अधिकांशतः अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के सदस्यों से गठित है और अधिकतर जनसंख्या गरीब और निरक्षर है, जिन्हें उन व्यक्तियों के दिमाग में चित्रित थोड़े से भी भ्रम द्वारा दिग्भ्रमित किया जा सकता है।

5. हम भूमि अर्जन अधिनियम, 1984 के प्रावधानों को निर्दिष्ट करने के लिए विवश हैं जिसे संसद द्वारा अधिनियमित किया गया था और संपूर्ण देश में बाध्यकारी विधि है और काफी पहले वर्ष 1894 में इसे अधिनियमित किया गया था और तब से, वर्ष 1894 के इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन कृषि योग्य भूमि के हजारों एकड़ों को अर्जित किया गया है। समाचार पत्र रिपोर्ट से प्रतीत होता है कि छोटे खेतिहरों के दिमाग में यह बात बसी हुई है कि यह झारखंड राज्य में कुल कृषि योग्य भूमि को बचाने का अंतिम मामला है और यदि ये संस्थान वर्ष 1957-58 में अर्जित भूमि, 227 एकड़ के ऊपर भूमि, पर निर्माण करेंगे, तब संपूर्ण झारखंड राज्य में कृषि योग्य भूमि का एक इंच भी नहीं रहेगा क्योंकि समस्त कृषि योग्य भूमि सरकार द्वारा अर्जित कर ली जाएगी।

6. प्रतीत होता है कि राज्य प्रतिनिधियों द्वारा चित्र स्पष्ट नहीं किया गया है।

7. सरकार, केंद्रीय अथवा राज्य, भूमि अर्जित करने की नीति विरचित करने के लिए स्वतंत्र है और निर्णय कर सकती है कि किस भूमि को अर्जित करने की आवश्यकता है और जब एक बार निर्णय ले लिया जाता है, भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की भूमिका शुरू हो जाती है जो स्पष्टतः प्रावधानित करती है कि 1894 के अधिनियम की धारा 6 के अधीन अधिसूचना सरकार के लोक प्रयोजन के लिए भूमि की आवश्यकता के बारे में निर्णय निश्चयात्मक प्रमाण होगा। अतः, सरकार के निर्णय के बाद भूमि के

अर्जन के लोक प्रयोजन को चुनौती नहीं दी जा सकती है जिसे विधि के किसी न्यायालय द्वारा अपास्त नहीं किया गया है और जो लोक प्रयोजन का निश्चयात्मक प्रमाण है। केवल यही नहीं, जब एक बार राज्य में सक्षम प्राधिकारी के आदेश द्वारा भूमि विधिपूर्वक अर्जित की जाती है और सरकार में निहित की जाती है और कब्जा लिया जाता है, यह किसी विल्लंगम के बिना इस तथ्य कि समय के किसी बिंदु पर किसी द्वारा कोई अतिक्रमण किया जा सकता है, के निरपेक्ष रहते हुए सरकार में निहित होती है। वर्ष 1894 के अधिनियम की धारा 48 विनिर्दिष्टत: प्रावधानित करती है कि भले ही सरकार अर्जन वापस करना चाहती है, यह केवल उस भूमि के लिए ऐसा कर सकती है जिसका कब्जा नहीं लिया गया है। राज्य सरकार को बात स्पष्ट करने के लिए हम 1894 के अधिनियम के कुछ प्रावधानों को उद्धृत करना चाहेंगे जो उन व्यक्तियों के लिए लाभदायी होगा जो सरकार में काम कर रहे अथवा नहीं कर रहे हैं।

8. वर्ष 1894 के अधिनियम की धारा 4 स्पष्टत: कथन करती है कि ''जब कभी (समुचित सरकार) को प्रतीत होता है कि किसी लोक प्रयोजन अथवा कंपनी के लिए किसी इलाके में भूमि की आवश्यकता है अथवा इसकी आवश्यकता होने की संभावना है, सरकारी गजट में उस प्रभाव की अधिसूचना प्रकाशित की जाएगी.......'' अत:, इस मामले में भी, भूमि अर्जित करने का निर्णय लोक प्रतिनिधियों द्वारा चलाए जा रहे सरकार का था जब प्रक्रिया आरंभ की गयी थी कि लोक प्रयोजन से इस विशेष भूमि की जरूरत है। यह इन संस्थानों का निर्णय नहीं था।

9. अधिनियम 1894 की धारा 6 सरकार द्वारा घोषणा प्रावधानित करती है कि लोक प्रयोजन से भूमि की आवश्यकता है। जब 1894 अधिनियम की धारा 6 के अधीन घोषणा की जाती है, इसकी उपधारा (3) निम्नलिखित कहती है:–

> *"(3) mDr ?kk"k.kk fu'p;kRed lk{; gkxh fd ykd ç;ktu l vFkok diuh d fy, Hkfe dh vko';drk g] tlk Hkh ekeyk gk(vkj ,lh ?kk"k.kk dju d ckn (lefpr ljdkj) bld ckn of.kr rjhd l Hkfe vftr dj ldrh gA***

10. यह संसद द्वारा अधिनियमित सांविधिक प्रावधान है और अधिनियम का भाग है।

11. अधिनियम 1894 की धारा 16 प्रावधानित करती है कि ''जब कलक्टर ने धारा 11 के अधीन अधिनिर्णय पारित किया है, वह भूमि का कब्जा ले सकता है जो <u>उस पर समस्त विल्लंगमों से मुक्त होकर सरकार में पूरी तरह निहित होगी।''</u> इस प्रकार, सरकार में भूमि निहित करने के परिणाम धारा 16 से स्पष्ट है और अर्जन वापस करने की सरकार की शक्ति सीमित है और यह अधिनियम 1894 की धारा 48 (1) के सांविधिक प्रावधान से स्पष्ट है जो निम्नलिखित है:–

> *"(1) èkkjk 36 e çkoèkkfur ekey d flok, ljdkj fdlh Hkfe d vtu dk okil ykVku d fy, Lor= gkxh ftldk dCtk ugh fy;k x;k gA***

12. <u>अत: जब एक बार कब्जा ले लिया गया है, सरकार को अर्जन वापस करने का अधिकार नहीं है।</u>

13. यहाँ इस मामले में, स्वीकृत रूप से, न केवल सरकार द्वारा कब्जा लिया गया है बल्कि इन प्रतिष्ठित संस्थानों, जो झारखंड राज्य में स्थापित किए जा रहे हैं, को कब्जा सौंप भी दिया गया है।

14. हम स्पष्ट करते हैं कि हम केवल प्रावधानों को निर्दिष्ट कर रहे हैं और न कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को, जिसमें यह स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया गया है कि भूमि अर्जन की कार्यवाही

में भूमि का कब्जा प्रतीकात्मक रूप से लिया जाता है और हम यहाँ संप्रेक्षित कर सकते हैं कि अर्जित भूमि के संपूर्ण टुकड़े पर चार दीवार निर्मित करना और ताला लगाना या चौकीदार रखना, जब इनकी आवश्यकता नहीं है, सरकार के लिए आवश्यक नहीं है। अत: ऐसी भूमि पर खेती के कृत्य के चलते किसी के पक्ष में कोई अधिकार सृजित नहीं होता है।

15. समाचार पत्र रिपोर्ट से प्रतीत होता है कि यह प्रक्षेपित किया गया है कि जब तक भूमि के इस टुकड़े जो लगभग 227 एकड़ है, को सुरक्षित नहीं किया जाता है, या तो झारखंड राज्य में कृषि योग्य भूमि नहीं होगी अथवा शेष कृषि योग्य भूमि को भी सरकार द्वारा अर्जित कर लिया जाएगा। सरकार के किसी व्यक्ति अथवा लोक हित से जुड़े किसी व्यक्ति द्वारा ऐसी धारणा दूर नहीं की गयी है और झारखंड राज्य में कुछ लोगों के दिमाग में यह बात भर दी गयी है कि प्रश्नगत भूमि खेतिहरों की एकमात्र परीक्षा है और यदि राज्य सरकार के ये तीन प्रोजेक्ट सफल होते हैं, संपूर्ण झारखंड राज्य में कोई कृषि योग्य भूमि छोड़ी नहीं जाएगी और सरकार समस्त कृषि योग्य भूमि अर्जित कर लेगी।

16. कहीं से भी यह सामने नहीं आ रहा है कि इस विशेष भूमि को क्यों इन व्यक्तियों द्वारा चुना गया है जो अब लोगों को पथभ्रमित करके उनका समर्थन दे रहे हैं और यह छवि बना रहे हैं कि तत्पश्चात् झारखंड राज्य को भूखों मरना होगा क्योंकि कृषि योग्य भूमि उपलब्ध नहीं होगी।

17. हम सरकार को स्मरण दिलाएँगे कि यदि सरकार कोई निर्णय लेती है, उसे इन प्रश्नों को ध्यान में लेना होगा:–

(1) D;k ;g ljdkjh uhfr g fd Hkfo"; e lkj ekey lMd ij fofuf'pr fd, tk,x ;k fofèk çHkkoh gkxhA

(2) D;k ç'uxr Hkfe vfre Hkfe g tk Ñf"k ;kX; g vkj tk 1894 d vfèkfu;e d çHkko e vku d ckn fcgkj jkT; e vkj vc >kj[kM jkT; e o"k 2012 rd vftr dh x;h gA

(3) D;k [kfrgjk }kjk evkotk Lohdkj ugh fd;k tkuk vfèkfu;e 1894 d vèkhu dh x;h Hkfe vtu dk;okgh dk 'kU;@vÑr djxkA

(4) D;k jkT; ljdkj u fu.k; fy;k g fd leLr Hkfe] ftl o"k 1894 d ckn vFkok de l de 1957-58 l vftr fd;k x;k g vkj ;g ml le; ij Ñf"k ;kX; Fkh] dk vuftr ?kkf"kr fd;k tk,xk vkj [kfrgjk dk okil ykVk fn;k tk,xkA

(5) doy mu 0;fDr;k d fy,] ftUgku fgld :i l fojkèk ugh fd;k Fkk tc Hkfe dk dCtk fy;k x;k Fkk] ,l vlkE;i.k fu.k; D;k fy;k tk,xk vkj D;k ljdkj fgl dh fofèk l ekxnf'kr gkxh vkj fofèk dk ikyu dju oky 0;fDr;k dk ugh lux tk fofèk dk ikyu djr gA

(6) ;fn jkT; ljdkj fu.k; yrh g fd Ñf"k ;kX; Hkfe vftr ugh dh tkuh pkfg,] rc D;k og fu.k; Hkfo";y{kh çÑfr dk gkxk vFkok çoru e Hkry{kh gkxkA

18. उक्त विवाद्यक प्रासंगिक विवाद्यक है और महत्वपूर्ण विवाद्यक भी है कि क्या भूमि अर्जन अधिनियम के अधीन, यदि भूमि अर्जन अधिनियम की विधि को पुन: अधिनियमित किया जाता है जो

विनिर्दिष्टत: प्रावधानित करता है कि कृषि योग्य भूमि अर्जित नहीं की जाएगी, क्या सरकार स्वीकार करेगी कि जब भूमि खोनेवाले द्वारा भुगतान स्वीकार नहीं किया जाता है, भूमि अर्जित नहीं की जाएगी और कि नए अधिनियमन को प्रभाव नहीं दिया जाएगा।

19. हम यहाँ पुन: प्रश्न कर रहे हैं कि क्यों इन व्यक्तियों द्वारा इस भूमि को चुना गया है? उदाहरण के रूप में? यदि कृषि योग्य भूमि को अर्जित करना मुख्य विवाद्यक है, तब विशेषत: उस राज्य में जहाँ हजारों एकड़ भूमि अर्जित की गयी है, व्यक्तियों जो विलंबित समय पर खेतिहरों की संततियों को उकसा रहे हैं, का आशय गंभीर रूप से संदेहास्पद है क्योंकि नव सृजित राज्य में तीन प्रतिष्ठित संस्थानों की स्थापना इप्सित की गयी है और इस न्यायालय के आदेश और विशेष अनुमति (सी॰) याचिका सं॰ 18622 वर्ष 2012 में सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के बावजूद ऐसी स्थिति बनायी गयी है।

20. विद्वान महाधिवक्ता ने इस मोड़ पर हमारा ध्यान पहले ही ध्यान में लिए गए तथ्य की ओर आकृष्ट किया है कि कुछ खेतिहरों, स्पष्टत: उनके संततियों, ने रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2356 वर्ष 2009 दाखिल करके इस न्यायालय के पास आए जिसमें भी उन्होंने मुआवजा राशि, जिसे इस न्यायालय द्वारा दिनांक 26.4.2011 के आदेश के तहत अनुज्ञात किया गया था, पर ब्याज पाने के लिए अनुतोष को सीमित रखा। तब अनेक व्यक्तियों ने इस पी॰ आई॰ एल॰ में आई॰ ए॰ सं॰ 1558 वर्ष 2012 दाखिल करके इन तीन प्रतिष्ठित संस्थानों को स्थापित करने में राज्य सरकार के प्रयास को चुनौती देने का प्रयास किया और उनकी चुनौती को इस न्यायालय द्वारा दिनांक 16.5.2012 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा खेतिहरों की विशेष अनुमति (सी॰) याचिका सं॰ 18622 वर्ष 2012 की खारिजी के बाद इस न्यायालय ने दिनांक 10.7.2012 का आदेश केवल यह देखने के लिए पारित किया कि निर्दोष और गरीब व्यक्ति, जिन्हें अपनिदेशित किया जा सकता था, को समय पर उनके अधिकारों के बारे में सूचित किया जा सके और उन्हें गलत व्यक्तियों के चंगुल से छुड़ाया जा सके जो अब या विगत 56 वर्षों से उनकी सवारी कर रहे हैं।

21. राज्य सरकार इस आदेश का हिंदी और यदि आवश्यकता हो, क्षेत्रीय भाषा में अनुवाद कराएगी और बैठक में इसे रखेगी जिसे प्रश्नगत विवाद्यक के संबंध में अंतिम निर्णय लेने के लिए किया जा सकता है। इस न्यायालय ने जानबूझ कर दिनांक 10.7.2012 को कोई कठोर आदेश पारित नहीं किया था अथवा आज ऐसा कठोर आदेश पारित नहीं कर रही है क्योंकि झारखंड राज्य के निर्दोष व्यक्ति इसमें अंतर्ग्रस्त हैं और अपनिर्देशित किए जा रहे हैं।

22. विद्वान महाधिवक्ता ने कुछ और समय मामला सुलझाने के लिए इप्सित किया।

23. यद्यपि अंतर्ग्रस्त भूमि, भूमि का एक छोटा टुकड़ा है, चूँकि हम लोक प्रयोजन से राज्य के विकास के लिए राज्य सरकार द्वारा भूमि के अर्जन के विवाद्यक पर विचार कर रहे हैं जहाँ हजारों एकड़ भूमि अर्जित की गयी है, तब भी हम राज्य सरकार को दिनांक 31.7.2012 तक का समय देना समुचित समझते है ताकि हमें मामले में प्रगति की जानकारी हो सके।

इस मामले को दिनांक 6.8.2012 को सूचीबद्ध किया जाए।

इस आदेश की प्रति राज्य के विद्वान अधिवक्ता और न्याय मित्र को दी जाए।